॥ इति भाषाटीकासहितंब्रह्मोत्तरखण्डं समाप्तम् ॥

॥ श्रीशङ्कराय नमः ॥

ब्रह्मोत्त[illegible]ण्ड भाषाटीका विषयानुक्रमणिका ।

अध्याय	विषय
१	सूतशौनकसंवाद; शिवपञ्चाक्षरमन्त्रका माहात्म्य; सद्गुरुलक्षण; तत्कालसिद्धिको देनेवाले पुण्यक्षेत्रोंका कहना; दाशार्हराजाकी पत्नीको दुर्वासामुनिने शिवपञ्चाक्षरमन्त्रकी दीक्षादेना और उससे रानीका अपूर्व तेज होना; वेश्यादिआसक्तिवाले राजासे रानीके तेजका न सहाजाना; रानीके परामर्शसे गर्गमुनिद्वारा राजाका शिवमन्त्रदीक्षा लेना ।
२	मित्रसहनामकराजाका मृगयामें नरघाती राक्षसको मारना;उसके भाई राक्षसने भाईका बदलालेनेके लिये कपटी विप्रवेशसे राजाका रसोइया होकर नरमांसपकाना; श्राद्धके दिन निमन्त्रित श्रीवशिष्ठके आगे मांस परोसना, वशिष्ठका राजाको शाप देना, गुरुशापसे राजाका चाण्डाल होना; गुरुको अकारण शापदेनेके लिये राजाका शाप देनेको उद्यत होना उ[illegible]ने उसको रोकना; राक्षसयोनिमें राजाका नाना दु[illegible]ना और नरहत्या करना; गोकर्णक्षेत्रमें हत्याका छू[illegible]
३	दुश्चा[illegible]मित्रा ब्राह्मणीके तीन जन्मोंकी कथा । तीसरे जन्म[illegible]ावचतुर्दशीके दिन गोकर्णक्षेत्रके मेलेमें कोटी अन्ध[illegible] (सुमित्रा) का भिक्षार्थ आना रातभर भिक्षा-माँग[illegible]नका निराहार रहजाना और जागरण करना अनि[illegible]ी उपवास होजानेसे उसकी शिवलोकप्राप्ति ।
४	शिवभक्त[illegible]राजा और उसकी कुमुद्वती रानीके पूर्वजन्म तथा [illegible]न्मों की कथा ।
५	शिवपार्षद[illegible]द्रकी दीहुई चिन्तामणिसे उज्जैननरेश चन्द्रसेनकी म[illegible] वर्णन; उस अपूर्वमणिके प्रभावको सुन सब राजाओंने उसके साथ युद्धकरना; श्रीकरनामक गोपकुमारका अपूर्व भक्तिभावसे शिवपूजन करना; पूजनप्रभावसे उसके घरमें शिवलिङ्गका प्रादुर्भाव और धन धान्य दासी दासादिकी समृद्धि; सब राजाओंका युद्ध छोड़कर उस महात्मा गोपकुमारका दर्शन करना और हस्ती अश्व रत्नादिकी भेटचढाना; श्रीहनूमानजीका वहां आना और उसी वंशमें भगवान् श्रीकृष्णके भावी अवतार होनेकी सूचना करना तथा शनिवारको प्रदोषमें शिवपूजनका माहात्म्य ।
६	विदर्भेश सत्यरथका शाल्वदेशीय राजाओंसे युद्धमें पराजयहोना उसकी गर्भिणी रानीका रातमें किसी गहन वनको चलाजाना और वहीं किसी सरोवरके तटके पास पुत्रको उत्पन्नकर पानीपीनेको तालबमें जातेही मगरसे माराजाना; भूमिमें पडेहुए

अध्याय — विषय

नवजात कुमारको किसी मार्गचलतीहुई ब्राह्मणीका देखना और दयासे उसे उठानेकी इच्छा होतेहुए भी उसकी जातिका निश्चय न होनेसे उसे न उठासकना; इतनेमें एक योगीके कथनसे उस बालकको अङ्गीकार कर अपने पुत्रके साथ पालनकरना और उनका उपनयन करना; एक समय किसी देवालयमें मुनिमण्डलीमध्यस्थित शाण्डिल्यऋषि-से उस राजपुत्रके मातापिताका इस और पूर्वजन्मका वृत्त जानना और शिवपूजाके व्यतिक्रमसे इस आपत्तिका होना और प्रदोषपूजाका माहात्म्य ।

७ परिवारदेवतासहित शिवपूजाविधान; शुचिव्रतविप्र और धर्मगुप्त राजकुमारको शाण्डिल्यद्वारा शिवदीक्षाका प्राप्तहोना; विप्रकुमारको निधि तथा राजकुमारको गन्धर्वकन्याका लाभ होना; श्वशुरसे मिली हुई गन्धर्वसेना द्वारा राजपुत्रका अपने राज्यको जीतना ।

८ चित्रवर्मकी राजकुँवारीका यौवनारम्भमें विधवा होना; मैत्रेयीके उपदेश और सोमवारव्रतके प्रभावसे उसके पति चन्द्राङ्गदका नागलोकसे आना और शत्रुओंके बन्धनसे अपने मातापिताको छुडाना तथा स्वराज्यप्राप्ति ।

९ विदर्भदेशके वेदमित्रके पुत्र सुमेधा और सारस्वत ब्राह्मणके पुत्र सामवानका सम्पूर्ण विद्या पढकर अपने देशके राजाके पास धनाभिलाषसे जाना; उसने उन्हें निषधराजकी सीमन्तिनी रानीके पास इस आशयसे भेजना कि वह रानी स्त्रीपुरुषकी पूजा करतीहै तुम भी एक स्त्री और एक पुरुष हो वहां जाओ वह प्रचुर धन देगी; उनका वैसा करना और उनमें सामवानका स्त्रीवेषधर स्त्रीपंक्तिमें और सुमेधाका पुरुषमण्डलीमें बैठना; रानीने शुद्धाशय तथा स्त्रीबुद्धिसे सामवानकी पूजा करना सामवानका स्त्री होजाना; विदर्भराजके श्रीगौरीकी प्रार्थनासे सारस्वतको गुणवान पुत्र उत्पन्न होना और सारस्वती सुमेधाका विवाह ।

१० मन्दरनामक ब्राह्मणकी पिङ्गला वेश्यामें आसक्ति; ऋषभयोगीके सत्कारसे उस दुर्वृत्त ब्राह्मणका वज्रबाहुराजाकी रानी सुमतिके गर्भमें जन्म लेना; सपत्नीद्वारा गर्भिणी रानीको विष दियाजाना; रानी और पुत्रका राजाज्ञासे जंगलमें निकालदेना और पद्माकर वैश्यके घर शरण पाना; वहीं राजपुत्रका मरण और ऋषभके दियेहुए भस्मके प्रभावसे राजकुँवरका पुनर्जन्म इत्यादि ।

११ शिवयोगीकी सेवासे पिङ्गला वेश्याका जन्मान्तरमें राजपुत्री होना; राजपुत्रके प्रति शिवयोगी ऋषभका सदाचार नीति आदिका उपदेश ।

१२ भद्रायु राजपुत्रको ऋषभ द्वारा शिवकवच, शंख, खङ्ग और बारह हजार हाथियोंके बलकी प्राप्ति ।

१३ दशार्णाधिप वज्रबाहुको मगधेश हेमरथने संग्राममें हराकर कैद करना; वनमें निकालेहुए उसके पुत्र भद्रायुको इसका पता लगना और शत्रुओंसे युद्धकर उनको पकडलेना तथा अपने पिताआदिकी बन्दी छुडाकर उनको राज्यमें स्थापित करना; ऋषभके उपदेशसे चन्द्राङ्गद राजाकी कुमारीसे भद्रायुका विवाह होना ।

१४ भद्रायु और उसकी सास श्वशुर तथा धनदवैश्य आदिकी भक्तिकी परीक्षा कर उनको महादेवजीने पार्षद बनाना ।

श्रीगणेशाय नमः । अथ ब्रह्मोत्तरखण्डप्रारम्भः । दोहा—शिवा सहित शिवपदकमल प्रेम सहित शिरनाय। श्रीब्रह्मोत्तरखंडकी, भाषा लिखत बनाय ॥ १ ॥ ज्योतिर्मात्रस्वरूप निर्मल ज्ञानचक्षु और ब्रह्मस्वरूप शान्त शिवजीकी लिंगमूर्त्तिको प्रणाम करता हूँ ॥ १ ॥ ऋषि बूझने लगे । हे सूतजी ! पवित्र और सम्पूर्ण पापोंको नष्ट करनेवाला तुमने विष्णुभगवान्‌का माहात्म्य संक्षेपसे कहा और हमने सुना ॥ २ ॥ इस समय सम्पूर्ण पापोंका नष्ट करनेवाला शिवजीका और उनके भक्तोंका माहात्म्य सुननेकी हमारी इच्छा है ॥ ३ ॥ हे द्विजसत्तम ! उनके मन्त्रोंका माहात्म्य

श्रीगणेशाय नमः ॥ ॥ श्रीमद्वेङ्कटेशाय नमः ॥ ॥ अथब्रह्मोत्तरखंडप्रारंभः ॥ ज्योतिर्मात्रस्वरूपाय निर्मलज्ञानचक्षुषे ॥ नमः शिवायशांतायब्रह्मणेलिंगमूर्त्तये ॥ १ ॥ ॥ ऋषयऊचुः ॥ ॥ आख्यातंभवतासूतविष्णोर्माहात्म्यमुत्तमम् ॥ समस्ताघहरंपुण्यंसमासेन श्रुतंचनः ॥ २ ॥ इदानींश्रोतुमिच्छामोमाहात्म्यंत्रिपुरद्विषः ॥ तद्भक्तानांचमाहात्म्यमशेषाघहरंपरम् ॥ ३ ॥ तन्मंत्राणांचमाहात्म्यंतथैवद्वि जसत्तम ॥ तत्कथायाश्चतद्भक्तेःप्रभावमनुवर्णय ॥ ४ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ एतावदेवमर्त्यानांपरंश्रेयःसनातनम् ॥ यदीश्वरकथायांवैजा ताभक्तिरहैतुकी ॥ ५ ॥ अतस्तद्भक्तिलेशस्यमाहात्म्यंवर्ण्यतेमया ॥ अपिकल्पायुषानालंवक्तुंविस्तरतः क्वचित् ॥ ६ ॥ सर्वेषामपिपुण्या नांसर्वेषांश्रेयसामपि ॥ सर्वेषामपियज्ञानांजपयज्ञःपरःस्मृतः ॥ ७ ॥

और उनकी कथा तथा उनकी भक्तिका वर्णन करो ॥ ४ ॥ सूतजी बोले । यही मनुष्योंका सनातन परम कल्याणहै, कि जो ईश्वरकी कथामें विना प्रयोजन भक्ति उत्पन्न हुई है ॥ ५ ॥ इस कारण उनकी भक्तिके लेशमात्रका माहात्म्य वर्णन करताहूं, कारण कि विस्तारपूर्वक वर्णन करनेको तो एक कल्पकी अवस्थासे भी कोई समर्थ नहींहै, अर्थात् एक कल्पमें भी कोई वर्णन नहीं करसकता ॥ ६ ॥ सब पुण्य, सब कल्याण और

सब यज्ञोंमें जप यज्ञ श्रेष्ठ कहा है ॥ ७ ॥ सो सबसे पहिले जपयज्ञके फलदाता शिवजीके षडक्षर मन्त्रको बहुत कल्याण करनेवाला महर्षिलोग कहतेहैं ॥ ८ ॥ जिस प्रकार देवताओंमें शंकर श्रेष्ठ हैं. इसीप्रकार मन्त्रोंमें यह षडक्षर मन्त्र श्रेष्ठहै॥ ९ ॥ यह पंचाक्षर मन्त्र जप करनेवालोंको मुक्ति देताहै सिद्धि चाहनेवाले संपूर्ण श्रेष्ठ मुनीश्वर इसका सेवन करतेहैं ॥ १० ॥ इसके अक्षर माहात्म्यका वर्णन करनेको ब्रह्माजी भी समर्थ नहींहैं, श्रुतियें जिस सिद्धान्तमें परम निर्वृत्तिको प्राप्त हुईहैं ॥ ११ ॥ सर्वज्ञ परिपूर्ण, सच्चिदानन्द और सुलक्षण शिवजी भी उस सुन्दर पंचाक्षरमें रमण करते (विराजते) हैं ॥ १२ ॥

तत्रादौजपयज्ञस्यफलंस्वस्त्ययनंमहत् ॥ शैवंषडक्षरंदिव्यंमंत्रमाहुर्महर्षयः ॥ ८ ॥ देवानांपरमोदेवोयथावैत्रिपुरांतकः ॥ मंत्राणांपरमो मंत्रस्तथासोऽयंषडक्षरः ॥ ९ ॥ एषपंचाक्षरोमंत्रोजप्तॄणांमुक्तिदायकः ॥ संसेव्यतेमुनिश्रेष्ठैरशेषैःसिद्धिकांक्षिभिः ॥ १० ॥ अस्यै वाक्षरमाहात्म्यंनालंवक्तुंचतुर्मुखः ॥ श्रुतयोयत्रसिद्धांतंगताःपरमनिर्वृताः ॥ ११ ॥ सर्वज्ञःपरिपूर्णश्चसच्चिदानंदलक्षणः ॥ सशिवो यत्ररमतेशैवेपंचाक्षरेशुभे ॥ १२ ॥ एतेनमंत्रराजेनसर्वोपनिषदात्मना ॥ लेभिरेमुनयःसर्वेपरंब्रह्मनिरामयम् ॥ १३ ॥ नमस्कारे णजीवत्वंशिवेऽत्रपरमात्मनि ॥ यइत्यैक्यंगतोमंत्रःपरब्रह्ममयोह्यसौ ॥ १४ ॥ भवपाशनिबद्धानांदेहिनांहितकाम्यया ॥ ॐ नमः शिवायेतिमंत्रमाहशिवःस्वयम् ॥ १५ ॥ किंतस्यबहुभिर्मंत्रैःकिंतीर्थैःकिंतपोऽध्वरैः ॥ यस्योंनमःशिवायेतिमंत्रोहृदयगोचरः ॥ १६ ॥

सब उपनिषदोंकी आत्मा इस मन्त्रराजके जप करनेसे सम्पूर्ण मुनि निरामय परब्रह्मको प्राप्त हुए ॥ १३ ॥ परमात्मा शिवजीको प्रणाम करनाही जीवनहै जो यह एकताको प्राप्त हुआ मन्त्र निश्चयपूर्वक परब्रह्ममय है ॥ १४ ॥ संसाररूपी पाशमें बँधेहुए प्राणियोंको हितकी कामनासे उन शिवजीको प्रणामहै (ॐ नमः शिवाय) यह मन्त्र शिवजीने स्वयं कहा है ॥ १५ ॥ ॐ नमः शिवाय यह मन्त्र जिसके हृदयमें स्थितहै. उसको बहुत मन्त्र बहुत तीर्थ

और बहुत यज्ञ करनेसे क्या प्रयोजनहै ॥ १६ ॥ मनुष्य तभी तक इस दुःखसे व्याप्त और दारुण संसारमें भ्रमताहै, जबतक एक बार भी (ॐनमः शिवाय) इसमंत्रका उच्चारण नहीं करता ॥ १७ ॥ यह मंत्रराज सब वेदोंका मुकुटरूपहै, और यही षडक्षरमंत्र सब ज्ञानका निधानहै ॥ १८ ॥ यह कैवल्यमार्गको दीपकरूपहै, और अविद्यारूप सिंधुको वडवानलहै, तथा महापातकोंके निमित्त यही षडक्षरमंत्र दावाग्निरूपहै ॥ १९ ॥ मुक्तिको चाहनेवाले स्त्री, शूद्र तथा अन्य संकीर्ण जातिवाले सब कोई इसको धारण करतेहैं. दीक्षा, होमसंस्कार और

तावद्भ्रमंतिसंसारेदारुणेदुःखसंकुले ॥ यावन्नोच्चारयंतीमंमंत्रंदेहभृतःसकृत् ॥ १७ ॥ मंत्राधिराजराजोऽयंसर्ववेदांतशेखरः ॥ सर्वज्ञाननिधानंचसोऽयंचैवषडक्षरः ॥ १८ ॥ कैवल्यमार्गदीपोऽयमविद्यासिंधुवाडवः ॥ महापातकदावाग्निःसोऽयंमंत्रःषडक्षरः ॥ १९ ॥ स्त्रीभिःशूद्रैश्चसंकीर्णैर्धार्यतेमुक्तिकांक्षिभिः ॥ नास्यदीक्षानहोमश्चनसंस्कारोनतर्पणम् ॥ २० ॥ नकालोनोपदेशश्चसर्वःशुचिरयंमनुः ॥ महापातकविच्छित्त्यैशिवइत्यक्षरद्वयम् ॥ २१ ॥ अलंनमस्क्रियायुक्तोमुक्तयेपरिकल्पते ॥ उपदिष्टःसद्गुरुणाजप्तःक्षेत्रेचपावने ॥ २२ ॥ सद्योयथेप्सितांसिद्धिंददातीतिकिमद्भुतम् ॥ सद्गुरुंहिसमाश्रित्यग्राह्योऽयंमंत्रनायकः ॥ २३ ॥

तर्पण यह कुछ नहीं कियेजाते ॥ २० ॥ न समयहै, न उपदेशहै क्योंकि यह मंत्र सब प्रकारसे शुद्धहै, महापातकोंको काटनेके निमित्त "शिव" यही दो अक्षर बहुत हैं ॥ २१ ॥ और नमस्कार करना तो मुक्तिके लिये कल्पना कियाजाताहै, अर्थात् शिवको नमस्कार करनेसे मुक्ति होतीहै. श्रेष्ठ गुरुके द्वारा उपदेश कियाहुआ और पवित्र क्षेत्रमें जपाहुआ ॥ २२ ॥ तत्काल यथेप्सित सिद्धिको देताहै, इससे अधिक और क्या अद्भुत (आश्चर्य) होगा,

श्रेष्ठगुरुको पाकर इस मंत्रनायकका ग्रहण करना चाहिये ॥ २३ ॥ पवित्रक्षेत्रमें जपकरनेसे तत्काल सिद्धि प्राप्त होतीहै, निर्मल, शांत, साधु और थोड़ा बोलनेवाले, इसप्रकार गुरुहों ॥ २४ ॥ काम क्रोधसे रहित सदाचारयुक्त, जितेन्द्रिय इन गुणोंसे युक्त गुरुओंके द्वारा दयापूर्वक दियाहुआ मंत्र शीघ्र सिद्ध होजाताहै ॥ २५ ॥ जपकरनेयोग्य क्षेत्रोंको संक्षेपसे कहताहूं, प्रयाग, पुष्कर, सुन्दर केदार, सेतुबंध ॥ २६ ॥ गोकर्ण, नैमिषारण्य, इन स्थानोंमें जपकरनेसे मनुष्योंको शीघ्र सिद्धि प्राप्त होतीहै, इसविषयमें श्रेष्ठ पुरुषोंने पुरातन इतिहास वर्णन कियाहै ॥ २७ ॥ यह इतिहास अनेक बार अथवा

पुण्यक्षेत्रेषुजप्तव्यःसद्यःसिद्धिंप्रयच्छति ॥ गुरवोनिर्मलाःशांताःसाधवोमितभाषिणः ॥ २४ ॥ कामक्रोधविनिर्मुक्ताःसदाचाराजितेंद्रियाः ॥ एतैःकारुण्यतोदत्तोमंत्रःक्षिप्रंप्रसिध्यति ॥ २५ ॥ क्षेत्राणिजपयोग्यानिसमासात्कथयाम्यहम् ॥ प्रयागंपुष्करंरम्यंकेदारंसेतुबंधनम् ॥ २६ ॥ गोकर्णंनैमिषारण्यंसद्यःसिद्धिकरंनृणाम् ॥ अत्रानुवर्ण्यतेसद्भिरितिहासःपुरातनः ॥ २७ ॥ असकृद्वासकृद्वापिशृण्वतांमंगलप्रदः ॥ मथुरायांयदुश्रेष्ठोदाशार्हइतिविश्रुतः ॥ २८ ॥ बभूवराजामतिमान्महोत्साहोमहाबलः शास्त्रज्ञोनयवाक्शूरोधैर्यवानमितद्युतिः ॥ २९ ॥ अप्रधृष्यःसुगंभीरःसंग्रामेष्वनिवर्त्तितः ॥ महारथोमहेष्वासोनानाशास्त्रार्थकोविदः ॥ ३० ॥ वदान्योरूपसंपन्नोयुवालक्षणसंयुतः ॥ सकाशीराजतनयामुपयेमेवराननाम् ॥ ३१ ॥

एक बार भी सुननेवालोंको मंगलदेताहै, मथुरापुरीमें दाशार्हनामक यदुओंमें श्रेष्ठ॥ २८ बुद्धिमान्, बड़ा पराक्रमी, बलवान्, शास्त्रको जाननेवाला, नीतिमें चतुर, वाक्शूर, धैर्यवान्, बड़ीकान्तिवाला ॥ २९ ॥ अप्रधृष्य, गम्भीर, संग्राममें न लौटनेवाला, महारथी बड़ेधनुषवाला, अनेकशास्त्रोंके अर्थका जाननेवाला ॥ ३० ॥ चतुर, स्वरूपवान्, युवावस्थाके लक्षणोंसे संपन्न राजा विख्यात था, उसने काशीके राजाकी सुन्दरमुखवाली कन्याके साथ

विवाह किया ॥ ३१ ॥ कान्ता, रूपशीलआदि गुणसंपन्न कलावती नामक कन्याके साथ विवाह करके वह राजा अपने मन्दिरमें आया ॥ ३२ ॥ एक समय रात्रिको सोतीहुई अपनी प्यारी भार्याको संगमके निमित्त बुलाया, राजाके बुलाने और बहुत प्रार्थना करनेपर भी ॥ ३३ ॥ उसने न तो राजामें मन लगाया और न उसके निकट गई, संगमके निमित्त बुलानेपर जब वह राजाकी वल्लभा न गई ॥ ३४ ॥ तब बलपूर्वक लानेकी इच्छासे राजा उठा, रानी बोली हे राजन् ! इसमें कारण है मैं व्रतमें स्थितहूं मुझको मत छू मत छू॥ ३५॥तुम धर्म, अधर्मको जानतेहो, मेरे साथ संगमके निमित्त

कांतांकलावतींनामरूपशीलगुणान्विताम् ॥ कृतोद्वाहःसराजेंद्रःसंप्राप्यनिजमंदिरम् ॥ ३२ ॥ रात्रौतांशयनारूढांसंगमायतदाह्वयत ॥ सास्वभर्त्रासमाहूताबहुशःप्रार्थितासती ॥३३॥ ननबंधमनस्तस्मिन्नचागच्छत्तदंतिकम् ॥ संगमाययदाहूतानागतानिजवल्लभा ॥३४॥ बलादाहर्तुकामस्तामुदतिष्ठन्महीपतिः ॥ मामास्पृशमहाराजकारणज्ञांव्रतेस्थिताम् ॥ ३५ ॥ धर्माधर्मौविजानासिमाकार्षीःसाहसं मयि ॥ क्वचित्प्रियेणभुक्तंयद्रोचतेतुमनीषिणाम् ॥ ३६ ॥ दंपत्योःप्रीतियोगेनसंगमःप्रीतिवर्द्धनः ॥ प्रियंयदामेजायेततदासंगस्तुतेमयि ॥ ३७ ॥ काप्रीतिःकिंसुखंपुंसांबलाद्भोगेनयोषितः ॥ अप्रीतांरोगिणींनारीमंतर्वत्नींधृतव्रताम् ॥ ३८ ॥ रजस्वलामकामांचनकामे तबलात्पुमान् ॥ प्रीणनंलालनंपोषंरंजनंमार्दवंदयाम् ॥ ३९ ॥

साहस मतकरो कारण कि बुद्धिमानोंको वही श्रेष्ठ है कि जो प्रेमपूर्वक संगम हो ॥ ३६ ॥ स्त्री पुरुषकी प्रीतिसे जो संगमहै, वही प्रीतिको बढातीहै, जब मेरी प्रीतिहो तब मेरे साथ संगम करना ॥ ३७ ॥ स्त्रीको बलपूर्वक भोगनेसे पुरुषोंको क्या प्रीति और सुखहै । अप्रसन्न, रोगिणी, गर्भवती, व्रतमें स्थित ॥ ३८ ॥ रजस्वला और जिसको कामकी चेष्टा न हो इतनी स्त्रियोंके साथ मनुष्य बलपूर्वक संगम न करे ! प्रीणन, लालन, पोषण,

रंजन, सीधापन और दयासे ॥ ३९॥ युवतीभार्याके साथ प्रेम करनेवाला पति संगम करे, इसप्रकार रति न चाहनेवाली व्रतमें स्थित में इच्छा न करना चाहिये इस प्रकार रानीके कहनेपर भी कामसे व्याकुल हुए उस राजाने बलपूर्वक रानीका हाथ पकडकर आलिङ्गन करलिया ॥४०॥४१॥ किन्तु स्पर्शकरते ही रानीका शरीर तप्त लोहपिंडसागरमें विदित हुआ, और स्पर्श करनेसे जब अपना शरीर जलने लगा, तब भयसे व्याकुल होकर रानीको छोडदिया ॥ ४२ ॥ राजा बोला, हे प्रिये ! अहो बडा आश्चर्य है मैंने तुममें देखा कि कमलके समान कोमल तुम्हारा शरीर अग्निके समान किस

कृत्वावधूमुपगमेद्युवतींप्रेमवान्पतिः ॥ युवतौकुसुमेचैवविधेयंसुखमिच्छता ॥ ४० ॥ इत्युक्तोऽपितयासाध्व्यासराजास्मरविह्वलः ॥ बलादाकृष्यतांहस्तेपरिरेभेरिरंसया ॥ ४१ ॥ तांस्पृष्टमात्रांसहसातप्तायःपिंडसन्निभाम् ॥ निर्दहंतीमिवात्मानंतत्याजभयविह्वलः॥४२॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ अहोसुमहदाश्चर्यमिदंदृष्टंतवप्रिये ॥ कथमग्निसमंजातंवपुःपल्लवकोमलम् ॥ ४३ ॥इत्थंसुविस्मितोराजाभीतःसाराजवल्लभा ॥ प्रत्युवाचविहस्यैनंविनयेनशुचिस्मिता ॥ ४४ ॥ ॥ राज्युवाच ॥ ॥ राजन्ममपुराबाल्येदुर्वासामुनिपुंगवः ॥ शैवींपंचाक्षरींविद्यांकारुण्येनोपदिष्टवान् ॥ ४५ ॥ तेनमंत्रानुभावेनममांगंकलुषोज्झितम् ॥ स्प्रष्टुंनशक्यतेपुंभिःसपापैर्दैववर्जितैः ॥४६॥

प्रकार होगया ॥ ४३ ॥ इस प्रकार विस्मित हुआ राजा भय करनेलगा, तब हँसकर नीतिपूर्वक विनयसे हाथजोडकर वह राजवल्लभा राजासे बोली ॥ ४४ ॥ रानी बोली, हे राजन् ! पहिले बालकपनमें मुनिश्रेष्ठ दुर्वासा ऋषिने मेरे ऊपर दयाकरके शिवजीकी पंचाक्षरी विद्याका मुझको उपदेश दियाथा ॥ ४५ ॥ उस पंचाक्षर मंत्रके प्रभावसे मेरा शरीर निष्पाप होगयाहै, इसकारण दैववर्जित अर्थात् मंत्रहीन और पापी पुरुष मेरा स्पर्श नहीं कर

सकते ॥ ४६ ॥ तुम भी रजोगुणयुक्त हो और कुलटा तथा वेश्याओंके साथ गमन करतेहो, मदिरापान करतेहो ॥ ४७ ॥ स्नान नहीं करते, संध्या, तथा पवित्र मंत्रका जप नहीं करते और शिवजीकी आराधना नहीं करते, फिर किसप्रकार मेरा स्पर्श करसकतेहो ॥ ४८ ॥ राजा बोला कि हे सुश्रोणि ! हे प्रिये ! उस पंचाक्षरी विद्याका मुझको भी उपदेश कर जिससे निष्पाप होकर तुम्हारे साथ प्रीतिकी इच्छा करताहूँ॥४९॥यह सुनकर रानी बोली आप गुरुहैं इसलिये मैं आपको उपदेश नहीं करसकती अपने कुलगुरु मंत्रोंको जाननेवाले गर्गमुनिसे मन्त्रोपदेश लेनेके निमित्त जाओ ॥ ५० ॥

त्वयाराजप्रकृतिनाकुलटागणिकादयः ॥ मदिरास्वादनिरतानिषेव्यंतेसदास्त्रियः ॥ ४७ ॥ नस्नानंक्रियतेनित्यंनमंत्रोजप्यतेशुचिः ॥ नाराध्यतेत्वयेशानःकथंमांस्प्रष्टुमर्हसि ॥ ४८ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ तांसमाख्याहिसुश्रोणिशैवींपंचाक्षरींशुभाम् ॥ विद्याविध्वस्तपापोऽहंत्वयीच्छामिरतिंप्रिये ॥ ४९ ॥ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ ॥ नाहंतवोपदेशंवैकुर्याममगुरुर्भवान् ॥ उपातिष्ठगुरुंराजन्गर्गंमंत्रविदांवरम् ॥ ॥ ५० ॥ सूतउवाच ॥ ॥ इतिसंभाष्यमाणौतौदंपतीगर्गसन्निधिम् ॥ प्राप्यतच्चरणौमूर्ध्नाववंदातेकृतांजली ॥ ५१ ॥ अथराजागुरुंप्रीतमभिपूज्यपुनःपुनः ॥ समाचष्टविनीतात्मारहस्यात्ममनोरथम् ॥ ५२ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ कृतार्थंमांकुरुगुरोसंप्राप्तंकरुणार्द्रधीः ॥ शैवींपंचाक्षरींविद्यामुपदेष्टुंत्वमर्हसि ॥ ५३ ॥

सूतजी ऋषियोंसे कहनेलगे कि इस प्रकार कहकर वे दोनों गर्गमुनिके पास गये और जाकर दोनोंने हाथ जोड़ और शिर झुकाकर उनके चरणोंमें प्रणाम किया ॥ ५१ ॥ और प्रसन्नतासे बारंबार प्रणाम करके पूजन करके नम्रभावसे एकान्तमें अपने मनोरथको कहा ॥ ५२ ॥ राजा बोला कि हे गुरो ! करुणापूर्वक प्राप्त हुए मुझको कृतार्थ करो, शिवजीकी पंचाक्षरी विद्याका उपदेश करनेको तुम समर्थ हो ॥ ५३ ॥

रजोगुणसे अज्ञान वा ज्ञानसे किया हुआ जो कुछहै वह सब पाप जिससे नष्ट होजाय इस प्रकारका उपदेश मुझको दो ॥५४॥ इस प्रकार राजाकी विनती सुनकर ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ गर्गमुनि उन दोनों (राजारानी) को कालिन्दी (यमुना) नदीके पवित्र तटपर लेगये ॥ ५५ ॥ वहां पवित्र वृक्षकी जडमें गुरुजी स्वयं बैठगये. पवित्र तीर्थके जलमें स्नान कराकर राजाको व्रत कराया ॥ ५६ ॥ पूर्वाभिमुख होकर बैठे और शिवजीके चरणकमलोंको प्रणाम किया.

अनाज्ञातंयदाज्ञातंयत्कृतंराजकर्मणा ॥ तत्पापंयेनशुद्ध्येततन्मंत्रंदेहिमेगुरो ॥ ५४ ॥ एवमभ्यर्थितोराज्ञागर्गोब्राह्मणपुंगवः ॥ तौनिनायमहापुण्यंकालिंद्यास्तटमुत्तमम् ॥ ५५ ॥ तत्रपुण्यतरोर्मूलेनिषण्णोऽथगुरुःस्वयम् ॥ पुण्यतीर्थजलेस्नातंराजानंसमुपोषितम् ॥ ५६ ॥ प्राङ्मुखंचोपवेश्याथनत्वाशिवपदांबुजम् ॥ तन्मस्तकेकरंन्यस्यददौमंत्रंशिवात्मकम् ॥ ५७ ॥ तन्मंत्रधारणादेवतन्मुनेर्हस्तसंगमात् ॥ निर्ययुस्तत[illegible]शतकोटयः ॥ ५८ ॥ तेदग्धपक्षाःक्रोशंतोनिपतंतोमहीतले ॥ भस्मीभूतास्ततःसर्वेदृश्यंतेस्मसहस्रशः ॥ ५९ ॥ दृष्ट्[illegible]दह्यमानंसुविस्मितौ ॥ राजाचराजमहिषीतंगुरुंपर्यपृच्छताम् ॥ ६० ॥

फिर उस राजाके मस्तकपर हाथ रखकर शिवजीके पंचाक्षर मन्त्रका उपदेश दिया ॥ ५७ ॥ मन्त्र और गुरुजीके हाथ रखनेके प्रभावसे राजाके शरीर मेंसे करोड़ों वायस (कौए) निकले॥५८॥दग्ध हैं पंख जिनके ऐसे वे काग शब्द करते हुए पृथ्वीपर गिरनेलगे और गिर गिर कर हजारों भस्मीभूत होनेलगे ॥ ५९ ॥ उन इसप्रकार निकलकर भस्म होतेहुए अनेक वायसोंको देखकर वे दोनों आश्चर्य करनेलगे, तब राजारानीने गुरुजीसे बूझा ॥६०॥

गुरुजी बोले, कि, हे राजन् ! तुमने सहस्रों जन्मोंमें अनेक पाप संचित कियेहैं ॥ ६१ ॥ उन सहस्रों जन्मोंमें कुछ पुण्य भी किये हैं, उन पुण्योंके अधिक होनेसे तुम्हारा उत्तम कुलमें जन्म हुआहै ॥ ६२ ॥ पाप अधिक होनेसे मनुष्य नीच योनियोंमें जन्म लेताहै, और पाप पुण्य बराबर किये हैं तो साधारण मनुष्यजन्मकी प्राप्ति होतीहै ॥ ६३ ॥ जिस समय शिवजीका पंचाक्षर मन्त्र तुम्हारे हृदयमें गया, तभी तुम्हारे करोड़ों पाप काकरूप होकर

॥ गुरुरुवाच ॥ ॥ राज[illegible]भवतापरिधावता ॥ संचितानिदुरन्तानि संतिपापान्यनेकशः ॥ ६१ ॥ तेषुजन्मसहस्रेषुया निपुण्यानिसंतिते ॥ [illegible]प्राधिक्यतःकापिजायतेपुण्ययोनिषु ॥ ६२ ॥ तथापापीयसींयोनिंकचित्पापेनगच्छति ॥ साम्येपुण्यान्ययोश्चैवमानुषींयोनिमा[illegible]न् ॥ ६३ ॥ शैवींपंचाक्षरींविद्यांयदातेहृदयंगता ॥ अघानांकोटयस्त्वत्तःकाकरूपेणनिर्गताः ॥ ६४ ॥ कोटयोब्रह्महत्यानामगम्यागम्यकोटयः ॥ भवकोटिसहस्रेषुयेऽन्येपातकराशयः ॥ ६५ ॥ क्षणाद्भस्मीभवंत्येवश्रैवेपंचाक्षरेधृते ॥ आसंस्तवाद्यराजेंद्रदग्धाःपातककोटयः ॥ ६६ ॥ अनयासहपूतात्माविहरस्वयथासुखम् ॥ इत्याभाष्यमुनिश्रेष्ठस्तंमंत्रमुपदिश्यच ॥ ६७ ॥ ताभ्यांविस्मितचित्ताभ्यांसहितःस्वगृहंययौ ॥ गरुवर्यमनुज्ञाप्यमुदितौतौचदंपती ॥ ६८ ॥

तुम्हारे शरीरसे निकल गये ॥ ६४ ॥ करोड़ों ब्रह्महत्या, अगम्यागमन और करोड़ों जन्मोंमें अन्य जो पाप कियेहैं वे ॥ ६५ ॥ शिवजीका पंचाक्षर मन्त्र धारण करनेसे निःसंदेह क्षणमात्रमें भस्मीभत होजाते हैं, हे राजेन्द्र ! तुम्हारे पापसमूह दग्ध होगये ॥ ६६ ॥ अब अपनी इस प्यारी भार्याके साथ सुखपूर्वक विहार करो. इसप्रकार कह और मन्त्रका उपदेश देकर ॥ ६७ ॥ विस्मित चित्तवाले उन दोनोंके साथ मुनिश्रेष्ठ गर्गमुनि अपने घर आये,

फिर गुरुजीकी आज्ञासे प्रसन्न हुए वे दोनों ॥ ६८ ॥ अपने घर आकर महाकान्तिवाले वे दोनों सुखपूर्वक विहार करनेलगे, चन्दनके समान शीतल अपनी पत्नीको आलिंगन करके इसप्रकार राजा परम सन्तुष्ट हुआ, जैसे कोई अपनी निधिको पाकर सन्तुष्ट हो ॥ ६९ ॥ इतनी कथा सुनाय सूतजी ऋषियोंसे कहने लगे. कि संपूर्ण वेद, उपनिषद, पुराण, शास्त्रोंका शिरोमणि, सम्पूर्ण पापोंको नष्ट करनेवाला यह शिवजीके पंचाक्षर मन्त्रका प्रभाव तुम्हारे प्रति संक्षेपसे कथन किया कारण कि विस्तारसे कहां तक कहसक्तेहैं ॥ ७० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां

ततःस्वभवनंप्राप्यरेजतुःस्ममहाद्युती ॥ राजाहृष्टःसमाश्लिष्यपत्नींचंदनशीतलाम् ॥ संतोषंपरमंलेभेनिःस्वःप्राप्ययथाधनम् ॥ ६९॥ अशेषवेदोपनिषत्पुराणशास्त्रावतंसोऽयमघांतकारी ॥ पंचाक्षरस्यैवमहाप्रभावोमयासमासात्कथितोवरिष्ठः ॥ ७० ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडेपंचाक्षरवर्णनंनामप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ अथान्यदपिवक्ष्यामिमाहात्म्यंत्रिपुरद्विषः ॥ श्रुतमात्रे णयेनाशुच्छिद्यंतेसर्वसंशयाः ॥ १ ॥ अतःपरतरंनास्तिकिंचित्पापविशोधनम् ॥ सर्वानंदकरंश्रीमत्सर्वकामार्थसाधनम् ॥ २ ॥ दीर्घायुर्विजयारोग्यभुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ यदनन्येनभावेनमहेशाराधनंपरम् ॥ ३ ॥

पंचाक्षरप्रभाववर्णनं नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ अथ द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ सूतजी बोले । हे ऋषियो ! एक और त्रिपुरदैत्यको मारनेवाले शिवजी का माहात्म्य वर्णन करताहूं, जिसके सुननेमात्रसे शीघ्रही सब सन्देह नष्ट होजातेहैं ॥ १ ॥ इससे अधिक पापको नष्ट करनेवाला सर्वानन्दकरनेवाला, संपूर्ण कामनाओंको सिद्ध करनेवाला ॥ २ ॥ दीर्वायु, विजय, आरोग्यता और भुक्तिमुक्तिके फलको देनेवाला और कोई प्रायश्चित्त नहींहै, जिसप्र

कार अनन्यभावसे शिवजीका आराधन है ॥ ३ ॥ आर्द्र, शुष्क, अल्प और बडोंके निमित्त भी यही प्रायश्चित्त है. इससे अधिक कुछ नहींहै ॥ ४ ॥ जो पाप कभी नष्ट नहीं होते ऐसे भयके देनेवाले पापोंका प्रायश्चित्त जाननेवाले महामुनियोंने प्रायश्चित्त निर्दिष्ट कियाहै ॥ ५ ॥ यही परम कल्याण कारी है, कि जो भक्तिपूर्वक परमेश्वर शिवदेवका पूजन कियाजाय ॥ ६ ॥ जाने, विनाजाने, जिस किसी हेतुसे जो कुछ शिवजीके निमित्त कियाहै, वह सब परम फल अर्थात् मुक्ति देताहै ॥ ७ ॥ माघमासके कृष्णपक्षकी चतुर्दशीको उपवास करना दुर्लभहै, उपवास होजाय तो रात्रिको जागरण

आर्द्राणामपिशुष्काणामल्पानांमहतामपि ॥ एतदेवविनिर्दिष्टंप्रायश्चित्तमथोत्तमम् ॥ ४ ॥ सर्वकालेऽप्यभेद्यानामघानांभयकारणम् ॥ महामुनिविनिर्दिष्टैःप्रायश्चित्तैरथोत्तमैः ॥ ५ ॥ इदमेवपरंश्रेयःसर्वशास्त्रविनिश्चितम् ॥ यद्भक्त्यापरमेशस्यपूजनंपरमोदयम् ॥ ॥ ६ ॥ जानताजानतावापियेनकेनापिहेतुना ॥ यत्किंचिदपिदेवायकृतंकर्मविमुक्तिदम् ॥ ७ ॥ माघेकृष्णचतुर्दश्यामुपवा सोऽतिदुर्लभः ॥ तत्रापिदुर्लभंमन्येरात्रौजागरणंनृणाम् ॥ ८ ॥ अतीवदुर्लभंमन्येशिवलिंगस्यदर्शनम् ॥ सुदुर्लभतरंमन्येपूजनंपरमे शितुः ॥ ९ ॥ भवकोटिशतोत्पन्नपुण्यराशिविपाकतः ॥ लभ्यतेवापुनस्तत्रबिल्वपत्रार्चनंविभोः ॥ १० ॥ वर्षाणामयुतंयेनस्नातंगं गासरिज्जले ॥ सकृद्बिल्वार्चनेनैवतत्फलंलभतेनरः ॥ ११ ॥

करना दुर्लभहै ॥ ८ ॥ जागरण होजाय तो शिवजीके लिंगका दर्शन तो बहुत ही दुर्लभ मानताहूं, फिर शिवजीका पूजन करना तो बहुत ही दुर्लभहै ॥ ९ ॥ अनेक जन्मोंसे सञ्चित किये करोड़ों और सैंकड़ों पुण्योंके उदयसे बिल्वपत्रके द्वारा शिवजीका पूजन प्राप्त होताहै ॥ १० ॥ कारण कि दश हजार वर्षपर्यन्त गंगाजीके जलमें स्नान करनेसे जो फल प्राप्त होताहै, वह शिवजीकी एक बिल्वपत्रमात्रसे पूजा करनेसे प्राप्त होजाताहै॥ ११ ॥

प्रत्येकयुगमें जो पुण्य होतेहैं, वे सब इस शिवरात्रिमें स्थितहैं ॥१२॥ ब्रह्मादिदेवता और वशिष्ठ आदि मुनि संसारमें इसी माघमासके कृष्णपक्षकी चतुर्दशीकी प्रशंसा करतेहैं ॥ १३ ॥ इस दिन उपवास करनेसे अनन्त यज्ञोंका फल प्राप्त होताहै, और रात्रिमें जागरण करनेसे करोड़ों तपोंका पुण्य प्राप्त होताहै ॥ १४ ॥ एक बिल्वपत्रसे शिवजीका पूजन करनेसे जो फल मिलताहै, त्रिलोकीमें उस पुण्यकी कोई समानता नहीं करसकता ॥ १५ ॥ इस प्रकार कहकर सूतजी शौनकादिक ऋषियोंसे कहनेलगे कि इसविषयमें सुन्दर और पुण्यको बढानेवाली एक कथाको कहताहूं, जो कि गुप्त भी थी

यानियानितुपुण्यानिलीनानीहयुगेयुगे ॥ माघेसितचतुर्दश्यांतानितिष्ठंतिकृत्स्नशः ॥ १२ ॥ एतामेवप्रशंसंतिलोकेब्रह्मादयःसुराः ॥ मुनयश्ववशिष्ठाद्यामाघेऽसितचतुर्दशीम् ॥ १३ ॥ अत्रोपवासःकेनापिकृतःक्रतुशताधिकः ॥ रात्रौजागरणंपुण्यंकल्पकोटितपोऽधिकम् ॥ १४ ॥ एकेनबिल्वपत्रेणशिवलिंगार्चनंकृतम् ॥ त्रैलोक्यस्यतुपुण्यस्यकोवासादृश्यमिच्छति ॥ १५ ॥ अत्रानुवर्ण्यतेगाथा पुण्यापरमशोभना ॥ गोपनीयापिकारुण्याद्गौतमेनप्रकाशिता ॥ १६ ॥ इक्ष्वाकुवंशजःश्रीमान्राजापरमधार्मिकः ॥ आसीन्मित्रसहोनामश्रेष्ठःसर्वधनुर्भृताम् ॥ १७ ॥ सराजासकलास्त्रज्ञःशास्त्रज्ञःश्रुतिपारगः ॥ वीरोऽत्यंतबलोत्साहोनित्योद्योगीदयानिधिः ॥ १८ ॥ पुण्यानामिवसंघातस्तेजसामिवपंजरः ॥ आश्चर्याणामिवक्षेत्रंयस्यमूर्तिर्विराजते ॥ १९ ॥

तो भी करुणा करके गौतमऋषिने प्रकाश की है॥ १६ ॥इक्ष्वाकुवंशमें उत्पन्न, श्रीमान्, परमधार्मिक, सम्पूर्ण धनुर्विद्या जाननेवालोंमें श्रेष्ठ मित्रसहनामक एक राजा था॥ १७ ॥ वह राजा सब अस्त्रविद्यामें निपुण, शास्त्रको जाननेवाला, वेदार्थका जाननेवाला, वीर, अत्यन्त बली और उत्साही, सदा उद्योग करनेवाला और अत्यन्त दयालु था॥ १८॥अनेक पुण्योंका मानों पुञ्ज, अनेक तेजोंका समूह और अनेक आश्चर्योंका स्थान, इस प्रकारका शरीर था ॥१९॥

हृदय उसका दयासे पूर्ण था, शरीर उसका श्रीसे शोभित था, और चरण जिसके अनेक राजाओंके शीश मुकुटोंसे शोभित थे ॥ २० ॥ एक समय वह राजा आखेट (शिकार) को गया और बडा बलवान् वह राजा बडी गहरी एक गुफामें घुसा ॥ २१ ॥ उसगुफामें अनेक सिंह, गवय, मृग, रुरुमृग,वराह, महिष थे और बहुतसे मृगेन्द्रोंको उसने बाणोंसे वध किया॥ २२॥ और आखेटमें आसक्त हुए उस राजाने बडे दाँतवाले और अग्निके समान आकारवाले फिरते हुए किसी एक निशाचरको मारा ॥ २३ ॥ तब उसका भाई जो दूर था शोकसे व्याकुल अतिक्रोधसे भाईको मराहुआ देखकर

हृदयंदययाक्रांतंश्रियाक्रांतंचतद्वपुः ॥ चरणौयस्यसामंतचूडामणिमरीचिभिः ॥ २० ॥ एकदामृगयाकेलिलोलुपःसमहीपतिः ॥ विवेशगह्वरंघोरंबलेनमहतावृतः २१ ॥ तत्रविव्याधविशिखैःशार्दूलान्गवयान्मृगान् ॥ रुरून्वराहान्महिषान्मृगेंद्रानपिभूरिशः ॥ २२ ॥ सरथीमृगयासक्तोगहनंदंशितश्चरन् ॥ कमपिज्वलनाकारंनिजघाननिशाचरम् ॥ २३ ॥ तस्यानुजःशुचाविष्टोदृष्ट्वादूरेतिरोहितः ॥ भ्रातरंनिहतंदृष्ट्वाचिंतयामासचेतसा ॥ २४ ॥ नन्वेषराजादुर्द्धर्षोदेवानांरक्षसामपि ॥ छद्मनैवप्रजेतव्योममशत्रुर्नचान्यथा ॥ २५ ॥ इतिव्यवसितःपापोराक्षसोमनुजाकृतिः ॥ आससादनृपश्रेष्ठमुत्पातइवमूर्तिमान् ॥ २६ ॥ तंविनम्राकृतिंदृष्ट्वाभृत्यतांकर्तुमागतम् ॥ चक्रेमहानसाध्यक्षमज्ञानात्समहीपतिः ॥ २७ ॥

चित्तमें विचारने लगा कि ॥ २४ ॥ इसको देवता और राक्षस भी नहीं जीतसकते इसकारण इसको छलसे जीतना चाहिये और किसीप्रकारसे नहीं. जीतसकूंगा इससे अवश्य बदलालूंगा क्योंकि यह मेरा शत्रुहै ॥ २५ ॥ इसप्रकार मनमें विचारकर उसपापरूप राक्षसने मनुष्यशरीर धारण किया. और उत्पातकी मूर्ति धारण करके राजाके सन्मुख आकर प्रणाम किया ॥ २६ ॥ नौकरीके निमित्त आये हुए और नम्र हुए उस मनुष्याकार राक्षसको

देख राजाने अज्ञानसे अर्थात् विना जानेही भोजनशालाका अध्यक्ष बनालिया ॥ २७ ॥ फिर उस वनमें कुछ काल राजा पर्यटनकर आखेट पूर्ण होनेपर अपनी पुरीमें आया ॥२८॥उस मुख्यराजेन्द्रकी मदयन्तीनाम रानी थी, जिसप्रकार नलको दमयन्ती प्यारी थी इसीप्रकार उसको भी अपनी स्त्री प्यारी थी ॥ २९ ॥एक समय जब उसके पिताके श्राद्धका दिवस आया तब राजाने मुनिश्रेष्ठ वशिष्ठजीको निमंत्रण दिया और अपने घरमें बुलाया ॥ ३० ॥ तथा अनेकप्रकारके भोजन मुनिको परोसे उस राक्षसने भी समय पाकर कपटसे शाकमें मनुष्यका मांस मिलाकर मुनिके आगे परसदिया ।

अथतस्मिन्वनेराजाकिंचित्कालंविहृत्यसः ॥ निवृत्तोमृगयांहित्वास्वपुरींपुनराययौ ॥ २८॥ तस्यराजेंद्रमुख्यस्यमदयंतीति नामतः ॥ दमयंतीनलस्येवविदितावल्लभासती ॥ २९ ॥ ततोऽस्मिन्समयेराजानिमंत्र्यमुनिपुंगवम् ॥ वशिष्ठंगृहमानिन्येसंप्राप्ते पितृवासरे ॥ ३० ॥ रक्षसासूदरूपेणसंमिश्रितनरामिषम् ॥ शाकामिषंपुरःक्षिप्तंदृष्ट्वागुरुरथाब्रवीत् ॥ ३१ ॥ धिग्धिङ्नरामिषंराजं स्त्वयैतच्छद्मकारिणा ॥ खलेनोपहृतंमेऽद्यअतोरक्षोभविष्यसि ॥ ३२ ॥ रक्षःकृतमविज्ञायशप्त्वैवंसगुरुस्ततः ॥ पुनर्विमृश्यतंशापं चकारद्वादशाब्दिकम् ॥३३॥ राजापिकोपितःप्राहयदिदंमेनचेष्टितम् ॥ नज्ञातंचवृथाशप्तोगुरुंचैवशपाम्यहम् ॥ ३४ ॥

मांस मिलेहुए शाकको आगे रक्खाहुआ देखकर गुरुजी बोले ॥ ३१ ॥ कि हे राजन् ! तूने छलसे मेरे आगे मनुष्यका मांस परोसदिया तुझको धिक्कारहै तैंने आज मेरे साथ दुष्टता करी इसलिये तू राक्षस होगा ॥ ३२ ॥ अब यह कपट राक्षसने कियाहै. इस बातको विनाजाने गुरुजीने शाप देकर विचारा तौ वह कृत्य राक्षसका था, तब वशिष्ठजीने उस शापको बारह वर्षके निमित्तही रक्खा ॥ ३३ ॥ राजा भी क्रोधकरके बोला कि मेरा विचार नहीं किया विना जाने ही मुझे वृथा शाप दिया. इसलिये मैं भी गुरुजीको शाप देताहूं ॥ ३४ ॥

इस प्रकार जल हाथमें लेकर गुरुजीको शाप देनेके निमित्त उद्यत हुआ, तब मदयन्तीने राजाके चरण पकड़कर राजाको मुनिके निमित्त शाप देनेसे निवारण किया ॥ ३५ ॥ रानीके वचनगौरवसे राजाने मुनिको शाप नहीं दिया, शापके निमित्त जो जल हाथमें लिया था, उसको अपने चरणोंपर छोडदिया. इसकारण उसके चरण कल्मष अर्थात् चित्रित होगये ॥ ३६ ॥ उसदिनसे लेकर उसका नाम कल्मषांघ्रि अर्थात् कल्माषपाद विख्यात हुआ. गुरुके शापसे वह राजा वनमें जाकर राक्षस होगया॥ ३७॥और कालान्तक यमके समान राक्षसका रूप धारण किये हुए वनमें भ्रमण

इत्यपोंजलिनादायगुरुंशप्तुंसमुद्यतः ॥ पतित्वापादयोस्तस्यमदयंती न्यवारयत् ॥३५॥ ततोनिवृत्तःशापाच्चतस्यावचनगौरवात् ॥ तत्या जपादयोरंभःपादौकल्मषतांगतौ ॥ ३६ ॥ कल्मषांघ्रिरितिख्यातस्ततःप्रभृतिपार्थिवः ॥ बभूवगुरुशापेनराक्षसोवनगोचरः ॥ ३७ ॥ सबिभ्रद्राक्षसंरूपंकालांतकयमोपमम् ॥ चखादविविधाञ्जंतून्मानुषादीन्वनेचरः ॥ ३८ ॥ सकदाचिद्वनेक्वापिरममाणौकिशोरकौ ॥ अपश्यदंतकाकारोनवोढौमुनिदंपती ॥ ३९ ॥ राक्षसोमानुषाहारःकिशोरंमुनिनंदनम् ॥ जग्धुंजग्राहशापार्तोव्याघ्रोमृगशिशुं यथा ॥ ४० ॥ रक्षोगृहीतंभर्त्तारंदृष्ट्वाभीताथतत्प्रिया ॥ उवाचकरुणंबालाक्रंदंतीभृशवेपिता ॥ ४१ ॥

करता हुआ अनेक जन्तु और मनुष्योंको खानेलगा॥ ३८॥एक समय उसने वनमें कहीं अपनी नवोढा वधूके साथ रमण करतेहुए किशोर अवस्थावाले किसी एक मुनि और उसकी पत्नीको देखा और प्रसन्न हुआ ॥ ३९ ॥ मनुष्योंका आहार करनेवाला वह राक्षस किशोर अवस्थावाले मुनि नन्दनको शापके कारण खानेके निमित्त इसप्रकार आक्रमण करता हुआ, कि जैसे कोई व्याघ्र मृगके बच्चेको ग्रहण करै ॥ ४० ॥ राक्षससे पकडे

हुए अपने पतिको देखकर उसकी प्रियपत्नी बहुत भयभीत हुई, और करुणापूर्वक काँपतीहुई रोकर बोली ॥ ४१ ॥ कि, हे सूर्यवंशके यशको धारणकरनेवाले ! इस पापको मत करो, मतकरो, तुम मदयन्तीके पति राजा हो, राक्षस नहींहो ॥ ४२ ॥ हे प्रभो ! प्राणोंसे प्यारे मेरे पतिको मत खाओ, कारण कि, दुःखी और शरणमें आये हुओंकी तुम्हीं गति हो ॥ ४३ ॥ इनके मरनेपर पापोंके ढेर और दुष्ट जड प्राणोंको रखकर मैं क्या करूंगी, और विना महात्मा स्वामीके बोझरूप ॥ ४४ ॥ मलीन, पापी और पाञ्चभौतिक इस देहसे क्या सुख होगा, यह मेरा पति बालक, वेदवित

भोभोमामाकृथाःपापंसूर्यवंशयशोधर ॥ मदयंतीपतिस्त्वंहिराजेंद्रोनतुराक्षसः ॥ ४२ ॥ नखादममभर्त्तारंप्राणात्प्रियतमंप्रभो ॥ आर्त्तानांशरणार्त्तानांत्वमेवहियतोगतिः ॥ ४३ ॥ पापानामिवसंघातैःकिंमेदुष्टैर्जडासुभिः ॥ देहेनचातिभारेणविनाभर्त्रा महात्मना ॥ ४४ ॥ मलीमसेनपापेनपांचभौतेनकिंसुखम् ॥ बालोयंवेदविच्छांतस्तपस्वीबहुशास्त्रवित् ॥ ४५ ॥ अतोऽस्यप्राणदाने नजगद्रक्षात्वयाकृता ॥ कृपांकुरुमहाराजबालायांब्राह्मणस्त्रियाम् ॥ ४६ ॥ अनाथकृपणार्तेषुसघृणाःखलुसाधवः ॥ इत्थमभ्यर्थितः सोऽपिपुरुषादःसनिर्घृणः ॥ ४७ ॥ चखादशिरउत्कृत्यविप्रपुत्रंदुराशयः ॥ अथसाध्वीकृशादीनाविलप्यभृशदुःखिता ॥ ४८ ॥

शान्त, तपस्वी और बहुत शास्त्रोंका जाननेवाला है ॥ ४५ ॥ इसकारण इसके प्राणदानसे जगत्की रक्षा करो, हे महाराज ! मुझ बालक ब्राह्मणकी स्त्रीके ऊपर कृपाकरो ॥ ४६ ॥ अनाथ कृपण और दुःखियोंके ऊपर सज्जन पुरुष निःसंदेह दया करते हैं, इसप्रकार उसके प्रार्थना करनेपरभी उस राक्षसके हृदयमें दया न आई ॥ ४७ ॥ और उस पापीने उस ब्राह्मणका शिर फाड़कर खालिया, तब तो उसकी पतिव्रता स्त्रीने बहुत विलापकिया,

और बहुत दुःखी हुई ॥ ४८ ॥ और अपने पतिकी अस्थियों (हडियों) को इकट्ठाकर घोर चिता रचती हुई और पतिके साथ जानेकी इच्छासे स्वयं भी पतिके साथ अग्निमें प्रवेश किया ॥ ४९ ॥ और उससमय राक्षसरूपधारी राजाके शाप रूप अस्त्र मारा अर्थात् शाप दिया, कि हे पापी राजा ! तैंने मेरा पति खायाहै ॥ ५० ॥ इसलिये मुझ पतिव्रताके घोर शापको भोग, आजसे लेकर जिस समय तू स्त्रियोंमें गमन करेगा ॥ ५१ ॥ उसीसमय तू मरजायगा, इसप्रकार कहकर वह सती अग्निमें प्रवेश करके पतिके लोकको सिधारी, राजाने इसप्रकार वनमें रहकर बारह वर्ष बिताये, फिर मनु

आहृत्यभर्तुरस्थीनिचितांचक्रेयथोल्बणाम्॥भर्तारमनुगच्छंतीसंविशंतीहुताशनम् ॥४९॥राजानंराक्षसाकारंशापास्त्रेणजघानतम्॥रेरेपार्थिवपापात्मंस्त्वयामेभक्षितःपतिः॥५०॥अतःपतिव्रतायास्त्वंशापंभुंक्ष्वयथोल्बणम्॥ अद्यप्रभृतिनारीषुयदात्वमपिसंगतः॥५१॥तदामृतिस्तवेत्युक्त्वाविवेशज्वलनंसती ॥ अनपत्यःसनिर्विण्णोराज्यभोगेषुपार्थिवः ॥५२॥ विसृज्यसकलांलक्ष्मींययौभूयोपिकाननम् ॥ सूर्यवंशप्रतिष्ठित्यैवशिष्ठोमुनिसत्तमः ॥५३॥ तस्यामुत्पादयामासमदयंत्यांसुतोत्तमम् ॥ विसृष्टराज्योराजापिविचरन्सकलांमहीम् ॥ ५४ ॥

ष्यरूप धारणकर अपनी राजधानीमें आया और सन्तानरहित उस राजाने राज्यके भोग भोगे उसकी स्त्री मदयन्तीको शापका वृत्तान्त विदित होगयाथा कि जिस समय स्त्रीमें गमन करेगा तभी इसकी मृत्यु होजायगी, इसलिये रानी उससे रतिके निमित्त सदा निषेध करती रहतीथी. तब सन्तान न होनेके कारण राजाको राज्यसे विरक्तता प्राप्तहुई ॥५२॥ और संपूर्ण राजलक्ष्मीको छोडकर वनमें तप करनेको चलागया । जब वशिष्ठजीने देखा कि सूर्यवंश नष्ट हुआ चाहताहै, तो सूर्यवंशकी स्थितिके निमित्त मुनिश्रेष्ठ वशिष्ठजीने ॥ ५३ ॥ उस मदयन्तीमें उत्तमपुत्र उत्पन्न किया । राजको छोडकर भी राजा

सब पृथ्वीपर फिरा ॥ ५४ ॥ किंतु पीछे आतीहुई पिशाची और घोररूपिणी स्त्रीकोही देखता हुआ वह मूर्ति धारण किये हुए वही ब्रह्महत्या थी ॥ ५५ ॥ कि जब शापके कारण उसने राक्षसरूप धारणकर मुनिपुत्रका भक्षण किया था उस अपने कर्मसे पीछे आतीहुई ब्रह्महत्याको ॥ ५६ ॥ श्रेष्ठ मुनियोंके उपदेशसे राजाने जाना, उसको दूर करनेके निमित्त व्याकुलमनवाले उस राजाने ॥ ५७ ॥ अनेक वर्षोंतक अनेक तीर्थ और अनेक क्षेत्रोंमें गमन किया, सब तीर्थोंमें बारंबार स्नान भी किया ॥ ५८ ॥ किन्तु वह ब्रह्महत्या निवृत्त न हुई तब मिथिलापुरीको गया और उसके बाहर बगीचेमें

आयांतींपृष्ठतोऽपश्यत्पिशाचींघोररूपिणीम् ॥ साहिमूर्तिमतीघोराब्रह्महत्यादुरत्यया ॥ ५५ ॥ यदासौशापविभ्रष्टोमुनिपुत्रमभक्षयत् ॥ तेनात्मकर्मणायांतींब्रह्महत्यांसपृष्ठतः ॥ ५६ ॥ बुबुधेमुनिवर्याणामुपदेशेनभूपतिः ॥ तस्यानिर्वेदमन्विच्छन्राजानिर्विण्णमानसः ॥ ५७ ॥ नानाक्षेत्राणितीर्थानिचचारबहुवत्सरम् ॥ यदासर्वेषुतीर्थेषुस्नात्वापिचमुहुर्मुहुः ॥ ५८ ॥ ननिवृत्ताब्रह्महत्यामिथिलायांययौतदा ॥ बाह्योद्यानगतस्तस्याश्चिंतयापरयार्दितः ॥ ५९ ॥ ददर्शमुनिमायांतंगौतमंविमलाशयम् ॥ हुताशनमिवाशेषतपस्विजनसेवितम् ॥ ६० ॥ विवस्वंतमिवात्यंतंघनदोषातमोनुदम् ॥ शशांकमिवनिःशंकमवदातगुणोदयम् ॥ ६१ ॥ महेश्वरमिवश्रीमद्द्विजराजकलाधरम् ॥ शांतंशिष्यगणोपेतंतपसामेकभाजनम् ॥ ६२ ॥ उपसृत्यसराजेंद्रःप्रणनाममुहुर्मुहुः ॥ गौतमोऽपिमुनिश्रेष्ठोराजानंरविवंशजम् ॥ ६३ ॥

अनेक प्रकारकी चिंता करनेलगा ॥ ५९ ॥ इतनेमें अग्निके तुल्य कान्तिमान और अनेक तपस्वियोंसे व्याप्त विमल आशय गौतम मुनिको आते हुए देखा ॥ ६० ॥ प्रभातकालके सूर्यके समान घनीरात्रिके अन्धकारको दूरकरनेको चन्द्रमारूप निःशंक निर्मल गुणोंके उदयवाले ॥ ६१ ॥ साक्षात् चन्द्रकी कलाको धारण कियेहुए श्रीमान् शिवजीके समान शान्त, शिष्यगणोंसे युक्त और तपकरनेवालोंके एक पात्र ॥ ६२ ॥ इसप्रकारके गौतममुनिको

प्राप्तहोकर वह राजा बारंबार प्रणाम करनेलगा, और मुनिश्रेष्ठ गौतमऋषि भी सूर्यवंशमें उत्पन्नहुए राजाको ॥ ६३ ॥ प्रसन्न करके हँसते
हुए इसप्रकार बोले । गौतममुनि बोले, हे राजन् ! तुम्हारे कुशल है क्या ? तुम्हारा पद अविनाशी है ॥ ६४ ॥ तुम्हारी प्रजा कुशलसे है ?
तुम्हारा अवरोधजन (कुटुम्ब) कुशलपूर्वक है, संपूर्ण राज्यलक्ष्मीको त्यागकर यहां किसनिमित्त आयेहो ॥ ६५ ॥ हे राजन् ! दीर्घ और उष्ण श्वास
लेतेहुए क्या ध्यान कररहे हो राजा बोले हे ब्रह्मन् ! तुम्हारी कृपासे हम सब कुशलहैं॥६६॥कारण कि, उत्तमवंशवाले राजाओंकी संपत्तियें ब्राह्मणोंके

अभिनंद्यमुनिःप्रीत्यासस्मितंसमभाषत ॥ ॥ गौतमउवाच ॥ ॥ कच्चित्तेकुशलंराजन्कच्चित्तेपदमव्ययम् ॥ ६४ ॥ कुशलिन्यःप्रजाः
कच्चिदवरोधजनोपिवा ॥ किमर्थमिहसंप्राप्तोविसृज्यसकलांश्रियम् ॥ ६५॥ किंचध्यायसिभोराजन्दीर्घमुष्णंचनिःश्वसन् ॥ ॥ राजो
वाच ॥ ॥ सर्वेकुशलिनोब्रह्मन्वयंत्वदनुकंपया ॥ ६६ ॥ राज्ञामुत्तमवंश्यानांब्रह्मायत्ताहिसंपदः ॥ किंतुमांबाधतेत्वे
पापिशाचीघोररूपिणी ॥ ६७ ॥ अलक्षितामदपरैर्भर्त्सयंतीपदेपदे ॥ यन्मयाशापदग्धेनकृतमंहोदुरत्ययम् ॥ ६८॥ नशांतिर्जायतेतस्यप्रा
यश्चित्तसहस्रकैः॥इष्टाश्चविविधायज्ञाःकोशसर्वस्वदक्षिणाः ॥६९॥ सरित्सरांसिस्नातानियानिपूज्यानिभूतले॥ निषेवितानिसर्वाणिक्षेत्राणिभ्र
मतामया ॥७०॥ जप्तान्यखिलमंत्राणिध्याताःसकलदेवताः ॥ मयाव्रतानिचीर्णानिपर्णमूलफलाशिना ॥ ७१ ॥

आधीन होतीहैं, किंतु यह घोररूपिणी पिशाची हत्या मुझको बाधा देती है ॥ ६७ ॥ औरोंको नहीं दीखती और मुझको पद पद पर दुःख
देती है, जो कि, शापसे दग्धहुए मैंने बड़ा दुरत्यय पाप किया ॥ ६८ ॥ उसकी शांति सहस्रों प्रायश्चित्तोंसे नहीं हुई, अनेक यज्ञ किये खजानेकी सर्वस्व दक्षिणा
दी ॥६९॥ और जो पृथ्वीमें पूजनीयहैं, उन सरित और सरोवरोंमें स्नान किये, तथा भ्रमण करतेहुए मैंने सब क्षेत्र सेवन किये॥ ७०॥अनेक मंत्रोंका जप किया

संपूर्ण देवताओंका ध्यान किया. पर्ण (पत्ते) मूल और फल खाकर मैंने व्रताचरण करे ॥ ७१ ॥ वे सब व्रतआदि मैंने किये. किन्तु मुझको स्वस्थता प्राप्त नहींहुई, आज मुझको जन्मकी साफल्यता प्राप्त होती जानपडतीहै ॥ ७२ ॥ जिन आपके दर्शनसे ही मुझको आनन्द प्राप्तहुआहै सैकडों वर्ष ढूँढनेसे मनुष्य अपने मनोरथको प्राप्त होही जाताहै ॥ ७३ ॥ यह मनुष्योंका कथनभी आज मुझमें 'सत्यहुआ' जो कि जन्मसे संचित पुण्योंके उदय होनेसे होताहै ॥ ७४ ॥ सो संसार सागरसे डरतेहुए मनुष्योंकी रक्षा करनेवाले आप नेत्रोंके सामने

तानिसर्वाणिकुर्वंतिस्वस्थंमांनकदाचन ॥ अद्यमेजन्मसाफल्यंसंप्राप्तामिवलक्ष्यते ॥ ७२ ॥ यस्यसंदर्शनादेवममात्मानंदभागभूत् ॥ अन्विच्छँल्लभतेक्वापिवर्षपूगैर्मनोरथम् ॥७३॥ इत्येवंजनवादोऽपिसंप्राप्तोमयिसत्यताम् ॥ आजन्मसंचितानांतुपुण्यानामुदयोदये॥७४॥ यद्भवान्भवभीतानांत्रातानयनगोचरः ॥ कस्माद्देशादिहायातोभवान्भवभयापहः ॥ ७५ ॥ दूरभ्रमणविश्रांतंशंकेत्वमिहचागतम् ॥ दृष्ट्वाश्चर्यमिवात्यर्थमुदितोसिसुखश्रिया ॥ ७६ ॥ आनंदयसिमेचेतःप्रेम्णासंभाषणादिव ॥ अथमेतवपादाब्जंशरणंहिकृतैनसः ॥ ७७ ॥ शांतिंकुरुमहाभागयेनाहंसुखमाप्नुयाम् ॥ इतितेनसमादिष्टोगौतमःकरुणानिधिः ॥ ७८ ॥

प्रकटहुए हो, संसारसागरका भय दूरकरनेवाले आप किसदेशसे आयेहो ॥ ७५ ॥ दूर भ्रमण करके आनेके कारण श्रान्तहो, किन्तु मैं आश्चर्यसे देखताहूँ, कि तुम्हारा मुख प्रसन्नहै ॥ ७६ ॥ प्रेम पूर्वक भाषण करतेहुएके समान मेरे चित्तको आनन्द देतेहो, शरणमें आयेहुए मुझपापीके ऊपर तुम्हारे चरणकमलोंकी प्राप्ति हुईहै ॥ ७७ ॥ हे महाभाग ! मेरे ऊपर शान्तिकरो. जिससे मुझको सुख प्राप्तहोवे, इस प्रकार राजाके कहनेपर करुणाके

समुद्र गौतम ऋषि ॥ ७८ ॥ घोर पापोंको भलीप्रकार दूरकरनेके निमित्त आज्ञा देतेहुए । गौतमऋषिबोले । हे सज्जन राजेन्द्र ! तुम धन्यहो महापापोंसे मतडरो ॥ ७९ ॥ शरणमें आयेहुए भक्तोंके ऊपर रक्षा करनेवाले. शिवजीके होतेहुए भय कहाँ. हे राजन् ! एक और बडा सुन्दर क्षेत्रहै ॥ ८० ॥ वह महापातकोंका दूरकरनेवालाहै. और वह मनोरथक्षेत्र गोकर्णनामसे विख्यात है वहाँ निवास करनेसे बडेसे बडे पापभी नहीं रहसकते ॥ ८१ ॥ वहाँ शिवजीके स्मरण करनेसे संपूर्ण पाप नष्ट होजातेहैं. जहा शिवजीभी स्वयं निवास करतेहैं जिसप्रकार कैलास और मन्दराचल पर्वतपर शिवजी नि

समादिदेशघोराणामघानांसाधुनिष्कृतिम् ॥ गौतमउवाच ॥ ॥ साधुराजेंद्रधन्योऽसिमहाघेभ्योभयंत्यज ॥ ७९ ॥ शिवेत्रात रिभक्तानांक्कभयंशरणैषिणाम् ॥ शृणुराजन्महाभागक्षेत्रमन्यत्प्रतिष्ठितम् ॥ ८० ॥ महापातकसंहारिगोकर्णाख्यंमनोरमम् ॥ तत्र स्थितिर्नपापानांमहद्भ्योमहतामपि ॥ ८१ ॥ स्मृतोवशेषपापघ्नोयत्रसंनिहितःशिवः ॥ यथाकैलासशिखरेयथाचांबरमूर्द्धनि ॥ ८२ ॥ निवासोनिश्चितःशंभोस्तथागोकर्णमंडले ॥ नाग्निनानशशांकेननताराग्रहनायकैः ॥ ८३ ॥ तमोनिस्तीर्यतेसम्यग्यथासवितृदर्शनात् ॥ तथैवनेतरैस्तीर्थैर्नचक्षेत्रैर्मनोरमैः ॥ ८४ ॥ सद्यःपापविशुद्धिःस्याद्यथागोकर्णदर्शनात् ॥ अपिपापशतंकृत्वाब्रह्महत्यादिमानवः॥८५॥

वास करतेहैं ॥८२॥ इसीप्रकार गोकर्णक्षेत्रमेंभी शिवजी निवास करते हैं, अग्नि, चन्द्रमा, तारा तथा अन्य ग्रहनायकोंसे ॥ ८३ ॥ इसप्रकार अंधकार दूर नहीं होता. जैसा कि सूर्य्य भगवान्के दर्शनमात्रसे समस्त अंधकार नष्ट होजाताहै, इसीप्रकार अन्य तीर्थ और सुन्दरक्षेत्रोंमें वासकरनेसे ॥ ८४ ॥ तत्काल शुद्धि नहीं होती. कि, जिसप्रकार गोकर्णके दर्शनमात्रसे संपूर्णपापोंकी शुद्धि होजातीहै ब्रह्महत्यादि सौ पाप करकेभी मनुष्य ॥ ८५ ॥

यदि एक बारभी गोकर्णमें प्रवेशकरे. तौ उसको पापोंसे कहींभी डर नहीं रहताहै. वहीं सब महात्मा तपकरके शान्तिको प्राप्त हुए हैं ॥८६॥ इन्द्र, उपेन्द्र (विष्णु) और ब्रह्मा आदि सब सिद्धिकी इच्छासे इसक्षेत्रका सेवन करतेहैं यहाँ जिसने एक दिनभी व्रत किया ॥ ८७ ॥ जो उसका फल मिलता है उसकी समानता अन्यक्षेत्रमें लक्षवर्षपर्यन्त व्रतकरनेसे होसकतीहै. जहाँ इन्द्र ब्रह्मा और विष्णुआदि देवताओंकी कामना सिद्धिके निमित्त॥८८॥

सकृत्प्रविश्यगोकर्णंनबिभेतिह्यघात्क्वचित्॥तत्रसर्वेमहात्मानस्तपसाशांतिमागताः॥८६॥ इंद्रोपेंद्रविरिंच्याद्यैःसेव्यतेसिद्धिकांक्षिभिः॥ तत्रैकेनदिनेनापियत्कृतंव्रतमुत्तमम् ॥८७॥ तदन्यत्राब्दलक्षेणकृतंभवतितत्समम् ॥ यत्रेंद्रब्रह्मविष्ण्वादिदेवानांहितकाम्यया ॥ ८८॥ महाबलाभिधानेनदेवःसंनिहितःस्वयम्॥घोरेणतपसालब्धंरावणाख्येनरक्षसा॥ ८९ ॥ तल्लिंगंस्थापयामासगोकर्णेगणनायकः ॥ इंद्रो ब्रह्मामुकुंदश्चविश्वेदेवामरुद्गणाः ॥ ९० ॥ आदित्यावसवोदस्रौशशांकश्चदिवाकरः ॥ एतैर्विमानगैः प्रायोदेवास्तेसहपार्षदैः ॥ ९१ ॥ पूर्वद्वारंनिषेवंतेदेवदेवस्यशूलिनः ॥ योन्योमृत्युःस्वयंसाक्षाच्चित्रगुप्तश्चपावकः ॥ ९२ ॥ पितृभिःसहरुद्रैश्चदक्षिणद्वारमाश्रितः ॥ वरुणःसरितांनाथोगंगादिसरितांगणैः ॥ ९३ ॥

महाबलनामक शिवजी स्वयं निवास करतेहैं, जो लिंग कि राक्षसेश्वर रावणको बडा तपकरनेसे प्राप्त हुआ ॥ ८९ ॥ उस लिंगको रावणने गोकर्णमें स्थापित किया इन्द्र ब्रह्मा, विष्णु, विश्वेदेवा, मरुद्गण, वसु ॥ ९० ॥ अश्विनीकुमार, चन्द्र, सूर्यआदिदेवता विमानमें स्थित होकर अपने अपने पार्ष दोंके साथ ॥ ९१ ॥ देवाधिदेव शिवजीके पूर्वद्वारका सेवन करतेहैं, यम, चित्रगुप्त और अग्नि ॥ ९२ ॥ पितर और रुद्रोंके साथ दक्षिण द्वा

रपर स्थित रहतेहैं, सब नदियोंके स्वामी वरुणदेव सब नदियोंसमेत ॥ ९३ ॥ पश्चिमद्वारपर होकर शिवजीका सेवन करतेहैं और वायु, कुबेर, देवेशी, भद्रकर्णिका ॥ ९४ ॥ चंडिका आदि माताओंके साथ उत्तरद्वारपर स्थित रहतीहैं, । विश्वावसु, चित्ररथ, चित्रसेन और महाबल. यह ॥ ९५ ॥ गंधर्वगणोंके साथ महाबलनामक शिवजीका पूजन करतेहैं, रंभा, धृताची, मेनका, पूर्वचित्ति तिलोत्तमा ॥ ९६ ॥ और उर्वशी आदि देवांगना शिवजीके आगे नृत्य करतीहैं, वशिष्ठ, कश्यप, कण्व, महातपस्वी विश्वामित्र ॥ ९७ ॥ जैमिनि भरद्वाज, जाबालि, क्रतु, अंगिरा

आसेवतेमहादेवंपश्चिमद्वारमाश्रितः ॥ तथावायुःकुबेरश्चदेवेशीभद्रकर्णिका ॥ ९४ ॥ मातृभिश्चंडिकाद्याभिरुत्तरद्वारमाश्रिताः ॥
विश्वावसुश्चित्ररथश्चित्रसेनोमहाबलः ॥ ९५ ॥ सहगंधर्ववर्गैश्चपूजयंतिमहाबलम् ॥ रंभाघृताचीमेनाचपूर्वचित्तिस्तिलोत्तमा ॥ ९६ ॥
नृत्यंतिपुरतःशंभोरुर्वश्याद्याःसुरस्त्रियः ॥ वशिष्ठःकश्यपःकण्वोविश्वामित्रोमहातपाः ॥ ९७ ॥ जैमिनिश्चभरद्वाजोजाबालिःक्रतुरंगिराः ॥
एतेवयंचराजेंद्रसर्वेब्रह्मर्षयोमलाः ॥ ९८ ॥ देवंमहाबलंभक्त्यासमंतात्पर्युपास्महे ॥ मरीचिनासहात्रिश्चदक्षाद्याश्चमुनीश्वराः ॥ ९९ ॥
सनकाद्यामहात्मानउपविष्टाउपासते ॥ तथैवमुनयःसाध्याअजिनांबरधारिणः ॥ १०० ॥ दंडिनोव्रतमुंडाश्चस्नातकाब्रह्मचारिणः ॥
त्वगस्थिमात्रावयवास्तपसादग्धकिल्बिषाः ॥ १०१ ॥

यह और हे राजेन्द्र ! हम सब निर्मल महर्षि ॥ ९८ ॥ चारों ओरसे भक्तिपूर्वक महाबलनामक शिवजीकी उपासना करतेहैं, और मरीचिके साथ दक्षआदि मुनीश्वर ॥ ९९ ॥ सनकादि महात्मा बैठेहुए उपासना करतेहैं, इसीप्रकार मृगचर्म धारण कियेहुए ॥ १०० ॥ दंडकमंडलु धारण कियेहुए बडे २ मुनीश्वर, स्नातक और ब्रह्मचारी कि जिनके शरीरमें अस्थि और चर्मही रहगयाहै, और तपसे जिनके पाप नष्ट होगयेहैं ॥ १०१ ॥

ऐसे वे देवेश शिवजीका परमभक्तिसे सेवन करतेहैं, इसीप्रकार देव, गंधर्व, पितर, सिद्ध, चारण ॥ १०२ ॥ विद्याधर किंपुरुष, किन्नर, गुह्यक, खग, नाग, पिशाच, दैतेय, महाबल ॥ १०३ ॥ यह सब अनेक ऐश्वर्यसंपन्न अनेकं भूषण और वाहनसे युक्त, सूर्य अग्नि और चन्द्रमाकी समान कान्ति युक्त ॥ १०४ ॥ और बिजुलीके पुंजकी समान शोभायमान चारोंओरसे व्याप्त विमानोंमें बैठकर शिवजीकी स्तुति, गान, पठन और प्रणाम कर

सेवंतेपरयाभक्त्यादेवदेवंपिनाकिनम् ॥ तथादेवाः सगंधर्वाःपितरःसिद्धचारणाः ॥ २ ॥ विद्याधराःकिंपुरुषाःकिन्नरागुह्यकाः खगाः ॥ नानापिशाचावेतालादैतेयाश्चमहाबलाः ॥ ३ ॥ नानाविभवसंपन्नानानाभूषणवाहनाः ॥ विमानैःसूर्यसंकाशैरग्निवर्णैः शशिप्रभैः ॥ ४ ॥ विद्युत्पुंजनिभैरन्यैःसमंतात्परिवारितम् ॥ प्रस्तुवंतिप्रगायंतिपठंतिप्रणमंतिच ॥ ५ ॥ प्रनृत्यंतिप्रहृष्यंतिगोकर्णे पृथिवीपते ॥ लभंतेऽभीप्सितान्कामान्रमंतेचयथासुखम् ॥ ६ ॥ गोकर्णसदृशंक्षेत्रंनास्तिब्रह्मांडगोलके॥तत्रघोरंतपस्तप्तमगस्त्येनमहात्मना ॥ ७ ॥ तथासनत्कुमारेणप्रियव्रतसुतैरपि ॥ अग्निनादेववर्येणकंदर्पेणचपार्थिव ॥ ८ ॥ तथादेव्याभद्रकाल्याशिशुमारेणधीमता ॥ दुर्मुखेनफणींद्रेणमणिनागाह्वयेनच ॥ ९ ॥

तेहैं ॥ ॥ १०५ ॥ नृत्य करतेहैं प्रसन्न होतेहैं, इसप्रकारके गोकर्णक्षेत्रमें यह सब अपने अपने मनोरथोंको प्राप्तहोते और सुखपूर्वक रमण करतेहैं ॥ १०६ ॥ इस भूमंडलपर गोकर्णके समानकोई क्षेत्र नहींहै. वहाँ अगस्त्यमुनिने घोर तप कियाहै ॥ १०७ ॥ इसीप्रकार सनत्कुमार प्रियव्रतके पुत्र (उत्तानपाद) ने तपकिया, और हे राजन् ! देवश्रेष्ठ अग्नि और कामदेवनेभी तप किया ॥ १०८ ॥ इसीप्रकार भद्रकालीदेवी और बुद्धिमान

शिशुमारने तप किया, और दुर्मुख फणीन्द्रमणि नाग ॥ १०९ ॥ गरुड और विभीषण आदि महात्माओंने तपकिया, यह और देवता तथा अन्य सिद्ध दानव और मनुष्योंने ॥ ११० ॥ गोकर्णमें देवेश शिवजीकी भक्ति पूर्वक आराधना करके अपने अपने नामसे शिव जीके सहस्रों लिंग स्थापनकिये ॥ १११ ॥ और परम सिद्धिको प्राप्तहुए, तथा अपने २नामसे तीर्थ स्थापनभी किये, हे पार्थिव ! यहां सबदेवताओंके स्थान हैं ॥ ११२ ॥ और इस क्षेत्रमें हे राजन् ! विष्णु, परमेष्ठि ब्रह्मा, स्वामिकार्तिकेय, गणपति ॥ ११३ ॥ धर्म, क्षेत्रपाल और दुर्गाजीके स्थान

विभीषणेनपुण्येनतपस्तप्तंमहात्मना ॥ एतेचान्येचगीर्वाणाःसिद्धदानवमानवाः ॥ ११० ॥ गोकर्णेदेवदेवेशंशिवमाराध्यभक्तितः ॥ स्वनामकानिलिंगानिस्थापयित्वासहस्रशः ॥ ११ ॥ लेभिरेपरमांसिद्धिंतथातीर्थानिचक्रिरे ॥ अत्रस्थानानिसर्वेषांदेवानांसंतिपार्थिव ॥ ॥ १२ ॥ विष्णोश्चदेवदेवस्यब्रह्मणःपरमेष्ठिनः ॥ कार्त्तिकेयस्यवीरस्यगजवक्त्रस्यचानघ ॥ १३ ॥ धर्मस्यक्षेत्रपालस्यदुर्गायाश्चमहामते ॥ गोकर्णेशिवलिंगानिविद्यंतेकोटिकोटिशः ॥ १४ ॥ असंख्यातानितीर्थानितिष्ठंतिचपदेपदे ॥ बहुनात्रकिमुक्तेनगोकर्णस्थानिपार्थिव ॥ १५ ॥ सर्वाण्यश्मानिलिंगानितीर्थान्यंभांसिसर्वशः ॥ गोकर्णेशिवलिंगानांतीर्थानामपिभूरिशः ॥ १६ ॥ गीयतेमहिमाराजन्पुराणेषुमहर्षिभिः ॥ गोकर्णेकोटितीर्थंचतीर्थानांमुख्यतांगतम् ॥ १७ ॥ सर्वेषांशिवलिंगानांसार्वभौमोमहाबलः ॥ कृतेमहाबलःश्वेतस्त्रेतायामतिलोहितः ॥ १८ ॥

(मन्दिर) हैं हे राजन् ! गोकर्णक्षेत्रमें शिवजीके करोड़ों लिंग विद्यमान हैं ॥ ११४ ॥ गोकर्णमें पदपदपर असंख्य तीर्थहैं, हे राजन् ! बहुत कहनेसे क्याहै, गोकर्णमें ॥ ११५ ॥ जितने पत्थरहैं, वे सब शिवलिंगहैं और जितने जलहैं, वे सब तीर्थरूप हैं, हे राजन् ! गोकर्णके शिवलिंग और तीर्थोंकी पूर्णमहिमा ॥ ११६ ॥ महर्षियोंने पुराणोंमें कथन कीहै, गोकर्णमें करोड तीर्थ मुख्यहैं ॥ ११७ ॥ और सब शिवलिंगोंमें शिवजीका महाबलनामक

शिवलिंग मुख्यहै, यह महाबलनामक शिवलिंग सत्ययुगमें श्वेत (सफेद) त्रेतामें अतिलोहित (बहुतलाल ॥ ११८ ॥ द्वापरमें पीत (पीला) और कलियुगमें श्यामवर्णका रहताहै, इसके मूलका अन्त सात पातालतकभी नहीं मिला ॥ ११९ ॥ घोर कलियुगके आनेपर यह लिंग कोमलताको प्राप्त होजायगा, पश्चिमसमुद्रके किनारे गोकर्णक्षेत्र विराजमान है ॥ १२० ॥ यह क्षेत्र ब्रह्महत्याआदि पापोंको नष्ट करताहै, इसमें आश्चर्य क्याहै, जो ब्रह्मघाती, प्राणियोंसे द्रोह करनेवाले मूर्ख ॥ १२१ ॥ और जो सर्व गुणहीन, परदारामें रत, दुर्वृत्त, दुराचारी, दुःशील, कृपण ॥ १२२ ॥ लुब्ध, क्रूर,

द्वापरेपीतवर्णश्चकलौश्यामोभविष्यति ॥ आक्रांतसप्तपातालंकुर्वन्नापमहाबलः ॥ १९ ॥ प्राप्तेकलियुगेघोरेमृदुतामुपयास्यति ॥ पश्चिमांबुधितीरस्थंगोकर्णक्षेत्रमुत्तमम् ॥ १२० ॥ ब्रह्महत्यादिपापानिदहतीतिकिमद्भुतम् ॥ येचात्रब्रह्महंतारोयेचभूतद्रुहःशठाः ॥ ॥ २१ ॥ येसर्वगुणहीनाश्चपरदाररताश्चये ॥ येदुर्वृत्तादुराचारादुःशीलाःकृपणाश्चये ॥ २२ ॥ लुब्धाःक्रूराःखलामूढाःस्तेनाश्चैवातिकामिनः ॥ तेसर्वेप्राप्यगोकर्णंस्नात्वातीर्थजलेषुच ॥ २३ ॥ देवंमहाबलंदृष्ट्वाप्रयाताःशांकरंपदम् ॥ तत्रपुण्यासुतिथिषुपुण्यर्क्षेषुण्यवासरे ॥ २४ ॥ येऽर्चयंतिमहेशानंतेरुद्राःस्युर्नसंशयः ॥ यदाकदाचिद्गोकर्णंयोवाकोवापिमानवः ॥२५॥ प्रविश्यपूजयेदीशंसगच्छेद्ब्रह्मणःपदम् ॥ रवींदुसौम्यवारेषुयदादर्शोभविष्यति ॥२६॥

खल, मूढ, चोर और अतिकामी वे सब इस गोकर्णक्षेत्रमें प्राप्त हो तीर्थके जलोंमें स्नान करके ॥ १२३ ॥ महाबलनामक महादेवके दर्शनमात्रसे शिवजीके परमपदको प्राप्त होजातेहैं, वहां पवित्र तिथि, पवित्र नक्षत्र और पवित्र दिवसमें ॥ १२४ ॥ जो शिवजीका पूजन करतेहैं, वे निःसन्देह रुद्रस्वरूप होजातेहैं; जब कभी गोकर्णमें जो कोई पुरुष ॥ १२५ ॥ प्रवेश करके शंकरका पूजन करताहै, उसको ब्रह्मलोककी प्राप्ति होतीहै, रवि; सोम और

बुधवारको जब अमावास्या हो ॥ १२६ ॥ तब समुद्रमें स्नान, करके दान, पितृतर्पण शिवपूजा, होम, व्रत और ब्राह्मणपूजन करना चाहिये ॥१२७॥ उसदिन जो कुछ कर्म कियाजाताहै, उसका अनन्त फल मिलताहै, व्यतीपातआदि योग, संक्रान्ति ॥ १२८ ॥ और प्रदोषके समय शिवजीका पूजन करनेसे मुक्तिकी प्राप्ति होतीहै, इसप्रकार कहकर गौतमऋषि बोले कि, हे राजन् ! मुक्ति देनेवाली एक तिथिको एकान्तमें तुमसे कहताहूं ॥ १२९ ॥ जिसमें व्रत करनेसे महाव्याधकोभी निःसन्देह शिवजीके लोककी प्राप्तिहुई, माघमासके कृष्णपक्षकी जो महापुण्यकी देनेवाली चतुर्दशीहै ॥ १३० ॥

तदाजलनिधौस्नानंदानंचपितृतर्पणम् ॥ शिवपूजाजपोहोमोव्रतचर्याद्विजार्चनम् ॥ २७ ॥ यत्किंचिद्वाकृतंकर्मतदनंतफलप्रदम् ॥ व्यतीपातादियोगेषुरविसंक्रमणेषुच ॥ २८ ॥ महाप्रदोषवेलासुशिवपूजाविमुक्तिदा ॥ अथैकांतेप्रवक्ष्यामितिथिंपार्थिवमुक्तिदाम् ॥ ॥ २९ ॥ यस्यांकिलमहाव्याधोलेभेशंभोःपरंपदम् ॥ माघमासेमहापुण्यायासाकृष्णचतुर्दशी ॥ १३० ॥ शिवलिंगंबिल्वपत्रंदुर्लभंहिचतुष्टयम् ॥ अहोवलवतीमायाययाशैवीमहातिथिः ॥ ३१ ॥ नोपोष्यतेजनैर्मूढैर्महामूकैरिवत्रयी ॥ उपवासोजागरणंसन्निधिः परमेशितुः ॥ ३२ ॥ गोकर्णशिवलोकस्यनृणांसोपानपद्धतिः ॥ शृणुराजन्नहमपिगोकर्णादधुनागतः ॥३३॥

उसदिन गोकर्णक्षेत्रमें चतुष्टय फलके दाता शिवलिंगका बिल्वपत्रसे पूजन करना दुर्लभहै, अहो माया बलवतीहै, जिसके प्रतापसे यह शिवजीकी महातिथि हुई ॥ १३१ ॥ मूढ, महामूक और मन्दभागी पुरुष इसमें उपवास नहीं करतेहैं. गोकर्णक्षेत्रमें उपवास जागरण और शिवजीकी निकटता ॥ १३२ ॥ यह सब कृत्य मनुष्योंके लिये शिवलोककी सोपान (सीढी) रूपहैं, इतना कह फिर गौतममुनि बोले कि, हे राजन् ! सुनो, मैंभी इस समय गोकर्णक्षेत्रसे

आरहाहूं ॥ १३३ ॥ वहां मैंने उपवास और शिवचतुर्दशीका बडा उत्सव देखा, इस शिवचतुर्दशीके उत्सवको देखनेकी इच्छासे ॥ १३४ ॥ सब देशोंसे चारों वर्णोंके महापुरुष स्त्री, वृद्ध, बाल और चतुर्थआश्रमधारी पुरुष आये ॥ १३५ ॥ और आकर महाबलनामक शिवजीका दर्शन करनेसे कृतकृत्य हुए, मैं और यह शिष्य तथा और ॥ १३६ ॥ राजर्षि, सनकादिक ब्रह्मर्षि सब तीर्थोंमें स्नान और महाबलनामक शिवजीकी उपासना करके

उपास्यैनांशिवातिथिंविलोक्यचमहोत्सवम् ॥ अस्यांशिवतिथौसर्वेमहोत्सवदिदृक्षवः ॥३४॥ आगताःसर्वदेशेभ्यश्चातुर्वण्र्यामहाजनाः ॥ स्त्रियोवृद्धाश्चबालाश्चचतुर्थाश्रमवासिनः॥१३५॥ आगत्यदृष्ट्वादेवेशंलेभिरेकृतकृत्यताम् ॥ अथाहमप्ययमीशिष्याऋषयश्चतथापरे॥३६॥ राजर्षयश्चराजेंद्रसनकाद्याःसुरर्षयः ॥ स्नात्वासर्वेषुतीर्थेषुसमुपास्यमहाबलम् ॥३७॥ लब्ध्वाचजन्मसाफल्यंप्रयाताःसर्वतोदिशम् ॥ अमुनाद्यनरेंद्रेणजनकेनायियक्षुणा॥३८॥ निमंत्रितोहंसंप्राप्तोगोकर्णाच्छिवमंदिरात्॥ प्रत्यागमंकिमप्यंगदृष्ट्वाश्चर्यमहंपथि ॥ महानंदेनमनसाकृतार्थोस्मिमहीपते ॥ १३९ ॥ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेगोकर्णमहिमानुवर्णनंनामद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ ॥ छ ॥

॥ राजोवाच ॥ किंदृष्टंभवताब्रह्मन्नाश्चर्यंपथिकुत्रवा ॥ तन्ममाख्याहियेनाहंकृतकृत्यत्वमाप्नुयाम् ॥ १ ॥

॥ १३७ ॥ अपने जन्मकी सफलताको प्राप्त हुए और अपने अपने देशोंको गये हे राजन् ! इस यज्ञ करनेवाले जनकके द्वारा ॥ १३८ ॥ निमन्त्रित हुआ गोकर्णक्षेत्रसे आयाहूं, मार्गमें जो मैंने आश्चर्य देखाहै. हे अंग ! उसको देख मुझे बडा आनन्द हुआ और मैं कृतार्थ होगया ॥ १३९ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां गोकर्णमहिमानुवर्णनं नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ इसप्रकार गौतम मुनिका वचन सुन

राजा बोला कि, हे ब्रह्मन् ! मार्गमें आपने क्या आश्चर्य देखा और कहां देखा. सो मुझसेभी कहो, जिससे मैं कृतकृत्य होऊं ॥ १ ॥ गौतममुनि बोले
कि, हे राजन् ! गोकर्णसे आतेहुए मध्याह्नके समय किसी स्थानपर हमको एक निर्मल सरोवर मिला ॥ २ ॥ वहां जलको छू और मार्गके श्रमको निवा
रण कर वटवृक्षकी स्निग्ध और शीतल छायामें बैठगये. ॥ ३ ॥ इतनेमें कुछ दूरसे आतीहुई चांडाली कि जिसकी दशा हम वर्णन करतेहैं सुनो,
बूढी, अन्धी, दुबली, मुख जिसका सखगयाहै, निराहार, अनेक रोगोंसे पीडित ॥ ४ ॥ कुश और व्रण अर्थात् फोडोंसे जिसका अंग व्याप्तहै, कीड़ोंसे

॥ गौतमउवाच ॥ ॥ गोकर्णादहमागच्छन्क्वापिदेशेविशांपते ॥ जातेमध्याह्नसमयेलब्धवान्विमलंसरः ॥ २ ॥ तत्रोपस्पृश्यस
लिलंविनीयचपथःश्रमम् ॥ सुस्निग्धशीतलच्छायंन्यग्रोधंसमुपाश्रयम् ॥ ३ ॥ अथाविदूरेचांडालींवृद्धामंधांकृशाकृतिम् ॥ शुष्यन्मुखीं
निराहारांबहुरोगनिपीडिताम् ॥ ४ ॥ कुष्ठव्रणपरीतांगीमुद्यत्कृमिकुलाकुलाम् ॥ पूयशोणितसंसक्तक्षरत्पटलसत्कटीम् ॥ ५ ॥
महायक्ष्मनलस्थेनकंठसंरोधविह्वलाम् ॥ विनष्टदंतामव्यक्तांविलुठंतींमुहुर्मुहुः ॥ ६ ॥ चंडार्ककिरणस्पृष्टखरोष्णरजसाप्लुताम् ॥
विण्मूत्रपूयदिग्धांगीमसृग्गंधदुरासदाम् ॥ ७ ॥ कफरोगबहुश्वासश्लथन्नाडीबहुव्यथाम् ॥ विध्वस्तकेशावयवामपश्यंमरणोन्मुखीम् ॥ ८ ॥

व्याप्त, राध और रुधिरसे युक्त, कमरमें फटा वस्त्र पहिने ॥ ५ ॥ महायक्ष्मा और कण्ठके रोगसे विह्वल, दांतरहित अव्यक्त स्वरसे बारंबार विलाप कर
तीहुई ॥ ६ ॥ प्रचण्ड सूर्यकी किरणोंके स्पर्शसे और खरखरी तथा उष्ण धूलसे व्याप्त, विष्ठा, मूत्र और राधसे जिसका शरीर भीग रहाहै, बडी दुर्गंध
युक्त ॥ ७ ॥ कफ रोग और श्वाससे जिसको अत्यन्त पीड़ा होरहीहै और बाल जिसके बिखरे हुएहैं मरनेको उद्यत. इसप्रकारकी चांडालीको देखा ॥ ८ ॥

इसप्रकारकी अनेक व्यथाओंसे युक्त उसको देखकर मैं दयासे आर्द्र होगया, और जबतक यह मरे तबतक कुछ समय प्रतीक्षाके निमित्त मैं वहीं स्थितरहा ॥ ९ ॥ उसीसमय आकाशमें सूर्यकी किरणोंके समानकान्तियुक्त, दिव्य और किन्नरोंके द्वारा लायेहुए विमानको देखा ॥ १० ॥ सूर्य, चन्द्र और अग्निके समान कान्तिवाले उस विमानमें सूर्यकेसमान कान्तिवाले शिवजीके दूतोंको देखा ॥ ११ ॥ वे त्रिशूल, खट्वांग, खड्ग, चर्म हाथमें धारण कियेहैं, मस्तकपर अर्धचन्द्र धारण किये, प्रफुल्लित चन्द्र और कुईके समान मनोहर मुकुट कुण्डल, केयूर कंकणआदि अनेक आभूषणोंको

ताहग्व्यथांचतांवीक्ष्यकृपयाहंपरिप्लुतः ॥ प्रतीक्षन्मरणंतस्याःक्षणंतत्रैवसंस्थितः ॥ ९ ॥ अथांतरिक्षपदवींसिंचंतामिवराश्मिभिः ॥ दिव्यंविमानमानीतमद्राक्षंशिवकिंकरैः ॥ १० ॥ तस्मिन्रवींदुवह्नीनांतेजसामिवपंजरे ॥ विमानेसूर्यसंकाशानपश्यंशिवकिंकरान् ॥ ११ ॥ तेवैत्रिशूलखट्वांगटंकचर्मासिपाणयः ॥ चंद्रार्धभूषणाःसांद्रचंद्रकुंदोरुवर्चसः ॥ १२ ॥ किरीटकुंडलभ्राजन्महाहिवलयोज्ज्वलाः ॥ शिवानुगामयादृष्टाश्चत्वारःशुभलक्षणाः ॥ १३ ॥ तानापततआलोक्यविमानस्थान्सुविस्मितः ॥ उपसृत्यांतिकेवेगादपृच्छंगगनेस्थितान् ॥ १४ ॥ नमोनमोवस्त्रिदशोत्तमेभ्यस्त्रिलोचनश्रीचरणानुगेभ्यः ॥ त्रिलोकरक्षाविधिमावहद्भ्यस्त्रिशूलचर्मासिगदाधरेभ्यः ॥ १५ ॥ विदिताहिमयायूयंमहेश्वरपदानुगाः ॥ इयंवोलोकरक्षार्थागतिराहोविनोदजा ॥ १६ ॥

धारण किये, गौरवर्ण, तेजयुक्त; सर्पराजके कंकणसे उज्वल और शुभलक्षणसंपन्न साक्षात् शिवके समान चारपुरुषोंको मैंने देखा ॥१२॥१३॥ उनको आता देख आश्चर्यसे मैंने शीघ्रतापूर्वक उनके पास जाकर पूंछा॥१४॥ और प्रणाम किया कि सब देवताओंमें तुम श्रेष्ठहो तुमको प्रणामहै, तुम शिवजीके चरणानुरागीहो त्रिलोकीकी रक्षा करतेहो, त्रिशूल, चर्म, असि और गदाको धारण करनेवाले हो ॥ १५ ॥ मुझे विदित है कि तुम शिवजीके पदानुगामी

हो यह तुम्हारा आगमन लोककी रक्षाके निमित्त वा आनन्दके निमित्त ॥ १६ ॥ वा सर्व प्राणियोंकें पापशुद्धिके निमित्त अथवा विजयके निमित्तहै, सो दया करके मुझसे कहो कि, आप यहां किसनिमित्त आयेहो ॥ १७ ॥ शिवजीके दूत बोले । कि, यह जो वृद्धा चांडाली मरनेको उद्यत तुम्हारे सन्मुख दीखतीहै. इसके लेनेको शिवजीकी आज्ञासे विमान लेकर आयेहैं ॥ १८ ॥ इसप्रकार शिवदूतोंके कहनेपर आश्चर्ययुक्त होकर मैंने उनके हाथ जोडे और फिर पूंछा ॥१९॥ कि, यह घोर पापिनी और चांडालिनी इस दिव्य विमानपर चढ़नेको किसप्रकार समर्थ होसकतीहै, क्या कभी कुति

उतसर्वजनाघौघविजयायकृतोद्यमाः ॥ पूतकारुण्यतोमह्यंयस्माद्यूयमिहागताः ॥ १७॥ शिवदूताऊचुः ॥ एषाग्रेदृश्यतेवृद्धाचांडाली मरणोन्मुखी ॥ एतामानेतुमायाताःसंदिष्टाः प्रभुणावयम् ॥१८॥ इत्युक्तेशिवदूतैस्तैरपृच्छंपुनरप्यहम् ॥ विस्मयाविष्टचित्तस्तान्कृतांज लिरवस्थितः ॥ १९ ॥ अहोपापीयसीघोराचांडालीकथमर्हति ॥ दिव्यंविमानमारोढुंशुनीवाध्वरमंडलम् ॥ २० ॥ आजन्मतो ऽशुचिप्रायांपापांपापानुगामिनीम् ॥ कथमेनांदुराचारांशिवलोकंनिनीषथ ॥२१॥ अस्यानास्तिशिवज्ञानंनास्तिघोरतरंतपः ॥ सत्यं नास्तिदयानास्तिकथमेनांनिनीषथ॥ २२ ॥ पशुमांसकृताहारांवारुणीपूरितोदराम् ॥ जीवहिंसारतांनित्यंकथमेनांनिनीषथ ॥ २३ ॥

याभी यज्ञवेदीपर पदारोहण करसक्तीहै ? ॥ २० ॥ जन्मसे अपवित्र, पापिनी, पापानुगामिनी. खोटे आचरण करनेवाली इस चांडालीको तुम किस पुण्यसे शिवलोकको लेजाओगे॥ २१ ॥ इसको शिवजीका ज्ञान नहीं, न इसने कोई घोर तप कियाहै. इसमें सत्य, दया नहीं. इसको शिवलोकमें किस प्रकार लेजाओगे ॥२०॥ पशुओंका मांस खानेवाली मदिरापान करनेवाली, सदा जीवहिंसा करनेवाली, इसको शिवलोकमें कैसे लेजाओगे ॥ २३ ॥

न तो इसने पंचाक्षरमंत्रका जप किया और न शिवजीका पूजन किया, न भगवान् शंकरका ध्यानकिया, फिर इसे शिवलोकमें किसप्रकार लेजाओगे॥ २४ ॥ न शिवरात्रिका व्रत किया, न प्राणियोंपर प्रीति करी, न इष्टापूर्त आदि यज्ञ किये, फिर इसको शिवलोकमें किसप्रकार लेजाओगे ॥ २५॥ न तीर्थोंमें स्नान किया, न दान किये न व्रत किये इसको शिवलोकमें कैसे लेजाओगे ॥ २६ ॥ इसको देखना भी नहीं चाहिये और संभाषणादिकी तो कथा ही क्याहै.

नचपंचाक्षरीजप्तानकृतंशिवपूजनम् ॥ नध्यातोभगवाञ्छंभुःकथमेनांनिनीषथ ॥ २४ ॥ नोपोषिताशिवतिथिर्नकृतंभूतसौहृदम् ॥ नेष्टापूर्तादिकंवापिकथमेनांनिनीषथ ॥ २५ ॥ नचस्नातानितीर्थानिनदानानिकृतानिच ॥ नचव्रतानिचीर्णानिकथमेनांनिनीषथ ॥ २६ ॥ ईक्षणेपरिहर्त्तव्याकिमुसंभाषणादिषु ॥ सत्संगरहितांचंडांकथमेनांनिनीषथ ॥ २७ ॥ जन्मांतरार्जितंकिंचिदस्याः सुकृतमस्तिवा ॥ तत्कथंकुष्ठयक्ष्मणाकृमिभिःपरिक्षूयते ॥ २८ ॥ अहोईश्वरचर्येयंदुर्विभाव्याशरीरिणाम् ॥ पापात्मानोऽपिनीयंते कारुण्यात्परमंपदम् ॥ २९ ॥ इत्युक्तास्तेमयादूतादेवदेवस्यशूलिनः ॥ प्रत्यूचुर्मामथप्रीत्यासर्वसंशयभेदिनः ॥ ३० ॥ ॥ शिवदूता ऊचुः ॥ ॥ ब्रह्मन्सुमहदाश्चर्यंशृणुकौतूहलंयदि ॥ इमामुद्दिश्यचांडालींयदुक्तंभवताधुना ॥ ३१ ॥

सत्संगरहित इस चांडालीको शिवलोकमें किसप्रकार लेजाओगे ॥२७॥ पूर्वजन्ममें संचितकियाहुआ यदि इसका कोई पुण्य होता तो कुष्ठ, राजयक्ष्म और कीटोंके द्वारा क्यों खाईजाती ॥२८॥ अहो ईश्वरकी अपार महिमाहै, कि जो जानी नहींजाती, पापी पुरुषभी दयासे शिवलोकमें जातेहैं ॥२९॥ इस प्रकार देवोंके देव भगवान् शंकरके दूतोंसे मैंने कहा, तब संपूर्ण संदेहोंको दूर करनेवाले शिवजीके दूत प्रीतिपूर्वक मुझसे बोले॥ ३०॥ शिवजीके दूत बोले कि,

हे ब्रह्मन् ! इससमय इस चांडालीके उद्देशसे जो तुमने कहा, इसका बडा आश्चर्ययुक्त कौतूहल है. सुनो मैं कहताहूं ॥३१॥ यह पूर्वजन्ममें अतिसुन्दर पूर्णचन्द्रमाके समान मुखवाली सुमित्रानाम किसी ब्राह्मणकी कन्या थी ॥ ३२ ॥ पुष्पके समान जिसके कोमल अंगथे, केकयदेशके किसी मुख्य (श्रेष्ठ) ब्राह्मणकी कन्या थी ॥ ३३ ॥ संपूर्ण सुन्दर लक्षणयुक्त और साक्षात् कामदेवकी मूर्तिके समान पिताके घरमें बढतीहुई उस कन्याको देखकर सब मनुष्य विस्मित (मोहित) होतेथे ॥ ३४ ॥ वह दिन २ बढतीथी और बंधुजन उसका लालन करतेथे, कामदेवके महाधनुषके समान

आसीदियंपूर्वभवेकाचिद्ब्राह्मणकन्यका ॥ सुमित्रानामसंपूर्णसोमबिम्बसमानना ॥ ३२ ॥ उत्फुल्लमल्लिकादामसुकुमारांगलक्षणा ॥ कैकेयाद्विजमुख्यस्यकस्यचित्तनयासती ॥ ३३ ॥ तांसर्वलक्षणोपेतांरतेर्मूर्तिमिवापराम् ॥ वर्द्धमानांपितुर्गेहेवीक्ष्यासन्विस्मिताजनाः ॥ ३४ ॥ दिनेदिनेवर्धमानावंधुभिर्लालिताभृशम् ॥ साशनैर्यौवनंभेजेस्मरस्येवमहाधनुः ॥ ३५ ॥ अथसाबंधुवर्गैश्चसमेतेनकुमारिका ॥ पित्राप्रदत्ताकस्मैचिद्विधिनाद्विजसूनवे ॥ ३६ ॥ साभर्त्तारमनुप्राप्यनवयौवनशालिनी ॥ कंचित्कालंशुभाचाररेमेबंधुभिरावृता ॥ ३७ ॥ अथकालवशात्तस्याःपतिस्तीव्ररुजार्दितः ॥ रूपयौवनकांतोपिपंचत्वमगमन्मुने ॥ ३८ ॥ मृतेभर्त्तरिदुःखेनविदग्धहृदयासता ॥ उवासकतिचिन्मासान्सुशीलविजितेंद्रिया ॥ ३९ ॥

शनैः २ वह कन्या यौवनवती हुई ॥ ३५ ॥ तब कुटुम्बियोंसमेत उसके पिताने विधिपूर्वक एक सुन्दर ब्राह्मणकुमारके साथ उसका विवाह करदिया ॥ ३६ ॥ नवयौवनवती वह भी पतिके साथ कुटुम्बसमेत कुछ कालतक संसारका आनन्द भोगतीरही ॥ ३७ ॥ कुछ समयके उपरान्त कालवश उसका पति रोगग्रस्त हुआ और कुछदिनोंमें अतिरूपवान बुद्धिमान् वह उसका पति मृत्युको प्राप्तहुआ ॥ ३८ ॥ पतिके मरनेपर दुःखसे दग्ध हृदय

वाली वह नवयौवना कुछमहीनोंतक शीलयुक्त और जितेन्द्रिया रही ॥ ३९ ॥ किन्तु यौवनका भार अत्यन्त प्रादुर्भूत होनेलगा और कामदेव सतानेलगा ॥ ४० ॥ उसके बंधुवर्ग और महोत्तमपुरुषोंने गुप्तरूपसे उसको शिक्षाभी दी। किन्तु कामदेवके वशीभूत हुई वह अपने मनको न रोकसकी ॥ ४१ ॥ रूपयौवनसंपन्न, कामदेवकी तीव्र व्यथासे युक्त वह विधवाभी जारकर्ममें रतहोगई अर्थात् व्यभिचार करनेलगी ॥ ४२ ॥ कुछ समयतक तो किसीने न जाना कि. यह व्यभिचारिणीहै, कुछ समयतक उसने अपने दुराचरणको छिपाये रक्खा ॥ ४३ ॥ किन्तु जब मुख पीला, कुच नीले

अथयौवनभारेणजृंभमाणेननित्यशः॥ बभूवत्त्हृदयंतस्याः कंदर्पपरिकंपितम् ॥ ४० ॥ सागुप्तांबंधुवर्गेण शासितापिमहोत्तमैः ॥ नशशाकमनोरोद्धुंमदनाकृष्टमंगना ॥ ४१ ॥ सातीव्रमन्मथाविष्टारूपयौवनशालिनी ॥ विधवापिविशेषेणजारमार्गरताभवत् ॥ ४२ ॥ नज्ञाताकेनचिदपिजारिणीतिविचक्षणा ॥ जुगूहात्मदुराचारंकंचित्कालमसत्तमा ॥ ४३ ॥ तांदोहदसमाक्रांतांघननीलमुखस्तनीम् ॥ कालेनबंधुवर्गोपिवुबोधविटदूषिताम् ॥ ४४ ॥ इतिभीतोमहाक्लेशाच्चिंतांलेभेदुरत्ययाम् ॥ स्त्रियःकामेननश्यंतिब्राह्मणाहीनसेवया ॥ ४५ ॥ राजानोब्रह्मदंडेनयतयोभोगसंग्रहात् ॥ लीढंशुनातथैवान्नंसुरयावार्पितंपयः ॥ ४६ ॥ रूपंकुष्ठरुजाविष्टंकुलंनश्यतिकुस्त्रिया ॥ इतिसर्वेलोच्यसमेताःपतिसोदराः ॥ ४७ ॥

देखपड़े तब उसके बंधुवर्ग विचारनेलगे. कि यह जारसे दूषितहै ॥ ४४ ॥ इसप्रकार डरकर महाक्लेश और चिन्ता करनेलगे कि, स्त्रियें कामदेवसे नष्ट होतीहैं, ब्राह्मण हीनवर्णकी सेवा करनेसे नष्ट होतेहैं ॥ ४५ ॥ राजा ब्राह्मणोंपर दंड करनेसे नष्ट होतेहैं और संन्यासी भोग संग्रह करनेसे नष्ट होजातेहैं, जैसे कुत्तेका उच्छिष्ट अन्न, मद्यके पात्रमें रक्खाहुआ जल वा दूध दूषित होताहै ॥ ४६ ॥ रूपको कुष्ठ और रोग कलंकित करदेताहै, इसीप्रकार अच्छे

कुलको खोटी (दुराचारिणी) स्त्रियें कलंकित करदेतीहैं, इसप्रकार उसके बंधुओंने विचार ॥ ४७ ॥ उसको अति अनादरसे बाल पकड़करग्रामके बाहर निकालदिया और सब बंधुओंने जातिसे पतित करनेको उसके निमित्त घटोत्सर्गकरदिया ॥ ४८ ॥ ग्रामके बाहर फिरतीहुई उसको किसी एक शूद्रने देखा, ऊँचेहैं पयोधर जिसके ऐसी और सुन्दर मुखवाली उस ब्राह्मणकी स्त्रीको देखकर ॥ ४९ ॥ और समझाकर वह शूद्र अपने घर लेगया, वह स्त्री उसकी मुख्य स्त्री होकर रही और दिनरात ॥ ५० ॥ कुछसमयतक उससे रमण किया और उसके घर रहकर मांस खाया और मद्य

तत्यजुर्गोत्रतोदूरंगृहीत्वासकचग्रहम् ॥ सघटोत्सर्गमुत्सृष्टासानारीसर्वबंधुभिः ॥ ४८ ॥ विचरंतीबहिर्ग्रामाद्दृष्टाशूद्रेणकेनचित् ॥ सतां दृष्ट्वावरारोहांपीनोन्नतपयोधराम् ॥ ४९ ॥ गृहंनिनायसाभ्राचविधवांशूद्रनायकः ॥ सानारीतस्यमहिषीभूत्वातेनदिवानिशम् ॥ ५० ॥ रममाणाक्वचिद्देशे न्यवसद्गृहवल्लभा ॥ तत्रसापिशिताहारानित्यमापीतवारुणी ॥ ५१ ॥ लेभेसुतंचशूद्रेणरममाणारतिप्रिया ॥ कदा चिद्भर्त्तरिक्वापियातेपीतसुरातुसा ॥ ५२ ॥ इयेषपिशिताहारंमदिरामदविह्वला ॥ अथमेषेषुबद्धेषुगोभिःसहबहिर्व्रजे ॥ ५३ ॥ ययौकृ पाणमादायसातमोंधेनिशामुखे ॥ अविमृश्यमदावेशान्मेषबुद्ध्यामिषप्रिया ॥ ५४ ॥ एकंजघानगोवत्संक्रोशंतंनिशिदुर्भगा ॥ निहतं गृहमानीयज्ञात्वागोवत्समंगना ॥ ५५ ॥

पान किया ॥ ५१ ॥ कछ समयके उपरान्त उस रतिप्रिया जारिणीके पुत्र उत्पन्न हुआ, किसीसमय पतिके कहीं जानेपर उसने मद्यपान किया ॥ ५२ ॥ मदिराके मदसे विह्वलहुई उसको मांस खानेकी इच्छा हुई, तब घरके बाहर जहाँ गौ और मेढे बँधे हुएथे उस गोठमें ॥ ५३ ॥ अंधकारसे व्याप्त रात्रिके समय खड्ग हाथमें लेकर गई और मांसप्रिया उसने मदके आवेशसे मेढा है यह इस बुद्धिसे विना विचारकियेही ॥ ५४ ॥ चिल्लातेहुए एक

गौके बछड़ेको मारदिया और घरले आई देखा तो वह गौका बछड़ाहै।। ५५ ।। ऐसा देखकर डरी और किसी पुण्यकर्मसे उसने शिव शिव इसवचनका
उच्चारण किया, मांस और मदिराकी इच्छावाली उसने मुहूर्तमात्र तो ध्यान किया, ॥ ५६ ॥ किन्तु पीछे उसी गोवत्सका छेदन करके मनवांछित
भोजनकिया, गौके बछडेके आधे शरीरको तो आप खालिया ।। ५७ ।। और आधे शरीरको घरके बाहर रखकर छलसे चिल्लाने लगी कि, अहो
व्याघ्रने गोठमें इस गोवत्सको खालिया ।।५८।। इसप्रकार उसका चिल्लाना सबके घरोंमें सुनाई आया और सब शूद्र आकर उसके निकट स्थित होगये ॥५९॥

छित्त्वातमेवगोवत्संचकाराहारमीप्सि
भीताशिवशिवेत्याहकेनाचित्पुण्यकर्मणा ॥ सामुहूर्त्तमितिध्यात्वापिशितासवलालसा ॥ ५६ ॥ छित्त्वातमेवगोवत्संचकाराहारमीप्सि
तम् ॥ गोवत्सार्धशरीरेणकृताहाराथसापुनः ॥ ५७ ॥ तदर्धदेहंनिक्षिप्यबहिश्चुक्रोशकैतवात् ॥ अहोव्याघ्रेणभग्नोयं जग्धोगोवत्सको
व्रजे ॥ ५८ ॥ इतितस्याःसमाक्रंदःसर्वगेहेषुशुश्रुवे ॥ अथसर्वेशूद्रजनाःसमागम्यांतिकेस्थिताः ॥ ५९ ॥ हतंगोवत्समालोक्यव्याघ्रे
णेति शुचंययुः ॥ गतेषुतेषुसर्वेषुव्युष्टायांचततोनिशि ॥ ६० ॥ तद्भर्तागृहमागत्यदृष्टवान्गृहविड्वरम् ॥ एवंबहुतिथेकालेगतेसाशूद्र
वल्लभा ॥ ६१ ॥ कालस्यवशमापन्नाजगामयममंदिरम् ॥ यमोपिधर्ममालोक्यतस्याःकर्मचपौर्विकम् ॥ ६२ ॥ निर्वर्त्यनिरयावासाच्चक्रे
चंडालजातिकाम् ॥ सापिभ्रष्टायमपुराच्चांडालीगर्भमाश्रिता ॥ ६३ ॥

और व्याघ्रके द्वारा मरेहुए गोवत्सको देखकर शोचकरनेलगे, उन सबके चलेजाने और रात्रिके बीतनेपर ॥ ६० ॥ दूसरे दिन उसका पति आया
और उसको देख कुछ शोचकर चुप रहा किन्तु इस छलको उसने भी न जाना, इस प्रकार बहुत समय बीतनेपर वह शूद्रप्रिया ॥ ६१ ॥ कालके वशीभूत
होकर यमलोकको गई यमराजने उसके पूर्वकर्म और धर्म्म देखे तो इसने कोई सुकृत नहीं किया था ॥ ६२ ॥ तब अवधि पूरीहोनेपर नरकसे

लौटाकर चांडालकी जाति दी, वह भी नरकसे पतित होकर किसी एक चांडलीके गर्भमें आई ॥ ६३ ॥ चांडलीके गर्भसे उत्पन्न जन्मसे अंधी अतिकृष्णवर्ण थी, किसी न किसी देशमें रहकरभी उसका पिता ॥ ६४ ॥ ऐसी उस कन्याकाभी पोषण करतारहा, अभोज्य अर्थात् जिसको कोई न खाय ऐसे कुत्सित और कुत्तोंसे चाटेहुए अपवित्र अन्नसे ॥ ६५ ॥ तथा पीनेके अयोग्यरसोंसे दिनदिन उसका पोषण किया, वह जन्मांध तो थीही बाल्यावस्थामेंही कुछ समयके बीतनेपर कुष्ठरोगसेभी पीड़ित होनेलगी ॥ ६६ ॥ उस दुर्भगाको

ततोबभूवजात्यंधाप्रशांतांगारमेचका ॥ तत्पिताकोपिचांडालोदेशेकुत्रचिदास्थितः ॥ ६४ ॥ तांतादृशीमपिसुतांकृपयापर्यपोषयत् ॥ अभोज्येनकदन्नेनशुनालीढेनपूतिना ॥ ६५ ॥ अपेयैश्चरसैर्मात्रापोषितासादिनेदिने ॥ जात्यंधासापिकालेनबाल्येकुष्ठरुजार्दिता ॥ ॥ ६६ ॥ ऊढानकेनचिद्वापिचांडालेनातिदुर्भगा ॥ अतीतबाल्येसाकालेविध्वस्तपितृमातृका ॥ ६७ ॥ दुर्भगेतिपरित्यक्ताबंधुभिश्च सहोदरैः ॥ ततःक्षुधार्दितादीनाशोचंतीविगतेक्षणा ॥ ६८ ॥ गृहीतयष्टिःकृच्छ्रेण संचचालसलोष्टिका ॥ पत्तनेष्वपिसर्वेषुयाचमानादिनेदिने ॥ ६९ ॥ चांडालोच्छिष्टपिंडेनजठराग्निमतर्पयत् ॥ एवंकृच्छ्रेणमहतानीत्वासुबहुलंवयः ॥ ७० ॥

किसी चांडालनेभी ग्रहण न किया, अर्थात् उसका विवाहभी न हुआ, उसकी बाल्यावस्था बीतनेपर मातापिताभी मरगये ॥ ६७ ॥ और उसके सहोदर बंधुजनोंनेभी दुर्भगा जान त्यागदिया, नेत्रहीन वह चांडाली क्षुधा (भूँख) से व्याकुल होकर शोचनेलगी ॥ ६८ ॥ और कठिनतासे लाठी हाथमें लियेहुए लाठीके सहारे सब देशोंमें दिनदिन भीख मांगने लगी ॥ ६९ ॥ और चांडालोंके उच्छिष्ट अन्नसे अपना उदर पूर्ण करती

थी, इसप्रकार अति कठिनाईसे उसकी बहुत अवस्था होगई ॥७०॥ उसके सब अंग वृद्धावस्थाग्रस्त होगये, इसकारण उसको बहुत दुःख होनेलगा, अन्न, पान और वस्त्रहीन उसने महाजनोंको ॥ ७१ ॥ शिवरात्रि उत्सव आनेपर मार्गमें जाते देखा, उस देवयात्रामें अनेक देशोंसे आते हुए ॥ ७२ ॥ अग्निहोत्री ब्राह्मण और सपत्नीक महात्मा, हाथी, घोडे रथ और रणवास समेत राजा ॥ ७३ ॥ और अनेक कुटुम्बी शब्दकरतेहुए, सवारी और छत्रादिसे शोभित तथा अन्य वैश्य, शूद्र और हजारों संकीर्णजाति ॥७४॥ हँसतेहुए. गातेहुए, कहीं नाचतेहुए, दौडतेहुए, सूँघतेहुए, पीते

जरयाग्रस्तसर्वांगीदुःखमापदुरत्ययम् ॥ निरन्नपानवसनासाकदाचिन्महाजनान् ॥ ७१ ॥ आयास्यंत्यांशिवतिथौगच्छतोबुबुधेध्व गान् ॥ तस्यांतुदेवयात्रायांदेशदेशांतयायिनाम् ॥ ७२ ॥ विप्राणांसाग्निहोत्राणांसस्त्रीकाणां महात्मनाम् ॥ राज्ञाचसावरोधानांसह स्तिरथवाजिनाम् ॥ ७३ ॥ सपरीवारघोषाणांयानच्छत्रादिशोभिनाम् ॥ तथान्येषांचविट्शूद्रसंकीर्णानांसहस्रशः ॥ ७४ ॥ हसतांगा यतांक्वापिनृत्यतामथधावताम् ॥ जिघ्रतांपिबतांकामाद्गच्छतांप्रतिगर्जताम् ॥ ७५ ॥ संप्रयाणेमनुष्याणांसंभ्रमःसुमहानभूत् ॥ इति सर्वेषुगच्छत्सुगोकर्णेशिवमंदिरम्॥७६॥पश्यंतिदिविजाःसर्वेविमानस्थाःसकौतुकाः ॥ अथेयमपिचांडालीवसनाशनतृष्णया ॥ ७७ ॥ महाजनान्याचयितुंसंचचालशनैःशनैः ॥ करावलंबेनान्यस्याःप्राग्जन्मार्जितकर्मणा ॥ ७८ ॥

हुए, कामनासे जातेहुए, गर्जतेहुए ॥ ७५ ॥ इसप्रकार मनुष्योंके गमनको देखकर बड़ा आश्चर्य होताथा इसप्रकार सब गोकर्ण शिवमंदिरकी यात्रा कर रहेथे ॥ ७६ ॥ और विमानमें स्थित, कौतुक युक्त देखतेहुए सब देवताभी यात्रा कररहेथे, इसप्रकार उनको देखकर यह चांडालीभी वस्त्र भोजन और तृष्णासे व्याकुल ॥ ७७ ॥ उनसे भीख मांगनेके निमित्त पूर्वजन्मसे संचितकिये कर्मसे किसी दूसरेके हाथके सहारे शनैःशनैः गोकर्णको

चलदी ॥ ७८ ॥ और कुछ दिन पीछे गोकर्णमें जापहुँची, और मार्गके निकट भीख मांगनेके निमित्त हाथ फैलाकर बैठगई ॥ ७९ ॥
वहाँ पथिकोंसे दीनवचन कहकर बारबार भीख माँगनेलगी, कि, हे पथिकजनों ! पूर्वजन्मके संचितपापोंके द्वारा पीडित हुई मेरे ऊपर ॥ ८० ॥
भोजनमात्रके दानसे दयाकरो, अर्थात् मुझे भोजनदो, तुम दुःखियोंपर दया करतेहो, परम आशीर्वाद देतेहो ॥ ८१ ॥ तुम बहुत पुण्यात्मा हो,
हे महाजनों ! वस्त्रहीन और पृथ्वीपर सोतीहुई मेरे ऊपर कृपाकरो ॥ ८२ ॥ महापापमें डूबीहुई और महाशीत और धूपसे दुखी तथा महा

दिनैःकतिपयैर्यातीगोकर्णक्षेत्रमाययौ ॥ ततोविदूरेमार्गस्यविषण्णाविवृतांजलिः ॥ ७९ ॥ याचमानामुहुःपांथान्बभाषेकृपणंवचः ॥
प्राग्जन्मार्जितपापौघैःपीडितायाश्चिरंमम॥८०॥आहारमात्रदानेनदयांकुरुतभोजनाः ॥ त्रातारःपरमार्तानांदातारःपरमाशिषाम्॥८१॥
कर्तारोबहुपुण्यानांदयांकुरुतभोजनाः ॥ वसनाशनहीनायांस्वपितायांमहीतले ॥८२॥ महापांसुनिमग्नायांदयांकुरुतभोजनाः ॥ महा
शीतातपार्त्तायांपीडितायांमहारुजा ॥ ८३ ॥ अंधायांमयिवृद्धायांदयांकुरुतभोजनाः ॥ चिरोपवासदीप्तायांजठराग्निविवर्धनैः ॥८४॥
संदह्यमानसर्वांग्यांदयांकुरुतभोजनाः॥ अनुपार्जितपुण्यायांजन्मांतरशतेष्वपि ॥८५॥ पापायांमंदभाग्यायांदयांकुरुतभोजनाः ॥ एवम
भ्यर्थयंत्यास्तुचांडाल्याःप्रसृतेंजलौ॥८६॥ एकःपुण्यतमःपांथःसोक्षिपद्बिल्वमंजरीम् ॥ तामंजलौनिपतितांसाविमृश्यपुनःपुनः ॥८७॥

रोगसे पीडित मेरे ऊपर हे महाजनों ! दया करो ॥ ८३ ॥ मुझ अंधी, वृद्धा और बहुत कालसे उपवास करनेसे मेरी जठराग्नि बढगई है, इसकारण अन्नदान
देकर मेरे ऊपर दयाकरो ॥ ८४ ॥ उस जठराग्निसे मेरे सब अंग जलतेहैं, हे महाजनो ! मेरे ऊपर दया करो, सैंकडों जन्मांतरोंमेंभी मैंने पुण्य नहीं कियाहै ॥ ८५ ॥
पापिनी और मंदभागिनी मेरे ऊपर दया करो. इसप्रकार हाथ फैलाकर उसचांडालीके प्रार्थना करनेपर ॥ ८६ ॥ एक पुण्यात्मा पथिकने

उसके हाथपर बिल्वपत्र रखदिया, हाथमें रक्खेहुए उस बिल्वपत्रको देखकर उसने बारंबार विचारकिया, कि यह क्या वस्तु है ॥८७॥ और विना खानेकी वस्तु समझकर दूर फेंकदिया, उसके हाथसे फेंकाहुआ बिल्वपत्र रात्रिमें ॥ ८८ ॥ भाग्यसे किसी शिवलिंगपर गिरगया. और शिवचतुर्दशी के दिन उसने बारंबार अनेक पथिकोंसे भीख माँगी ॥ ८९ ॥ किन्तु दैवयोगसे याचना करनेपर भी उसको कुछ प्राप्त न हुआ इसप्रकार उसने भद्रकालीके पृष्ठभागमें रहकर वह रात्रिविताई ॥ ९० ॥ उससे आधी दूर कुछ एक उत्तरकी ओर ग्रामको प्रातःकाल आशा छोडे शोकसे अतिव्याकुल

अभक्ष्येत्येवमत्वाथदूरेप्राक्षिपदातुरा ॥ तस्याःकरेणनिर्मुक्तारात्रौसाबिल्वमंजरी ॥ ८८ ॥ पपातकस्यचिद्दिष्ट्याशिवलिंगस्यमस्तके ॥ सैवंशिवचतुर्दश्यांरात्रौपांथजनान्मुहुः ॥ ८९ ॥ याचमानापियत्किंचिन्नलेभेदैवयोगतः ॥ तत्रोषितानयारात्रिर्भद्रकाल्यास्तुपृष्ठतः ॥ ९० ॥ किंचिदुत्तरतःस्थानंतदर्धेनातिदूरतः ॥ ततः प्रभातभ्रष्टाशाशोकेनमहताप्लुता ॥ ९१ ॥ शनैर्निववृतेदीनास्वदेशायैवकेवला ॥ श्रांताचिरोपवासेननिपतंतीपदेपदे ॥ ९२ ॥ क्रंदंतीबहुरोगार्तावेपमानाभृशातुरा ॥ दह्यमानार्कतापेननम्रदेहासयष्टिका ॥९३॥ अतीत्यतावतींभूमिंनिपपातविचेतना ॥ अथविश्वेश्वरःशंभुःकरुणामृतवारिधिः ॥ ९४ ॥

॥ ९१ ॥ दीन होकर अकेलीही अर्थात् विना किसी दूसरेके सहारे शनैः शनैः अपने देशको लौटी, बहुत कालसे भोजन न मिलनेके कारण थकीहुई पदपदपर गिरनेलगी ॥ ९२ ॥ अनेक रोगोंसे व्याकुल होकर रोई और बहुत आतुर होकर बारंबार कांपनेलगी, सूर्यके तापसे जलतीहुई,लाठीके सहारे झुकेहुए शरीरसे चली ॥ ९३ ॥ वहाँसे यहाँतक चलकर मूर्च्छित होकर गिरपडी तब करुणा और अमृतके समुद्र विश्वेश्वर

शंकरने ॥ ९४ ॥ विमान लेकर इसके लानेकेनिमित्त हमको भेजा है, इसप्रकार इस चांडालीका यह आख्यान यहाँ तुमसे कहा ॥ ९५ ॥ हे महामते ! गौतमऋषि ! दीनोंपर शिवजीकी दयालुता दिखाई, कर्मोंकी इसविचित्र गतिको देखो ॥ ९६ ॥ कि, यह अधमा चांडाली भी परम स्थान शिवलोकमें गमन करतीहै, क्योंकि पूर्वजन्ममें इसने अन्नादिका दानभी नहीं किया ॥ ९७ ॥ इसी कारण भूँख, प्यास आदि क्लेशोंसे यह यहाँ पीडित हुई मदकेवेग अंधीहोकर जो इसने तीक्ष्ण पाप किया ॥ ९८ ॥ उस कर्मसे यह इस जन्ममें अंधीहुई पूर्वजन्ममें जो इसने जान

एनामानयतेत्यस्मान्युयुजेसाविमानकान् ॥ एषाप्रवृत्तिश्चांडाल्यास्तवेहपरिकीर्त्तिता ॥९५॥ यथासंदर्शिताशंभोःकृपणेषुकृपालुता ॥ कर्मणःपरिपाकोत्थांगतिंपश्यमहामते ॥९६॥ अधमापिपरंस्थानमारोहतिनिरामयम् ॥ यदेतयापूर्वभवेनान्नदानादिकंकृतम् ॥९७॥ क्षुत्पिपासादिभिःक्लेशैस्तस्मादिहनिपीडयते ॥ यदेषामदवेगांधाचक्रेपापंमहोल्बणम् ॥९८॥ कर्मणातेनजात्यंधाबभूवात्रैवजन्मनि ॥ अपिविज्ञायगोवत्संयदेषाभक्षयत्पुरा ॥ ९९ ॥ कर्मणातेनचांडालीबभूवेहविगर्हिता ॥ यदेषास्वपथंहित्वाजारमार्गरतापुरा ॥१००॥ तेनपापेनमहतावहुकुष्ठव्रणान्विता ॥ कामार्त्तायदियंस्वैरंशूद्रेणरमितापुरा ॥ १ ॥ महासृक्पूयकृमिभिःपीडयतेतेनपाप्मना ॥ यदेतयापूर्वभवेसुरापीताविमूढया ॥ २ ॥

कर भी गोवत्सका मांस खाया ॥ ९९ ॥ उस कर्मसे यह इस जन्ममें निन्दित चांडाली हुई, और पूर्वजन्ममें जो इसने अपने धर्मको छोडकर परपुरुषमें गमन किया ॥ १०० ॥ उस बडे पापकर्मसे इसके कुष्ठ और व्रण (फोडे) हुए, कामसे विह्वल होकर जो इसने पूर्वजन्ममें स्वच्छन्दतासे शूद्रके साथ रमण किया ॥ १०१ ॥ उस पापसे यह बडे़ रुधिर, राध और कृमियोंसे पीडित हुई, पूर्वजन्ममें जो

इस मूर्खाने सुरापान किया ॥ १०२ ॥ उस पापसे महायक्ष्मा, दुःख और हृदयके शूलोंसे पीडित हुई, हे मुनिश्रेष्ठ ! यहांही सब मनुष्योंके पापोंको ज्ञानी, महात्मापुरुष जान लेतेहैं, इस जन्ममें जो बहुत रोगयुक्त, धन और पुत्रहीन ॥१०३॥१०४॥ दुर्लक्षण, क्लेशयुक्त, याचक और लाजरहित हैं तथा अन्न, वस्त्र, पान, शयन, भषण और वियासे ॥ १०५ ॥ हीन हैं विरूप (कुरूप) अंगहीन अर्थात् काणे, कुबडे हैं विद्याहीन उच्छिष्टभोजी, दुर्भाग्य, निन्दित और जो दूसरोंके सेवक हैं ॥ १०६ ॥ इन्होंने पूर्वजन्ममें बडे पाप कियेहैं. इस प्रकार विचार और मनु

महायक्ष्मार्तिहृच्छूलैःपीडयतेतेनपाप्मना ॥ अत्रैवसर्वमर्त्येषुपापचिह्नानिकृत्स्नशः ॥ ३ ॥ लक्ष्यंतेमुनिशार्दूलसविवेकैर्महात्मभिः ॥ अत्रयेबहुरोगार्त्तायेपुत्रधनवर्जिताः ॥४॥ येचदुर्लक्षणक्लिष्टायाचकाविगतह्रियः ॥ वासोन्नपानशयनभूषणाभ्यंजनादिभिः ॥५॥ हीना विरूपानिर्विद्याविकलांगाः कुभोजनाः ॥ येदुर्भाग्यानिंदिताश्चयेचान्येपरसेवकाः ॥ ६ ॥ एतेपूर्वभवेसर्वेसुमहत्पापकारिणः ॥ एवंविमृश्ययत्नेनदृष्ट्वालोकजनस्थितिम् ॥ ७ ॥ बुधोनकुरुतेपापंयदिकुर्यात्सआत्महा ॥ देहोयंमानुषोजंतोर्बहुकर्मैकभाजनम् ॥ ८ ॥ सदासत्कर्मसेवेतदुष्कर्मसततंत्यजेत् ॥ पुण्यंसुखार्थीकुर्वीतदुःखार्थीपापमाचरेत्॥९॥ द्वयोरेकतरंलोकेगृह्णीतकुशलोजनः॥ इमंमानुषमाश्रित्यदेहंपरमदुर्लभम् ॥ ११० ॥

ष्योंकी स्थितिको प्रयत्नपूर्वक देखकर ॥१०७॥ ज्ञानी पुरुष पाप नहीं करता यदि करें तो उसको आत्महत्याका पाप लगताहै. यह मनुष्यशरीर सत्कर्म करनेके निमित्त है ॥१०८॥ सदा सत्कर्मका सेवन करै. दुष्कर्मको सदा त्यागे, यदि सुखकी इच्छा हो तो पुण्यकर्म सेवन करे और दुःखकी इच्छा हो तो पापकर्म करे ॥१०९॥ चतुर पुरुषको चाहिये कि, इन (पाप पुण्य) दोनोंमेंसे एक(पुण्य)को ग्रहण करे, क्योंकि यह मनुष्य शरीर परम दुर्लभहै॥ ११०॥

इसकारण इस मनुष्य शरीरको पाकर अपनी आत्माके हितार्थ किसी एक देवका आश्रय अवश्य लेवै, निरन्तर सब पाप करताहुआ पुरुष ॥ १११ ॥ बुद्धिपूर्वक शिवजीका ध्यान करनेसे सम्पूर्ण पापोंसे छूट जाताहै, पूर्वजन्ममें मरकर जब यह चांडाली यमलोकमें गई ॥ ११२ ॥ तब यमराजकी सभामें बड़ा वितर्क (विचार) हुआ कि, यद्यपि इसका ब्राह्मणकुलमें जन्म हुआ किन्तु आचरण इसने अच्छे नहीं किये ॥ ११३ ॥ इस कारण हम इसको यहाँ लाये हैं, अब यह नरकमें जाय कि, नहीं, बाल्यावस्थामें इसने लेशमात्र भी पुण्य किया है कि, नहीं ॥ ११४ ॥ इन सब बातों

अयमात्महितार्थं किंचिद्देवमेकं समाश्रयेत् ॥ अथपापानिसर्वाणिकुर्वन्नपिसदानरः ॥११॥ शिवमेकमतिर्ध्यायेत्ससंतरतिपातकम्॥ मृतापूर्वं भवेत्त्वेषायदाप्राप्तायमालये ॥१२॥ तदावितर्कःसुमहानासीद्यमसभासदाम्॥यद्यपिब्राह्मणीत्वेषासत्कुलाचारदूषिता॥१३॥ अतोस्माभि रिहानीतानिरयंयातुवानवा॥ अनयासाधितोबाल्येपुण्यलेशोऽस्तिवानवा ॥१४॥ अथापिसुविमृश्यैवंधार्योदंडोत्रनान्यथा॥बहुजन्मसह स्रेषुकृतपुण्यावपाकितः ॥१५॥ नृणांब्रह्मकुलेजन्मलभ्यतेहिकथंचन ॥ अतोस्याःपूर्वपूर्वेषुतत्कथंनास्तिजन्मसु ॥१६॥ अन्यथासत्कुले जन्मकथमेषाप्रपद्यते ॥ अत्रैवजन्मन्यनयाकृतमंहोदुरत्ययम् ॥ १७ ॥ अथापिनरकावासंप्रायशोनेयमर्हति ॥ किंतुगोवत्सकंहत्वावि मृश्यागतसाध्वसा ॥ १८ ॥

को विचारकर इसको दण्ड देना चाहिये, कारण कि, अनेक पूर्वजन्मोंके पुण्यसे ॥ ११५ ॥ मनुष्योंका ब्राह्मणकुलमें जन्म होताहै किसप्रकार नहीं इस कारण ज्ञात होता है कि, इसने पूर्वजन्मोंमें पुण्य किया है, ॥ ११६ ॥ नहीं तो श्रेष्ठ ब्राह्मणकुलमें इसका जन्म किसप्रकार होसकता था, जो कुछ पाप किया है, वह इसीजन्ममें किया है ॥ ११७ ॥ कि, गोवत्सको मारकर इसने विचारा और पूर्वजन्मसे संचित कियेहुए कर्मसे शिवशिव, इसप्रकार

उच्चारण किया. यह नाम सम्पूर्ण पापोंको नष्ट करदेता है, इसकारण यह नरकमें नहीं जायगी ॥ ११८ ॥ ११९ ॥ जो भक्तिपूर्वक शिव, इस नामका उच्चारण करता है. वह सीधा शिवलोकको चलाजाता है, एकही जन्ममें इसने कठिन पाप किया है ॥ १२० ॥ इस कारण क्रमसे इसको चांडालीकी योनि प्राप्त होवे, मनुष्योंके लिये इस संसारमें इससे अधिक और क्या नरक होगा ॥१२१॥ कि, अनेक क्लेशोंके समूहोंसे बारंबार पीडा होती है दुष्क्लेश, जन्मसे दरिद्रता, शरीरमें अनेक रोग और मूढता ॥ १२२ ॥ यह एक एक भी नरक हैं, सबका तो ठिकानाही क्या है, पूर्वजन्मके पुण्य

एषाशिवशिवेत्याहप्राग्जन्मार्जितकर्मणा ॥ यदेषापापविच्छित्त्यैसकृदप्युरुमंगलम् ॥ १९ ॥ शिवनामवदेद्भक्त्यातर्हिगच्छेत्परंपदम् ॥ एकजन्मकृतस्यास्यदारुणस्यापियत्फलम् ॥१२०॥ क्रमेणानुभवत्वेषाभूत्वाचांडालजातिका ॥ अस्मादन्यतमःकोवानरकोस्तिनृणामिह ॥२१॥ अनेकक्लेशसंघातैर्यन्मुहुःपरिपीडनम् ॥ दुष्कुलेजन्मदारिद्र्यंमहाव्याधिर्विमूढता ॥२२॥ एकैकएवनरकःसर्वेवाचाथकिंपुनः॥ प्राग्जन्मपुण्यभारेणयन्नामविवशाब्रवीत्॥२३॥ तेनैषान्यभवेभूरिपुण्यमंतेकरिष्यति ॥ तेनपुण्येनमहतानिस्तीर्याघौघयातनाः॥ ॥ २४ ॥ विचार्यस्वयमेवेशोयद्युक्तंतत्करोतुसः ॥ एवंवैवस्वतपुरेसर्वैर्यमपुरोगमैः ॥ विमृश्याचित्रगुप्ताद्यैरियमुक्तापतद्भुवि ॥ २५ ॥ आदौयदेषाशिवनामनारीप्रमादतोवाप्यसतीजगाद ॥ तेनेहभूयःसुकृतेनशंभोर्बिल्वांकुराराधनपुण्यमाप ॥ २६ ॥

से जो इसने शिवजीका नामोच्चारण किया ॥ १२३ ॥ उस पुण्यके प्रतापसे यह दूसरे जन्ममें वृद्धावस्थाके प्राप्त होनेपर एक बड़ा भारी पुण्य करेगी, उस बड़े पुण्यके प्रतापसे इसके संपूर्ण पापोंकी यातना दूर होजायगी ॥ १२४ ॥ और यह शिवलोकमें जायगी. वहां जो योग्य होगा शिवजी स्वयं विचार कर करेंगे, यह विचारकर यमपुरमें यमराजकी सभामें बैठेहुए ॥ १२५ ॥ चित्रगुप्त आदिकोंने इसको चांडालयोनिमें जानेकेनिमित्त कहा पूर्व

जन्ममें जो इसने प्रमादसे ही शिवनाम उच्चारण किया था, उसी पुण्यके प्रभावसे शिवजीके ऊपर बिल्वपत्रद्वारा आराधनरूप पुण्य प्राप्त हुआ॥ १२६॥ निष्प्रयोजन श्रीगोकर्णमें इसने शिवचतुर्दशीके दिन व्रत और शिवजीका पूजन किया तथा रात्रिमें जागरण और बिल्वपत्र चढाया ॥ १२७ ॥ (बेकाम) जो इसने यह पुण्य किया उसका फल आज यह तुम्हारे संमुख भोग रहीहै ॥ १२८ ॥ गौतम मुनि बोले, कि, इस प्रकार कहकर

श्रीगोकर्णेशिवतिथावुपोष्यशिवमस्तके॥ कृत्वाजागरणंह्येषाचक्रेबिल्वार्पणंनिशि ॥२७॥ अकामतःकृतस्यास्यपुण्यस्यैवचयत्फलम्॥ अद्यैवभोक्ष्यतेसेयंपश्यतस्तवनोमृषा ॥ २८ ॥ ॥ गौतमउवाच ॥ ॥ इत्युक्त्वाशिवदूतास्तेतस्याश्चांडालयोनितः ॥ जीवलेशं समाकृष्ययुयुजुर्दिव्यतेजसा ॥२९॥ तांदिव्यदेहसंक्रांतांतेजोराशिसमुज्ज्वलाम् ॥ विमानेस्थापयामासुःप्रीतास्ते शिवकिंकराः॥१३०॥ अथसापरमोदाररूपलावण्यशालिनी ॥ दिव्यभूषणदीप्तांगीदिव्यांबरविधारिणी ॥ ३१ ॥ देहेनदिव्यगंधेनदिव्यतेजोविकाशिनी ॥ दिव्यमाल्यावतंसेनविरराजविमानगा ॥ ३२ ॥ रत्नच्छत्रपताकाद्यैर्गीतवादित्रनिस्वनैः ॥ मध्येसाशिवदूतानांमोदमानाव रानना ॥ ३३ ॥

शिवजीके दूत चांडालयोनिसे उसके जीवमात्रको लेकर दिव्य तेजमें मिलातेहुए ॥ १२९ ॥ दिव्य देहसे युक्त, तेजसमूहसे उज्वल उस चांडालीको प्रसन्नतापूर्वक उन शिवजीके किन्नरोंने विमानमें स्थापन किया ॥१३०॥ परमउदार, रूप और लावण्यसंपन्न, दिव्य भूषणोंसे युक्त, दिव्य वस्त्र धारण कियेहुए ॥ १३१ ॥ दिव्य गन्धयुक्त देह और तेजसे प्रकाशित, दिव्य मालाओंसे युक्त विमानमें वह चांडाली शोभा पातीहुई ॥१३२॥ रत्न, छत्र

पताकाआदि और गीत वादित्रके शब्दोंसे युक्त और शिवानुचरोंके बीचमें वह सुन्दरमुखवाली चांडाली प्रसन्न होतीहुई ॥ १३३ ॥ बारं बार स्मरण करके उसने अपने जन्मोंका अनुभव किया. और स्वप्नके समान उसने महाआश्चर्य देखा, डरी और उठी ॥ १३४ ॥ तथा विचारा कि, मैं कौन हूँ यह सिद्ध कौन हैं, और यह कौन सुन्दर लोक है, चांडालके गोत्रमें उत्पन्न हुई मेरा दुःखरूप शरीर कहां गया ॥ १३५ ॥ अहो मायाके विलासका बडा आश्चर्य मैंने देखा, जो कि, मेरे सहस्रों जन्मोंमें बारंबार भ्रान्ति होती है ॥ १३६ ॥ अहो, शिवजीकी पूजाका माहात्म्य

अनुभूतानिजन्मानिस्मृत्वास्मृत्वापुनःपुनः ॥ भीतात्रस्ताहढाश्चर्यंदृष्ट्वास्वप्नमिवोत्थिता ॥ ३४ ॥ काहंकेमीमहासिद्धाःकोयंलोको मनोरमः ॥ गतमेवपुनःकष्टंचंडचांडालगोत्रजम् ॥ ३५ ॥ अहोसुमहदाश्चर्यंदृष्टंमायाविलासजम्॥ यन्मेभवसहस्रेषुभ्रांतंभ्रातं पुनःपुनः ॥ ३६ ॥ अहोईश्वरपूजायामाहात्म्यंविस्मयावहम् ॥ पत्रमात्रेणसंतुष्टोयोददातिनिजंपदम् ॥ ३७ ॥ इतितांजातनिर्वेदांस्मरंतींभगव त्पदम् ॥ दिव्यंविमानमारोप्यतेमहेश्वरकिंकराः ॥ ३८ ॥ आलोकयत्सुसर्वेषुलोकेशेषुसविस्मयम् ॥ आमंत्र्यतामथानिन्युःपरमे श्वरसन्निधिम् ॥ ३९ ॥ राजन्सुमहदाश्चर्यमाख्यातंगिरिजापतेः ॥ माहात्म्यंभक्तिलेशस्यसर्वाघौघविनाशनम् ॥ १४० ॥

बड़ा आश्चर्ययुक्त है, कि गोकर्णमें एक बिल्वपत्र चढ़ानेमात्रसे प्रसन्न होकर मुझको अपना लोक दिया ॥ १३७ ॥ इसप्रकार आश्चर्यको प्राप्त हो और शिवजीके चरणोंका स्मरण करतीहुई उस चांडालीको दिव्य विमानमें बैठाकर वे शिवजीके अनुचर ॥ १३८ ॥ आश्चर्यपूर्वक हम सबके देखतेदेखते बडे आदरपूर्वक शिवजीके निकट लेगये ॥ १३९ ॥ हे राजन्! यह आश्चर्ययुक्त शिवजीका आख्यान तुमसे कहा, शिवजीकी भक्तिका माहात्म्य

संपूर्ण पापोंको नष्ट करदेताहै ॥ १४० ॥ इस प्रकार गौतममुनिके वचनको सुनकर राजा बूझने लगे, कि हे भगवन्! वह शिवजीका उत्तम लोक किस प्रकारका है. यदि मेरे ऊपर दया करते हो तो, उसका लक्षण मुझसे कहो ॥ १४१ ॥ गौतम ऋषि बोले कि, ब्रह्मलोक, विष्णुलोकसे शिवलोक उत्तम और बडा दुर्लभ है, जहां सदा आनन्द रहता है, वह शिवलोक है ॥१४२॥ जहाँ सब कोई नहीं जासकते, जहाँ ज्योतिका प्रकाश है, जहाँ अन्धकारका लेशमात्र नहीं, वह शिवलोक है ॥ १४३ ॥ सत, रज, तम, इन तीनों गुणोंको त्यागकर जहाँ योगीजन आते हैं, और फिर नहीं

॥ राजोवाच ॥ भगवन्परमेशस्यकीदृशोलोकउत्तमः ॥ तस्यमेलक्षणंब्रूहियद्यस्तिमयितेदया ॥ ४१ ॥ ॥ गौतमउवाच ॥ ॥ ब्रह्मादिसुरनाथानांलोकेष्वपिसुदुर्लभः ॥ यआनंदःसदायत्रसलोकःपारमेश्वरः ॥ ४२ ॥ सर्वातिगमनंयत्रज्योतिर्यत्रप्रतिष्ठितम् ॥ क्वापिनास्तितमोयोगःसलोकःपारमेश्वरः ॥ ४३ ॥ गुणवृत्तिविनिस्तीर्यसंप्राप्तायत्रयोगिनः ॥ नपतेयुःपुनःसर्वेसलोकःपारमेश्वरः ॥ ४४ ॥ यत्रवासंनकुर्वंतिक्रोधलोभमदादयः ॥ यत्रावस्थानजन्माद्याःसलोकः पारमेश्वरः ॥ ४५ ॥ सर्वेषांनिगमानांचयदेकंक्षेत्रमुच्यते ॥ यस्मान्नास्तिपरंवित्तंतत्पदंपारमेश्वरम् ॥ ४६ ॥ प्रत्याहारासनध्यानप्राणसंयमनादिभिः ॥ यत्रयोगपथैःप्राप्तुंयततेयोगिनःसदा ॥ ४७ ॥ यत्रदेवःसदानंदनिर्मलज्ञानरूपया ॥ अस्तिदेव्यासहक्रीडन्सलोकःपारमेश्वरः ॥ ४८ ॥

लौटते, वह शिवलोक है॥ १४४ ॥जहां क्रोध, लोभ और मद आदि नहीं टिकते,जहां जाकर फिर पुरुषका जन्म नहीं होता,अर्थात मुक्त होजाता है, वह शिवलोक है॥ १४५॥सब शास्त्रोंमें इसी एक क्षेत्रको उत्तम कहा है, जिससे अधिक और कुछ परम वित्त नहीं है, वह शिवलोक है॥ १४६॥ तप, समाधि, ध्यान, प्राणायाम और योगसे सदा योगीजन जहाँ जानेकी इच्छा करते हैं ॥ १४७ ॥ जहाँ सदानन्द निर्मल ज्ञानरूपसे परमात्मा शंकर पार्वतीजीके साथ

क्रीडा करते हैं वह शिवलोक है ॥ १४८ ॥ सहस्रों जन्मोंसे सञ्चय कियेहुए पुण्योंके प्रतापसे जहां स्त्रीपुरुष क्रीडा करते हैं ॥ १४९ ॥ जहाँ निरन्तर प्रकाशमान तेजके प्रभावसे दिनरातका भेद विदित नहीं होता कि, रात्रि कब होती है क्योंकि वहां तो, हरसमय प्रकाशही बनारहता है ॥ ॥ १५० ॥ वह शिवजीका लोक कुयोगीको दुर्लभ है, जो शिवजीकी भक्तिमें रत रहते हैं, वे ही शिवलोकको जाते हैं ॥ १५१ ॥ जो शिव जीकी कथाको प्रसन्नतापूर्वक श्रवण और कीर्तन करते हैं, जो सब प्राणियोंपर दया करते हैं, शान्तिपूर्वक शिवजीकी भक्ति करते हैं, और जो संसार

जन्मानेकसहस्रेषुसंभृतैःपुण्यराशिभिः॥ आरूढाःपुरुषानार्यःक्रीडंतेयत्रसंगताः ॥४९॥ तेजोराशौसमालीनादुर्विभाव्येमनोरमे ॥ अहो रात्रादिसंस्थानंनविंदंतिकदाचन ॥ १५० ॥ सलोकःपरमेशस्यदुर्लभोहिकुयोगिनः ॥ एतद्भक्तिसुपूर्णायेतैरेवप्रातिपद्यते ॥५१॥ येयत्क थाश्रवणकीर्तनजातहर्षायेभूतसर्वसुहृदःप्रशमैकनिष्ठाः ॥ संसारचक्रमतिवाह्यनिरस्तमोहास्तेशांकरंपदमवाप्यसुखंरमन्ते ॥५२॥ तथा त्वमपिराजेंद्रगोकर्णगिरिशालयम् ॥ गत्वाप्रशमिताघौघःकृतकृत्यत्वमाप्नुहि ॥५३॥ तत्रसर्वेषुकालेषुस्नात्वाभ्यर्च्यमहाबलम् ॥ कृत्वा शिवचतुर्दश्यामुपवासंसमाहितः ॥ ५४ ॥ कृत्वाजागरणंरात्रौबिल्वैरभ्यर्च्यशंकरम् ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तःशिवलोकमवाप्स्यसि ॥५५॥

चक्रको छोडकर मोह नहीं करत, वे ही शिवलोकमें प्राप्त होकर सुखपूर्वक विहार करते हैं ॥ १५२ ॥ हे राजेंद्र ! इसलिये तुम भी शिवस्थान गोकर्णक्षेत्रमें जाओ और ब्रह्महत्यारूप पापसमूहको नष्ट करके कृतकृत्यत्वको प्राप्त होओ ॥ १५३ ॥ वहाँ नित्यप्रति स्नान करके महाबलनामक शिवजीका पूजन और शिवचतुर्दशीको नियमपूर्वक उपवास ॥ १५४ ॥ रात्रिमें जागरण तथा बिल्वपत्रोंसे शंकरका पूजन करके सम्पूर्ण पापोंसे

छूटकर शिवलोकमें गमन करोगे ॥ १५५ ॥ हे राजन् ! यह सुन्दर उपदेश मैंने तुमको किया, तुम्हारी स्वस्ति हो, अब हम राजा जनककी पुरी मिथिलाको जाते हैं ॥ १५६ ॥ इस प्रकार प्रीतिपूर्वक राजाको समझा बुझाकर गौतममुनि मिथिलापुरीको चलेगये और वह राजा प्रसन्नतापूर्वक गोकर्ण क्षेत्रको गया ॥ १५७ ॥ वहाँ स्नान करके महाबलनामक महादेवका दर्शन और पूजन करके राजाको सम्पूर्ण पापसमूहोंसे मुक्तापूर्वक शिवजीके परमपद (शिवलोक) की प्राप्ति हुई ॥ १५८ ॥ जो इस शिवजीकी मनोहर कथाको भक्तिपूर्वक नित्य सुनता वा सुनाता है, वह शिवजीके परम

एषतेविमलोराजन्नुपदेशोमयाकृतः ॥ स्वस्तितेस्तुगमिष्यामिमिथिलाधिपतेःपुरीम् ॥ ९६ ॥ इत्यामंत्र्यमुनिः प्रीत्यागौतमोमिथिलांय यौ ॥ सोपिहृष्टमनाराजागोकर्णंप्रत्यपद्यत ॥ ९७ ॥ तत्रदृष्ट्वामहादेवंस्नात्वाभ्यर्च्यमहाबलम् ॥ निःशेषजातपापोवोलेभेशंभोः परंपदम् ॥ ९८ ॥ यइमांशृणुयान्नित्यं कथांशैवींमनोहराम् ॥ श्रावयेद्वाजनोभक्त्यासयातिपरमांगतिम् ॥ १६९ ॥ इतिकथितमशेषंश्रेयसामा दिबीजंभवशतदुरितघ्नंध्वस्तमोहांधकारम् ॥ चरितममरगेयंमन्मथारेरुदारंसततमपिनिषेव्यंस्वस्तिमद्भिश्चलोकैः ॥ १६० ॥ इति श्री स्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेशिवचतुर्दशीमाहात्म्यंनामतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

पदको प्राप्त होता है ॥ १५९ ॥ हे मुनीश्वरो ! सम्पूर्ण कल्याणोंका बीजरूप, सैकडों पापोंका दूरकरनेवाला, मोहरूप अन्धकारको नष्ट करनेवाला देवताओंके द्वारा गान कियाहुआ, यह शिवजीका चरित्र तुमसे वर्णन किया, कल्याणकी इच्छावाले पुरुषोंको इसका निरन्तर सेवन करना चाहिये ॥ ॥ १६० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पंडितदातारापसूनुपंडितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायांशिवचतुर्दशीमाहात्म्यं नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अथ चतुर्थोऽध्यायः ॥ सूतजी बोले कि, हे ऋषियों ! और भी परमअद्भुतरूप शिवजीका माहात्म्य तुमसे वर्णन करताहूँ, कि, जो सुननेवालोंके सम्पूर्ण पाप नष्टकरके संसारकी फांसीसे मुक्त करदेता है ॥१॥ दुष्कर्मरूप समुद्रमें पापोंसे दग्ध और डूबते हुए मनुष्योंके पार करनेको एक शिवजीकी पूजा ही नौकारूप निरूपण करी है ॥२॥ इस संसारमें बुद्धिमान् पुरुषको सदा शिवजीकी पूजा करनी चाहिये, पूजा करनेमें असमर्थ हो तो दूसरेके द्वाराकी हुई पूजाको नम्रतापूर्वक देखे ॥ ३ ॥ जो कोई अश्रद्धासेभी मुक्तिकी दाता शिवजीकी पूजा करता है अथवा देखता है, वह भी कुछ समयके

॥ सूतउवाच ॥ ॥ भूयोपिशिवमाहात्म्यंवक्ष्यामिपरमाद्भुतम् ॥ शृण्वतांसर्वपापघ्नंभवपाशविमोचनम् ॥ १ ॥ दुस्तरेदुरितांभोधौ मज्जतांविषयात्मनाम् ॥ शिवपूजांविनाकश्चित्प्लवोनास्तिनिरूपितः ॥ २ ॥ शिवपूजांसदाकुर्याद्बुद्धिमानिहमानवः ॥ अशक्तश्चेत्कृतांपूजांपश्येद्भक्तिविनम्रधीः ॥ ३ ॥ अश्रद्धयापियःकुर्याच्छिवपूजांविमुक्तिदाम् ॥ पश्येद्वासोपिकालेनप्रयातिपरमंपदम् ॥ ४ ॥ आसीत्किरातदेशेपुनाम्नाराजाविमर्दनः ॥ शूरःपरमदुर्द्धर्षोजितशत्रुःप्रतापवान् ॥ ५ ॥ सर्वदामृगयासक्तःकृपणोनिर्घृणोबली ॥ सर्वमांसाशनः क्रूरःसर्ववर्णांगनावृतः ॥ ६ ॥ तथापिकुरुतेशंभोः पूजांनित्यमतंद्रितः ॥ चतुर्दश्यांविशेषेणपक्षयोःशुक्लकृष्णयोः ॥ ७ ॥

उपरान्त शिवजीके परमपदको प्राप्त होजाता है ॥ ४ ॥ इस विषयमें एक पुरातन इतिहास वर्णन करते हैं कि, किरातदेशमें शूर, परमदुर्धर्ष, शत्रुओंको जीतनेवाला, प्रतापवान्, विमर्दननामक एक राजा था ॥ ५ ॥ निरन्तर मृगया (शिकार) में आसक्त, क्रूर, कृपण, घृणारहित, बली, सब जीवोंका मांस भक्षण करनेवाला, क्रूर और सब वर्णोंकी स्त्रियोंमें गमन करनेवाला था ॥ ६ ॥ तथापि महीनेकी दोनों चतुर्दशियोंको आलस्यरहित

होकर शंकरका पूजन कियाकरता था ॥ ७ ॥ और महाविभवयुक्त पूजा करके प्रसन्न होता था तथा प्रसन्नतापूर्वक शिवजीके सन्मुख नृत्य, स्तुति और
गान करता था ॥ ८ ॥ इसप्रकार स्थित, सर्वभक्षी, और दुराचारी अपने पतिको देखकर रानी दुःखी होती थी ॥ ९ ॥ एक समय शील
गुणसंपन्न कुमुद्वती नामवाली वह रानी एकान्तमें पतिके मिलनेपर उस (राजा) से बूझनेलगी ॥ १० ॥ कि, हे राजन् ! तुम्हारा यह चरित महा
आश्चर्यकारक है, कहाँ तो यह महादुराचार और कहाँ यह शंकरमें तुम्हारी भक्ति ॥ ११ ॥ तुम सदा सर्वप्रकारके मांस भक्षण करते हो, सर्व

महाविभवसंपन्नांपूजांकृत्वासमोदते ॥ हर्षेणमहताविष्टोनृत्यतिस्तौतिगायति ॥ ८ ॥ तस्यैवंवर्तमानस्यनृपतेःसर्वभक्षिणः ॥ दुराचार
स्यमहिषीचेष्टितेनान्वतप्यत ॥ ९ ॥ सावैकुमुद्वतीनामराज्ञीशीलगुणान्विता ॥ एकदापतिमासाद्यरहस्येतदपृच्छत ॥ १० ॥ एतत्ते
चरितंराजन्महदाश्चर्यकारणम् ॥ क्वतेमहान्दुराचारःक्वभक्तिःपरमेश्वरे ॥ ११ ॥ सर्वदासर्वभक्षस्त्वंसर्वस्त्रीजनलालसः ॥ सर्वहिंसापरः
क्रूरः कथंभक्तिस्तवेश्वरे ॥ १२ ॥ इतिपृष्टःसभूपालोविमृश्यसुचिरंततः ॥ त्रिकालज्ञःप्रहस्यैनांप्रोवाचसकुतूहलः ॥ १३ ॥ राजोवाच ॥
अहंपूर्वभवेकश्चित्सारमेयोवरानने ॥ पंपानगरमाश्रित्यपर्यटामिसमंततः ॥ १४ ॥

स्त्रियोंमें तुम्हारी लालसा रहती है, सब जीवोंकी हिंसा करते हो, क्रूर हो, फिर तुम्हारी शिवजीमें भक्ति किसप्रकार हुई ॥ १२ ॥ सो कृपाकरके
मुझे सुनाइये, जिससे मेरा भ्रम जाय, इसप्रकार रानीके बूझनेपर त्रिकाल (भूत, भविष्य, वर्त्तमान) का जाननेवाला वह राजा कुछ समयतक विचार
कर लीलापूर्वक हँसकर बोला ॥ १३ ॥ राजा बोला हे वरानने ! पूर्वजन्ममें मैं कुत्ता था और पम्पानगरमें रहकर चारों ओर भ्रमण करता था,

॥ १४ ॥ इसप्रकार कुछ समय बीतनेपर उसी सुंदरनगरमें किसी समयमें मनोहर एक शिवमंदिरमें आया ॥ १५ ॥ महातिथि शिवचतुर्दशीको होतीहुई शिव पूजाको उत्सुक होकर दूरसे मंदिरके द्वारदेशमें स्थितहुआ देखता रहा ॥ १६ ॥ पूजा करतेहुए पुरुषोंने जब मुझे खड़ा देखा तब उन्होंने क्रोधसे दंड हाथमें लेकर मुझे भगादिया अपने प्राणोंकी रक्षाके निमित्त मैं उस स्थानसे भागकर ॥ १७ ॥ उस सुन्दर शिवमंदिरकी प्रदक्षिणा करके बलि पिंडादिके लोभसे फिर उसी द्वार पर आगया ॥ १८ ॥ जब मैं द्वारपर खड़ा होऊं तभी वे भगावें. इसप्रकार बारंबार प्रदक्षिणा करके मैं फिर भी उसी द्वारपर बैठगया, द्वारपर

एवंकालेषुगच्छत्सुतत्रैवनगरोत्तमे ॥ कदाचिदागतःसोहंमनोज्ञंशिवमंदिरम् ॥ १५ ॥ पूजायांवर्त्तमानायांचतुर्दश्यांमहातिथौ ॥ अपश्यमुत्सुकोदूराद्बहिर्द्वारंसमाश्रितः ॥ १६ ॥ अथाहंपरमक्रुद्धैर्दंडहस्तैःप्रधावितः ॥ तस्माद्देशादपक्रांतःप्राणरक्षापरायणः ॥ १७ ॥ ततःप्रदक्षिणीकृत्यमनोज्ञंशिवमंदिरम् ॥ बलिपिंडादिलोभेनपुनर्द्वारमुपागतः ॥ १८ ॥ एवं पुनःपुनस्तत्रकृत्वाकृत्वाप्रदक्षिणाम् ॥ द्वारदेशेसमासीनंनिजघ्नुर्निशितैःशरैः ॥ १९ ॥ सविद्धगात्रःसहसाशिवद्वारिगताशुभः ॥ जातोस्म्यहंकुलेराज्ञांप्रभावाच्छिवसन्निधेः ॥ २० ॥ दृष्टाचतुर्दशीपूजांदीपमालाविलोकिताः ॥ तेनपुण्येनमहतात्रिकालज्ञोस्मिभामिनि ॥ २१ ॥ प्राग्जन्मवासनाभिश्चसर्वभक्षोस्मिनिर्घृणः ॥ विदुषामपिदुर्लंघ्याप्रकृतिर्वासनामयी ॥ २२ ॥

बैठेहुए मुझको उन्होंने तीक्ष्ण बाणोंसे वध किया ॥ १९ ॥ और मैं पंचत्वको प्राप्त होगया, शिवमंदिरके निकट मृत्यु होनेके प्रभावसे मेरा राजकुलमें जन्म हुआ ॥ २० ॥ शिवचतुर्दशीकी पूजा और दीपमालाका जो मैंने दर्शन किया, हे भामिनि ! उस महापुण्यके प्रभावसे मैं त्रिकालज्ञ हुआ ॥ २१ ॥ और पूर्वजन्मकी वासनासे सर्वभक्षी और घृणारहित हुआ, पूर्वजन्मकी वासनाको पंडित भी दूर नहीं करसकते ॥ २२ ॥

इसीलिये मैं शिवचतुर्दशीको जगत्के स्वामी शंकरका पूजन करताहूँ, हे भद्रे ! तू भी श्रद्धापूर्वक शंकरका पूजन, भजन कर॥ २३॥ रानी बोली कि, हे राजन् ! आप त्रिकालदर्शी हो, इसलिये मेरे पूर्वजन्मकी कथा ठीक २ वर्णन कीजिये, राजा बोला, हे वरानने ! मैं तेरे पूर्वजन्मकी कथा कहता हूँ, कि, तू पूर्वजन्ममें आकाशमें फिरनेवाली कोई एक कबूतरी थी ॥ २४ ॥ आकाशमें फिरते २ तुझको कहीं मांसका पिंड मिला, मांस ग्रहणकरती हुई तुझको देख एक गृद्ध मांस लेनेकी इच्छासे ॥ २५ ॥ भीषणरूप धारणकरके तेरे ऊपर दौडा, तब हे वरानने ! तू उसको देखकर डरी और

अतोहमर्चयामीशंचतुर्दश्यांजगद्गुरुम् ॥ त्वमपिश्रद्धयाभद्रेभजदेवंपिनाकिनम् ॥ २३ ॥ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ मत्पूर्वजन्मचरितंवक्तुमर्हसितत्त्वतः ॥ ॥ राजोवाच ॥ त्वंतुपूर्वभवेकाचित्कपोतीव्योमचारिणी ॥ २४ ॥ क्वापिलब्धवतीकिंचिन्मांसपिंडंयदृच्छया ॥ त्वद्गृहीतमथालोक्यगृध्रःकोप्यामिषंवली ॥ २५ ॥ निरामिषःस्वयंवेगादभिदुद्रावभीषणः ॥ ततस्तंवीक्ष्यवित्रस्ताविद्रुतासिवरानने ॥ २६ ॥ तेनानुयाताघोरेणमांसपिंडजिघृक्षया ॥ दिष्ट्याश्रीगिरिमासाद्यश्रांतातत्रशिवालयम् ॥ २७ ॥ प्रदक्षिणंपरिक्रम्यध्वजाग्रेसमुपस्थिता ॥ अथानुसृत्यसहसातीक्ष्णतुंडोविहंगमः ॥ २८ ॥ त्वांनिहत्यनिपात्याधोमांसमादायजग्मिवान् ॥ प्रदक्षिणप्रक्रमणाद्देवदेवस्यशूलिनः ॥ २९ ॥ तस्याग्रेमरणाच्चैवजातासीहनृपांगना ॥ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ ॥ श्रुतंपूर्वमशेषेणप्राग्जन्मचरितंमया ॥ ३० ॥

दौडी ॥ २६ ॥ घोररूपसे, मांस लेनेकी इच्छासे वह तेरे पीछे भागता ही गया, भाग्यसे तू श्रीगिरिपर्वतपर थककर एक शिवालयकी ॥ २७ ॥ प्रदक्षिणा करके ध्वजाके अग्रभागपर बैठगई, किन्तु तीक्ष्णचोंचवाला वह गृद्ध अकस्मात् पीछेसे आकर ॥ २८ ॥ तुझको मार और नीचे गिराकर मांस लेकर चलदिया, देवदेव त्रिशूलधारी महादेवजीकी प्रदक्षिणाके प्रभाव ॥ २९ ॥ और उनके आगे मरनेसे तू इस जन्ममें राजकन्या हुई,

रानी बोली, मैंने अपने पूर्वजन्मका सम्पूर्ण चरित सुना ॥ ३० ॥ मुझे बड़ा आश्चर्य होता है और शिवभक्ति भी मेरे हृदयमें उत्पन्न होती है, हे महामते ! तुम त्रिकालज्ञ हो इसकारण कुछ और सुनाचाहती हूँ ॥ ३१ ॥ कि, इस शरीरको त्यागकर फिर हम तुम किस गतिको प्राप्त होंगे ? राजा बोला, दूसरे जन्ममें मैं सिंधुदेशका राजा होऊंगा ॥ ३२ ॥ और तू सृंजयेश राजाकी कन्या होकर मुझको प्राप्त होगी, तीसरे जन्ममें मैं सौराष्ट्रदेशका राजा होऊँगा ॥ ३३ ॥ कलिंगराजाकी कन्या होकर तू मेरी पत्नी बनैगी, चौथे जन्ममें गन्धारदेशका राजा मैं बनूँगा ॥ ३४ ॥

जातंचमहदाश्चर्यंभक्तिश्चममचेतसि ॥ अथान्यच्छ्रोतुमिच्छामित्रिकालज्ञमहामते ॥ ३१ ॥ इदंशरीरमुत्सृज्ययास्यावः कांगतिं पुनः ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ अतोभवेजनिष्येहंद्वितीयेसैंधवोनृपः ॥३२॥ सृंजयेशसुतात्वंहिमामेवप्रतिपत्स्यसे ॥ तृतीयेतुभवेराजासौराष्ट्रेभवितास्म्यहम् ॥३३॥ कलिंगराजतनयात्वंमेपत्नीभविष्यसि ॥ चतुर्थेतुभविष्यामिभवेगांधारभूमिपः ॥ ३४ ॥ मागधीराजतनया तत्रत्वंममगेहिनी ॥ पंचमेऽवंतिनाथोहंभविष्यामियुगांतरे॥३५॥ दाशार्हराजतनयात्वमेवममवल्लभा॥ अस्माज्जन्मनिषष्ठेहमानर्तेभविता नृपः ॥ ३६ ॥ ययातिवंशजाकन्याभूत्वामामेवयास्यसि ॥ पांड्यराजकुमारोहंसप्तमेभविताभवे ॥ ३७ ॥ तत्रमत्सदृशोनान्योरूपौदार्यगुणादिभिः ॥ सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञोबलवान्दृढविक्रमः ॥ ३८ ॥

तू मगधदेशके राजाकी पुत्री होकर मेरी पत्नी बनैगी, पांचवें जन्ममें अवंति (उज्जैन) का अधिपति मैं होऊंगा ॥ ३५ ॥ तू दाशार्हराजतनया होकर मेरी प्यारी पत्नी होगी, छठे जन्ममें आनर्त्तदेशका राजा मैं होऊँगा ॥ ३६ ॥ तू ययातिदेशके राजाकी पुत्री होकर मुझे वरैगी, सातवें जन्ममें मैं पांड्यराजाका पुत्र होऊँगा ॥ ३७ ॥ रूप और उदारता आदिमें मेरे समान कोई न होगा, सर्वशास्त्रके तत्त्वको जाननेवाला, बलवान्,

दृढपराक्रमी॥ ३८॥ सर्वलक्षणसम्पन्न, सबका प्यारा, पद्ममित्रकी समान कान्तियुक्त और पद्मवर्ण इस नामसे विख्यात होऊँगा ॥ ३९॥ तू भी विदर्भ देशके राजाकी तनया, अनुपमेय (उपमारहित) रूप और अवयवोंसे शोभायमान ॥ ४० ॥ सम्पूर्ण राजकुमारोंके नेत्रोंको आनन्द देनेवाली, वसुमतीनामसे विख्यात होगी, वह तू अपने स्वयंवरमें सब राजकुमारोंको त्यागकर ॥ ४१ ॥ नलको दमयन्तीके समान मुझे वरैगी, वह मैं सब राजाओंको जीतकर और सुन्दरमुखवाली तुझको लेकर ॥ ४२ ॥ अपने राज्यमें अनेकवर्षोंपर्यंत सम्पूर्ण भोगोंको भोगूँगा, अश्वमेध आदि यज्ञोंसे

सर्वलक्षणसंपन्नःसर्वलोकमनोरमः ॥ पद्मवर्णइतिख्यातःपद्ममित्रसमद्युतिः ॥ ३९ ॥ भवितात्वंचवैदर्भीरूपेणाप्रतिमाभुवि ॥ नाम्नावसुमतीख्यातारूपावयवशोभिनी ॥ ४० ॥ सर्वराजकुमाराणांमनोनयननंदिनी ॥ सात्वंस्वयंवरेसर्वान्विहायनृपनंदनान् ॥ ॥ ४१ ॥ वरंप्राप्स्यसिमामेवदमयंतीवनैषधम् ॥ सोहंजित्वानृपान्सर्वान्प्राप्यत्वांवरवर्णिनीम् ॥ ४२ ॥ स्वराष्ट्रस्थोखिलान्भोगान्भोक्ष्येवर्षगणान्बहून् ॥ इष्ट्वाचविविधैर्यज्ञैर्वाजिमेधादिभिःशुभैः ॥ ४३ ॥ संतर्प्यपितृदेवर्षीन्दानैश्चद्विजसत्तमान् ॥ संपूज्यदेवदेवेशंशंकरंलोकशंकरम् ॥ ४४ ॥ पुत्रेराज्यधुरंन्यस्यगंतास्मितपसेवनम्॥ तत्रागस्त्यान्मुनिवराद्ब्रह्मज्ञानमवाप्यच ॥४५॥ त्वयासहगमिष्यामिशिवस्यपरमंपदम् ॥ चतुर्दश्यांचतुर्दश्यामेवंसंपूज्यशंकरम् ॥ ४६ ॥

यज्ञ करके ॥ ४३ ॥ और पितर, देव और ऋषियोंको तृप्त करके तथा दानसे ब्राह्मणोंको सन्तुष्ट और मनुष्योंका कल्याण करनेवाले शंकरका पूजन करके ॥ ४४ ॥ पुत्रको राज्य देकर वनमें तपस्या करनेके निमित्त जाऊंगा, वहाँ मुनिश्रेष्ठ अगस्त्यजीसे ब्रह्मज्ञान प्राप्तकरके ॥ ४५ ॥ हे वरानने ! तेरे साथ शिवलोकको जाऊंगा, इसप्रकार प्रत्येक चतुर्दशीमें शंकरका पूजनकर सातजन्मतक राज्यका सुख भोगकर हे वरानने ! अन्तमें

कैलासवास मिलैगा, शिवजीकी पूजा और दर्शनका यह पुण्य मुझको प्राप्त होगा ॥४६॥४७॥ कहाँ तो दुष्टात्मा श्वानयोनि और कहाँ यह सद्गति हे वरानने ! शिवपूजाका यही माहात्म्य है, सूतजी फिर ऋषियोंसे कहने लगे कि; इसप्रकार राजाके वचन सुनकर शुभलक्षणयुक्त वह रानी ॥४८॥ बड़ा आश्चर्य करनेलगी और प्रसन्नतापूर्वक उसका पूजन किया, वह राजा भी रानीसमेत यथेप्सित भोगोंको भोगकर ॥ ४९ ॥ सातजन्मके उपरान्त शम्भुके परमपद अर्थात् कैलासको गया, इस शिवपूजाके परम अद्भुत माहात्म्यको जो कोई श्रवण वा कीर्तन करता है वह भी परम

सप्तजन्मसुराजत्वंभविष्यतिवरानने ॥ इत्येतत्सुकृतंलब्धंपूजादर्शनमात्रतः ४७ ॥ क्वसारमेयोदुष्टात्माक्वेदृशीवतसद्गतिः ॥ ॥ सूत उवाच ॥ ॥ इत्युक्तानिजनाथेनसाराज्ञीशुभलक्षणा ॥ ४८ ॥ परंविस्मयमापन्नापूजयामासतंमुदा॥ सोपिराजातयासार्द्धंभुक्त्वाभो गान्यथेप्सितान् ॥४९॥ जगामसप्तजन्मांतेशंभोस्तत्परमंपदम् ॥ यएतच्छिवपूजायामाहात्म्यंपरमाद्भुतम् ॥ शृणुयात्कीर्तयेद्वापिसग च्छेत्परमंपदम् ॥ ५० ॥ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेचतुर्दशीमाहात्म्यंनामचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ ॥ सूत उवाच ॥ ॥ शिवोगुरुःशिवोदेवःशिवोबंधुःशरीरिणाम् ॥ शिवआत्माशिवोजीवःशिवादन्यन्नकिञ्चन ॥ १ ॥ शिवमुद्दिश्ययत्किंचिद्दत्तंजप्तंहुतंकृ तम् ॥ तदनंतफलंप्रोक्तंसर्वागमविनिश्चितम् ॥ २ ॥

पदको प्राप्त होता ॥ ५० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखण्डे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायांचतुर्दशीमाहात्म्यं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

अथ पंचमोऽध्यायः॥ सूतजी बोले कि, हे मुनिश्रेष्ठो ! शिव गुरु हैं, शिव देव हैं, शिवही मनुष्यों वा शरीरधारियोंके बन्धु हैं, शिव आत्मा हैं, शिव जीव हैं, शिवके अतिरिक्त कुछ नहीं है ॥ १ ॥ शिवजीके उद्देशसे जो कुछ दान, जप, हवन वा और जो कुछ कियाजाता है, उसका अनन्त फल होता

है, यह सब शास्त्रोंका सिद्धान्त है ॥ २ ॥ शंकरके निमित्त भक्तिपूर्वक निवेदन कियाहुआ पत्र, फल, पुष्प, जल थोड़ेसे थोड़ा भी अनन्त फल देता है ॥ ३ ॥ सब धर्म और सब शास्त्रोंके निश्चयको त्यागकर जो केवल शंकरकी ही पूजा और भक्तिको करता है, वह सब बन्धनोंसे छूट जाताहै ॥ ४ ॥ जितनी प्रीति आत्मा, पुत्र और स्त्रीमें है, उतनी प्रीति यदि शंकरकी पूजामें हो तो, वह अवश्य रक्षा करें, इसमें कुछ आश्चर्य नहीं है ॥ ५ ॥ इसलिये कोई २ महात्मा सब विषयोंको त्याग देते हैं, और कोई तो शिवपूजाके निमित्त त्यागनेके अयोग्य शरीरको भी त्याग देते हैं ॥ ६ ॥ वही

भक्त्यानिवेदितंशंभोः पत्रंपुष्पंफलंजलम् ॥ अल्पादल्पतरंवापितदानंत्यायकल्पते ॥ ३ ॥ विहायसकलान्धर्मान्सकलागमनिश्चितान् ॥ शिवमेकंभजेद्यस्तुमुच्यतेसर्वबंधनात् ॥ ४ ॥ याप्रीतिरात्मनःपुत्रेयाकलत्रेधनेपिसा ॥ कृताचेच्छिवपूजायांत्रायतीतिकिमद्भुतम् ॥ ५ ॥ तस्मात्केचिन्महात्मानःसकलान्विषयासवान् ॥ त्यजंतिशिवपूजार्थेस्वदेहमपिदुस्त्यजम् ॥ ६ ॥ साजिह्वायाशिवंस्तौतितन्मनोध्यायतेशिवम् ॥ तौकर्णौतत्कथालोलौतौहस्तौतस्यपूजकौ ॥ ७ ॥ तेनेत्रेपश्यतःपूजांतच्छिरःप्रणतंशिवे ॥ तौपादौयौशिवक्षेत्रंभक्त्यापर्यटिनौसदा ॥ ८ ॥ यस्येन्द्रियाणिसर्वाणिवर्त्ततेशिवकर्मसु ॥ सनिस्तरतिसंसारंभुक्तिंमुक्तिंचविन्दति ॥ ९ ॥

जिह्वा है, जो शिवजीकी स्तुति करे, वही मन है जो शंकरका ध्यान करे, वे ही कान हैं जो शिवकथा सुननेके लोभी हैं, और वे ही हाथ हैं जो शिवके पूजक हैं ॥ ७ ॥ वे ही नेत्र हैं, जो शिवपूजाका दर्शन करते हैं, वही शिर है, जो शिवको नवै, वे ही चरण हैं, जो भक्तिपूर्वक सदा शिवक्षेत्रोंमें पर्यटन करते हैं ॥ ८ ॥ जिसकी सब इन्द्रियें शिवकर्ममें लगी रहती हैं, वह संसारसागरसे पार होकर भुक्ति और मुक्तिको प्राप्त होताहै ॥ ९ ॥

शिवकी भक्ति करनेवाला चाडाल, पुल्कस (नीच) स्त्री वा नपुसक भी संसारसे तत्काल छूटजाता है ॥१०॥ कुल, आचार, शील और गुणोंसे क्या है, शिवभक्ति करनेवाला पुरुष सब देह धारियोंको नमस्कार करनेयोग्य है ॥११॥ इसप्रकार कहकर फिर सूतजी बोले कि, शिवभक्ति बढ़ानेवाली एक कथा वर्णन करते हैं, हे ऋषियो ! तुम मन लगाकर सुनो, उज्जयिनी नगरीमें दूसरे इन्द्रके तुल्य मनुष्यरूपधारी चन्द्रसेननामक एक राजा था ॥ १२ ॥

शिवभक्तियुतोमर्त्यश्चांडालःपुल्कसोपिच ॥ नारीनरोवाषंढोवासद्योमुच्येतसंसृतेः ॥ १० ॥ किंकुलेनकिमाचारैःकिंशीलेनगुणेनवा ॥ भक्तिलेशयुतः शंभोः स वंद्यः सर्वदेहिनाम् ॥ ११ ॥ उज्जयिन्यामभूद्राजाचन्द्रसेनसमाह्वयः ॥ जातोमानवरूपेणद्वितीयइववासवः ॥ ॥ १२ ॥ तस्मिन्पुरेमहाकालंवसंतंपरमेश्वरम् ॥ संपूजयत्यसौभक्त्याचन्द्रसेनोनृपोत्तमः ॥ १३ ॥ तस्याभवत्सखाराज्ञःशिवपारिषदाग्रणीः ॥ मणिभद्रोजिताभद्रःसर्वलोकनमस्कृतः ॥ १४ ॥ तस्यैकदामहीभर्त्तुःप्रसन्नःशंकरानुगः ॥ चिन्तामणिंददौदिव्यंमणिभद्रोमहामतिः ॥ १५ ॥ समणिःकौस्तुभइवद्योतमानोर्कसन्निभः ॥ दृष्टःश्रुतोवाध्यातोवानृणांयच्छतिमंगलम् ॥ १६ ॥ तस्यकांतिलवस्पृष्टंकांस्यंताम्रायसंत्रपु ॥ पाषाणादिकमन्यद्वासद्योभवतिकांचनम् ॥ १७ ॥

वह राजा उसी पुरीमें स्थित महाकालनामक शंकरका पूजन कियाकरता था ॥ १३ ॥ शिवजीके पार्षदोंमें प्रधान, सबलोकोंसे पूजित, मणिभद्रनामक यक्ष उस राजाका मित्र था ॥ १४ ॥ एक समय मणिभद्रने प्रसन्नतापूर्वक राजाको एक दिव्य चिन्तामणि दी ॥ १५ ॥ कौस्तुभकी समान वह मणि सूर्य्यकी तुल्य प्रकाशमान होरही थी, उसके देखने सुनने वा ध्यान करनेसे मनुष्योंको कल्याणकी प्राप्ति होती है ॥ १६ ॥ उसकी कान्तिमात्रके स्पर्शसे

रतन

कांसी, ताँबा, लोहा, शीशा और पाषाण आदि तथा अन्य धातु तत्काल सुवर्ण होजाती है ॥ १७ ॥ वह राजा चिन्तामणिको कंठमें धारणकर राज्यासनपर गया, देवताओंमें सूर्य्यके समान राजाकी शोभा हुई ॥ १८ ॥ राजाके कण्ठमें चिन्तामणि है. यह सुनकर सब राजा क्रोधके वेगसे क्षुद्र हृदयवाले हो गये ॥१९॥ किन्ही राजाओंने तो स्नेहसे मणि मांगी और कितनोंने धृष्टतासे अर्थात् बलपूर्वक लेनी चाही, किन्तु वे मत्सरी राजा यह नहीं जानते थे कि, यह चिन्तामणि प्रारब्धसे मिलती है ॥ २० ॥ पराक्रमसे नहीं, सब राजाओंकी याञ्चाको जब उसने व्यर्थ करदिया, तब सब

सतंचिन्तामणिंकंठेबिभ्रद्राजासनंगतः ॥ रराजराजादेवानांमध्येभानुरिवस्वयम् ॥ १८ ॥ सदाचिन्तामणिग्रीवंतंश्रुत्वाराजसत्तमम् ॥ प्रबुद्धतर्षाराजानःसर्वेक्षुब्धहृदोभवन् ॥ १९ ॥ स्नेहात्केचिदयाचंतधाष्ट्र्यात्केचनदुर्मदाः ॥ दैवलब्धमजानंतोमणिंमत्सरिणोनृपाः ॥ ॥२०॥ सर्वेषांभूभृतांयाञ्चायदाव्यर्थीकृतामुना ॥ राजानःसर्वदेशानांसंरंभंचक्रिरेतदा ॥२१॥ सौराष्ट्राःकैकयाःशाल्वाःकलिंगशकमद्र काः ॥ पांचालावंतिसौवीरामगधामत्स्यसृंजयाः॥२२॥एतेचान्येचराजानःसहाश्वरथकुंजराः॥ चंद्रसेनंमृधेजेतुमुद्यमंचक्रुरोजसा॥२३॥ तेतुसर्वेसुसंरब्धाःकंपयंतोवसुंधराम् ॥ उज्जयिन्याश्चतुर्द्वाररुरुधुर्बहुसैनिकाः ॥ २४ ॥

देशोंके राजाओंने उसके ऊपर वेगसे चढ़ाई करदी ॥ २१ ॥ इसप्रकार अनेक सौराष्ट्र, केकय, शाल्व, कलिंग, शक, मद्रक, पांचाल, अवंति, सौवीर, मागध, मत्स्य और सृञ्जय आदि देशोंके ॥ २२ ॥ तथा अन्य देशोंके राजा अश्व, कुंजर, रथ, प्यादोंकी सेनाको लेकर चन्द्रसेन राजाको युद्धमें बल पूर्वक जीतनेके निमित्त उद्योग करने लगे ॥ २३ ॥ वे सब सैनिक मिलेहुए, भूमिको कम्पायमान करतेहुए उज्जयिनी नगरीमें पहुंचे और चारों ओरसे

उसके द्वार रोक लिये ॥ २४ ॥ उद्धत राजाओंसे रुकीहुई अपनी पुरीको देखकर चन्द्रसेन राजा उन्हीं महाकाल नामक शंकरकी शरण हुआ ॥ २५ ॥ इसी अवसरमें उसी पुरमें रहनेवाली एक गोपी दूध, दही बेचती हुई अपने एक बालकको साथ लिये पतिहीन वहां आई कि, जहां राजा महाकाल नामक महादेवकी आराधना कररहाथा ॥ २६ ॥ वहां अपने पांच वर्षके बालकको अपने साथही रखतीथी, क्योंकि उसके पति तो थाही नहीं, राजाके द्वारा की हुई शंकरकी महापूजाको उसने देखा ॥ २७ ॥ शिवपूजाके आश्चर्यरूप महोदयको देख और प्रणाम करके अपने शिबिरमें पहुँ

संरुध्यमानांस्वपुरींदृष्ट्वाराजभिरुद्धतैः ॥ चंद्रसेनोमहाकालंतमेवशरणंययौ ॥ २५ ॥ एतस्मिन्नंतरेगोपीकाचित्तत्पुरवासिनी ॥ एकपुत्राभर्तृहीनातत्रैवासीच्चिरंतना ॥ २६ ॥ सापंचहायनंबालंवहंतीगतभर्तृका ॥ कृतांराज्ञामहापूजांददर्शगिरिजापतेः ॥ २७ ॥ साहृष्ट्वासर्वमाश्चर्यंशिवपूजामहोदयम् ॥ प्रणिपत्यस्वशिबिरंपुनरेवाभ्यपद्यत ॥ २८ ॥ एतत्सर्वमशेषेणसदृष्ट्वाबल्लवीसुतः ॥ कुतूहलेनविदधेशिवपूजांविरक्तिदाम् ॥ २९ ॥ आनीयहृद्यंपाषाणंशून्येतुशिबिरोत्तमे ॥ नातिदूरेस्वशिबिराच्छिवलिंगमकल्पयत् ॥ ३० ॥ यानिकानिचपुष्पाणिहस्तलभ्यानिचात्मनः ॥ आनीयस्नाप्यतल्लिंगंपूजयामासभक्तितः ॥ ३१ ॥ गंधालंकारवासांसिधूपदीपाक्षतादिकम् ॥ विधायकृत्रिमैर्दिव्यैर्नैवेद्यंचाप्यकल्पयत् ॥ ३२ ॥

ची ॥ २८ ॥ इस सब चरितको उसके पुत्रने भलीप्रकार देखकर, खेलसे विरागकी दाता शिवपूजाका विधान किया ॥ २९ ॥ उस शून्य शिबिरमें शिबिरके निकट एक सुन्दर पाषाण लाकर शिवलिंग स्थापित किया ॥ ३० ॥ जो कुछ पुष्प आदि अपने हाथ लगें, उन सबको ला और शंकरको स्नान कराकर भक्तिपूर्वक शिवकी पूजा करता ॥ ३१ ॥ गन्ध, अलंकार, वस्त्र, धूप, दीप, अक्षत चढ़ाता और कृत्रिम, दिव्य नैवेद्यसे भोग

लगाताथा ॥ ३२ ॥ बारंबार मनोहर पत्र, पुष्पोंसे शंकरका पूजन करके अनेक प्रकारका नृत्य और बारंबार प्रणाम करताथा ॥ ३३ ॥ अनन्य चित्तसे पूजन करतेहुए अपने पुत्रको उसकी माताने प्रणयसे भोजनके निमित्त बुलाया ॥ ३४ ॥ उसका मन शिवपूजामें लगा था, इस कारण माताके बुलानेपरभी वह भोजन करने न गया, तब माता स्वयं आई ॥ ३५ ॥ और शिवजीके आगे नेत्र मूँदकर बैठेहुए अपने पुत्रको देखकर क्रोधसे हाथ पकड़ा और ताड़न किया ॥ ३६ ॥ बहुत खेंचने और ताड़न करनेपरभी जब वह भोजन करने न

भूयोभूयः समभ्यर्च्यपत्रैःपुष्पैर्मनोरमैः ॥ नृत्यंचविविधंकृत्वाप्रणनामपुनःपुनः ॥३३॥ एवंपूजांप्रकुर्वाणंशिवस्यानन्यमानसम् ॥ सापुत्रं प्रणयाद्गोपीभोजनायसमाह्वयत् ॥ ३४ ॥ मात्राहूतोपिबहुशःसपूजासक्तमानसः ॥ बालोपिभोजनंनैच्छत्तदामातास्वयंययौ ॥ ३५ ॥ तंविलोक्यशिवस्याग्रेनिषण्णंमीलितेक्षणम् ॥ चकर्षपाणिंसंगृह्यकोपेनसमताडयत् ॥ ३६ ॥ आकृष्टस्ताडितोवापिनागच्छत्स्वसुतो यदा ॥ तांपूजांनाशयामासक्षिप्त्वालिंगंविदूरतः ॥ ३७ ॥ हाहेतिरुदमानंतंनिर्भर्त्स्यस्वसुतंतदा ॥ पुनर्विवेशस्वगृहंगोपीरोषसमन्विता ॥ ३८ ॥ मात्राविनाशितांपूजांदृष्ट्वादेवस्यशूलिनः ॥ देदेदेवेतिचुक्रोशनिपपातसबालकः ॥ ३९ ॥ प्रनष्टसंज्ञःसहसाबाष्पपूरपरिप्लुतः ॥ लब्धसंज्ञोमुहूर्तेनचक्षुषीउदमीलयत् ॥ ४० ॥

गया, तब क्रोधमें आकर उसकी माताने सब पूजाको नष्ट भ्रष्ट करके शिवलिंगको कुछ दूर फेंकदिया ॥ ३७ ॥ हाहाकार करते हुए बालकको घुडककर क्रोधयुक्त वह गोपी फिर अपने घरमें चलीगई ॥ ३८ ॥ शिवजीकी पूजाको माताके द्वारा विनाश हुई देखकर देव, देव, इसप्रकार उच्चारण किया और वह बालक पृथ्वीपर गिरपडा ॥ ३९ ॥ सहसा उसकी चेतना नष्ट होगई, नेत्रोंमें आंसूभर आये, फिर मुहूर्त्त

मात्रमें चेतना हुई और उसने अपने दोनों नेत्र खोल लिये ॥ ४० ॥ वहाँ मणिस्तंभोंसे विराजित सुवर्णके कपाट और ध्वजापताकाओंसे युक्त, बडे कीमती नीलम और हीरोंसे व्याप्त ॥ ४१ ॥ विचित्र और तपायेहुए सुवर्णके अनेक कलशोंसे शोभित और प्रकाशमान स्फटिकके अनेक स्थानोंसे शोभायमान मनोहर शिवालयको उस बालकने देखा, और शिवालयमें सिंहासनपर रत्नोंसे युक्त शिवलिंगका दर्शन किया ॥ ४२ ॥ इसप्रकार अचानक देखकर बह मनमें डर और आश्चर्य करके सन्तोषसे आनन्दके समुद्रमें निमग्न हुएके समान होगया ॥ ४३ ॥ और शिव

ततोमणिस्तंभविराजमानंहिरण्मयद्वारकपाटतोरणम् ॥ महार्हनीलामलवज्रवेदिकंतदैवजातंशिबिरंशिवालयम् ॥ ४१ ॥ संतप्तहेमकलशै र्बहुभिर्विचित्रैःप्रोद्भासितस्फटिकसौधतलाभिरामम् ॥ रम्यंचतच्छिवपुरंवरपीठमध्येलिंगंचरत्नसहितंसददर्शबालः ॥४२॥ सद्दष्ट्वासहसो त्थायभीतोविस्मितमानसः ॥ निमग्नइवसंतोषात्परमानंदसागरे ॥४३॥ विज्ञायशिवपूजायामाहात्म्यंतत्प्रभावतः ॥ ननामदंडवद्भूमौ स्वमातुरघशांतये ॥ ४४ ॥ देवक्षमस्वदुरितंममसातुरुमापते ॥ मूढायास्त्वामजानंत्याःप्रसन्नोभवशंकर ॥ ४५ ॥ यद्यस्तिमयियत्कि चित्पुण्यंत्वद्भक्तिसंभवम् ॥ तेनापिशिवमेमातातवकारुण्यमाप्नुयात् ॥ ४६ ॥ इतिप्रसाद्यगिरिशंभूयोभूयःप्रणम्यच ॥ सूर्येचास्तंगते बालोनिर्जगामशिवालयात् ॥ ४७ ॥

पूजाके माहात्म्यको जानकर उनके प्रभावसे अपनी माताके पापकी शान्तिके निमित्त शंकरको प्रणाम और दंडवत् करनेलगा ॥ ४४ ॥ कि, हे देव ! हे उमापते ! मूढ और तुमको नहीं जाननेवाली मेरी माताका अपराध क्षमा करो और हे शंकर ! मेरे ऊपर प्रसन्न होओ ॥ ४५ ॥ हे शिव ! यदि मुझमें तुम्हारी कुछभी भक्ति और पुण्य है, उसी पुण्य और भक्तिके प्रभावसे मेरी माताके ऊपर करुणा करो ॥ ४६ ॥ इसप्रकार शंकरको प्रसन्न

और बारंबार प्रणामकरके वह बालक सूर्य्यके अस्ताचलको प्राप्त होनेपर शिवालयसे निकलकर चलदिया ॥ ४७ ॥ घर जाकर देखा तो इंद्रके स्थानके समान बनाहुआ शिबिर दीखा, सुवर्णका बनाहुआ अनेक प्रकारके ऐश्वर्य्यसे प्रकाशित, इसप्रकारसे शोभायमान उस प्रासादको देखकर प्रदोषके समय वह बालक प्रसन्नतापूर्वक घरके भीतर घुसा तो वहां अनेक मणियोंसे आकीर्ण, सुवर्णराशिके समान उज्ज्वल स्थानपर ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ श्वेतशय्या पर स्थित, भयरहित और ईश्वरका स्मरण करतीहुई अपनी माताको देखा ॥ ५० ॥ रत्नालंकारोंसे प्रकाशित शरीरवाली और दिव्यवस्त्र धारण

अथापश्यत्स्वशिबिरंपुरंदरपुरोपमम् ॥ सद्योहिरण्मयीभूतंविचित्रविभवोज्ज्वलम् ॥ ४८ ॥ सोंतःप्रविश्यभवनंमोदमानेनिशामुखे ॥ महामणिगणाकीर्णहेमराशिसमुज्ज्वलम् ॥ ४९ ॥ तत्रापश्यत्स्वजननींस्मरंतीमकुतोभयाम् ॥ महार्हरत्नपर्यंकेसितशय्यामधिश्रि ताम् ॥ ५० ॥ रत्नालंकारदीप्तांगींदिव्यांबरविराजिनीम् ॥ दिव्यलक्षणसंपन्नांसाक्षात्सुरवधूमिव ॥ ५१ ॥ जवेनोत्थापयामाससंभ्रमोत्फुल्ललो चनः ॥ अंबजागृहिभद्रंतेपश्येदंमहदद्भुतम् ॥ ५२ ॥ इतिप्रबोधितागोपीस्वपुत्रेणमहात्मना ॥ ससंभ्रमंसमुत्थायतत्सर्वंप्रत्यवैक्षत ॥ ५३ ॥ अपूर्व मिवचात्मानमपूर्वमिवबालकम् ॥ अपूर्वंचस्वसदनंदृष्ट्वासीत्सुखविह्वला ॥ ५४ ॥

कियेहुए, दिव्यलक्षणसम्पन्न और साक्षात् देवांगनाके समान अपनी माताको ॥ ५१ ॥ भ्रमसे फूलगये हैं नेत्र जिसके ऐसे उस बालकने वेगसे जगाया, हे मातः ! तुम्हारा कल्याण होवे , उठो, और इस आश्चर्यको देखो ! ॥ ५२ ॥ इसप्रकार अपने महात्मा पुत्रकेद्वारा जगाई हुई वह गोपी आश्चर्यपूर्वक उठकर उस सब ऐश्वर्यको देखनेलगी ॥ ५३ ॥ अपने आपको बालकको और अपने घरको अपूर्वभूतके समान देखकर सुखसे

विह्वल होगई ॥ ५४ ॥ शंकरके सम्पूर्ण प्रसादको पुत्रके मुखसे सुनकर बहुत प्रसन्न हुई और जो राजा रातदिन शंकरका पूजनकर रहाथा, उससे भी जाकर कहा ॥ ५५ ॥ वह राजाभी रात्रिमें नियम समाप्तकरके जलदीसे उस गोपीके स्थानपर आया और माणिक्य नामक श्रेष्ठ मणियोंसे उज्ज्वल गोपवधूके घरको देखकर ॥ ५६ ॥ मंत्री और पुरोहितसहित वह राजा मुहूर्त्तमात्र विस्मित रहा और फिर आनन्दमय होगया ॥५७॥ प्रेमके मारे नेत्रोंसे जल गिरातेहुए उस राजाने उस बालकको चिपटालिया, इसप्रकार अद्भुत आकारवाले शिवमाहात्म्यके कीर्त्तन ॥ ५८ ॥ और इस

श्रुत्वापुत्रमुखात्सर्वंप्रसादंगिरिजापतेः ॥ राज्ञेविज्ञापयामासयोभजत्यनिशंशिवम् ॥ ५५ ॥ सराजासहसागत्यसमाप्तनियमोनिशि गोपवध्वाश्चसदनंमाणिक्यवरकोज्ज्वलम् ॥ ५६ ॥ दृष्ट्वामहीपतिःसर्वंसामात्यःसपुरोहितः ॥ मुहूर्तंविस्मितधृतिःपरमानंदनिर्भरः ॥ ५७ ॥ प्रेम्णाबाष्पजलंमुंचन्परिरेभेतमर्भकम् ॥ एवमत्यद्भुताकाराच्छिवमाहात्म्यकीर्त्तिनात् ॥५८॥ पौराणसंभ्रमाच्चैवसारात्रिः क्षणतामगात् ॥ अथप्रभातेयुद्धायपुरंसंरुध्यसंस्थिताः ॥ ५९ ॥ राजानश्चारवक्रेभ्यःशुश्रुवुःपरमद्भुतम् ॥ तेत्यक्तवैराः सहसारा जानश्चकिताभृशम् ॥ ६० ॥ न्यस्तशस्त्रानिविविशुश्चंद्रसेनानुमोदिताः ॥ तांप्रविश्यपुरींरम्यांमहाकालंप्रणम्यच ॥ ६१ ॥ तद्गोपव नितागेहमाजग्मुः सर्वभूभृतः ॥ तेतत्रचंद्रसेनेनप्रत्युद्गम्याभिपूजिताः ॥ ६२ ॥

कथाके पुरातन संभ्रमसे वह रात्रि क्षणमात्रमें बीतगई, प्रातःकाल होतेही युद्धके निमित्त घेरलिया है पुर जिन्होंने ऐसे ॥ ५९ ॥ उन राजाओंनेभी दूतोंके मुखसे इस परम आश्चर्यको सुना और वैर त्यागकर सब राजा बहुत आश्चर्य करनेलगे ॥ ६० ॥ उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक शस्त्र त्यागकर चन्द्रसेनराजाके निकटको गमन किया, उस मनोहर पुरीमें प्रवेश और महाकाल नामक शंकरको प्रणाम करके ॥ ६१ ॥ सब राजा उस गोपवधूके घरगये,

वहाँ राजा चन्द्रसेनने प्रत्युद्गमन करके उनका पूजन किया ॥ ६२ ॥ और बहुमूल्य आसनोंपर बैठाया, बहुमूल्य आसनोंपर बैठेहुए वे राजा प्रीतिसे आनन्द और विस्मित होगये; गोपपुत्रकी प्रसन्नताके निमित्त उत्पन्नहुए शिवालय ॥ ६३ ॥ और शिवलिंगको देखकर महाशिवमें परमप्रीति करने लगे उन सब राजाओंने प्रसन्नतापूर्वक गोपकुमारके निमित्त ॥ ६४ ॥ वस्त्र, सुवर्ण, रत्न, गोमहिषी आदि धन, हाथी, घोडे, रथ सुवर्णके छत्र, और सवारियोंपर ढकनेके वस्त्र ॥ ६५ ॥ अनेक दास, दासी दिये, जो जो जिस जिस देशमें गोप रहतेथे ॥६६॥ उन सबका राजा उन सब राजाओंने

महार्हेविष्टरगताःप्रीत्यानंदन्सुविस्मिताः ॥ गोपसूनोः प्रसादायप्रादुर्भूतंशिवालयम् ॥ ६३ ॥ लिंगंचवीक्ष्यसुमहच्छिवेचक्रुःपरांमतिम् ॥ तस्मैगोपकुमारायप्रीतास्तेसर्वभूभुजः ॥ ६४ ॥ वासोहिरण्यरत्नानिगोमहिष्यादिकंधनम् ॥ गजानश्वान्रथान्रौक्मान्छत्रयानपरिच्छदान् ॥ ६५ ॥ दासान्दासीरनेकांश्चददुः शिवकृपार्थिनः ॥ येयेसर्वेषुदेशेषुगोपास्तिष्ठंतिभूरिशः ॥ ६६ ॥ तेषांतमेवराजानंचक्रिरेसर्वपार्थिवाः ॥ अथास्मिन्नंतरेसर्वैस्त्रिदशैरभिपूजितः ॥ ६७ ॥ प्रादुर्बभूवतेजस्वीहनुमान्वानरेश्वरः ॥ तस्याभिगमनादेवराजानोजातसंभ्रमाः ॥ ॥ ६८ ॥ प्रत्युत्थायनमश्चक्रुर्भक्तिनम्रात्ममूर्त्तयः ॥ तेषांमध्येसमासीनःपूजितःप्लवगेश्वरः ॥ ६९ ॥ गोपात्मजं समाश्लिष्यराज्ञोवीक्ष्येदमब्रवीत् ॥ सर्वैःशृणुतभद्रंवोराजानोयेचदेहिनः ॥ ७० ॥

उस गोपपुत्रको बनादिया, इसी अवसरमें देवताओंसे पूजित ॥ ६७ ॥ तेजस्वी और वानरोंके स्वामी महावीरजीका प्रादुर्भाव हुआ, उनके उत्पन्न होनेसे सब राजा आश्चर्य करनेलगे ॥ ६८ ॥ और भक्तिपूर्वक उठकर सबने प्रणाम किया, उनके बीचमें बैठकर पूजितहुए महावीरजी ॥ ६९ ॥ गोपपुत्रको आलिंगनकर राजाको देखकर बोले कि, हे देहधारी राजाओ ! तुम्हारा कल्याण होवे, मेरा वचन सुनो ॥ ७० ॥

शिवपूजाके विना अन्यगति नहीं है, देखो यह गोपकुमार प्रारब्धके योगसे शनिप्रदोषको ॥ ७१ ॥ विना मंत्रकेही शंकरका पूजन करके कल्याण को प्राप्तहुआ यह शिवपूजन शनिप्रदोषमें सब प्राणियोंको बडा दुर्लभ है ॥ ७२ ॥ उसमेंभी कृष्णपक्षमें शनिप्रदोषके आनेपर तो बहुतही दुर्लभ है, यह गोपकुमार गोपोंकी कीर्त्तिको बढानेवाला होगा ॥ ७३ ॥ और इसके आठवें वंशमें महायशस्वी नन्द नाम गोप उत्पन्न होगा, उस घरमें भग

शिवपूजामृतेनान्यागतिरस्तिशरीरिणाम् ॥ एषगोपसुतोदिष्ट्याप्रदोषेमंदवासरे ॥ ७१ ॥ अमंत्रेणापिसंपूज्यशिवांशिवमवाप्तवान् ॥ मंदवारेप्रदोषेऽयंदुर्लभःसर्वदेहिनाम् ॥ ७२ ॥ तत्रापिदुर्लभतरःकृष्णपक्षेसमागते ॥ एषपुण्यतमोलोकेगोपानांकीर्तिवर्धनः ॥ ७३ ॥ अस्यवंशेष्टमोभावीनंदोनाममहायशाः ॥ प्राप्स्यतेतस्यपुत्रत्वंकृष्णोनारायणःस्वयम् ॥ ७४ ॥ अद्यप्रभृतिलोकेस्मिन्नेषगोपालनंदनः ॥ नाम्नाश्रीकरइत्युच्चैर्लोकेख्यातिंगमिष्यति ॥ ७५ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ एवमुक्त्वांजनीसूनुस्तस्मैगोपकसूनवे ॥ उपदिश्यशिवाचारंतत्रैवांतरधीयत ॥ ७६ ॥ तेचसर्वेमहीपालाःसंहृष्टाःप्रतिपूजिताः ॥ चन्द्रसेनंसमामंत्र्यप्रतिजग्मुर्यथागतम् ॥ ७७ ॥ श्रीकरोपिमहातेजाउपदिष्टोहनूमता ॥ ब्राह्मणैःसहधर्मज्ञैश्चक्रेशंभोःसमर्हणम् ॥ ७८ ॥

वान् कृष्ण स्वयं पुत्ररूपसे उत्पन्न होंगे ॥ ७४ ॥ और आजसे लेकर यह गोपकुमार श्रीकर नामसे संसारमें विख्यात होगा ॥ ७५ ॥ फिर सूतजी ऋषियोंसे कहनेलगे कि, इसप्रकार वे महावीरजी उस गोपकुमारको शिवपूजाका उपदेश देकर वहीं अन्तर्द्धान होगये ॥ ७६ ॥ और वे सब राजाभी प्रसन्नतापूर्वक पूजितहुए चन्द्रसेन राजाको समझाकर अपने २ देशोंको चलेगये॥ ७७॥ वह महातेजस्वी श्रीकरभी महावीरजीके उपदेशसे धर्मात्मा

शरीरधारियोंको ब्राह्मणोंके साथ शंकरका पूजन करनेलगा ॥ ७८ ॥ कुछ समयके उपरांत वह श्रीकर और चंद्रसेन राजा भक्तिपूर्वक शंकरकी आराधनाकर अंतमें शिवलोकको गये ॥ ७९ ॥ परम पवित्र, यश बढ़ानेवाला, पुण्य और महाऋद्धिका बढ़ानेवाला, पापसमूहका नाश करनेवाला और शंकरके चरणोंकी भक्ति बढा नेवाला यह आख्यान तुमसे कहा ॥ ८० ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ अथ षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ ऋषि बोले ! हे सूतजी ? जो तुमने सम्पूर्ण पाप नष्ट करनेवाला शिवजीका माहात्म्य वर्णन किया, वह आख्यान बड़ा अद्भुत है ॥ १ ॥ फिरभी

कालेनश्रीकरः सोपिचंद्रसेनश्चभूपतिः ॥ समाराध्यशिवंभक्त्याप्रापतुःपरमंपदम् ॥ ७९ ॥ इदंरहस्यंपरमंपवित्रंयशस्करंपुण्यमहर्द्धिवर्धनम् ॥ आख्यानमाख्यातमघौघनाशनंगौरीशपादांबुजभक्तिवर्धनम् ॥ ८० ॥ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेपञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ ॥ ऋषयऊचुः ॥ यदुक्तंभवतासूतमहदाख्यानमद्भुतम् ॥ शंभोर्माहात्म्यकथनमशेषाघहरंपरम् ॥ १ ॥ भूयोपिश्रोतुमिच्छामस्तदेवसुसमाहिताः ॥ प्रदोषेभगवाञ्छंभुःपूजितस्तुमहात्मभिः ॥ २ ॥ सम्प्रयच्छतिकांसिद्धिमेतन्नोब्रूहिसुव्रत ॥ श्रुतमप्यसकृत्सूतभूयस्तृष्णाप्रवर्धते ॥ ३ ॥ ॥ सूत उवाच ॥ साधुपृष्टंमहाप्राज्ञभवद्भिर्लोकविश्रुतैः ॥ अतोहंसंप्रवक्ष्यामिशिवपूजाफलंमहत् ॥ ४ ॥ त्रयोदश्यांतिथौसायंप्रदोषः परिकीर्त्तितः ॥ तत्रपूज्योमहादेवोनान्योदेवःफलार्थिभिः ॥ ५ ॥

हमारे सुननेकी यह इच्छा है; कि, प्रदोषके समय महात्माओंके द्वारा पूजितहुए भगवान् शंभु ॥ २ ॥ उनको क्या सिद्धि देते हैं, हे सुव्रत ! यह हमसे कहो ! आपके मुखसे बारंबार सुनकरभी हमको तृप्ति नहीं होती तृष्णाही बढती जातीहै ॥ ३ ॥ इसप्रकार शौनकादिक ऋषियोंके पूँछनेपर सूतजी बोले । हे महाप्राज्ञों ! संसारमें विख्यात तुमने अच्छा प्रश्न किया, इसलिये शिवपूजाके महाफलको मैं तुमसे कहताहूँ ॥ ४ ॥ त्रयोदशीके सायंका

लमें प्रदोष होताहै, उससमय फल चाहनेवालोंको केवल महादेवजीकी पूजा करनी चाहिये, अन्य देवकी नहीं ॥ ५ ॥ प्रदोषसमयका माहात्म्य वर्णन करनेको कौन समर्थ है, क्योंकि प्रदोषके समय सब देवता शिवजीके निकट स्थित रहतेहैं ॥ ६ ॥ और उससमय कैलासपर्वतपर देवताओंसे पूजित श्रीशंकर नृत्य करतेहैं ॥ ७ ॥ इसलिये उस समय धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी इच्छावालोंको शिवपूजा, जप, हवन, उनकी कथा और उनके गुणों की स्तुति नित्यप्रति करनी चाहिये ॥ ८ ॥ दारिद्र्यरूप अन्धकारमें मग्न और संसारसे डरनेवाले, तथा भवसागरमें मग्न, इन सबको प्रदोषकालकी पूजा

प्रदोषपूजामाहात्म्यंकोनुवर्णयितुंक्षमः ॥ यत्रसर्वेपिविबुधास्तिष्ठंतिगिरिशांतिके ॥ ६ ॥ प्रदोषसमयेदेवःकैलासेरजतालये ॥ करोतिनृत्यं विबुधैरभिष्टुतगुणोदयः ॥ ७ ॥ अतःपूजाजपोहोमस्तत्कथातद्गुणस्तवः ॥ कर्त्तव्योनियतंमर्त्यैश्चतुर्वर्गफलार्थिभिः ॥ ८ ॥ दारिद्र्यति मिरांधानांमर्त्यानांभवभीरुणाम् ॥ भवसागरमग्नानांशर्वोयंपारदर्शनः ॥ ९ ॥ दुःखशोकभयार्त्तानांक्लेशनिर्वाणमिच्छताम् ॥ प्रदोषेपार्व तीशस्यपूजनंमङ्गलायनम् ॥ १० ॥ दुर्बुद्धिरपिनीचोपिमन्दभाग्यःशठोपिवा॥ प्रदोषेपूज्यदेवेशंविपद्भ्यःसप्रमुच्यते ॥ ११ ॥ शत्रुभिर्ह न्यमानोपिदश्यमानोपिपन्नगैः ॥ शैलैराक्रम्यमाणोपिपतितोपिमहांबुधौ ॥ १२ ॥ आविद्धकालदंडोपिनानारोगहतोपिवा ॥ नविनश्यति मर्त्योसौप्रदोषेगिरिशार्चनात् ॥ १३ ॥

पारकर देतीहै ॥ ९ ॥ दुःख, शोक और भयसे व्याकुल तथा क्लेशसे छूटनेवाले पुरुषोंको प्रदोषके समय शंकरका पूजन कल्याण देताहै ॥ १० ॥ दुर्बुद्धि, नीच, मन्दभागी, और शठभी प्रदोषके समय शिवका पूजन कर विपत्तियोंसे छूट जाताहै ॥ ११ ॥ शत्रुओंके मारने, सर्पोंके डसनें, पर्वतोंसे आक्रम्यमाण होने, महासमुद्रमें गिरने, कालदंडसे बिंधने और अनेक रोगोंके आक्रमण होनेपरभी प्रदोषमें शंकरका पूजन करनेसे मनुष्य नष्ट नहीं होता ॥ १२ ॥ १३ ॥

शिवके पूजनसे दारिद्य, मरण, दुःख और पर्वतके समान ऋणभारसे दूर होकर पुरुष सम्पत्तियुक्त होजाता है ॥ १४ ॥ इस विषयमें बडे पुण्यका देने वाला एक पुरातन इतिहास वर्णन करताहूँ, जिसको सुनकर सब मनुष्य कृतकृत्य होजायँगे ॥ १५ ॥ विदर्भदेशमें सब धर्मोंमें रत, सुशील और सत्यसंकल्प सत्यरथ नामवाला एक राजा था ॥ १६ ॥ हे मुनिश्रेष्ठो ! उसने बहुत समयतक पुत्रके समान प्रजाका सुखसे पालन किया ॥१७॥

यं दारिद्र्यंमरणंदुःखमृणभारंनगोपमम् ॥ सद्यो विधूयसंपद्भिःपूज्यतेशिवपूजनात् ॥ १४ ॥ अत्रवक्ष्येमहापुण्यमितिहासंपुरातनम् ॥ यं श्रुत्वामनुजाःसर्वेप्रयांतिकृतकृत्यताम् ॥ १५ ॥ आसीद्विदर्भविषयेनाम्नासत्यरथोनृपः ॥ सर्वधर्मरतोधीरःसुशीलःसत्यसंगरः ॥ १६ ॥ तस्यपालयतोभूमिंधर्मेणंमुनिपुंगवाः ॥ व्यतीयायमहान्कालःसुखेनैवमहामते ॥ १७ ॥ अथतस्यमहीभर्तुर्बभूवुःशाल्वभूभुजः ॥ शत्रवश्चोद्धतबलादुर्मर्षणपुरोगमाः ॥ १८ ॥ कदाचिदथतेशाल्वाःसंनद्धबहुसैनिकाः ॥ विदर्भनगरींप्राप्यरुरुधुर्विजिगीषवः ॥ १९ ॥ दृष्ट्वा निरुध्यमानांतांविदर्भाधिपतिःपुरीम् ॥ योद्धुमभ्याययौतूर्णंबलेनमहतावृतः ॥ २० ॥ तस्यतैरभवद्युद्धंशाल्वैरपिबलोद्धतैः ॥ पातालेपन्नगेन्द्रस्यगन्धर्वैरिवदुर्मदैः ॥ २१ ॥

कुछ समयके उपरान्त शाल्वके दुर्मर्षण आदि राजाओंने विशेष बल होनेके कारण उससे शत्रुता करली ॥ १८ ॥ और उन शाल्वआदि राजाओंने बहुतसी सेना लेकर उस सत्यरथको जीतनेकी इच्छासे विदर्भनगरीको आकर चारों ओरसे घेर लिया ॥ १९ ॥ चारों ओरसे रुकीहुई अपनी नगरीको देखकर राजाभी वेगसे वडे बलपूर्वक अर्थात् बहुत सेना लेकर लड़नेको गया ॥ २० ॥ जिसप्रकार पातालमें वासुकिका दुर्मद गन्धर्वोंके साथ

युद्ध हुआँथा, इसीप्रकार उस राजा और बलसे उद्धत उन शाल्वोंका युद्ध हुआ ॥ २१ ॥ उस युद्धमें राजा सत्यरथने बड़ा भयंकर युद्ध किया, अन्तमें उन शाल्वोंके हाथसे मारा गया ॥ २२ ॥ और राजाके वीर मन्त्रीभी निहत हुए, बाकी राजाकी सेना भाग निकली ॥ २३ ॥ उस शत्रुसेनाके मन्त्री आदि जब युद्ध करने लगे और नगरीमें युद्धका बड़ा कोलाहल मचने लगा तब ॥ २४ ॥ उस सत्यरथ राजाकी एक स्त्री शोकसे सन्तप्त होकर बडे यत्नपूर्वक राजमहलसे निकली ॥ २५ ॥ रात्रिके समय वह गर्भवती राजपत्नी शोकसे व्याकुल हुई, पश्चिम दिशाकी ओर चली ॥ २६ ॥

विदर्भेनृपतिःसोथकृत्वायुद्धंसुदारुणम् ॥ प्रनष्टोरुबलैःशाल्वैर्निहतोरणमूर्धनि ॥ २२ ॥ तास्मिन्महारथेवीरेनिहतेमन्त्रिभिःसह ॥ दुद्रुवुः समरेभग्नाहतशेषाश्चसैनिकाः ॥ २३ ॥ अथयुद्धेभिविरतेनदत्सुरिपुमंत्रिषु ॥ नगर्यांयुध्यमानायांजातेकोलाहलेरवे ॥ २४ ॥ तस्यसत्यरथस्यैकाविदर्भाधिपतेःसती ॥ भूरिशोकसमाविष्टाक्कचिद्यत्नाद्विनिर्ययौ ॥ २५ ॥ सानिशासमयेयत्नादंतर्वत्नीनृपांगना ॥ निर्गताशोकसंतप्ता प्रतीचींप्रययौदिशम् ॥ २६ ॥ अथप्रभातेमार्गेणगच्छंतीसहसासती ॥ अतीत्यदूरमध्वानंददर्शविमलंसरः ॥ २७ ॥ तत्रागत्यवरारोहा तप्तातापेनभूयसा ॥ विलसंतंसरस्तीरेछायावृक्षंसमाश्रयत् ॥ २८ ॥ तत्रदैववशाद्राज्ञीविजनेतरुकुट्टिमे ॥ असूतसमयेसाध्वीसुमुहूर्तेसद्गुणान्विते ॥ २९ ॥ अथसाराजमहिषीपिपासाभिहताभृशम् ॥ सरोवतीर्यचार्वंगीग्रस्ताग्राहेणभूयसा ॥ ३० ॥

और रात्रिमें बडी शीघ्रतासे बहुत मार्ग बिताया, प्रभात होतेही उसने अचानक एक निर्मल सरोवर देखा ॥ २७ ॥ वह सुन्दरमुखवाली राजपत्नी बड़े तापसे तप्त होकर उस सरोवरपर आई और सरोवरके किनारे एक वृक्षकी सघन छायामें बैठगई ॥ २८ ॥ प्रारब्धके योगसे उस निर्जन वनमें वृक्षके नीचे सुन्दर मुहूर्तमें उसीसमय उसके पुत्र उत्पन्न हुआ ॥ २९ ॥ इस अवसरमें उसको बहुत प्यास लगी और पुत्रको अकेला छोड़ सरोवरके तटपर

जल पीनेके निमित्त गई, जभी उसने जल पीनाचाहा कि, उसी अवसरमें एक बडे ग्राह (नाका) ने उसे ग्रास लिया ॥ ३० ॥ निर्बल और तत्काल उत्पन्न, माता पिताहीन वह बालक सरोवरके किनारे भूंख प्याससे व्याकुल होकर ऊंचे स्वरसे रोनेलगा ॥ ३१ ॥ उसीसमय उत्पन्न हुए उस बालकके इसप्रकार रुदन करनेपर भाग्यके वशसे कोई ब्राह्मणकी स्त्री शीघ्रही वहां आई ॥ ३२ ॥ उसके पासभी एक छोटा बालक था, उसके धन न था और पतिहीन थी, इसकारण घरघर भीख मांगती फिरतीथी ॥ ३३ ॥ बन्धुहीन और एकपुत्रवाली भीख मांगनेवाली उमा नाम ब्राह्मणकी स्त्रीने उस

जातमात्रःकुमारोपिविनष्टपितृमातृकः ॥ रुरोदोच्चैःसरस्तीरेक्षुत्पिपासार्दितोऽबलः ॥३१॥ तस्मिन्नेवंक्रंदमानेजातमात्रेकुमारके ॥ काचिद भ्याययौशीघ्रंदिष्ट्याविप्रवरांगना ॥३२॥ साप्येकहायनंबालमुद्वहन्तीनिजात्मजम् ॥ अधनाभर्तृरहितायाचमानागृहेगृहे ॥३३॥ एकात्म जाबंधुहीनायाच्ञामार्गवशंगता ॥ उमानामद्विजसतीददर्शनृपनंदनम् ॥ ३४ ॥ साहष्ट्वाराजतनयंसूर्यबिंबमिवच्युतम् ॥ अनाथमेनं क्रंदंतंचिंतयामासभूरिशः ॥ ३५ ॥ अहोसुमहदाश्चर्यमिदंदृष्टंमयाधुना ॥ अच्छिन्ननाभिसूत्रोऽयंशिशुर्माताक्वागता ॥ ३६ ॥ पितानास्तिनचान्योस्तिनास्तिबंधुजनोपिवा ॥ अनाथःकृपणोबालःशेतेकेवलभूतले ॥ ३७ ॥ एषचांडालजोवापि[illegible] वा ॥ विप्रात्मजोवानृपजोज्ञायतेकथमर्भकः ॥ ३८ ॥

राजपुत्रको देखा ॥ ३४ ॥ सूर्य्यबिंबके समान च्युत हुए, अनाथ और रुदन करतेहुए राजपुत्रको देखकर उसने बहुत चिन्ताकी ॥ ३५ ॥ कि, अहो ! इससमय मैंने यह बडा आश्चर्य देखा; इस बालकका तो अभी नाल छेदनभी नहीं हुआहै, इसे छोड इसकी माता कहाँ चलीगई है ॥ ३६ ॥ न इसका पिता है न और कोई बन्धुहै, यह अनाथ और दुःखी बालक अकेलाही पृथ्वीपर सोता है ॥ ३७ ॥ यह बालक चांडालका है ?

शूद्रका है, वैश्यका है, ब्राह्मणका है, अथवा क्षत्रियका है यह ज्ञान मुझको किसप्रकार होवै इसप्रकार वह ब्राह्मणी विचार करनेलगी ॥ ३८ ॥ और बोली कि, अपने पुत्रके समान इसका पोषण करूंगी, किंतु विना इसका कुल जाने स्पर्श नहीं करसकती ॥ ३९ ॥ इसप्रकार उस ब्राह्मणकी स्त्रीके विचार करनेपर ॥ ४० ॥ कोई एक भिक्षुक साक्षात् शंकरके समान स्वयं आया और उससे बोला कि, हे विप्रभामिनि ! दुःखी मत हो ॥ ४१ ॥ हे सुभ्रु ! हृदयका सन्देह छोडकर इस बालककी रक्षाकर, थोडेही समयमें तुझको इस बालकसे परम कल्याण होगा ॥ ४२ ॥ इसप्रकार कहकर वह

शिशुमेनंसमुद्धृत्यपुष्णाम्यौरसवद्ध्रुवम् ॥ किंत्वविज्ञातकुलजंनोत्सहेस्प्रष्टुमुत्तमम् ॥ ३९ ॥ इतिमीमांसमानायांतस्यांविप्रवरस्त्रियाम् ॥ ॥ ४० ॥ कश्चित्समाययौभिक्षुःसाक्षाद्देवःशिवःस्वयम् ॥ तामाहभिक्षुवर्योथविप्रभामिनिमाखिदः ॥ ४१ ॥ रक्षैनंबालकंसुभ्रुविसृज्यहृदिसंशयम् ॥ अनेनपरमंश्रेयःप्राप्स्यसेह्यचिरादिह ॥ ४२ ॥ एतावदुक्त्वात्वरितोभिक्षुःकारुणिकोययौ ॥ अथतस्मिन्गतेभिक्षौविश्रब्धा विप्रभामिनी ॥ ४३ ॥ तमर्भकंसमादायनिजमेवगृहंययौ ॥ भिक्षुवाक्येनविश्रब्धासाराजतनयंतथा ॥ ४४ ॥ आत्मपुत्रेणसहशंकृपया पर्यपोषयत् ॥ एकचक्राह्वयेरम्येग्रामेकृतनिकेतना ॥४५॥ स्वपुत्रंराजपुत्रंचभिक्षान्नेनव्यवर्धयत् ॥ब्राह्मणीतनयश्चैवसराजतनयस्तथा ४६

दयालु भिक्षुक शीघ्रही वहाँसे चलागया, भिक्षुकके जानेके उपरान्त उत्पन्न हुआहै विश्वास जिसको ऐसी वह ब्राह्मणकी स्त्री ॥ ४३ ॥ उस बालकको लेकर अपने घरहीको गई, भिक्षुकके वचनसे विश्वास करके वह उस राजपुत्रको ॥ ४४ ॥ कृपापूर्वक अपने पुत्रके समान पोषण करनेलगी, एकचक्र नामवाले ग्राममें उसने अपना घर बनाया ॥ ४५ ॥ अपने पुत्र और राजपुत्रका भिक्षान्नसे पालन किया, ब्राह्मणीके पुत्र और राजपुत्र इन

दोनोंका ॥ ४६ ॥ ब्राह्मणोंने संस्कार विधिपूर्वक किया और सुपूजित वे दोनों वृद्धिको प्राप्त होनेलगे समयपर उनका उपनयन संस्कार हुआ और वे दोनों नियममें स्थित हुए ॥ ४७ ॥ प्रतिदिन माताके साथ भिक्षाके निमित्त फिरने लगे, एकसमय उन बालकोंके साथ ॥ ४८ ॥ भिक्षाके निमित्त फिरतीहुई वह विप्रपत्नी प्रारब्धके योगसे एक देवालयमें घुसगई वृद्ध मुनियोंसे भरेहुए उस देवालयमें ॥ ४९ ॥ उन दोनों बालकोंको देखकर बुद्धिमान् शांडिल्य मुनि बोले कि, अहो, दैवबल विचित्र है, अहो, कर्म बडा दुरत्यय है अर्थात् कर्मफलको कोई नहीं मेंट सकता ॥ ५० ॥ यह

ब्राह्मणैःकृतसंस्कारौववृधातेसुपूजितौ ॥ कृतोपनयनौकालेबालकौनियमेस्थितौ ॥ ४७ ॥ भिक्षार्थंचेरतुस्तत्रमात्रासहदिनेदिने ॥ ताभ्यां कदाचिद्बालाभ्यांसाविप्रवनितासह ॥ ४८ ॥ भैक्षंचरंतीदैवेनप्रविष्टादेवतालयम् ॥ तत्रवृद्धैःसमाकीर्णेमुनिभिर्देवतालये ॥ ४९ ॥ तौ दृष्ट्वाबालकौधीमाञ्छांडिल्योमुनिरब्रवीत् ॥ अहोदैवबलंचित्रमहोकर्मदुरत्ययम् ॥ ५० ॥ एषबालोऽन्यजननींश्रितोभैक्ष्येणजीवति ॥ इमामेवद्विजवधूंप्राप्यमातरमुत्तमाम् ॥ ५१ ॥ सहैवद्विजपुत्रेणद्विजभावंसमाश्रितः ॥ इतिश्रुत्वामुनेर्वाक्यंशांडिल्यस्यद्विजांगना ॥५२॥ साप्रणम्यसभामध्येपर्यपृच्छत्सविस्मया ॥ ब्रह्मन्नेषोऽर्भकोनीतोमयाभिक्षोर्गिराग्रहम् ॥ ५३ ॥ अविज्ञातकुलोद्यापिसुतवत्परिपोष्यते ॥ कस्मिन्कुलेप्रसूतोऽयंकामाताजनकोस्यकः ॥ ५४ ॥

बालक दूसरेकी माताके आश्रित होकर भिक्षासे जीवनको बितातांहै, इस उत्तम द्विजवधूरूप माता ॥ ५१ ॥ और ब्राह्मणपुत्रके साथ रहनेसे ब्राह्मण भावको प्राप्त होगया है, इसप्रकार शांडिल्यमुनिके वाक्यको सुनकर वह विप्रपत्नी ॥ ५२ ॥ सभाके बीचमें प्रणाम करके आश्चर्यरूपसे बूझनेलगी और बोली कि, हे ब्रह्मन् ! इस बालकको एक भिक्षुकके कथनसे अपने घरलेआई हूं॥ ५३ ॥किन्तु इसका कुल आजतक नहीं जानतीहूँ और पुत्रवत् इसका

पोषण कियाहै, यह किस कुलमें उत्पन्न हुआहै, कौन इसकी माता है, कौन इसका पिता है ॥ ५४ ॥ ज्ञानही हैं नेत्र जिनके ऐसे आपसे यह सब सुना चाहतीहूँ॥ ५५॥इसप्रकार उस ब्राह्मणपत्नीके बूझनेपर वे ज्ञानदृष्टिवाले मुनि उस बालकके पूर्वके जातकर्मका कथन करनेलगे॥५६॥यह विदर्भदेशके राजाका पुत्र है, इसका पिता युद्धमें मारागया, इसकी माताको नाकेने खा लिया, इसप्रकार उन्होंने संपूर्ण वृत्तान्त कह सुनाया ॥ ५७ ॥ फिर आश्चर्ययुत होकर उस विप्रपत्नीने शांडिल्यमुनिसे बूझा, कि, वह विदर्भाधिपति सम्पूर्ण भोगोंको त्यागकर युद्धमें किसप्रकार मरा ॥ ५८ ॥ और हे महामुने !

सर्वंविज्ञातुमिच्छामिभवतोज्ञानचक्षुषः ॥ ५५ ॥ इतिपृष्टो मुनिःसोथज्ञानदृष्टिर्द्विजस्त्रिया ॥ आचख्यौतस्यबालस्यजातकर्मचपौर्विकम् ॥ ॥ ५६ ॥ विदर्भराजपुत्रत्वंतत्पितुःसमरेमृतिम् ॥ तन्मातुर्नक्रहरणंसाकल्येनन्यवेदयत् ॥ ५७॥ अथसाविस्मितानारीपुनःपप्रच्छतंमुनिम् ॥ सराजासकलान्भोगान्हित्वायुद्धेकथंमृतः ॥ ५८ ॥ दारिद्र्यमस्यबालस्यकथंप्राप्तंमहामुने ॥ दारिद्र्यंपुनरुद्धूयकथंराज्यमवाप्स्यति ॥ ५९ ॥ अस्यापिममपुत्रस्यभिक्षान्नेनैवजीवतः ॥ दारिद्र्यशमनोपायमुपदेष्टुंत्वमर्हसि ॥ ६० ॥ ॥ शांडिल्यउवाच ॥ ॥ अमुष्य बालस्यपितासविदर्भमहीपतिः ॥ पूर्वजन्मनिपांड्येशोबभूवनृपसत्तमः ॥ ६१ ॥ सराजासर्वधर्मज्ञःपालयन्सकलांमहीम् ॥ प्रदोषसमये शंभुंकदाचित्प्रत्यपूजयत् ॥ ६२ ॥

इस बालकको दरिद्रता किसप्रकार प्राप्त हुई तथा यह दरिद्रताको दूर करके फिर किसप्रकार राज्यका अधिकारी होगा ॥ ५९ ॥ भिक्षाके अन्नसे जीवन व्यतीत करतेहुए इस (राजपुत्र) और मेरे पुत्रके दारिद्य दूर होनेके उपायका उपदेश करनेको तुम समर्थ हो ॥ ६० ॥ इसप्रकार ब्राह्मणीके वचन सुनकर शांडिल्य मुनि बोले, इस बालकका पिता विदर्भाधिपति पूर्वजन्ममें पांड्यदेशका राजा था ॥ ६१ ॥ पूर्वजन्ममें इस सर्वधर्मज्ञ राजाने सम्पूर्ण

पृथिवीकी रक्षा की और कभी प्रदोषके समय शंकरका पूजन किया ॥ ६२ ॥ भक्तिपूर्वक त्रिभुवनेश्वर शंकरका पूजन करतेहुए उसके नगरमें सर्वत्र महान् कलकल शब्द सुनाईदिया ॥ ६३ ॥ उस उत्कट शब्दको सुनकर राजा शंकरका पूजन छोड नगरके नाश होनेकी शंकासे राजभवनोंमें गया ॥ ६४ ॥ इसी अवसरमें उसका महाबल मन्त्री एक सामन्त शत्रुको पकड़कर राजाके निकट आया ॥ ६५ ॥ मन्त्रीके द्वारा लायेहुए उस उद्धत सामन्तशत्रुको देखकर राजाने क्रोधसे उसका शिर काट डाला ॥ ६६ ॥उस राजाने उसीप्रकार शिवपूजनको त्याग दिया और अपने नियमके विना समाप्त

तस्यपूजयतोभक्त्यादेवंत्रिभुवनेश्वरम् ॥ आसीत्कलकलारावःसर्वत्रनगरेमहान् ॥ ६३ ॥ श्रुत्वातमुत्कटंशब्दंराजात्यक्तशिवार्चनः ॥
निर्ययौराजभवनान्नगरक्षोभशंकया ॥६४॥ एतस्मिन्नेवसमयेतस्यामात्योमहाबलः ॥ शत्रुंगृहीत्वासामंतंराजांतिकमुपागमत् ॥ ६५ ॥
अमात्येनसमानीतंशत्रुंसामंतमुद्धतम् ॥ दृष्ट्वाक्रोधेननृपतिःशिरश्छेदमकारयत् ॥ ६६ ॥ सतथैवमहीपालोविसृज्याशिवपूजनम् ॥
असमाप्तात्मनियमश्चकारनिशिभोजनम्॥६७॥ तत्पुत्रोपितथाचक्रेप्रदोषसमयेशिवम् ॥ अनर्चयित्वामूढात्माभुक्त्वासुष्वापदुर्मदः ॥६८॥
जन्मांतरेसनृपतिर्विदर्भक्षितिपोभवत् ॥ शिवार्चनांतरायेणपरैर्भोगांतरेहतः ॥ ६९ ॥ तत्पुत्रोयःपूर्वभवेसोस्मिञ्जन्मनितत्सुतः ॥
भूत्वादारिद्र्यमापन्नःशिवपूजाव्यतिक्रमात ॥७०॥ अस्यमातापूर्वभवेसपत्नींछद्मनाहनत् ॥ तेनपापेनमहताग्राहेणास्मिन्भवेहता॥७१॥

कियेही रात्रिमें भोजन करलिया ॥ ६७ ॥ उसके पुत्रनेभी इसीप्रकार किया, कि, शिवजीका पूजन विनाकियेही उस दुर्मद मूढात्माने भोजन करलिया और सोगया ॥ ६८ ॥ दूसरे जन्ममें वह राजा विदर्भदेशका अधिपति हुआ, और शिवपूजनमें विघ्न होनेके कारण राज्यभोगोंके पीछे शत्रुओंके हाथसे मारागया ॥ ६९ ॥ पूर्वजन्ममें जो इसका पुत्रथा वही इस जन्ममें भी हुआ और शिवपूजनमें व्यतिक्रम होनेसे दरिद्री हुआ ॥ ७० ॥ इसकी माताने

पूर्वजन्ममें छलसे अपनी सपत्नी (सौत) को मारडाला, उस महापापसे इस जन्ममें इसको ग्राहने भक्षण किया ॥ ७१ ॥ इसप्रकार यह इनकी प्रवृत्ति तुझसे कही, शंकरका पूजन न करनेसे मनुष्य दरिद्रताको प्राप्त होतेहैं ॥ ७२ ॥ इसप्रकार कहकर फिर शांडिल्यमुनि बोले कि, हे विप्रपत्नी ! सत्य, परलोकका हितसार, सम्पूर्ण उपनिषदोंका रहस्य मैं तुझसे कहताहूँ, कि, इस घोर असार संसारमें प्राप्त होकर मनुष्यके लिये भक्तिपूर्वक शिवजीका पूजन करनाही सारहै ॥ ७३ ॥ जो प्राणी प्रदोषके समय शंकरका पूजन नहीं करते और पूजेहुए शंकरको प्रदोषमें प्रणाम नहीं करते तथा जो

एषाप्रवृत्तिरेतेषांभवत्यैसमुदाहृता ॥ अनर्चितेशिवेमर्त्याःप्राप्नुवंतिदरिद्रताम् ॥ ७२ ॥ सत्यंब्रवीमिपरलोकहितंब्रवीमिसारंब्रवीम्युपनिषद्धृदयंब्रवीमि ॥ संसारमुल्बणमसारमवाप्यजंतोःसारोयमीश्वरपदांबुरुहस्यसेवा ॥ ७३ ॥ येनार्चयंतिगिरिशंसमयेप्रदोषेयेनार्चितंशिवमपिप्रणमंतिचान्ये ॥ एतत्कथांश्रुतिपुटैर्नपिबंतिमूढास्तेजन्मजन्मसुभवंतिनरादरिद्राः ॥ ७४ ॥ येवैप्रदोषसमयेपरमेश्वरस्यकुर्वंत्यनन्यमनसोंघ्रिसरोजपूजाम् ॥ नित्यंप्रवृद्धधनधान्यकलत्रपुत्रसौभाग्यसंपदधिकास्तइहैवलोके ॥ ७५ ॥ कैलासशैलभवनेत्रिजगज्जनित्रींगौरींनिवेश्यकनकांचितरत्नपीठे ॥ नृत्यंविधातुमभिवान्छतिशूलपाणौदेवाःप्रदोषसमयेऽनुभजंतिसर्वे ॥ ७६ ॥

मूढात्मा पुरुष अपने कर्णपुटोंसे इस कथाका पान नहीं करते वे जन्मजन्ममें दरिद्री होतेहैं ॥ ७४ ॥ जो प्राणी प्रदोषके समय अनन्यभाव अर्थात् एकाग्रचित्तसे शंकरके चरणकमलोंका पूजन करतेहैं वे इसीलोकमें धन, धान्य, स्त्री, पुत्र, सौभाग्य और सम्पत्तिसे सम्पन्न होजातेहैं ॥ ७५ ॥ कैलासपर्वतपर तीनोंलोककी माता पार्वतीजीको रत्नजटित सुवर्णसिंहासनपर बैठाकर प्रदोषके समय जब श्रीशंकर नृत्य करतेहैं, उससमय सम्पूर्ण देवता उनकी

सेवाके निमित्त वहीं प्राप्त होजाते हैं ॥ ७६ ॥ जब शंकर नृत्य करतेहैं, तब सरस्वती वीणा बजातीहै, इन्द्र वंशी बजातेहैं, ब्रह्माजी दोनों हाथोंसे ताल देतेहैं, लक्ष्मीजी गान करतीहैं, विष्णुभगवान् बडी गम्भीर ध्वनिसे मृदंग बजातेहैं, और सब देवता भक्तिपूर्वक चारों ओर हाथ जोड़ खड़े रहतेहैं, इसप्रकार प्रदोषके समय सब देवता शंकरकी सेवामें लगे रहतेहैं ॥ ७७ ॥ और गन्धर्व, यक्ष, पक्षी, सर्प, सिद्ध, साध्य, विद्याधर और अप्सराओंके समूह आदि और जो अन्य तीनलोकमें देवताहैं, वे सब भूतवर्गसमेत प्रदोषके समय कैलासवासी श्रीशंकरके निकट स्थित रहतेहैं ॥ ७८ ॥ इस

वाग्देवीधृतवल्लकीशतमखोवेणुंदधत्पद्मजस्तालोन्निद्रकरोरमाभगवतीगेयप्रयोगान्विता ॥ विष्णुःसांद्रमृदंगवादनपटुर्देवाःसमंतात्स्थिताःसेवंतेतमनुप्रदोषसमयेदेवंमृडानीपतिम् ॥ ७७ ॥ गंधर्वयक्षपतगोरगसिद्धसाध्याविद्याधरासुरवराप्सरसांगणाश्च ॥ येन्येत्रिलोकनिलयाः सहभूतवर्गाःप्राप्तेप्रदोषसमयेहरपार्श्वसंस्थाः ॥ ७८ ॥ अतःप्रदोषेशिवएकएवपूज्योथनान्येहरिपद्मजाद्याः ॥ तस्मिन्महेशेविधिनेज्यमानेसर्वेप्रसीदंतिसुराधिनाथाः ॥७९॥ एषतेतनयःपूर्वजन्मनिब्राह्मणोत्तमः ॥ प्रतिग्रहैर्वयोनिन्येनयज्ञाद्यैःसुकर्मभिः ॥८०॥ अतोदारिद्र्यमापन्नःपुत्रस्तेद्विजभामिनी॥तद्दोषपरिहारार्थंशरणंयातुशंकरम्॥८१॥इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेप्रदोषमहिमवर्णनंनामषष्ठोऽध्यायः॥६॥

कारण प्रदोषकालमें विष्णु, ब्रह्मा आदिदेवोंको छोड़ एक शंकरकाही पूजन करे, केवल भक्तिसे विधिपूर्वक शिवपूजा करनेसे सब देवता प्रसन्न होजाते हैं ॥ ७९ ॥ इसप्रकार कहकर फिर शांडिल्यमुनि बोले कि, हे विप्रपत्नि ! यह तेरा पुत्र पूर्वजन्ममें उत्तम ब्राह्मण था, इसने प्रतिग्रह लेलेकर अवस्था बिताई और सुन्दर यज्ञादिकर्म नहीं किये ॥८०॥ हे द्विजभामिनि ! इसलिये तेरा पुत्र दरिद्री हुआ, उस दोषके दूर करनेके निमित्त यह शंकरकी शरण होवे, तब इसको सुखकी प्राप्तिहो ॥८१॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां प्रदोषमहिमावर्णनं नामषष्ठोऽध्यायः॥ ६ ॥

॥ अथ सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

॥ सूतजी बोले कि, हे मुनीश्वरो ! इस प्रकार शांडिल्यमुनिके वचनको सुनकर वह विप्रपत्नी हाथ जोड़ प्रणाम कर शांडिल्यमुनिसे प्रदोषकालमें शिवपूजनकी विधिका क्रम पूँछनेलगी ॥ १ ॥ ब्राह्मणीका वचन सुन शांडिल्यमुनि बोले, हे विप्रपत्नि ! महीनेकी दोनों पक्षकी त्रयोदशीको दिनमें निराहार रहे, सूर्य छिपनेसे तीन घड़ी पहिले स्नान कर ॥ २ ॥ सुन्दर श्वेतवस्त्र पहिन नियमपूर्वक सन्ध्या वन्दन और जप करके शिवपूजनका आरम्भ करे ॥ ३ ॥ पूजाके स्थानको देवके आगे भलीप्रकार सुन्दर जलसे लीपकर एक मण्डप बनाय उसको

॥ सूतउवाच ॥ ॥ इत्युक्तामुनिनासाध्वीसाविप्रवनितापुनः ॥ तंप्रणम्याथपप्रच्छशिवपूजाविधेःक्रमम् ॥ १ ॥ शांडिल्यउवाच ॥ ॥ पक्षद्वयेत्रयोदश्यांनिराहारोभवेद्यदा ॥ घटीत्रयादस्तमयात्पूर्वंस्नानंसमाचरेत् ॥ २ ॥ शुक्लांबरधरोधीरोवाग्यतोनियमान्वितः ॥ कृत संध्याजपविधिःशिवपूजांसमारभेत् ॥ ३ ॥ देवस्यपुरतःसम्यगुपलिप्यनवांभसा ॥ विधायमंडपंरम्यंधौतवस्त्रादिभिर्बुधः ॥ ४ ॥ वितानाद्यैरलंकृत्यफलपुष्पनवांकुरैः ॥ विचित्रपद्ममुद्धृत्यवर्णपंचकसंयुतम् ॥ ५ ॥ तत्रोपविश्यसुशुभेभक्तियुक्तःस्थिरासने ॥ सम्यक्संपादिताशेषपूजोपकरणःशुचिः ॥ ६ ॥ आगमोक्तेनमंत्रेणपीठमामंत्रयेत्सुधीः ॥ ततःकृत्वात्मशुद्धिंचभूतशुद्ध्यादिकंक्रमात् ॥७॥ प्राणायामत्रयंकुर्याद्बीजवर्णैःसबिंदुकैः ॥ मातृकान्यस्यविधिवद्ध्यात्वातांदेवतांपराम् ॥ ८ ॥

धौतवस्त्र ॥ ४ ॥ वितान, पुष्प, माला, फल, पत्र आदिकोंसे शोभित कर उनमें विचित्र पांच रंगसे अष्टदल कमल लिखे ॥ ५ ॥ वहाँ सुन्दर आसनपर बैठ भक्तिपूर्वक सब पूजाकी सामग्री इकट्ठी कर एकाग्रचित्तसे पूजाका आरम्भ करे ॥ ६ ॥ पहिले शास्त्रोक्तमन्त्रोंसे बुद्धिमान् पुरुष आसनका आमन्त्रण करे, फिर क्रमसे आत्मशुद्धि, भूतशुद्धि आदि कर ॥ ७ ॥ तीन प्राणायाम करे और बिन्दुसहित बीजवर्णोंसे मातृकान्यास करके

विधिपूर्वक परदेवताका ध्यान करे ॥ ८ ॥ मातृकान्यास समाप्त करके फिर शंकरका ध्यान करे, वामभागमें गुरुको प्रणाम कर दक्षिणभागमें गणेश जीको प्रणाम करे ॥ ९ ॥ फिर दोनों कन्धों और दोनों ऊरुओंमें धर्म, ज्ञान, वैराग्य, ऐश्वर्यका न्यास करे, नाभिपृष्ठ और दोनों पार्श्वभागोंमें अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य और अनैश्वर्यका न्यास करे, फिर हृदयमें पीठन्यास करे ॥ १० ॥ फिर आधारशक्तिसे आरम्भकर ज्ञानात्मापर्य्यन्त पूर्वोक्त क्रमसे हृदयकमलमें न्यास करे ॥ ११ ॥ और उसी स्थानमें नव शक्तियोंका ध्यान कर उस मनोहर पीठपर श्रीउमापति महादेवका ध्यान करे, इस प्रकार ध्यान

समाप्यमातृकाभूयोध्यात्वाचैवपरंशिवम् ॥ वामभागेगुरुंनत्वादक्षिणेगणपंनमेत् ॥ ९ ॥ अंसोरुयुग्मेधर्मादिन्यस्यनाभौचपार्श्वयोः ॥ अधर्मादीननंतादीन्हृदिपीठेमनुंन्यसेत् ॥१०॥ आधारशक्तिमारभ्यज्ञानात्मानमनुक्रमात् ॥ उक्तक्रमेणविन्यस्यहृत्पद्मेसाधुभाविते ॥ ॥ ११ ॥ नवशक्तिमयेरम्येध्यायेदेवमुमापतिम् ॥ चंद्रकोटिप्रतीकाशंत्रिनेत्रंचंद्रशेखरम् ॥ १२ ॥ आपिंगलजटाजूटं रत्नमौलिविराजितम् ॥ नीलग्रीवमुदारांगंनागहारोपशोभितम् ॥ १३ ॥ वरदाभयहस्तंचधारिणंचपरश्वधम् ॥ दधानंनागवलयकेयूरांगदमुद्रिकम् ॥ १४ ॥ व्याघ्रचर्मपरीधानंरत्नसिंहासनेस्थितम् ॥ ध्यात्वातद्वामभागेचचिंतयेद्गिरिकन्यकाम् ॥ १५ ॥

करे, कि, करोड़ चन्द्रमाके समान प्रकाशमान्, चन्द्रमाको मस्तकपर धारण कियेहुए ॥ १२ ॥ सब ओरसे पीला है जटाजूट जिनका ऐसे, रत्नजटित मुकुट शीशपर धारण कियेहुए, नीलकंठ, उदारांग, नागहारसे शोभित ॥ १३ ॥ वरद, अभय, परशु और मृग चारों हाथोंमें धारण कियेहुए, नागोंके कंकण और केयूरआदि आभूषण धारण कियेहुए ॥ १४ ॥ व्याघ्रचर्म ओढ़ेहुए, और रत्नसिंहासनपर विराजमान श्रीमहादेवजीका ध्यानकर उनके वाम

भागमें श्रीपार्वतीजीका ध्यान करे ॥ १५ ॥ कि, जपाके पुष्प वा उदय होतेहुए सूर्य्य अथवा बिजलियोंके समूहके समान कान्तिवाली, कोमलांगी मन और नेत्रोंको आनन्द देनेवाली ॥ १६ ॥ चन्द्रकी है मस्तकपर कला जिनके ऐसी चिकने और नीले हैं केश जिनके ऐसी, भौंरोंके समूहसे शोभायमान, नीली अलकोंसे विराजित ॥ १७ ॥ मणिकुंडलोंसे शोभित है मुख जिनका ऐसी, सुन्दर केशर और कस्तूरीसे जिनके कपोल भूषित होरहे हैं ॥ १८ ॥ मधुर हास्यसे प्रकाशित होरहा है रक्तवर्णका अधर जिनका ऐसी, नवीनही कुचरूप कम

भास्वज्जपाप्रसूनाभासुदयार्कसमप्रभाम्॥ विद्युत्पुंजनिभांतन्वींमेनानयननंदिनीम् ॥ १६ ॥ बालेंदुशेखरांस्निग्धांनीलकुंचितकुंतलाम् ॥
भृंगसंघातरुचिरांनीलालकविराजिताम्॥ १७ ॥ मणिकुंडलविद्योतन्मुखमंडलविभ्रमाम् ॥ नवकुंकुमपंकांककपोलदलदर्पणाम् ॥१८॥
मधुरस्मितविभ्राजदरुणाधरपल्लवाम् ॥ कंबुकंठींशिवासुद्यत्कुचपंकजकुड्मलाम् ॥ १९ ॥ पाशांकुशाभयाभीष्टविलसंतींचतुर्भुजाम् ॥
अनेकरत्नविलसत्कंकणांकितमुद्रिकाम् ॥ २० ॥ वलित्रयेणविलसद्धेमकांचीगुणान्विताम् ॥ रक्तमाल्यांबरधरांदिव्यचंदनचर्चिताम् ॥
॥ २१ ॥ दिक्पालवनितामौलिसन्नतांघ्रिसरोरुहाम् ॥ रत्नसिंहासनारूढांसर्पराजपरिच्छदाम् ॥ २२ ॥

लकलाकी उदय हुआ है जिनके ऐसी, शंखके समान ग्रीवावाली ॥ १९ ॥ पाश, अंकुश, वर और अभय चारों हाथोंमें धारण कियेहुए, अनेक रत्नोंके कंकण, केयूर, मुद्रिका आदि अनेक आभूषण धारण कियेहुए ॥ २० ॥ तीन बलि जिनके उदरमें हैं, सुवर्णके डोरेसे युक्त रत्नमाला और वस्त्र धारण कियेहुए, दिव्य चन्दनसे चर्चित ॥ २१ ॥ दिक्पालोंकी स्त्रियोंके शीश जिनके चरणकमलोंमें सदा झुके रहते हैं, रत्नसिंहासनपर विरा

जमान और शेषनागसे वेष्टित ॥ २२ ॥ इस प्रकार शंकर और पार्वतीजीका ध्यान कर न्यासके क्रमसे गन्ध पुष्पादिकोंके द्वारा ॥ २३ ॥ पंच ब्रह्ममन्त्रोंसे प्रोक्त स्थान वा हृदयमें पूजन करे, देहमें पृथक् पुष्पांजलि दे और मूलमंत्रसे हृदयमें तीन बार देवे ॥ २४ ॥ फिर साधक स्वयं शिव रूप होकर अपने आगे सुवर्ण आदिके सिंहासनपर देवताको बैठावे और मूलमन्त्रसे बाह्य पूजा करे तथा शंकरका ध्यान करे ॥ २५ ॥ पूजाके आरंभमें पहिले संकल्प कर हाथ जोड़ ऋण, पातक और दौर्भाग्यकी निवृत्तिके निमित्त हृदयमें शंकरका ध्यान करे और कहे कि, हे शंकर ! संपूर्ण

एवंध्यात्वामहादेवंदेवींचगिरिकन्यकाम् ॥ न्यासक्रमेणसंपूज्यदेवंगंधादिभिःक्रमात् ॥ २३ ॥ पंचभिर्ब्रह्मभिः कुर्यात्प्रोक्तस्थानेषुवाहृदि ॥ पृथक्पुष्पांजलिंदेहेमूलेनचहृदित्रिधा ॥ २४ ॥ पुनःस्वयंशिवोभूत्वामूलमंत्रेणसाधकः ॥ ततःसंपूजयेदेवंबाह्यपीठेपुनःक्रमात् ॥ ॥ २५ ॥ संकल्पंप्रवदेत्तत्रपूजारंभेसमाहितः ॥ कृतांजलिपुटोभूत्वाचिंतयेद्धृदिशंकरम् ॥ २६ ॥ ऋणपातकदौर्भाग्यदारिद्र्यविनिवृत्तये ॥ अशेषाघविनाशायप्रसीदममशंकर ॥ २७ ॥ दुःखशोकाग्निसंततंसंसारभयपीडितम् ॥ बहुरोगाकुलंदीनंत्राहिमांवृषवाहन ॥ २८ ॥ आगच्छदेवदेवेशमहादेवाभयंकर ॥ गृहाणसहपार्वत्यातवपूजांमयाकृताम् ॥ २९ ॥ इतिसंकल्प्यविधिवद्बाह्यपूजांसमाचरेत् ॥ गुरुंगणपतिंचैवयजेत्सव्यापसव्ययोः ॥ ३० ॥ क्षेत्रेशमीशकोणेतुयजेद्वास्तोष्पतिंक्रमात् ॥ वाग्देवींचयजेत्तत्रततःकात्यायनींयजेत् ॥ ३१ ॥

पाप नष्ट करके मेरे ऊपर प्रसन्न होओ ॥२६॥॥२७॥ हे वृषवाहन ! दुःख और शोककी अग्निसे सन्तप्त, संसारके भयसे पीडित, अनेक रोगोंसे व्याप्त, और दीन हुए मेरी रक्षा करो ॥ २८ ॥ हे देवदेव ! अभयंकर महादेव ! इस आसनपर आओ, और मेरी की हुई पूजाको पार्वतीसमेत ग्रहण करो ॥ २९ ॥ इसप्रकार संकल्प करके बाह्य पूजाका आरम्भ करे और गुरु, गणपतिको सव्यापसव्यमें यजन करे ॥ ३० ॥ ईशान कोणमें क्षेत्रपालको

पूजे, फिर क्रमसे वास्तोष्पति और वाग्देवीकी पूजा कर कात्यायनीकी पूजा करे ॥ ३१ ॥ तदनन्तर धर्म, ज्ञान; ऐश्वर्य और वैराग्यके अन्तमें नमः यह पद लगाकर ईशानादिकोणसे पीठके चारों पादोंमें पूजा करे ॥ ३२ ॥ इसीप्रकार अधर्म, अज्ञान, अवैराग्य और अनैश्वर्यकी पीठके अंगोंमें पूजा करे, पीठके बीचमें अनन्तकी पूजा कर ॥ ३३ ॥ सत्त्वआदि तीनों गुण और उनको सिंहासनमें स्थापन करे, उसके ऊर्द्ध्वभागमें माया, लक्ष्मी और शिवको साथ ॥ ३४ ॥ स्थापन करे उसमें कमलको पूज तीनों मंडलोंमें पत्र केशरसे व्याप्तकर मूल अक्षरोंसे क्रमपूर्वक ॥ ३५ ॥ आदरसे मंड

धर्मज्ञानंचवैराग्यमैश्वर्यंचनमोंतकैः ॥ स्वरैरीशादिकोणेषुपीठपादानुक्रमात् ॥ ३२ ॥ आभ्यांबिंदुविसर्गाभ्यामधर्मादीन्प्रपूजयेत् ॥ सत्त्वरूपैश्चतुर्दिक्षुमध्येनंतंसतारकम् ॥ ३३ ॥ सत्त्वादींस्त्रिगुणांस्तंतुरूपान्पीठेषुविन्यसेत् ॥ अतऊर्ध्वच्छदेमायांसहलक्ष्म्याशिवेनच ॥ ॥ ३४ ॥ तदंतेचांबुजंभूयः सकलंमंडलत्रयम् ॥ पत्रकेसरकिंजल्कव्याप्तंतत्राक्षरैः क्रमात् ॥ ३५ ॥ पद्मत्रयंतथाभ्यर्च्यमध्येमंडप मादरात् ॥ वामांज्येष्ठांचरौद्रींचभागाद्यैर्दिक्षुपूजयेत् ॥ ३६ ॥ वामाद्यानवशक्तीश्चनवस्वरयुतायजेत् ॥ हृदिबीजत्रयाद्येनपीठमंत्रेणचार्चयेत् ॥ ३७ ॥ आवृत्तैःप्रथमांगैश्चपंचभिर्मूर्त्तिशक्तिभिः ॥ त्रिशक्तिमूर्त्तिभिश्चान्यैर्निधिद्वयसमन्वितैः ॥ ३८ ॥ अनंताद्यैःपरीताश्चमातृभिश्चवृषादिभिः ॥ सिद्धिभिश्चाणिमाद्याभिरिंद्राद्यैश्चसहायुधैः ॥ ३९ ॥

पके बीचमें तीनों कमलोंकी अर्चना करे यह अग्नि सूर्य और सोमके मंडलोंकी अर्चना हुई । फिर कमलके मध्यमें वामा, ज्येष्ठा, रौद्री आदि पीठ शक्तियोंको पूजे ॥ ३६ ॥ वामा आदि नव शक्तियोंकी नव स्वरोंसे अर्चना करे, फिर आदिके तीन हृदयबीज और पीठमन्त्रसे पूजन करे ॥ ३७ ॥ प्रथमांग आवृत्तोंसे पांच शक्ति मार्तियोंसे, त्रिशक्तिमूर्त्तियोंसे, तथा अन्य दो निधियोंसे युक्त ॥ ३८ ॥ अनन्त आदिकोंसे, मातृ

आदि और वृषादिकोंसे, अणिमा आदि अष्टसिद्धियोंसे आयुधसहित इन्द्रादिकोंसे ॥ ३९ ॥ वृषभ, क्षेत्र, चंडेश, दुर्गा, स्कन्द, नन्दन, गणेश, सैन्यप इनको अपने २ लक्षण सम्पन्नकर स्थापित करे ॥ ४० ॥ अणिमा, महिमा, गरिमा, लघिमा, ईशित्व, वशित्व, प्राप्ति और प्राकाम्य ॥ ४१ ॥ यह ऐश्वर्यकी देनेवाली और तेजोरूप कथन की है, पहिले हल्लेखादिके क्रमपूर्वक पंचब्रह्म ॥ ४२ ॥ और उमा इन्द्रादि अंगोंसे मुनियोंने पूजा कही है, उमा और चंडेश्वर आदिको उत्तरसे आदिलेकर पूजे ॥ ४३ ॥ इसप्रकार आवरणोंसे युक्त तेजोरूप सदाशिवको पार्वतीसमेत उपचारोंसे पूजै

वृषभक्षेत्रचंडेशदुर्गाश्चस्कंदनंदिनौ ॥ गणेशःसैन्यपश्चैवस्वस्वलक्षणलक्षिताः ॥४०॥ अणिमामहिमाचैवगरिमालघिमातथा ॥ ईशित्वं चवशित्वंचप्राप्तिःप्राकाम्यमेवच ॥४१॥ अष्टैश्वर्याणिचोक्तानितेजोरूपाणिकेवलम् ॥ पंचभिर्ब्रह्मभिःपूर्वंहल्लेखाद्यादिभिःक्रमात् ॥४२॥ अंगैरुमाद्यैरिंद्राद्यैःपूजोक्तामुनिभिस्तुतैः ॥ उमाचंडेश्वरादींश्चपूजयेदुत्तरादितः ॥ ४३ ॥ एवमावरणैर्युक्तंतेजोरूपंसदाशिवम् ॥ उमयास हितंदेवमुपचारैःप्रपूजयेत् ॥४४॥ सुप्रतिष्ठितशंखस्यतीर्थैःपंचामृतैरपि ॥ अभिषिच्यमहादेवंरुद्रसूक्तैःसमाहितः ॥४५॥ कल्पयेद्विविधैर्म न्त्रैरासनाद्युपचारकान् ॥ आसनंकल्पयेद्धैमंदिव्यवस्त्रसमन्वितम् ॥४६॥ अर्घ्यमष्टगुणोपेतंपाद्यंशुद्धोदकेनच ॥ तेनैवाचमनंदद्यान्मधुप र्कमथूत्तरम् ॥४७॥ पुनराचमनंदत्त्वास्नानंमंत्रैः प्रकल्पयेत् ॥ उपवीतंतथावासोभूषणानिनिवेदयेत् ॥ ४८ ॥

॥ ४४ ॥ सुप्रतिष्ठित शंखको तीर्थ और पंचामृतोंसे स्नान करावे, और एकाग्रचित्तसे रुद्रसूक्तोंद्वारा शंकरका अभिषेचन करके ॥ ४५ ॥ अनेक मन्त्रोंसे आसन और उपचारोंकी कल्पना करे, दिव्यवस्त्रयुक्त सुवर्णका आसन विधान करे ॥ ४६ ॥ अष्टगुणयुक्त अर्घ्य और शुद्धजलसे पाद्य दे, उसी जलसे आचमन करावे, मधुपर्क दे ॥ ४७ ॥ फिर आचमन कराकर वैदिकमंत्रोंसे स्नान करावे, यज्ञोपवीत, वस्त्र और आभूषण निवेदन करे॥ ४८॥

अष्टांगयुक्त पवित्रगन्ध निवेदन करे, फिर बिल्वपत्र, मंदार, कह्लार, कर्णिका, कमल ॥ ४९ ॥ धतूरा, द्रोण, मल्लिका, कुशा, अपामार्ग, तुलसी, माधवी, चम्पक आदि ॥ ५० ॥ बृहती, करवीर आदिके सुन्दर पुष्पोंसे वा समयपर साधकको जो मिलें उनसे और सुगंधियुक्त मालाओंसे शिवपार्वतीकी पूजा करे॥ ५१॥ सुगन्धियुक्त और काले अगरसे उत्पन्न धूपदे और दीप देवै, फिर पायस॥ ५२॥ मोदक, अपूप, दुग्ध और दही आदि शर्करा और गुड मधुयुक्त दही और जल निवेदन करे ॥ ५३ ॥ उसी हविसे मन्त्रों द्वारा अग्निमें आहुति दे, और गुरुके वाक्यमें विश्वास

गंधमष्टांगसंयुक्तंसुपूतंविनिवेदयेत् ॥ ततश्चबिल्वमंदारकह्लारसरसीरुहैः ॥४९॥ धत्तूरकंकर्णिकारंशणपुष्पंचमल्लिकाम् ॥ कुशापामार्गतुलसीमाधवीचंपकादिकम् ॥ ५० ॥ बृहतीकरवीराणियथालब्धानिसाधकः ॥ निवेदयेत्सुगंधीनिमाल्यानिविविधानिच ॥५१॥ धूपंकालागरूत्पन्नंदीपंचविमलंशुभम् ॥ अथपायसनैवेद्यंसघृतंसोपदंशकम् ॥ ५२ ॥ मोदकापूपसंयुक्तंशर्करागुडसंयुतम् ॥ मधुनाक्तंदधियुतंजलपानसमन्वितम् ॥ ५३ ॥ तेनैवहविषावह्नौजुहुयान्मंत्रभाविते ॥ आगमोक्तेनविधिनागुरुवाक्यनियंत्रितः ॥५४॥ नैवेद्यंशंभवेभूयोदत्त्वातांबूलमुत्तमम् ॥ धूपंनीराजनंरम्यंछत्रंदर्पणमुत्तमम् ॥ ५५ ॥ समर्पयित्वाविधिवन्मंत्रैर्वैदिकतांत्रिकैः ॥ यद्यशक्तःस्वयांनिःस्वोयथाविभवमर्चयेत् ॥५६॥ भक्त्यादत्तेनगौरीशःपुष्पमात्रेणतुष्यति ॥ अथांगभूतान्सकलान्गणेशादीन्प्रपूजयेत् ॥ ५७ ॥

करके शास्त्रोक्त विधिसे ॥ ५४ ॥ शंकरके निमित्त नैवेद्य निवेदन करके सुन्दर ताम्बूल निवेदन करे, फिर धूप नीराजन करे और सुंदर छत्र दर्पण दे।। ५५ ।। वैदिक तांत्रिक मन्त्रोंसे विधिपूर्वक यह सब समर्पण करे, इसप्रकारकी पूजा करनेमें असमर्थ हो, और निर्धन हो, तो अपनी शक्तिके अनुसार पुष्प चंदन आदिसेही शंकर पार्वतीका पूजन करे ॥५६॥ कारण कि, भक्तिपूर्वक पुष्पमात्रके निवेदन करनेसे ही पार्वतीपति महादेव प्रसन्न होजाते हैं, फिर अंग

देव गणेशआदिका पूजन करे ॥ ५७ ॥ और अनेक स्तोत्रोंसे स्तुति कर बुद्धिमान् पुरुष साष्टांग प्रणाम करे, तदनन्तर नवचण्डेश्वर आदि समेत शंकरकी प्रदक्षिणा करे ॥ ५८ ॥ और विधिपूर्वक पूजा समाप्त करके इस स्तोत्रसे गिरिजापति शंकरकी स्तुति करे । जय देव जगन्नाथ ! जय शंकर शाश्वत ! ॥ ५९ ॥ हे सर्वसुराध्यक्ष ! हे सर्वदेवोंसे पूजित ! तुम्हारी जय हो, सर्वगुणातीत ! हे सर्व वर देनेवाले ! तुम्हारी जय हो ॥ ६० ॥ जय नित्य निराधार ! जय विश्वभंर ! जय अव्यय ! जय विश्वैकवेद्येश ! हे सर्पोंका भूषण धारणकरनेवाले ! तुम्हारी जय हो ॥ ६१ ॥

स्तवैर्नानाविधैःस्तुत्वासाष्टांगंप्रणमेद्बुधः ॥ ततःप्रदक्षिणीकृत्यनवचंडेश्वरादिकान् ॥ ५८ ॥ पूजांसमर्प्यविधिवत्प्रार्थयेद्गिरिजापतिम् ॥ जयदेवजगन्नाथजयशंकरशाश्वत ॥ ५९ ॥ जयसर्वसुराध्यक्षजयसर्वसुरार्चित ॥ जयसर्वगुणातीतजयसर्ववरप्रद ॥ ६० ॥ जयनित्यनिराधारजयविश्वंभराव्यय ॥ जयविश्वैकवेद्येशजयनागेंद्रभूषण ॥ ६१ ॥ जयगौरीपतेशंभोजयचंद्रार्धशेखर ॥ जयकोटयर्कसंकाशजयानंतगुणाश्रय ॥ ६२ ॥ जयरुद्रविरूपाक्षजयाचिंत्यानिरंजन ॥ जयदुस्तरसंसारसागरोत्तारणप्रभो ॥ ६३ ॥ प्रसीदमेमहादेवसंसारार्त्तस्याखिद्यतः ॥ सर्वपापभयंहृत्वारक्षमांपरमेश्वर ॥६४॥ महादारिद्र्यमग्नस्यमहापापहतस्यच ॥ महाशोकविनष्टस्यमहारोगातुरस्यच ६५

जय गौरीपते ! जय शंभो ! जय चंद्रार्धशेखर ! हे करोड सूर्य्यके तुल्य कान्तिवाले ! हे अनन्तगुणाश्रय ! तुम्हारी जय हो ॥ ६२ ॥ जय रुद्र ! विरूपाक्ष ! जय अचिन्त्य निरंजन ! हे संसारसागरसे उद्धारकरनेमें समर्थ शंकर ! तुम्हारी जय हो ॥ ६३ ॥ हे महादेव ! संसारसे आर्त्त और खेदित मेरे ऊपर प्रसन्न होओ, हे परमेश्वर ! संपूर्ण पापोंके भयको दूर करके मेरी रक्षा करो ॥ ६४ ॥ महादारिद्र्ययुक्त, महापापोंसे हत महाशो

कसे विनष्ट, महारोगोंसे पीडित ॥ ६५ ॥ ऋणभारसे झुकेहुए, अपनेकर्मोंसे दह्यमान और ग्रहोंसे पीडित मेरेऊपर प्रसन्न होओ ॥ ६६ ॥ पूजाके उपरान्त दरिद्री पुरुष इस प्रकार शंकरकी प्रार्थना करे, चाहे धनी हो वा राजा, सबको शंकरसे प्रार्थना करनीचाहिये ॥ ६७ ॥ कि, मेरी दीर्घायु हो, सदा निरोगी रहूँ, मेरे खजानेमें रुपया बढ़े, बल बढ़े, मेरे नित्य आनन्द रहे ॥ ६८ ॥ हे शंकर ! तुम्हारे प्रसादसे मेरे शत्रु नष्ट होवें, मेरी प्रजा प्रसन्न रहें, मेरे राज्यमें चोर न हों, सब प्रजा आपत्तिरहित होवें ॥ ६९ ॥ मेरे राज्यमें दुर्भिक्ष और शत्रुका भय न हो, सर्व अन्नोंकी वृद्धि हो,

ऋणभारपरीतस्यदह्यमानस्यकर्मभिः ॥ ग्रहैःप्रपीड्यमानस्यप्रसीदममशंकर ॥ ६६ ॥ दरिद्रःप्रार्थयेदेवंपूजांतेगिरिजापतिम् ॥ अर्थाढ्यो वापिराजावाप्रार्थयेदेवमीश्वरम् ॥ ६७ ॥ दीर्घमायुःसदारोग्यंकोशवृद्धिर्बलोन्नतिः ॥ ममास्तुनित्यमानंदःप्रसादात्तवशंकर ॥ ६८ ॥ शत्रवःसंक्षयंयांतुप्रसीदंतुममप्रजाः ॥ नश्यंतुदस्यवोराष्ट्रेजनाःसंतुनिरापदः ॥ ६९ ॥ दुर्भिक्षमरिसंतापःशमंयातुमहीतले ॥ सर्वसस्य समृद्धिश्चभूयात्सुखमयादिशः ॥ ७० ॥ एवमाराधयेद्देवंप्रदोषेगिरिजापतिम् ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्दक्षिणाभिश्चतोषयेत् ॥ ७१ ॥ सर्वपापक्षयकरीसर्वदारिद्र्यनाशिनी ॥ शिवपूजामयाख्यातासर्वाभीष्टवरप्रदा ॥ ७२ ॥ महापातकसंघातमधिकंचोपपातकम् ॥ शिवद्रव्या पहरणादन्यत्सर्वंनिवारयेत् ॥ ७३ ॥ ब्रह्महत्यादिपापानांपुराणेषुस्मृतिष्वपि ॥ प्रायश्चित्तानिदृष्टानिनाशिवद्रव्यहारिणाम् ॥ ७४ ॥

सब दिशाओंमें मंगल होवे ॥ ७० ॥ इस प्रकार प्रदोषके समय शंकरकी आराधना करे, फिर ब्राह्मणोंको भोजन करावे और उनको दक्षिणादि देकर प्रसन्न करे ॥ ७१ ॥ संपूर्ण पापोंका नाश करनेवाली, सब दारिद्र्यको नष्ट करनेवाली, और संपूर्ण मनोवांछित वर देनेवाली शंकरकी पूजा मैंने तुमसे कही ॥ ७२ ॥ शिवद्रव्यहरणके पापको छोड़ और सब महापातक, उपपातक शिवपूजन करनेसे नष्ट होजाते हैं ॥ ७३ ॥ ब्रह्महत्या

आदि पापोंके प्रायश्चित्त पुराणों और स्मृतियोंमें देखे हैं पर शिवजीका द्रव्य हरणकरनेवालोंका कहीं प्रायश्चित्त नहीं देखा ॥ ७४ ॥ बहुत कहनेसे क्या है मैं आधे श्लोकमें कह देताहूं कि, सौ ब्रह्महत्याओंको भी शिवपूजा निवारण करदेती है॥ ७५॥ इसप्रकार कहकर फिर शांडिल्यमुनि बोले कि, हे ब्राह्मणपत्नि ! यह प्रदोषमें शिवपूजनका विधान मैंने तुमसे कथन किया, यह सब प्राणियोंको छिपाना चाहिये इसमें संदेह नहीं ॥ ७६ ॥ इन बालकोंसेभी इसी प्रकार पूजन कर अबसे एक वर्षके उपरान्त बड़ी सिद्धि प्राप्त होगी ॥ ७७ ॥ इस प्रकार शांडिल्यमुनिके वचनको सुनकर उस विप्र

बहुनात्रकिमुक्तेनश्लोकार्द्धेनब्रवीम्यहम् ॥ ब्रह्महत्याशतंवापिशिवपूजाविनाशयेत् ॥ ७५ ॥ मयाकथितमेतत्तेप्रदोषेशिवपूजनम् ॥ रहस्यंसर्वजंतूनामत्रनास्त्येवसंशयः ॥ ७६ ॥ एताभ्यामपिबालाभ्यामेवंपूजाविधीयताम् ॥ अतःसंवत्सरादेवपरांसिद्धिमवाप्स्यथ ॥ ॥ ७७ ॥ इतिशांडिल्यवचनमाकर्ण्यद्विजभामिनी ॥ ताभ्यांतुसहबालाभ्यांप्रणनाममुनेःपदम् ॥ ७८ ॥ ॥ विप्रस्त्र्युवाच ॥ ॥ अहमद्य कृतार्थास्मितवदर्शनमात्रतः ॥ एतौकुमारौभगवंस्त्वामेवशरणंगतौ ॥७९॥ एषमेतनयोब्रह्मञ्छुचिव्रतइतीरितः ॥ एषराजसुतोनाम्ना धर्मगुप्तःकृतोमया ॥८०॥ एतावहंचभगवन्भवच्चरणकिंकराः ॥ समुद्धरास्मिन्पतितान्घोरेदारिद्र्यसागरे ॥ ८१ ॥ इतिप्रपन्नांशरणं द्विजांगनामाश्वास्यवाक्यैरमृतोपमानैः ॥ उपादिदेशाथतयोःकुमारयोर्मुनिःशिवाराधनमंत्रविद्याम् ॥ ८२ ॥

पत्नीने बालकोंसमेत मुनिके चरणोंको प्रणाम किया ॥ ७८ ॥ और बोली, तुम्हारे दर्शनमात्रसे आज मैं कृतार्थ हुई, यह दोनों बालक भी तुम्हारी शरण हैं ॥ ७९ ॥ हे ब्रह्मन् ! यह जो मेरा पुत्र है इसका नाम शुचिव्रत और इस राजपुत्रका धर्मगुप्त नाम मैंने रक्खा है ॥ ८० ॥ हे भगवन् ! यह बालक और मैं आपके चरणसेवक हैं इस घोर दारिद्यरूप सागरमें गिरेहुए हमारा उद्धार करो ॥ ८१ ॥ इस प्रकार शरणमें आईहुई उस

विप्रपत्नीको अमृतके तुल्य वचनोंसे समझाकर शिवाराधनरूप मंत्रविद्याका उन दोनों बालकोंको उपदेश दिया ॥ ८२ ॥ वे तीनों शांडिल्यमुनिसे उपदेश लेकर और उनको प्रणाम करके शिवमंदिरसे अपने स्थानको गये ॥ ८३ ॥ उस दिनसे वे दोनों बालक मुनिके उपदेशसे प्रदोषमें पार्वतीपति महादेवकी पूजा करनेलगे ॥ ८४ ॥ इस प्रकार शंकरकी पूजा करतेहुए उन दोनों बालकोंको चार महीने सुखसे बीते ॥ ८५ ॥ एक समय वह ब्राह्मणपुत्र राजपुत्रके विना स्नान करनेको नदीके किनारे गया और अनेक प्रकारकी लीला करनेलगा ॥ ८६ ॥ उस बालकने लीला करते

अथोपदिष्टौमुनिनाकुमारौब्राह्मणीचसा ॥ तंप्रणम्यसमामंत्र्यजग्मुस्तेशिवमंदिरात् ॥ ८३ ॥ ततःप्रभृतितौबालौमुनिवर्योपदेशतः ॥ प्रदोषेपार्वतीशस्यपूजांचक्रतुरंजसा ॥ ८४ ॥ एवंपूजयतोर्देवंद्विजराजकुमारयोः ॥ सुखेनैवव्यतीयायतयोर्मासचतुष्टयम् ॥ ८५ ॥ कदाचिद्राजपुत्रेणविनासौद्विजनंदनः ॥ स्नातुंगतोनदीतीरेचचारबहुलीलया ॥ ८६ ॥ तत्रनिर्जरनिर्घातानिर्भिन्नेवप्रकुट्टिमे ॥ निधानकलशंस्थूलंप्रस्फुरंतंददर्शह ॥ ८७ ॥ तंदृष्ट्वासहसागत्यहर्षकौतुकविह्वलः ॥ दैवोपपन्नंमन्वानोगृहीत्वाशिरसाययौ ॥ ८८ ॥ ससंभ्रमंसमानीयानिधायकलशंबलात् ॥ निधायभवनस्यांतेमातरंसमभाषत ॥ ८९ ॥ मातर्मातरिमंपश्यप्रसादंगिरिजापतेः ॥ निधानंकुंभरूपेणदर्शितं करुणात्मना ॥ ९० ॥

करते एक स्थानमें कि, जहाँ जलके वेगसे वहाँकी मिट्टी दूर होगई है, एक चमकताहुआ निधिका कलश देखा ॥ ८७ ॥ उसको देख हर्ष और कौतुकसे विह्वल होगया और विचारा कि, शंकरकी पूजाका यह फल है, इस प्रकार शीघ्र ही उस कलशको मस्तकपर रख घर आया ॥ ८८ ॥ आश्चर्यपूर्वक ला और शिरसे बलपूर्वक उतारा तथा घरके भीतर रखकर मातासे बोला ॥ ८९ ॥ हे मातः ! इस शिवजीके प्रसादको देखो, जो कृपाकर

शंकरने निधिका कलश मुझे दिखाया है ॥ ९० ॥ आश्चर्यपूर्वक उस ब्राह्मणीने राजपुत्रको बुलाकर शिवपूजनको अधिक माना और प्रसन्नतापूर्वक अपने पुत्रसे बोली ॥ ९१ ॥ कि, हे पुत्रो ! इस कलशकी निधिको मेरी आज्ञासे आधा आधा बाँटलो ॥ ९२ ॥ इस प्रकार माताका वचन सुन ब्राह्मणपुत्र प्रसन्न हुआ और राजपुत्र शंकरार्चनमें विश्वासकरके मातासे बोला ॥ ९३ ॥ हे मातः ! तुम्हारे पुत्रके पुण्यसे यह निधि मिली है, मैं इस

अथसाविस्मितासाध्वीसमाहूयनृपात्मजम् ॥ स्वपुत्रंप्रतिनंद्याहमानयंतीशिवार्चनम् ॥ ९१ ॥ शृणुतांमेवचःपुत्रौनिधानकलशीमिमाम् ॥ समंविभज्यगृह्णीतंममशासनगौरवात् ॥ ९२ ॥ इतिमातुर्वचःश्रुत्वातुतोषद्विजनंदनः ॥ प्रत्याहराजपुत्रस्तांविस्रब्धःशंकरार्चने ॥ ९३ ॥ मातस्तवसुतस्यैवसुकृतेनसमागतम् ॥ नाहंग्रहीतुमिच्छामिविभक्तंधनसंचयम् ॥ ९४ ॥ आत्मनःसुकृताल्लब्धंस्वयमेवभुनक्त्वसौ ॥ सएवभगवानीशःकरिष्यतिकृपांमयि ॥ ९५ ॥ एवमर्चयतोःशंभुंभूयोपिपरयामुदा ॥ संवत्सरोव्यतीयायतस्मिन्नेवगृहेतयोः ॥ ९६ ॥ अथैकदाराजसूनुःसहतेनद्विजन्मना ॥ वसंतसमयेप्राप्तेविजहारवनांतरे ॥ ९७ ॥ अथदूरंगतौक्वापिवनेद्विजनृपात्मजौ ॥ गंधर्वकन्याःक्रीडंतीःशतशस्तावपश्यताम् ॥ ९८ ॥

धनको बाँटकरलेना नहीं चाहता ॥ ९४ ॥ अपने सुकृतसे प्राप्त हुए धनको यह स्वयं भोगै, वही शंकर मेरेऊपर भी कृपा करेंगे ॥ ९५ ॥ इसप्रकार अर्चना करतेहुए उन दोनोंको उस घरमें एक वर्ष बीता ॥ ९६ ॥ एक समय वह राजपुत्र ब्राह्मणपुत्रके साथ वसंत ऋतुके समय वनमें विहार करनेलगा ॥ ९७ ॥ वे दोनों (राजपुत्र और ब्राह्मणपुत्र) किसी वनमें विहार करते २ दूर निकलगये, वहाँ क्रीड़ा करतीहुई

सैकड़ों कन्याओंको देखा ॥ ९८ ॥ मनोहरशरीरवाली उन कन्याओंको क्रीडा करते देख वह ब्राह्मणपुत्र राजपुत्रसे बोला ॥ ९९ ॥ इससे आगे मत चलो आगे स्त्रियें क्रीड़ा कररही हैं, उज्वल आशयवाले विद्वज्जन स्त्रीकी समीपताको त्यागते हैं ॥ १०० ॥ कारण कि, स्त्रियें बडेयौवनकेगर्वसे मत्त होती हैं, और मनुष्यको अपनी मीठी वाणीसे वशमें करलेती हैं ॥ १०१ ॥ इसलिये अपने धर्ममें प्रीति रखनेवाला विद्वान् ब्राह्मण और विशेषकरके ब्रह्मचारी इनका संग और इनके साथ भाषण कदापि न करे ॥ १०२ ॥ अतएव मैं मृगके समान नेत्रवाली इन स्त्रियोंके क्रीडास्थानमें नहीं

ताः सर्वाश्चारुसर्वांग्योविहरंत्योमनोहरम् ॥ दृष्ट्वाद्विजात्मजोदूरादुवाचनृपनंदनम् ॥ ९९ ॥ इतःपुरोनगंतव्यंविहरंत्यग्रतःस्त्रियः ॥ स्त्रीसन्निधानंविबुधास्त्यजंतिविमलाशयाः ॥ १०० ॥ एताःकैतवकारिण्योघनयौवनदुर्मदाः ॥ मोहयंत्योजनंदृष्ट्वावाचानुनयकोविदाः ॥ १ ॥ अतः परित्यजेत्स्त्रीणांसन्निधिसहभाषणम् ॥ द्विजधर्मरतोविद्वन्ब्रह्मचारीविशेषतः ॥ २ ॥ अतोहंनोत्सहेगंतुंक्रीडास्थानंमृगीदृशाम् ॥ इत्युक्त्वाद्विजपुत्रस्तुनिवृत्तोदूरतःस्थितः ॥ ३ ॥ अथासौराजपुत्रस्तुकौतुकाविष्टमानसः ॥ तासांविहारपदवीमेकएवाभयोययौ ॥ ४ ॥ तत्रगंधर्वकन्यानांमध्येत्वेकावरानना ॥ दृष्ट्वायांतंराजपुत्रंचिंतयामासचेतसा ॥ ५ ॥ अहोकोयमुदारांगोयुवासर्वांगसुन्दरः ॥ मत्तमातंगगमनोलावण्यामृतवारिधिः ॥ ६ ॥ लीलालोलविशालाक्षोमधुरस्मितपेशलः ॥ मदनोपमरूपश्रीः सुकुमारांगलक्षणः ॥ ७ ॥

जानाचाहता यह कह वह ब्राह्मणपुत्र तो वहाँसे लौटकर दूर स्थित होगया ॥ १०३ ॥ और राजपुत्र अकेला ही निर्भय हो कौतुकसे उन गन्धर्वकन्याओंके विहार स्थानपर गया ॥ १०४ ॥ वहाँ उन कन्याओंमें एक गन्धर्वकन्या उस राजपुत्रको देखकर मनमें विचारनेलगी ॥ १०५ ॥ कि, यह सर्वांगसुन्दर और युवा कौन पुरुष मस्त हाथीके समान लावण्यरूपी अमृतका समुद्र इधरको आताहै ॥ १०६ ॥ लीलासे चलायमान हैं विशाल नेत्र

जिसके, मधुर हास्यसे उज्वल, साक्षात् कामदेवके समान कान्तिमान् अथवा सुकुमारांग लक्षणसंपन्न ॥ १०७ ॥ इस प्रकारके राजपुत्रको दूरसे देखकर आश्चर्य करनेलगी और सब सखियोंको देख उनसे बोली ॥ १०८ ॥ कि, हे सखियों ! यहाँसे थोड़ी दूर एक विचित्र वन चम्पक, अशोक, बकुल, पुन्नाग, आदि अनेक उत्तमवृक्षोंसे शोभायमान है ॥ १०९ ॥ तुम सब वहाँ जाओ और फूल बीनकर फिर यहाँ आना, तबतक मैं यहाँही स्थित हूँ ॥ ११० ॥ इस आज्ञाको मानकर सब सखियें दूसरे वनमें चलीगई; और वह कन्या वहाँ स्थित होकर राजाके पुत्रको देखनेलगी ॥ १११ ॥

इत्याश्चर्ययुताबालादूराद्दृष्ट्वानृपात्मजम् ॥ सर्वाःसखीःसमालोक्यवचनंचेदमब्रवीत् ॥ ८ ॥ इतोविदूरेहेसख्योवनमस्त्येकमुत्तमम् ॥ विचित्रचंपकाशोकपुन्नागबकुलैर्युतम् ॥ ९ ॥ तत्रगत्वावनंसर्वाःसंचीयकुसुमोत्करम् ॥ भवत्यःपुनरायांतुतावत्तिष्ठाम्यहंत्विह ॥ १० ॥ इत्यादिष्टःसखीवर्गोजगामविपिनांतरम् ॥ सापिगंधर्वजातस्थौन्यस्तदृष्टिर्नृपात्मजे ॥ ११ ॥ तांसमालोक्यतन्वंगींनवयौवनशालिनीम् ॥ बालांस्वरूपसंपत्त्यापरिभूततिलोत्तमाम् ॥ १२ ॥ राजपुत्रःसमागम्यकौतुकात्फुल्ललोचनः ॥ अवापदैवयोगेनमदनस्यशरव्यथाम् ॥ ॥ १३ ॥ गंधर्वतनयासापिप्रातायनृपसूनवे ॥ उत्थायतरसातस्मैप्रददौपल्लवासनम् ॥ १४ ॥ कृतोपचारमासीनंतमासाद्यसुमध्यमा ॥ पप्रच्छतद्रूपगुणैर्ध्वस्तधैर्याकुलेंद्रिया ॥ १५ ॥

कोमल अंगवाली, नवीन यौवनवती, और अपने स्वरूपसे तिरस्कार करदिया है तिलोत्तमा आदि अप्सराओंका जिसने ऐसी उस गन्धर्व कन्याको देख ॥ ११२ ॥ कौतुकसे प्रफुल्ल होगये हैं नेत्र जिसके ऐसा वह राजपुत्र उसके निकट आया और कामदेवके वशीभूत होगया ॥ ११३ ॥ उस गन्धर्वकन्याने प्राप्तहुए राजपुत्रके निमित्त शीघ्रतापूर्वक उठकर पत्तोंका आसन दिया ॥ ११४ ॥ उसके रूप और गुणोंसे धैर्यके नष्ट होजानेसे व्याकुल

होगई हैं इन्द्रियें जिसकी ऐसी वह पतली कमरवाली गन्धर्वकन्या निकट आकर उपचारके उपरान्त बैठेहुए राजपुत्रसे पूँछने लगी ॥ ११५ ॥ कि, हे कमलपत्राक्ष ! तुम कौन हो ? और किस देशसे यहाँ आये हो ? किसके पुत्र हो ? इसप्रकार प्रेमपूर्वक गन्धर्वकन्याके पुँछनेपर राजपुत्रने सब निवेदन किया ॥ ११६ ॥ कि, विदर्भदेशके राजाका पुत्र, माता पिता हीन हूँ, शत्रुओंने हमारा सब राज्य हरण करलिया, अब हम दूसरेके राज्यमें स्थित हैं ॥ ११७ ॥ सब निवेदन करके वह राजपुत्र उस (गन्धर्वकन्या) से पूँछने लगा, कि, हे वामोरु ! तुम कौन हो ? यहाँ तुम्हारा क्या

कस्त्वंकमलपत्राक्षकस्माद्देशादिहागतः ॥ कस्यपुत्रइतिप्रेम्णापृष्टःसर्वंन्यवेदयत् ॥ १६ ॥ विदर्भराजतनयंविध्वस्तपितृमातृकम् ॥ शत्रुभिश्चहृतस्थानमात्मानंपरराष्ट्रगम् ॥ १७ ॥ सर्वमावेद्यभूपस्तांपप्रच्छनृपनंदनः ॥ कात्वंवामोरुकिंचात्रकार्यंतेकस्यचात्मजा ॥ ॥ १८ ॥ किमवध्यायसिहृदाकिंवावक्तुमिहेच्छसि ॥ इत्युक्तासापुनःप्राहशृणुराजेंद्रसत्तम ॥ १९ ॥ आस्तेकोद्रविकोनामगंधर्वाणांकुलाग्रणीः ॥ तस्याहमस्मितनयानाम्नाचांशुमतीस्मृता ॥ १२० ॥ त्वामायांतंविलोक्याहंत्वत्संभाषणलालसा ॥ त्यक्त्वा सखीजनंसर्वमेकैवास्मिमहामते ॥ २१ ॥ सर्वसंगीतविद्यासुनमत्तोन्यास्तिकाचन ॥ ममयोगेनतुष्यंतिसर्वाअपिसुरस्त्रियः ॥ २२ ॥

कार्य है ? और किसकी तुम कन्या हो ? ॥ ११८ ॥ हृदयमें क्या ध्यान करती हो ? क्या कुछ कहनेकी इच्छा है ? इसप्रकार राजपुत्रके कहनेपर वह फिर बोली, कि, हे राजेन्द्र ! सुनो ॥ ११९ ॥ कोद्रविकनाम एक गन्धर्वोंके कुलमें गन्धर्व है, उसकी मैं कन्या हूँ और नाम मेरा अंशुमती है ॥ १२० ॥ तुम्हें आते देख तुमसे भाषण करनेकी इच्छासे हे महामते ! सब सखियोंको छोड़ अकेली रही हूँ ॥ १२१ ॥ सब संगीत विद्यामें मेरे

समान दूसरा कोई नहीं है, मेरे गानसे सब देवांगना सन्तुष्ट होती हैं ॥ १२२ ॥ सब कला जाननेवाली मैं सबके हृदयका अभिप्राय जानती हूँ, तुम्हारे मनोरथकोभी जानती हूँ कि, तुम्हारा मन मुझमें आसक्त हुआ है ॥ १२३ ॥ और दैवयोगसे मेरा चित्तभी आपपर आसक्त होरहा है, मेरी और तुम्हारी प्रीति परमात्माने की है, इसलिये हमारी तुम्हारी प्रीतिमें कभी भेद न पडैगा ॥ १२४ ॥ इसप्रकार प्रीतिपूर्वक आलाप करके उस गन्धर्वकन्याने अपनी कुचाओंका भूषण मोतियोंका हार राजपुत्रके गलेमें पहिनादिया ॥ १२५ ॥ उस अद्भुत हारको लेकर वह उसकी प्रणयसे व्याकुल होगया और बडीभारी

साहंसर्वकलाभिज्ञाज्ञातसर्वजनेंगिता ॥ तवाहमीप्सितंवेद्मिमयितेसंगतंमनः ॥ २३ ॥ तथाममापिचौत्सुक्यंदैवेनप्रतिपादितम् ॥ आवयोःस्नेहभेदोत्रनाभिभूयादितःपरम् ॥ २४ ॥ इतिसंभाष्यतेनाशुप्रेम्णागंधर्वनंदिनी ॥ मुक्ताहारंददौतस्मैस्वकुचांतरभूषणम् ॥ ॥ २५ ॥ तमादायाद्भुतंहारंसतस्याःप्रणयाकुलः ॥ गाढहर्षपरासिक्तामिदमाहनृपात्मजः ॥ २६ ॥ सत्यमुक्तंत्वयाभीरुतथाप्येकंवदाम्यहम् ॥ त्यक्तराज्यस्यनिःस्वस्यकथंमेभवसिप्रिया ॥ २७ ॥ सात्वंपितृमतीबालाविलंघ्यपितृशासनम् ॥ स्वच्छंदाचरणंकर्तुंमूढेत्वंकथमर्हसि ॥ २८ ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वातंप्रत्याहशुचिस्मिता ॥ अस्तुनामतथैवाहंकरिष्येपश्यकौतुकम् ॥ २९ ॥

खुशीसे सिंचित हुई उस गन्धर्वकन्यासे यह बोला ॥ १२६ ॥ कि, हे भीरु ! तुमने सत्य कहा, तथापि मैं एक बात कहताहूँ कि, राज्यहीन और निर्धन मेरी प्रिया तुम किसप्रकार बनोगी ॥ १२७ ॥ तुम्हारे पिता है, पिताकी आज्ञाका उल्लंघन करके किसप्रकार स्वच्छन्द आचरण करसकती हो इस कार्यमें तुम मूढता करती हो ॥ १२८ ॥ इसप्रकार राजपुत्रका वचन सुन पवित्र अर्थात् सुन्दर हाथवाली वह गन्धर्वकन्या उससे बोली, जैसा तुम

कहोगे वैसाही होगा; मैं जो कौतुक करतीहूँ उसको देखो ॥ १२९ ॥ हे कांत अब तुम अपने घरको जाओ, परसों फिर इसीस्थानपर आना, एक आवश्यक कार्य है, इसमें झूँठ मत समझना ॥ १३० ॥ इसप्रकार उससे कह और सखीजनोंको साथ लेकर सुन्दरअंगवाली वह गन्धर्वकन्या अपने स्थानको लौट आई और वह राजपुत्रभी ॥ १३१ ॥ प्रसन्नतापूर्वक अपने मित्र ब्राह्मण पुत्रके निकट जाकर सब कहने लगा और उसके साथ अपने घरको गया ॥ १३२ ॥ तीसरेदिन उसके बतायेहुए स्थानपर वे दोनों पहुँचे, वहां गन्धर्वकन्या समेत गन्धर्वको देखा ॥ १३३ ॥ उस गन्धर्वपतिने

गच्छस्वभवनंकांतपरश्वःप्रातरेवतु ॥ आगच्छपुनरत्रैवकार्यमस्तिवचनोमृषा॥१३०॥ इत्युक्त्वातंनृपसुतंसासंगतसखीजना ॥ अपाक्रमतचार्वंगीसचापिनृपनंदनः ॥ ३१ ॥ ससमभ्येत्यहर्षेणद्विजपुत्रस्यसन्निधिम् ॥ सर्वमाख्यायतेनैवसार्धंस्वभवनंययौ ॥ ३२ ॥ सतयापूर्वनिर्दिष्टंस्थानंप्राप्यनृपात्मजः ॥ गंधर्वराजमद्राक्षीत्स्वदुहित्रासमन्वितम् ॥ ३३ ॥ सगंधर्वपतिःप्राप्तावभिनंद्यकुमारकौ ॥ उपवेश्यासनेरम्येराजपुत्रमभाषत ॥ ३४ ॥ ॥ गन्धर्वउवाच ॥ राजेंद्रपुत्रपूर्वेद्युःकैलासंगतवानहम् ॥ तत्रापश्यंमहादेवंपार्वत्यासहितंप्रभुम् ॥ ३५ ॥ आहूयमांसदेवेशः सर्वेषांत्रिदिवौकसाम् ॥ सन्निधावाहभगवान्करुणामृतवारिधिः ॥ ३६ ॥ धर्मगुप्ताह्वयःकश्चिद्राजपुत्रोस्तिभूतले ॥ अकिंचनोभ्रष्टराज्योहतबंधुश्चशत्रुभिः ॥ ३७ ॥

आयेहुए उन दोनों कुमारोंको प्रसन्नतापूर्वक मनोहर आसनपर बिठाकर राजपुत्रसे बोला ॥ १३४ ॥ गन्धर्व बोला कि, हे राजेन्द्रपुत्र ! आजसे पहिले दिन मैं कैलासपर्वतपर गयाथा, वहाँ पार्वतीसमेत महादेवको देखा ॥ १३५ ॥ उन करुणा और अमृतके समुद्र देवेश महादेवजीने सब देवताओंके सामने मुझे बुलाकर कहा ॥ १३६ ॥ कि, सम्पूर्ण राज्यसे भ्रष्ट, बन्धुरहित और शत्रुओंसे हत धर्मगुप्तनामक कोई राजपुत्र पृथ्वीपर है ॥ १३७ ॥

मुझे प्राप्त हुए हैं ॥ १३८ ॥ हे गन्धर्वसत्तम !
वह गुरुके वाक्यसे सदा मेरी पूजामें तत्पर रहता है, आज उसके सब पितर उसके पूजनके प्रभावसे
तुमभी उसकी सहायता करो, तब यह शत्रुओंको नष्ट करके अपने राज्यपर स्थित होगा ॥ १३९ ॥ इसप्रकार शिवजीकी आज्ञासे मैं अपने स्थानपर
आया हूं और इस अपनी कन्यासे तुम्हारा सब वृत्तांत सुन चुका हूँ ॥१४०॥ यह सब करुणानिधान महादेवजीका मनोरथ जान इस कन्याको साथ ले

तस्यत्वंमपिसाहाय्यंकुरुगंधर्वसत्तम ॥ अथासौ
सबालोगुरुवाक्येनमदर्च्चायांरतःसदा ॥ अद्यतत्पितरःसर्वेमांप्राप्तास्तत्प्रभावतः ॥ ३८ ॥ अनयामद्दुहित्राचबहुशोभ्यर्थितस्तथा ॥ १४० ॥
निजराज्यस्थोहतशत्रुर्भविष्यति ॥ ३९ ॥ इत्याज्ञप्तोमहेशेनसंप्राप्तोनिजमंदिरम् ॥ अतएनांप्रयच्छामिकन्यामंशुमतींतव ॥
ज्ञात्वेदंसकलंशंभोर्नियोगंकरुणात्मनः ॥ आदायेमांदुहितरंप्राप्तोस्मीतिवनांतरम् ॥ ४१ ॥ दशवर्षसहस्रान्तेगन्तासिगिरिशा
हत्वाशत्रून्स्वराष्ट्रेत्वांस्थापयामिशिवाज्ञया ॥ ४२ ॥ तस्मिन्पुरेत्वमनयाभुक्त्वाभोगान्यथेप्सितान् ॥ इतिगन्धर्वराजस्तमाभाष्यनृ
लयम् ॥ ४३ ॥ तत्रापिममकन्येयंत्वामेवप्रतिपत्स्यते ॥ अनेनैवस्वदेहेनदिव्येनशिवसन्निधौ ॥ ४४ ॥
पनन्दनम् ॥ तस्मिन्वनेस्वदुहितुःपाणिग्रहमकारयत् ॥ ४५ ॥

इस वनमें आया हूँ ॥१४१॥ अब इस अंशुमती नाम अपनी कन्याको तुम्हारे निमित्त देता हूँ और शिवजीकी आज्ञासे शत्रुओंका नाशकर तुझको तेरे
राज्यपर स्थित करूँगा ॥ १४२ ॥ उस नगरमें इस कन्याके साथ अनेक मनइच्छित भोगोंको भोगकर दशहजार वर्षके उपरांत इसी शरीरसमेत शिवलोकमें
जायगा ॥ १४३ ॥ वहाँ मेरी यह कन्याभी तुझे प्राप्त होगी, इसी दिव्य शरीरसे तुम दोनों शिवके निकट निवास करोगे ॥१४४॥ इसप्रकार राजपुत्रसे

कहकर उस गन्धर्वपतिने उसी वनमें राजपुत्रके साथ अपनी कन्याका विवाह करदिया ॥ १४५ ॥ और बहुतसे रत्नसुन्दर मोतियोंके हार, चन्द्रमाके समान कान्तियुक्त चूड़ामणि ॥ १४६ ॥ और भाग्यसे अनेक प्रकारके अलंकार, वस्त्र, सुवर्णके पात्र, दशहजारहाथी, दशलाख घोड़े ॥ १४७ ॥ सुवर्णके हज़ार रथ दहेजमें दिये, और एक उत्तम रथ, इन्द्रायुधके समान धनुष ॥ १४८ ॥ हज़ार अस्त्र, अक्षयबाणवाले दो तरकस, अभेद्य कवच शत्रुओंको नष्ट करनेवाली सुवर्णकी एक शक्ति ॥ १४९ ॥ अपनी पुत्रीकी सेवाके निमित्त पाँच हज़ार दासी, यह सब दहेज और अनेकप्रकारके धन

पारिबर्हमदात्तस्मैरत्नभारान्महोज्ज्वलान् ॥ चूडामणिंचन्द्रनिभंमुक्ताहारांश्चभासुरान् ॥४६॥ दिष्ट्यालंकारवासांसिकार्त्तस्वरपरिच्छदान् ॥ गजानामयुतंभूयोनियुतंनीलवाजिनाम् ॥४७॥ स्यन्दनानांसहस्राणिसौवर्णानिमहांतिच ॥ पुनरेकंरथंदिव्यंधनुश्चन्द्रायुधोपमम् ॥ ४८ ॥ अस्त्राणांचसहस्राणितूणीचाक्षय्यसायकौ ॥ अभेद्यंवर्मसौवर्णशक्तिंचरिपुमर्दिनीम् ॥ ४९ ॥ दुहितुःपरिचर्यार्थंदासीपञ्चसहस्रकम् ॥ ददौप्रीतमनास्तस्मैधनानिविविधानिच ॥ ५० ॥ गन्धर्वसैन्यमत्युग्रंचतुरंगसमन्वितम् ॥ पुनश्चतत्सहायार्थंगन्धर्वाधिपतिर्ददौ ॥ ५१ ॥ इत्थंराजेन्द्रतनयःसंप्राप्तःश्रियमुत्तमाम् ॥ अभीष्टजायासहितोमुमुदेनिजसंपदा ॥ ५२ ॥ कारयित्वास्वदुहितुर्विवाहंसमयोचितम् ॥ ययौविमानमारुह्यगन्धर्वाधिपतिर्दिवम् ॥ ५३ ॥ धर्मगुप्तःकृतोद्वाहःसहगन्धर्वसेनया ॥ पुनःस्वनगरंप्राप्यजघानरिपुवाहिनीम् ॥ ५४ ॥

उस गन्धर्वपतिने प्रसन्नतापूर्वक राजपुत्रके निमित्त दिये ॥ १५० ॥ फिर राजपुत्रकी सहायताके निमित्त उसने गन्धर्वोंकी बड़ी उग्र चतुरंगिणी सेना दी ॥ १५१ ॥ इसप्रकार वह राजेन्द्रपुत्र उत्तम लक्ष्मी और मनइच्छित स्त्रीको पाकर बहुत प्रसन्न हुआ ॥ १५२ ॥ समयके अनुसार अपनी कन्याके विवाहको कराकर वह गन्धर्वपति विमानमें चढ़कर स्वर्गलोकको चलागया ॥ १५३ ॥ विवाह करके वह धर्मगुप्तभी गन्धर्वसेनासमेत फिर अपने नगर

में जाकर शत्रुकी सेनाको मारने लगा ॥ १५४ ॥ और गन्धर्वसेनाकी सहायतासे दुर्मर्षण नाम शत्रुको नष्ट कर और भी सम्पूर्ण शत्रुओंको नष्ट कर अपने पुरमें स्थित हुआ ॥ ५५ ॥ फिर विद्वान् ब्राह्मण और मंत्रियोंद्वारा अभिषेक किया हुआ रत्नसिंहासनपर स्थित होकर अकंटक राज्य करने लगा ॥ ५६ ॥ जिस ब्राह्मणपत्नीने पुत्रके तुल्य उसका पोषण कियाथा, वह उसकी माता हुई, ब्राह्मणपुत्र उसका भ्राता हुआ ॥ ५७ ॥ गन्धर्वकन्या जाया हुई और वह विदर्भदेशका राजा हुआ, पार्वतीपति महादेवजीकी आराधना करनेसे धर्मगुप्त राजा हुआ ॥ ५८ ॥ इसप्रकार और

दुर्धर्षणंरणेज्ञात्वाशक्त्यागन्धर्वसेनया ॥ निःशेषितारातिबलःप्रविवेशनिजंपुरम् ॥ ५५ ॥ ततोभिषिक्तःसचिवैर्ब्राह्मणैश्चमहोत्तमैः ॥ रत्नसिंहासनारूढश्चक्रेराज्यमकण्टकम् ॥ ५६ ॥ याविप्रवनितापूर्वंतमपुष्णात्स्वपुत्रवत् ॥ सैवमाताभवत्तस्यसभ्राताद्विजनन्दनः ॥ ५७ ॥ गन्धर्वतनयाजायाविदर्भनगरेश्वरः ॥ आराध्यदेवंगिरिशंधर्मगुप्तोनृपोभवत् ॥ ५८ ॥ एवमन्येसमाराध्यप्रदोषेगिरिजापतिम् ॥ लभंतेभीप्सितान्कामान्देहान्तेतुपरांगतिम् ॥ ५९ ॥ ॥ सूत उवाच ॥ ॥ एतन्महाव्रतंपुण्यंप्रदोषेशंकरार्चनम् ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणांयदेतत्साधनंपरम् ॥ ६० ॥ यएतच्छृणुयात्पुण्यंमाहात्म्यपरमाद्भुतम् ॥ प्रदोषेशिवपूजांतेकथयेद्वासमाहितः ॥ ६१ ॥ भवेन्नतस्यदारिद्र्यंजन्मान्तरशतष्वपि ॥ ज्ञानैश्वर्यसमायुक्तःसोन्तेशिवपुरंव्रजेत् ॥ १६२ ॥

प्राणीभी प्रदोषमें शंकरकी आराधना करनेसे मनवांछित कामनाओंको पाते हैं और अन्तमें शिवलोककी प्राप्ति होती है ॥ ५९ ॥ फिर सूतजी शौनकादि ऋषियोंसे कहने लगे कि, प्रदोषमें परमपवित्र व्रतरूप शंकरका पूजन करनेसे धर्म, अर्थ, काम और मोक्षकी प्राप्ति होती है ॥ १६० ॥ जो इस पवित्र और अद्भुत माहात्म्यको सुनता वा प्रदोषमें शिवपूजाके अन्तमें समाहित चित्तसे इसका कथन करताहै ॥ ६१ ॥ उसको सौजन्मतकभी

दरिद्रता नहीं होती और वह ज्ञान, ऐश्वर्य युक्त होकर अन्तमें शिवलोकको जाता है ॥ ६२ ॥ जो पुरुष इस दुर्लभ मनुष्य शरीरको पाकर भक्तिपूर्वक परमेश्वरके चरणकमलकी पूजा करते हैं, वेही धन्य हैं और वेही अपने पुण्यसे त्रिलोकीको जीतते हैं, उन्हींके चरणोंकी रज भुवनको पवित्र करती है ॥ ६३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां प्रदोषमहिमवर्णनं नाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

अथाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ सूतजी बोले कि. हे शौनकादिमुनीश्वरो ! नित्य आनन्दमय, शान्त, निर्विकल्प, निरामय, अनादि, अनन्त शिवतत्त्वको

येप्राप्यदुर्लभतरंमनुजाःशरीरंकुर्वंतिहंत परमेश्वरपादपूजाम् ॥ धन्यास्तएवनिजपुण्यजितत्रिलोकास्तेषांपदांबुजरजोभुवनं पुनाति॥६३॥ ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे प्रदोषमहिमवर्णनंनामसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ नित्यानन्दमयंशांतंनिर्विकल्पंनिरामयम् ॥ शिवतत्त्वमनाद्यंतंयेविदुस्तेपरंगताः ॥ १ ॥ विरक्ताःकामभोगेभ्योयेप्रकुर्वंत्यहैतुकीम् ॥ भक्तिपरांशिवेधीरास्तेषांमुक्तिर्न संशयः ॥ २ ॥ विषयानभिसंधाययेकुर्वंतिशिवेरतिम् ॥ विषयैर्नाभिभूयंतेभुंजतेतत्फलान्यपि ॥ ३ ॥ येनकेनापिभावेनशिवभक्तियुतोनरः ॥ नविनश्यातियात्येवकालेनातिपरांगतिम् ॥ ४ ॥ आरुरुक्षुःपरंस्थानंविषयासक्तमानसः ॥ पूजयेत्कर्मणाशंभुंभोगांतेशिवमाप्नुयात् ॥ ५ ॥

जो जानते हैं, वे ही संसारसागरसे पार होते हैं ॥ १ ॥ संसारके सुखोंको छोड़ जो धीरपुरुष शंकरमें निष्कामभक्ति करते हैं उनकी निःसन्देह मुक्ति होती है ॥ २ ॥ विषयभोगकी इच्छासे जो प्राणी शंकरमें प्रीति करते हैं वे विषय करतेहुए भी विषयोंका फल नहीं भोगते ॥ ३ ॥ चाहे जिसभावसे मनुष्य शिवभक्ति करे, वह समयपर उसी फलको पाकर अन्तमें मुक्तिका अधिकारी होता है और नष्ट नहीं होता ॥ ४ ॥ विषयासक्त

पुरुष मुक्तिकी इच्छासे कर्म करके शंकरकी पूजा करनेसे भोगोंके अन्तमें शिवको प्राप्त होता है ॥ ५ ॥ कोई पुरुष प्रायः विषयवासनाओंको त्यागनेमें असमर्थ होते हैं, इसलिये कर्ममयी पूजा शरीरधारियोंको कामधेनुरूप है ॥ ६ ॥ मायासे व्याप्त इस संसारमें बहुत कालतक सुख भोगकर जो देहान्त होनेपर मुक्ति चाहते हैं, उनके निमित्त यह धर्म कहा है ॥ ७ ॥ इस संसारमें शिवपूजा सदा स्वर्ग और मोक्षका हेतु है, विशेषकरके सोमवारको और सोमप्रदोषमें पूजनका तो कथनही क्या है, अर्थात् वह बहुत फल देता है ॥ ८ ॥ केवल सोमवारकोभी जो प्राणी शिवार्चन करते

अशक्तःकश्चिदुत्स्रष्टुंप्रायोविषयवासनाम् ॥ अतःकर्ममयीपूजाकामधेनुःशरीरिणाम् ॥ ६ ॥ मायामयेपिसंसारेयेविहृत्यचिरंसुखम् ॥ मुक्तिमिच्छंतिदेहांतेतेषांधर्मोयमीरितः ॥ ७ ॥ शिवपूजासदालोकेहेतुःस्वर्गापवर्गयोः ॥ सोमवारेविशेषेणप्रदोषादिगुणान्विते ॥ ८ ॥ केवलेनापियेकुर्युःसोमवारेशिवार्चनम् ॥ नतेषांविद्यतेकिंचिदिहामुत्रचदुर्लभम् ॥ ९ ॥ उपोषितःशुचिर्भूत्वासोमवारेजितेंद्रियः ॥ वैदिकैर्लौकिकैर्वापिविधिवत्पूजयेच्छिवम् ॥ १० ॥ ब्रह्मचारीगृहस्थोवाकन्याचापिसभर्तृका ॥ विभर्तृकावासंपूज्यलभतेवरमीप्सितम् ॥ ११ ॥ अत्रापिकथयिष्यामिकथांश्रोतुंमनोहराम् ॥ श्रुत्वामुक्तिंप्रयांत्येवभक्तिर्भवतिशांभवी ॥ १२ ॥

हैं, उनको इसलोक और परलोकमें कुछ दुर्लभ नहीं ॥ ९ ॥ सोमवारको व्रत करे, पवित्र और जितेन्द्रिय होकर वैदिक वा पौराणिक मंत्रोंसे विधिपूर्वक शंकरका पूजन करे ॥ १० ॥ ब्रह्मचारी, गृहस्थ, कन्या, सभर्तृका वा विधवाभी शंकरका पूजन करके मनवांछित वरको पाते हैं ॥ ॥ ११ ॥ इस विषयमें सुन मैं मनोहर एक कथाको कहता हूँ, जिसके सुननेसे मनुष्य मुक्ति पावेंगे और शिवजीकी भक्ति होगी ॥ १२ ॥

आर्यावर्तदेशमें बडा धर्मात्मा, दुष्टोंको दण्ड देनेवाला राजाओंमें श्रेष्ठ, धर्मात्माओंमें अग्रणी ॥ १३ ॥ धर्मकी मर्यादावोंका रक्षा करनेवाला, कुमार्गमें जानेवालोंकी शासना करनेवाला, सम्पूर्ण यज्ञोंका यजन करनेवाला, शरण आयेहुओंकी रक्षा करनेवाला ॥ १४ ॥ सम्पूर्ण पुण्योंका करनेवाला, सम्पूर्ण सम्पत्तियोंका दान करनेवाला, शत्रुसमूहको जीतनेवाला और शिव, विष्णुका परमभक्त चित्रवर्मा नाम एक राजा विख्यात था ॥ १५ ॥ उसके अनन्त रानी थीं सबमें पुत्रकी इच्छा की पर पुत्र किसीके उत्पन्न न हुआ, बहुत समयतक प्रार्थना करनेपर एक सुन्दर मुखवाली कन्या

आर्य्यावर्तेनृपःकश्चिदासीद्धर्मभृतांवरः ॥ चित्रवर्मेतिविख्यातोधर्मराजोदुरात्मनाम् ॥ १३ ॥ सगोप्ताधर्मसेतूनांशास्तादुष्पथगामिनाम् ॥ यष्टासमस्तयज्ञानांत्राताशरणमिच्छताम् ॥ १४ ॥ कर्त्तासकलपुण्यानांदातासकलसंपदाम् ॥ जेतासपत्नवृंदानांभक्तःशिवमुकुंदयोः ॥ ॥ १५ ॥ सोनुकूलासुपत्नीषुलब्ध्वापुत्रान्महौजसः ॥ चिरेणप्रार्थितांलेभेकन्यामेकांवराननाम् ॥ १६ ॥ सलब्ध्वातनयांदिष्ट्याहिमवानिवपार्वतीम् ॥ आत्मानंदेवसदृशंमेनेपूर्णमनोरथम् ॥ १७ ॥ सएकदाज्ञातकलत्रलक्षणानाहूयसाधून्द्विजमुख्यवृंदान् ॥ कुतूहलेनाभिनिविष्टचेताःपप्रच्छकन्याजननेफलानि ॥ १८ ॥ अथतत्राब्रवीदेकोबहुज्ञोद्विजसत्तमः ॥ एषासीमंतिनीनाम्नाकन्यावतमहीपते ॥१९॥

उत्पन्न हुई ॥ १६ ॥ भाग्यसे वह राजा हिमालयकी पार्वतीके समान उस कन्याको पाकर अपनी आत्माको देवके समान मनोरथको मानता हुआ ॥ १७ ॥ कन्याके उत्पन्न होनेसे सब प्रसन्न हुए, एक समय स्त्रीलिक्षण जाननेवाले श्रेष्ठ ब्राह्मण अर्थात् ज्योतिष और सामुद्रिक शास्त्र जाननेवालोंको आदरपूर्वक बुलाकर राजाने अपनी कन्याके शुभ और अशुभफल उनसे पूँछे ॥ १८ ॥ तहाँ एक बहुत विद्वान् ब्राह्मण बोला कि,

हे राजन् ! सीमंतिनी नामवाली यह तेरी कन्या ॥ १९ ॥ पार्वतीके तुल्य मंगलवती, दमयन्तीके समान रूपवती सरस्वतीके समान सब कलाओंमें चतुर, गुणोंमें लक्ष्मीके समान ॥ २० ॥ देवमाताके समान सन्ततिवाली, पातिव्रत धारण करनेमें जानकीके समान, कान्तिमें सूर्य्यकी प्रभाके समान, चन्द्रिकाकी समान मनोहर ॥ २१ ॥ होगी और दश हजार वर्षतक अपने पतिके साथ आनन्द भोगेगी तथा आठ पुत्रोंको उत्पन्न करके परमसुखी होगी ॥ २२ ॥ इसप्रकार उस ब्राह्मणके कहनेपर राजाने उसका बहुत धनसे सत्कार किया, और उसकी वाणीरूपी अमृत सेवासे बहुत प्रसन्न

उमेवमांगल्यवतीदमयंतीवरूपिणी ॥ भारतीवकलाभिज्ञालक्ष्मीरिवमहागुणा ॥ २० ॥ सुप्रजादेवमातेवजानकीवधृतव्रता ॥ रविप्रभेवसत्कांतिश्चंद्रिकेवमनोरमा ॥ २१ ॥ दशवर्षसहस्राणिसहभर्त्राप्रमोदते ॥ प्रसूयतनयानष्टौपरंसुखमवाप्स्यति ॥ २२ ॥ इत्युक्तवंतंनृपतिर्धनैःसंपूज्यतंद्विजम् ॥ अवापपरमांप्रीतिंतद्वागमृतसेवया ॥ २३ ॥ अथान्योपिद्विजःप्राहधैर्यवानमितद्युतिः ॥ एषाचतुर्दशेवर्षेवैधव्यंप्रतिपत्स्यति ॥ २४ ॥ इत्याकर्ण्यवचस्तस्यवज्रनिर्घातनिष्ठुरम् ॥ मुहूर्तमभवद्राजाचिंताव्याकुलमानसः ॥ २५ ॥ अथसर्वान्समुत्सृज्यब्राह्मणान्ब्रह्मवत्सलः ॥ सर्वंदैवकृतंमत्वानिश्चितःपार्थिवोभवत् ॥ २६ ॥

हुआ ॥२३॥ इसके उपरान्त धैर्यवान् और बहुत कांतिवाला एक ब्राह्मण राजासे बोला कि, हे राजन् ! यह तेरी कन्या चौदहवें वर्षमें विधवा होजायगी, और सब ठीक है ॥ २४ ॥ इसप्रकार वज्र गिरनेके समान उसके निष्ठुर वचन सुनकर राजा मूहूर्त्तमात्र चिन्तासे व्याकुल होगया ॥ २५ ॥ और सब ब्राह्मणोंको बिदाकर उस ब्रह्मवत्सलने विचारा कि यह जो कुछ होता है, सब भाग्यसे ही होता है, ऐसा विचार उसने अपने मनको स्थिर कर

लिया ॥ २६ ॥ वह सीमन्तिनी नाम कन्याभी कुछ कालके उपरान्त तरुणावस्थाको प्राप्त हुई और चौदहवें वर्षमें अपने वैधव्यको सखीजनोंसे सुनकर ॥ २७ ॥ बहुत दुःख माना और चिन्ता करनेलगी, तथा याज्ञवल्क्यमुनिकी स्त्री मैत्रेयीसे जाकर पूँछा ॥ २८ ॥ कि, हे मातः ! भयसे व्याकुल हुई मैं तुम्हारे चरणकमलोंमें प्राप्त हुई हूँ ऐसा उपाय बताओ कि जिससे मैं विधवा न होऊँ और मेरा सौभाग्य बढे ॥ २९ ॥ इस प्रकार शरण आई

सापिसीमंतिनीबालाक्रमेणगतशैशवा ॥ वैधव्यमात्मनोभाविशुश्रावात्मसखीमुखात् ॥ २७ ॥ परंनिर्वेदमापन्नाचिंतयामासबालिका ॥ याज्ञवल्क्यमुनेःपत्नींमैत्रेयींपर्यपृच्छत ॥ २८ ॥ मातस्त्वच्चरणांभोजंप्रपन्नास्मिभयाकुला ॥ सौभाग्यवर्धनंकर्ममशासितुमर्हसि ॥२९॥ इतिप्रपन्नांनृपतेः कन्यांप्राहमुनेःसती ॥ शरणंव्रजतन्वंगिपार्वतींशिवसंयुताम् ॥ ३० ॥ सोमवारेशिवंगौरींपूजयस्वसमाहिता ॥ उपोषितावासुस्नाताविरजाम्बरधारिणी ॥ ३१ ॥ यतवाङ्निश्चलमनाःपूजांकृत्वायथोचिताम् ॥ ब्राह्मणान्भोजयित्वाथशिवंसम्यक्प्रसादय ॥ ॥ ३२ ॥ पापक्षयोभिषेकेणसाम्राज्यंपीठपूजनात् ॥ सौभाग्यमखिलंसौख्यंगंधमाल्याक्षतार्पणात् ॥ ३३ ॥

हुई कन्यासे मैत्रेयी बोली कि, हे तन्वंगि ! तू शिव, पार्वतीकी शरण हो ॥ ३० ॥ सोमवारको उपवास कर स्नानके उपरान्त स्वच्छवस्त्र धारण करके शिव पार्वतीकी पूजाकर ॥ ३१ ॥ मनवाणीसे नियमपूर्वक यथाविधिसे पूजा करके ब्राह्मणोंको भोजन करा और भलीप्रकार शंकरको प्रसन्न कर ॥ ३२ ॥ शंकरका अभिषेक करनेसे पापक्षय होता है और पीठपूजासे राज्य मिलता है, गन्धमाला और अक्षत चढानेसे सौभाग्य और सम्पूर्ण

सुख मिलता है, ॥ ३३ ॥ धूपदानसे शरीरमें सुगंधि, दीपदानसे कान्ति, नैवेद्यदानसे बडेभोग मिलते हैं और ताम्बूल निवेदन करनेसे लक्ष्मी मिलती है ॥ ३४ ॥ नमस्कार करनेसे धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष मिलती है, जप करनेसे अणिमाआदि आठ सिद्धियें मिलती हैं ॥ ३५ ॥ होम करनेसे सर्व कामनाएँ सिद्ध होती हैं अर्थात् खजाने बढते हैं ब्राह्मण भोजन करानेसे सब देवता सन्तुष्ट होजाते हैं ॥ ३६ ॥ हे कन्या ! इसप्रकार

धूपदानेनसौगंध्यंकांतिर्दीपप्रदानतः ॥ नैवेद्यैश्चमहाभोगोलक्ष्मीस्तांबूलदानतः ॥ ३४ ॥ धर्मार्थकाममोक्षाश्चनमस्कारप्रदानतः ॥ अष्टै श्वर्यादिसिद्धीनांजपएवहिकारणम् ॥ ३५ ॥ होमेनसर्वकामानांसमृद्धिरुपजायते ॥ सर्वेषामेवदेवानांतुष्टिःसंयमिभोजनात् ॥ ३६ ॥ शिव इत्थमाराधयशिवंसोमवारेशिवामापि ॥ अत्यापदमपिप्राप्तानिस्तीर्णाभिभवाभवे ॥ ३७ ॥ घोराद्धोरंप्रपन्नापिमहाक्लेशंभयानकम् ॥ शिव पूजाप्रभावेणतारिष्यसिमहद्भयम् ॥ ३८ ॥ इत्थंसीमंतिनींसम्यगनुशास्यपुनःसती ॥ ययौसापिवरारोहाराजपुत्रीतथाकरोत् ॥ ३९ ॥ दमयंत्यांनलस्यासीदिंद्रसेनाभिधःसुतः ॥ तस्यचंद्रांगदोनामपुत्रोभूच्चंद्रसन्निभः ॥ ४० ॥ चित्रवर्मानृपश्रेष्ठस्तमाहूयनृपात्मजम् ॥ कन्यां सीमंतिनींतस्मैप्रायच्छद्गुर्वनुज्ञया ॥ ४१ ॥

सोमबारको तूभी पार्वतीकी आराधना कर, इस आपत्तिमें पडीहुई भी तू भयसे छूटजायगी ॥ ३७ ॥ घोरसे घोर महाक्लेशित हुई तू शिवपूजाके प्रभावसे भयसे छूटजायगी ॥ ३८ ॥ इसप्रकार उस सीमंतिनीको शिवव्रतका उपदेश देकर मैत्रेयी तो चलीगई और उसके कथनानुसार उसने वैसाही किया ॥ ३९ ॥ राजा नलका पुत्र इंद्रसेन था, उसका पुत्र चंद्रमाके समान कांतिवाला चंद्रांगद था ॥ ४० ॥ इस अवसरमें चित्रवर्माने विचारा कि, कन्या विवाहके योग्य हुई, यह विचार

चित्रवर्माने नलके पौत्र (पोते) और इन्द्रसेनके पुत्र चन्द्रांगदको बुलाकर गुरुजनोंकी आज्ञासे अपनी पुत्रीका विवाह चन्द्रांगदके साथ करदिया॥ ४१॥ वहाँ उसके विवाहका बड़ा उत्सव हुआ, कि सम्पूर्ण राजा महाराजा इकट्ठे हुए ॥ ४२ ॥ समयानुसार उसके साथ विवाह करके चन्द्रांगदने कुछ महीने श्वसुरालय (सुसराल) में ही बिताये ॥ ४३ ॥ एक समय वह बलवान् राजपुत्र अपने मित्रोंको साथ ले यमुनापर विहार करनेके निमित्त गया और खेलसे मित्रोंसमेत नौकापर चढ़ा ॥ ४४ ॥ जब नौका बीचमें आई तब राजपुत्रकी प्रारब्धसे पवनका वेग अधिक होनेके कारण मल्लाहों और

सोभून्महोत्सवस्तत्रतस्याउद्वाहकर्मणि ॥ यत्रसर्वमहीपानांसमवायोमहानभूत् ॥ ४२ ॥ तस्याःपाणिग्रहंकालेकृत्वाचंद्रांगदःकृती ॥ उवा सकतिचिन्मासांस्तत्रैवश्वशुरालये ॥ ४३ ॥ एकदायमुनांतर्तुंसराजतनयोबली ॥ आरुरोहतरिंकैश्चिद्वयस्यैःसहलीलया ॥ ४४ ॥ तस्मिंस्तरतिकालिंदींराजपुत्रेविधेर्वशात् ॥ ममज्जसहकैवर्तैरावर्त्ताभिर्हतातरी ॥ ४५ ॥ हाहेतिशब्दःसुमहानासीत्तस्यास्तटद्वये॥ पश्यतां सर्वसैन्यानांप्रलापोदिवमस्पृशत् ॥ ४६ ॥ मज्जंतोमक्रिरेकेचित्केचिद्ग्राहोदरंगताः ॥ राजपुत्रादयःकेचिन्नादृश्यंतमहाजले ॥ ४७ ॥ तद्वचःश्रुत्यराजापिचित्रवर्मातिविह्वलः ॥ यमुनायास्तटंप्राप्याविचेष्टःसमजायत ॥ ४८ ॥

मित्रोंसमेत वह नौका जलमें डूब गई ॥ ४५ ॥ यमुनाके दोनों तटोंपर महा हाहाकार शब्द होने लगा, देखते हुए सब सैनिकोंका प्रलाप दिवलोकमें चलागया ॥ ४६ ॥ कोई तो डूबकर मरगये और किन्हींको नाकोंने भक्षण करलिया तथा कितनोंका वृत्तान्तभी विदित नहीं हुआ कि कहाँ गये और क्या हुए ॥४७॥ इस हाहाकारको सुन चित्रवर्माभी बहुत व्याकुल हुआ और यमुनाके तटपर आकर उसकी सब चेष्टा नष्ट होगई॥४८॥

जब राजपत्नियोंमें सुना तो वेभी मूर्छितहो पृथ्वीपर गिरपडी, वह सीमन्तिनी नाम उसकी स्त्रीभी शोकसे व्याकुल हो मूर्च्छासे पृथ्वीपर गिरपड़ी ॥ ४९ ॥ तथा अन्य मुख्यमन्त्री, नायक और पुरोहित आदिभी शोकसे विह्वल हो शिर पीट पीटकर विलाप करने लगे ॥ ५० ॥ जब इन्द्रसेनने पुत्रका मरण सुना तब वह भी स्त्रियों समेत अज्ञानी हो पृथिवीपर गिरपड़ा और विलाप करनेलगा ॥ ५१ ॥ उसके मन्त्री, पौत्र और उसदेशके निवासी सब आबालवृद्ध स्त्रीपुरुष शोकसे व्याकुल हो विलाप करने लगे ॥ ५२ ॥ शोकातुर हो कोई तो छाती और कोई शिर पीट पीट कर विलाप करने लगे

श्रुत्वाथराजपत्न्यश्चबभूवुर्गतचेतनाः ॥ साचसीमंतिनीश्रुत्वापपातभुविमूर्च्छिता ॥ ४९ ॥ तथान्येमंत्रिमुख्याश्चनायकाः सपुरोहिताः ॥ विह्वलाःशोकसंतप्ताविलेपुर्मुक्तमूर्धजाः ॥ ५० ॥ इंद्रसेनोपिराजेंद्रः पुत्रवार्त्तांसुदुःखितः ॥ आकर्ण्यसहपत्नीभिर्नष्टसंज्ञःपपातह ॥५१॥ तन्मंत्रिणश्चतत्पौरास्तथातद्देशवासिनः ॥ आबालवृद्धवनिताश्चुक्रुशुःशोकविह्वलाः॥ ५२ ॥ शोकात्केचिदुरोजघ्नुःशिरोजघ्नुश्चकेचन ॥ हाराजपुत्रहाजातक्कासिक्कासीतिबभ्रमुः ॥ ५३ ॥ एवंशोकाकुलंदीनमिंद्रसेनमहीपतेः ॥ नगरंसहसाक्षुब्धंचित्रवर्मपुरंतथा ॥ ५४ ॥ अथवृद्धैःसमाश्वस्तश्चित्रवर्मामहीपतिः ॥ शनैर्नगरमागत्यसांत्वयामासचात्मजाम् ॥ ५५ ॥ सराजांभसिमग्नस्यजामातुस्तस्यबांधवैः॥ आगतैःकारयामाससाकल्याद्यौर्ध्वदैहिकम् ॥ ५६ ॥

कि हे राजपुत्र ! हम मन्द भागियोंको छोड़ तुम कहाँ गये ॥ ५३ ॥ इस प्रकार इन्द्रसेन और चित्रवर्माका राज्य महाशोकाकुल, दीन और सहसा क्षुभित होगया ॥ ५४ ॥ फिर कुछ समयके उपरान्त वृद्धजनोंके समझानेपर चित्रवर्मा राजा शनैः शनैः नगरमें आया और अपनी कन्याको समझाने लगा ॥ ५५ ॥ जलमें डूबेहुए अपने जामाता (जमाई) की आये हुए बांधवोंसे अन्त्येष्टिकर्मद्वारा क्रिया कराई ॥ ५६ ॥

उस सीमन्तिनीने पतिके साथ सती होनेकी इच्छा की, किन्तु स्नेहसे पिताने निषेध किया, निषेधके कारण वह विधवा ही रही ॥ ५७ ॥ मुनिपत्नीने जा सोमवारके सुन्दर व्रतका उपदेश किया था, वह विधवा होनेपरभी उसने न त्यागा ॥ ५८ ॥ इसप्रकार चौदहवें वर्षमें इस दारुण दुःखको प्राप्त होकरभी शंकरके चरणकमलोंकी पूजा करते उसको तीन वर्ष बीते ॥ ५९ ॥ और वहाँ पुत्रशोकसे व्याकुल उन्मत्तके समान, इन्द्रसेन राजाका उसके बन्धुओंने बलपूर्वक सारा राज्य हरण करलिया ॥ ६० ॥ शूर बांधवोंद्वारा राज्यसिंहासन हरण होनेपर वह

साचसीमंतिनीसाध्वीभर्तृलोकमतिःसती ॥ पित्रानिषिद्धस्नेहेनवैधव्यंप्रत्यपद्यत ॥ ५७ ॥ मुनेःपत्न्योपदिष्टंयत्सोमवारव्रतंशुभम् ॥ नतत्याजशुभाचारावैधव्यंप्राप्तवत्यपि ॥ ५८ ॥ एवंचतुर्दशेवर्षेदुःखंप्राप्यसुदारुणम् ॥ ध्यायंतीशिवपादाब्जंवत्सरत्रयमत्यगात् ॥ ५९ ॥ पुत्रशोकादिवोन्मत्तमिंद्रसेनंमहीपतिम् ॥ प्रसह्यतस्यदायादाःसप्तांगंजहुरोजसा ॥ ६० ॥ हृतसिंहासनःशूरैर्दायादैःसोऽप्रजोनृपः ॥ निगृह्यकाराभवनेसपत्नीकोनिवेशितः ॥ ६१ ॥ चंद्रांगदोपितत्पुत्रोनिमग्नोयमुनाजले ॥ अधोधोमज्जमानोसौददर्शोरगकामिनीः ॥ ६२ ॥ जलक्रीडासुसक्तास्तादृष्ट्वाराजकुमारकम् ॥ विस्मितास्तमथानिन्युःपातालंपन्नगालयम् ॥६३॥ सनीयमानस्तरसापन्नगीभिर्नृपात्मजः॥ तक्षकस्यपुरंरम्यंविवेशपरमाद्भुतम् ॥ ६४ ॥

प्रजाहीन होगया और स्त्रीसमेत उसको शत्रुओंने पकड़ कारागार (जेलखाना) में डालदिया ॥ ६१ ॥ और जलमें डूबेहुए उसके पुत्र चन्द्रांगदको नीचे नीचे जाते नागकन्याओंने देखा ॥ ६२ ॥ जलक्रीडामें निमग्न उन्होंने राजकुमारको देख विस्मय किया और इसके रूप गुणोंसे मोहित हो सर्पोंके स्थान पाताललोकमें लिवागईं ॥६३॥ नागकन्याओंके द्वारा वेगसे जाताहुआ वह राजपुत्र तक्षकके परम अद्भुत और मनोहर पुरमें पहुँचा॥६४॥

वहाँ एक बड़ाभारी महल देखा कि जो इन्द्रभवनके समान था, महारत्नोंकी किरणोंसे प्रकाशित ॥ ६५ ॥ वज्र; वईूय और पाचनामक मणियोंसे शोभित, सैंकड़ो महलोंसे युक्त, माणिक्य जिसके छज्जों और द्वारोंपर खचित हैं, मोतियोंकी मालाओंसे उज्ज्वल ॥ ६६ ॥ चन्द्रकान्तमणिके समान हैं सुन्दर स्थल जहाँके जिसके द्वारपर सुवर्णके किवाड़ हैं, अनेक सैंकड़ों और हजारों मणियोंके दीपकोंसे शोभित ॥ ६७ ॥ इस प्रकारकी शोभासे युक्त उस सभाके बीचमें रत्नसिंहासनपर बैठेहुए सैंकड़ों फनोंसे उज्ज्वल, सर्पोंके स्वामी तक्षकको देखा ॥ ६८ ॥ दिव्यवस्त्रधारी, प्रकाशमान

सोपश्यद्राजतनयोमहेंद्रभवनोपमम् ॥ महारत्नपरिभ्राजन्मयखपरिदीपितम् ॥ ६५ ॥ वज्रवैडूर्यपाचादिप्रासादशतसंकुलम् ॥ माणिक्य गोपुरद्वारंमुक्तादामभिरुज्ज्वलम् ॥ ६६ ॥ चंद्रकांतस्थलंरम्यंहेमद्वारकपाटकम् ॥ अनेकशतसाहस्रमणिदीपविराजितम् ॥ ६७ ॥ तत्राप श्यत्सभामध्येनिषण्णंरत्नविष्टरे॥तक्षकंपन्नगाधीशंफणानेकशतोज्ज्वलम् ॥ ६८ ॥ दिव्यांबरधरंदीप्तंरत्नकुंडलराजितम् ॥ नानारत्नपरि क्षिप्तंमुकुटद्युतिरंजितम् ॥ ६९ ॥ फणामणिसहस्राद्यैरसंख्यैःपन्नगोत्तमैः ॥ उपासितंप्रांजलिभिर्विचित्रैरत्नभूषितैः ॥ ७० ॥ रूपयौवनमाधुर्यविलासगतिशोभिना ॥ नागकन्यासहस्रेणसमंतात्परिवारितम् ॥ ७१ ॥ दिव्याभरणदीप्तांगंदिव्यचंदनचर्चितम् ॥ कालाग्निमिवदुर्धर्षंतेजसादित्यसन्निभम् ॥ ७२ ॥

रत्नकुंडलोंसे शोभित, नानारत्नसम्पन्न, मुकुटकान्तिसे रंजित ॥ ६९ ॥ हज़ारों असंख्य नागोंके मणिरूप फणोंसे जिनका फण शोभायमान होरहा है, विचित्र रत्नधारी नाग चारों ओरसे जिनकी उपासना कर रहे हैं ॥ ७० ॥ रूप, यौवन, माधुर्य और विलासपूर्वक गतिसे शोभायमान हज़ारों नागकन्याएँ जिनके चारों ओर स्थित हैं ॥ ७१ ॥ दिव्याभरणसे दीप्तांगवाले दिव्य चन्दनसे चर्चित, कालाग्निके समान दुर्धर्ष, तेजमें आदित्यके

समान ॥ ७२ ॥ इस प्रकारके तक्षकको देखे उसके तेजसे व्याकुल होगये हैं नेत्र जिसके ऐसे उस धैर्यवान् राजपुत्रने उठकर हाथ जोड़ सभाके बीचमें विनयपूर्वक प्रणाम किया ॥ ७३ ॥ नागोंका राजा तक्षकभी सुन्दर राजपुत्रको देख नागकन्याओंसे पूँछने लगा कि, यह कौन है, किस देशसे यहाँ आया है ॥ ७४ ॥ नागकन्यायें बोलीं कि हे स्वामिन् ! अकस्मात् यमुनाके जलमें हमने इसको देखा और विना कुल नाम जानेही तुम्हारे निकट लेआई हैं ॥ ७५ ॥ तब तक्षकने राजपुत्रसे पूँछा कि, तुम किसके पुत्र हो, कौन हो कौन तुम्हारा देश

दृष्ट्वाराजसुतोधीरःप्रणिपत्यसभास्थले ॥ उत्थितःप्रांजलिस्तस्यतेजसाक्षिप्तलोचनः ॥७३॥ नागराजोपितंदृष्ट्वाराजपुत्रंमनोरमम् ॥ कोयं कस्मादिहायातइतिपप्रच्छपन्नगः ॥७४॥ ताऊचुर्यमुनातोयेदृष्टोस्माभिर्यदृच्छया ॥ अज्ञातकुलनामायमानीतस्तवसन्निधिम ॥७५॥ अथपृष्टोराजपुत्रस्तक्षकेणमहात्मना ॥ कस्यासितनयःकस्त्वंकोदेशःकथमागतः ॥ ७६ ॥ ॥ राजपुत्रउवाच ॥ ॥ अस्तिभूमंडलेकश्चिद्देशोमगधसंज्ञकः ॥ तस्याधिपोभवद्राजानलोनाममहायशाः ॥ ७७ ॥ सुपुण्यकीर्तिःक्षितिपोदमयंतीपतिःशुभः ॥ तस्मादपींद्रसेनाख्यस्तस्यपुत्रोमहाबलः ॥ ७८॥ चंद्रांगदोस्मिनाम्नाहंनवोढःश्वशुरालये ॥ विहरन्यमुनातोयेनिमग्नोदैवचोदितः ॥७९॥

है और यहाँ क्यों आये हो ॥ ७६ ॥ राजपुत्र बोला पृथ्वीपर कोई एक मगधदेश है, उसका नलनामक महायशस्वी राजा था ॥ ७७ ॥ उसकी बड़ी कीर्ति थी, सारी पृथिवी उसके अधिकारमें थी. और दमयन्ती उसकी स्त्रीथी, उसकेभी एक इन्द्रसेन राजा उत्पन्न हुआ, उसका पुत्र महाबली ॥ ७८ ॥ चन्द्रांगद नाम मैं हूँ, नवीन विवाह करके मैं श्वशुरके घर रहकर यमुनामें विहार करनेके निमित्त गया, वहाँ दैवयोगसे

जलमें डूब गया ॥ ७९ ॥ जलमें बहते हुए मुझको ये नागकन्यायें तुम्हारे निकट ले आईं जन्मान्तरसे सञ्चित पुण्योंसे तुम्हारे चरणकमलका दर्शन हुआ ॥ ८० ॥ आज मैं धन्य हूँ, और मेरे मातापिताभी कृतार्थ हुए, जो आपने करुणासे मुझे देखा और तुम्हारे साथ मैंने भाषण किया ॥ ८१ ॥ इतनी कथा सुनाय फिर सूतजी शौनकादिक ऋषियोंसे कहने लगे, कि इसप्रकार उदार असंभ्रान्त और अतिसुन्दर वचन सुन तक्षक उत्सुकतापूर्वक फिर राजपुत्रसे बोला ॥ ८२ ॥ कि, हे राजेन्द्र ! हे दायाद ! डरोमत, धैर्य धारण करो, सम्पूर्ण देवताओंमें तुम किस देवताकी उपासना करते हो ॥ ८३ ॥

एताभिःपन्नगस्त्रीभिरानीतोस्मितवांतिकम् ॥ दृष्ट्वाहंतवपादाब्जंपुण्यैर्जन्मांतरार्जितैः ॥ ८० ॥ अद्यधन्योस्मिधन्योस्मिकृतार्थौपितरौमम ॥ यत्प्रेक्षितोहंकारुण्यात्त्वयासंभाषितोपिच ॥८१॥॥ सूतउवाच ॥ ॥ इत्युदारमसंभ्रांतंवचःश्रुत्वातिपेशलम् ॥ तक्षकःपुनरौत्सुक्याद्बभाषेराजनंदनम् ॥ ८२ ॥ ॥ तक्षकउवाच ॥ ॥ भोभोनरेंद्रदायादमाभैषीर्धीरतांव्रज ॥ सर्वदेवेषुकोदेवोयुष्माभिःपूज्यतेसदा॥८३॥ ॥ राजपुत्र उवाच ॥ योदेवःसर्वदेवेषु महादेव इतिस्मृतः ॥ पूज्यतेसहिविश्वात्माशिवोस्माभिरुमापतिः ॥ ८४ ॥ यस्यतेजोंशलेशेनरजसाचप्रजापतिः ॥ कृतरूपोसृजद्विश्वंसनःपूज्योमहेश्वरः ॥८५॥ यस्यांशात्सात्त्विकंदिव्यंबिभ्रद्विष्णुःसनातनः ॥ विश्वंबिभर्त्तिभूतात्माशिवोस्माभिःसपूज्यते ॥ ८६ ॥ यस्यांशात्तामसाज्जातोरुद्रःकालाग्निसन्निभः ॥ विश्वमेतद्धरत्यंतेसपूज्योस्माभिरीश्वरः ॥ ८७ ॥

राजपुत्र बोला, सम्पूर्ण देवोंमें जो महादेव उमापति हैं, विश्वासपूर्वक मैं उन्हींकी पूजा करता हूँ ॥ ८४ ॥ जिनके तेज अंशके लेशमात्रसे रजोगुणसे ब्रह्माजी रूप धारणकर संसारको उत्पन्न करते हैं, हम उन महेश्वरकी पूजा करते हैं ॥ ८५ ॥ जिनके अंशसे सात्त्विक दिव्य शरीर धारण करके सनातन विष्णुभगवान् संसारकी पालना करते हैं, वे भूतात्मा सदाशिव हमारे पूजनीय हैं ॥ ८६ ॥ जिनके अंशसे कालाग्निके समान रुद्र तमोगुणसे

इस संसारका अन्तमें संहार करते हैं, हम उन ईश्वरकी पूजा करते हैं ॥ ८७ ॥ जो विधाताका विधाता और कारणकाभी कारण, तेजोंका परमतेज हैं वही शिव हमारी परमगति हैं ॥ ८८ ॥ जो अग्नि, भूमि, वायु, जल और आकाशमें विराजमान हैं हम उन सनातन शिवकी पूजा करतेहैं ॥ ८९ ॥ जो सम्पूर्ण प्राणियोंका साक्षी, आत्मामें स्थित, निरंजन हैं और गोलोक जिनकी इच्छाके वशमें है वे सदाशिव हमारे पूजनीय हैं ॥ ९० ॥ जिनको आदिपुराणपुरुष और वैकृतिक गुणोंसे भिन्न कहते हैं, कोई क्षेत्रज्ञ कोई तुरीय कोई कूटस्थ कहते हैं, वेही शिव हमारी गति हैं ॥ ९१ ॥

योविधाताविधातुश्चकारणस्यापिकारणम् ॥ तेजसांपरमंतेजःसशिवोनःपरागतिः ॥ ८८ ॥ योऽग्नौतिष्ठतियोभूमौयोवायौसलिलेचयः ॥ यआकाशेचविश्वात्मासपूज्योनःसनातनः ॥ ८९ ॥ यःसाक्षीसर्वभूतानांयआत्मस्थोनिरंजनः ॥ यस्येच्छावशगोलोकःसोस्माभिः पूज्यतेशिवः ॥ ९० ॥ यमेकमाद्यंपुरुषंपुराणंवदंतिभिन्नंगुणवैकृतेन ॥ क्षेत्रज्ञमेकेथतुरीयमन्येकूटस्थमन्येसशिवोगतिर्नः ॥ ९१ ॥ यंनास्पृशञ्चैत्त्यमचिंत्यतत्त्वंदुरंतधामानमतत्स्वरूपम् ॥ मनोवचोवृत्तयआत्मभाजंसएषपूज्यःपरमःशिवोनः ॥ ९२ ॥ यस्यप्रसादं प्रतिलभ्यसंतोवांछंतिनैंद्रंपदमुज्ज्वलंवा ॥ निस्तीर्णकर्मार्गलकालचक्राश्चरंत्यभीताःसशिवोगतिर्नः ॥ ९३ ॥ यस्यस्मृतिःसकल पापरुजांविघातंसद्यःकरोत्यपिचपुल्कसजन्मभाजाम् ॥ यस्यस्वरूपमखिलंश्रुतिभिर्विमृग्यंतस्मैशिवायसततंकरवामपूजाम् ॥ ९४ ॥

चित्तके भाव जिसका स्पर्श नहीं करसकते, जिनका तत्त्व अचिन्तनीय है, जिनके धामका अन्त नहीं है, जो अनुपमेय हैं मन, वाणी और वृत्तियें जिनको आत्मामें भजती हैं, उन परमकल्याणरूप शंकरकी हम पूजा करते हैं ॥ ९२ ॥ जिनकी प्रसन्नताको पाकर महात्मापुरुष इन्द्रके सुन्दर पदकी भी इच्छा नहीं करते और कर्मरूपी अर्गला और कालचक्रसे तरकर निर्भय विचरते हैं, वे शिव हमारी गति हैं ॥ ९३ ॥ जिनके स्मरणमात्रसे सम्पूर्ण पाप

और रोग नष्ट होजाते हैं, जो नीचयोनिवालोंके भी पूजन करनेसे पाप और रोगोंसे तत्काल छुटादेते हैं, जिनका सम्पूर्ण स्वरूप श्रुतियोंसे जाननेयोग्य है, उन शिवकी हम निरन्तर पूजा करते हैं ॥ ९४ ॥ जिनके मस्तकमें गंगाजी स्थान कियेहुए हैं. जगदम्बिका (पार्वती) जिनकी स्त्री हैं, वासुकि और तक्षक जिनके कुण्डल हैं, वे अर्धचन्द्रधारी शिव हमारी गति हैं ॥ ९५ ॥ शास्त्र जाननेवालोंमें जो चूडामणि हैं उनमें भी अग्रणी शंकरकी जय हो, जिनके चरणकमलकी सेवासे सदा जय होती है, और सदा योगियोंके हृदयमें जिनकी मूर्ति विराजती है, जो सम्पूर्ण बलधारी हैं, जिनकी कीर्ति

यन्मूर्ध्निलब्धनिलयासुरलोकसिंधुर्यस्यांगनाभगवतीजगदंबिकाच ॥ यत्कुंडलेत्वहहतक्षकवासुकीद्वौसोस्माकमेवगतिरर्धशशांकमौलिः॥ ॥ ९५ ॥ जयतिनिगमचूडाग्रेषुयस्यांघ्रिपद्मंजयतिचहृदिनित्यंयोगिनांयस्यमूर्तिः ॥ जयतिसकलसत्त्वोध्वूर्ध्वगायस्यकीर्तिः सविजित गुणसर्गःपूज्यतेस्माभिरीशः ॥ ९६ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ इत्याकर्ण्यवचस्तस्यतक्षकःप्रीतमानसः ॥ जातभक्तिर्महादेवेराजपुत्रमभाषत ॥ ९७ ॥ ॥ तक्षकउवाच ॥ ॥ परितुष्टोस्मिभद्रंतेतवराजेंद्रनंदन ॥ बालोपियत्परंतत्त्वंवेत्सिशैवंपरात्परम् ॥ ९८ ॥ एषरत्नमयो लोकएताश्चारुदृशोबलाः ॥ एतेकल्पद्रुमाःसर्वेवाप्योमृतरसांभसः ॥ ९९ ॥

ऊर्ध्वस्थानमें विराजमान है, सम्पूर्ण गुणसमूहको जीतनेवाले उन ईश्वरकी हम पूजा करते हैं ॥ ९६ ॥ इतनी कथा सुनाय, फिर सूतजी कहनेलगे कि, हे महर्षियो ! इस प्रकार उसका वचन सुन शिवमें उत्पन्न हुई है भक्ति जिसको ऐसा तक्षक प्रसन्नतापूर्वक राजपुत्रसे बोला ॥ ९७ ॥ कि, हे राजेंद्र नन्दन ! मैं तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हूँ, तुम्हारा कल्याण हो, क्योंकि बालक होकर भी तुम शंकरके परमतत्त्वको जानते हो ॥९८॥ यह लोक रत्नमयहै,

यह अबलाएँ सुन्दर नेत्रवाली हैं यहांके वृक्ष कल्पद्रुम हैं, बावडी (वापी) अमृतरूप जलसे पूर्ण हैं ॥ ९९ ॥ यहाँ मृत्युका भय और जरा रोगकी पीडा नहीं, यहाँ यथेष्टविहार करो और मन इच्छित भोगोंको भोगो ॥ १०० ॥ इसप्रकार नागराजके कहनेपर वह धीर राजकुमार हाथजोड प्रीति पूर्वक बोला ॥१०१॥ कि हे नागेन्द्र ! समयानुसार मेरा विवाह होगया है, शिवपूजामें रत मेरी भार्य्या और एकपुत्रवाले मेरे माता पिता ॥१०२॥ यह सब मुझे मरा जान शोकसे व्याकुल होंगे, वे प्राण त्यागदेते किंतु प्रारब्धवश प्राण धारण किये हैं ॥ १०३ ॥ इस कारण बहुत समयतक मैं

नात्रमृत्युभयंघोरंनजरारोगपीडनम् ॥ यथेष्टंविहरात्रैवभुंक्ष्वभोगान्यथोचितान् ॥ १०० ॥ इत्युक्तोनागराजेनसराजेंद्रकुमारकः ॥ प्रत्युवाचपरंप्रीत्याकृतांजलिरुदारधीः ॥ १ ॥ कृतदारोस्म्यहंकालेसुव्रतागृहिणीमम ॥ शिवपूजापरानित्यंपितरावेकपुत्रकौ ॥ २ ॥ ते त्वद्यमांमृतंमत्वाशोकेनमहतावृताः ॥ प्रायःप्राणैर्वियुज्यंतेदैवात्प्राणान्वहंतिवा ॥ ३ ॥ अतोमयाबहुतिथंनात्रस्थेयंकथंचन ॥ तमेवलो कंकृपयामांप्रापयितुमर्हसि ॥ ४ ॥ इत्युक्तवंतंनरदेवपुत्रंदिव्यैर्वराग्नैःसुरपादपोत्थैः ॥ आप्याययित्वावरगंधवासःस्रग्रत्नदिव्याभरणैर्विचित्रैः ॥ ५ ॥ संतोषयित्वाविविधैश्चभोगैःपुनर्बभाषेभुजगाधिराजः॥ यदायदात्वंस्मरसित्वदग्रेतदातदाविष्क्रियतेमयेति ॥ ६ ॥ पुनश्चराजपुत्रा यतक्षकोश्वंचकामगम् ॥ नानाद्वीपसमुद्रेषुलोकेषुचनिरर्गलम् ॥ ७ ॥

यहाँ नहीं रहसकता, आप मुझे मेरे लोकमें भिजवादो ॥ १०४ ॥ इस प्रकार नरेंद्रपुत्रके कहनेपर तक्षकनागने सुन्दर भोजन पानआदिसे उसको प्रसन्नकर दिव्यवस्त्र, आभूषण पहिनाय सुगंधियुक्त अनेक प्रकारकी रत्नमालाएँ पहिनाई ॥ १०५ ॥ अनेक प्रकारके भोगोंसे संतुष्टकर तक्षकनाग फिर बोला, कि जब जब तू मेरा स्मरण करेगा तब तब मैं तेरे समीप पहुँचूँगा ॥ १०६ ॥ एक कामचारी घोडा दिया, कि जिसकी गति अनेक द्वीप,

समुद्र और सब लोकोंमें थी ॥ ७ ॥ चढानेके लिये एक राक्षस और सहायताके निमित्त एक नागकुमार दिया, यह सब दे तक्षकने प्रीति पूर्वक कहा कि जाओ और भेजदिया ॥ ८ ॥ ९ ॥ इस प्रकार चन्द्रांगदभी अनेक प्रकारके धनोंको ग्रहणकर और कामचारी घोडेपर सवार हो उन दोनोंके साथ वहाँसे चलदिया ॥ ११० ॥ एक मुहूर्त्तमात्रमें यमुनाके जलमें हो मनोहर किनारेपर निकल आया ॥११॥ इसी अवसरमें सीमंतिनी नाम

वाहनायददावेकंराक्षसंपन्नगेश्वरः ॥ दत्तवान्रत्नाभरणंदिव्याभरणवाससी ॥ ८ ॥ तत्सहायार्थमेकंचपन्नगेंद्रकुमारकम् ॥ नियुज्यतक्षकः प्रीत्यागच्छेतिविससर्जतम् ॥ ९ ॥ इतिचंद्रांगदःसोथसंगृह्यविविधंधनम् ॥ अश्वंकामगमारुह्यताभ्यांसहविनिर्ययौ ॥ ११० ॥ समुहूर्ता दिवोन्मज्ज्यतस्मादेवसरिज्जलात् ॥ विजहारतटेरम्येदिव्यमारुह्यवाजिनम् ॥ ११ ॥ अथास्मिन्समयेतन्वीसाचसीमंतिनीसती ॥ स्नातुं समाययौतत्रसखीभिःपरिवारिता ॥ १२ ॥ साददर्शनदीतीरेविहरंतंनृपात्मजम् ॥ रक्षसानररूपेणनागपुत्रेणचान्वितम् ॥ १३ ॥ दिव्यरत्नसमाकीर्णंदिव्यमाल्यावतंसकम् ॥ देहेनदिव्यगंधेनव्याक्षिप्तदशयोजनम् ॥ १४ ॥ तमपूर्वाकृतिंवीक्ष्यदिव्याश्वमधिसंस्थितम् ॥ जडोन्मत्तेवभीतेवतस्थौतन्न्यस्तलोचना ॥ १५ ॥ तांचराजेंद्रपुत्रोसौदृष्टपूर्वामितिस्मरन् ॥ निर्मुक्तकंठाभरणांकंठसूत्रविवर्जिताम् ॥१६॥

उसकी कोमलअंगवाली स्त्री अपनी सखियोंके साथ वहाँ स्नान करनेको आई ॥ १२ ॥ उसने नररूप राक्षस और नागकुमारके सहित विहार करतेहुए राजपुत्रको देखा ॥ १३ ॥ दिव्य रत्नोंसे युक्त, दिव्यमाला गलेमें-धारण किये हुए जिसके शरीरकी दिव्यगंधसे दशयोजन महक रहेथे ॥१४॥ और अपूर्व शरीरधारी, घोडेपर सवार उसको देख जड, मत्त और डरेहुएके समान हो उसकी ओर देखनेलगी ॥ १५ ॥ वह राजपुत्रभी पूर्वदखी हुई उसको

कंठके आभूषणोंसे रहित कण्ठके डोरेसे रहित ॥ १६ ॥ मांगपट्टीसे रहित, केशपाशवाली, अंगरागसे रहित, आंखोंके अंजनसे रहित, कृशांगी, शोकसे व्याकुल देख ॥ १७ ॥ घोडेसे उतर नदीके किनारे बैठगया और उसको बुलाकर बोला कि, यहाँ बैठो ॥ १८ ॥ तुम कौन, किसकी स्त्री और किसकी पुत्री हो, हे अंगने ! इस बाल्यावस्थामें तुमको दुःसह शोकका लक्षण किसप्रकार उदय हुआ है ॥ १९ ॥ इसप्रकार स्नेहपूर्वक राजपुत्रके पूँछनेपर उसके नेत्रोंमें जल भरआया और लज्जित होकर कुछ न कहसकी, उसकी सखियोंने सब वृत्तांत कहा ॥ १२० ॥ कि,

असंयोजितधम्मिल्लामंगरागविवर्जिताम् ॥ त्यक्तनीलांजनापांगींकृशांगींशोकदूषिताम् ॥ १७ ॥ दृष्ट्वाऽवतीर्यतुरगादुपविष्टःसरित्तटे ॥ तामाहूयवरारोहामुपवेश्येदमब्रवीत् ॥ १८ ॥ कात्वंकस्यकलत्रंवाकस्यासितनयासती ॥ किमिदंतेंगनेबाल्येदुःसहंशोकलक्षणम् ॥ १९ ॥ इतिस्नेहेनसंपृष्टासावधूरश्रुलोचना ॥ लज्जितासासमाख्यातुंतत्सखीसर्वमब्रवीत् ॥ १२० ॥ इयंसीमंतिनीनाम्नास्नुषामगधभूपतेः ॥ चंद्रांगदस्यमहिषीतनयाचित्रवर्मणः ॥ २१ ॥ अस्याःपतिर्दैवयोगान्निमग्नोस्मिन्महाजले ॥ तेनेयंप्राप्तवैधव्याबालादुःखेनशोषिता ॥ २२ ॥ एवंवर्षत्रयंनीतंशोकेनातिबलीयसा ॥ अद्येंदुवारेसंप्राप्तेस्नातुमत्रसमागता ॥ २३ ॥ श्वशुरोस्याश्वराजेंद्रो हृतराज्यश्चशत्रुभिः ॥ बलाद्गृहीतोबद्धश्चसभार्यस्तद्गृहेस्थितः ॥ २४ ॥

सीमंतिनीनाम यह मगधदेशके राजा चित्रवर्माकी पुत्री और चंद्रांगदकी पत्नी है ॥ २१ ॥ इसका पति दैवयोगसे इसी नदीके जलमें डूबगया, इसप्रकार यह विधवा होगई और उसी दुःखसे यह सूखती चलीजाती है ॥ २२ ॥ इसी प्रकार अत्यन्त शोकसे इसने तीनवर्ष बिताये हैं, सोमवारका यह व्रत करती है इसीकारण आज सोमवारको यहां स्नान करने आई है ॥ २३ ॥ इसके श्वशुरका राज्य शत्रुओंने छीन लिया

और बलपूर्व स्त्रीसमेत बाँधकर अपने वशमें करलियाहै ॥ २४ ॥ तो भी सुन्दर आचरणवाली यह सीमंतिनी सोमवारको पार्वतीसमेत परमभक्तिसे शंकरका पूजन नियमसे करती है ॥ २५ ॥ इतनी कथा सुनाय सूतजी फिर बोले, कि हे मुनीश्वरो ! इस प्रकार सखीजनोंसे कहलाकर वह सुव्रता सीमंतिनी राजासे स्वयं बोली ॥ २६ ॥ कि, कामदेवके समान कान्तिवाले तुम कौन हो और तुम्हारे पार्श्वभागमें स्थित यह कौन हैं, तुम देव हो, नरेन्द्रहो, सिद्ध, गन्धर्व हो वा किन्नर हो अथवा सर्प हो ॥ २७ ॥ स्नेहीके समान तुम मेरे वृत्तान्तको क्यों पूँछते हो, मुझ दुर्वृत्ताको

तथाप्येषाशुभाचारासोमवारेमहेश्वरम् ॥ सांबिकंपरयाभक्त्यापूजयत्यमलाशया ॥ २५ ॥ सूतउवाच ॥ इत्थंसखीमुखेनैवसर्वमावेद्य सुव्रता ॥ ततःसीमंतिनीप्राहस्वयमेवनृपात्मजम् ॥ २६ ॥ कस्त्वंकंदर्पसंकाशःकाविमौतवपार्श्वगौ ॥ देवोनरेंद्रःसिद्धोवागंधर्वोरगकिन्नरः ॥ २७ ॥ किमर्थंममवृत्तांतंस्नेहवानिवपृच्छसि ॥ किंमांवेत्सिसुदुर्वृत्तांदृष्टवान्किमुकुत्रचित् ॥ २८ ॥ दृष्टपूर्वइवाभासिमयाचस्वजनो यथा ॥ सर्वंकथयतत्त्वेनसत्यसाराहिसाधवः ॥ २९ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ एतावदुक्त्वानरदेवपुत्रीसबाष्पकंठीसुचिरंरुरोद ॥ मुमो हभूमौपतितासखीभिर्वृतानकिंचित्कथितुंशशाक ॥ १३० ॥ श्रुत्वाचंद्रांगदःसर्वंप्रियायाःशोककारणम् ॥ मुहूर्त्तमभवत्तूष्णींस्वयंशो कसमाकुलः ॥ ३१ ॥

क्या तुम जानते हो या पहिले कभी कहीं देखा है ॥ २८ ॥ मुझे तो अपनेके समान पूर्व देखेसे जान पडते हो, मुझसे विधिपूर्वक कहो, कारण कि, साधु सत्यही बोलते हैं ॥ २९ ॥ फिर सूतजी बोले कि, इतना वचन कह वह राजपुत्री जलसे कण्ठ भरकर रोनेलगी और मूर्च्छित हो पृथ्वी पर गिरपड़ी उसके चारों ओर सखियें स्थित होगई, फिर वह कुछ न कहसकी ॥ १३० ॥ अपनी प्रियाका सब शोकका कारण सुन चन्द्रांगदभी

शोकसे व्याकुल हो मुहूर्तमात्र चुप रहा ॥ ३१ ॥ फिर कोमल अंगवाली अपनी भार्य्याको अनेक प्रकारकी वाणियोंसे समझाने लगा कि, हे राजपुत्रि ! हम सिद्धनामक कामचारी देवता हैं, हम सब स्थानोंमें जासकते हैं ॥ ३२ ॥ इसके उपरान्त पाणिग्रहणमें शंकित और पुलकायमान है सब अंग जिसका ऐसी उसको बलपूर्वक खेंचकर उसके कानमें यह वचन कहा ॥ ३३ ॥ हे वरानने ! किसी लोकमें मैंने तेरा पति देखा है और तेरे व्रताचरणसे प्रसन्न है तथा वह तेरे पास शीघ्रही आवेगा ॥ ३४ ॥ निश्चयपूर्वक दो तीन दिनमें ही तेरे दुःखको दूर करेगा, मैं तेरे पतिका मित्र

अथाश्वास्यप्रियांतन्वींविविधैर्वाङ्मयैःपुनः ॥ सिद्धानामवयंदेवाःकामगाइतिसोब्रवीत् ॥ ३२ ॥ ततोबलादिवाकृष्यपाणिग्रहणशंकिताम् ॥ पुलकांचितसर्वांगींतांकर्णेत्विदमब्रवीत् ॥ ३३ ॥ क्वापिलोकेमयादृष्टस्तवभर्त्तावरानने ॥ त्वद्व्रताचरणात्प्रीतःसद्यएवागमिष्यति ॥ ३४ ॥ अपनेष्यतितेशोकंद्वित्रैरेवदिनैर्ध्रुवम् ॥ एतच्छंसितुमायातस्तवभर्त्तुःसखास्म्यहम् ॥ ३५ ॥ अत्रकार्योनसंदेहः शपथः शिवपादयोः ॥ तावत्त्वद्धृदयेस्थेयंनप्रकाश्यंचकुत्रचित् ॥ ३६ ॥ सातुतद्वचनंश्रुत्वासुधाधाराशताधिकम् ॥ संभ्रमोद्भ्रांतनयनातमेवमुहुरैक्षत ॥ ३७ ॥ प्रेमबंधानुगुणितंवाक्यंमधुरसायनम् ॥ विभ्रमोदारसहितंमधुरापांगवीक्षणम् ॥ ३८ ॥

हूँ और यही वृत्तान्त कहनेको मैं तेरेपास आया हूँ ॥ ३५ ॥ मैं शंकरकी शपथ खाता हूँ, इसमें सन्देह न करना और जब तक वह न आवे तब तक हृदयमें रखना किसीसे प्रकाश न करना ॥ ३६ ॥ सौ अमृतकी धारासेभी अधिक उसके वचनको सुन उस राजपुत्रीके नेत्र भ्रमसे भ्रान्त होगये और बारंबार उसीकी ओर देखने लगी ॥ ३७ ॥ और प्रेममुक्त मीठे रसके भरेहुए वचन, विभ्रमोदारसहित मधुर और कनखियोंसे देखना ॥ ३८ ॥

अपने हाथके स्पर्शसे पुलकित अंग, पहिले देखेहुए अंगोंमें चिह्न और स्वरादिकों ॥ ३९ ॥ और अवस्था वा रूपका प्रमाण करके उसने विचारा कि निश्चयपूर्वक यही मेरा पति है, दूसरा नहीं ॥ १४० ॥ क्योंकि प्रेमसे व्याकुल हुआ मेरा मन इसीमें आसक्त होरहा है, किन्तु अपना वही रूप धारण करके परलोकसे यह किसप्रकार यहाँ आया ॥ ४१ ॥ मुझ दुर्भगाको नष्टहुए पतिका दर्शन किसप्रकार हुआ, यह स्वप्न है, वा जागृत अवस्था है, भ्रम है वा अभ्रम है ॥ ४२ ॥ या यह कोई धूर्त है अथवा गन्धर्व वा यक्ष है, मुनिपत्नीने जो कहदिया था कि परं आप

स्वपाणिस्पर्शनोद्भिन्नपुलकांचितविग्रहम् ॥ पूर्वदृष्टानिचांगेषुलक्षणानिस्वरादिषु ॥ ३९ ॥ वयःप्रमाणंवर्णंचपरीक्ष्यैनमतर्कयत् ॥ एषएवपतिर्मेस्याद्ध्रुवंनान्योभविष्यति ॥ १४० ॥ अस्मिन्नेवप्रसक्तंमेहृदयंप्रेमकातरम् ॥ परलोकादिहायातःकथमेवंस्वरूपधृक् ॥४१॥ दुर्भाग्यायाःकथंमेस्याद्भर्त्तुर्नष्टस्यदर्शनम् ॥ स्वप्नोयंकिंतुनस्वप्नोभ्रमोयंकिंतुनभ्रमः ॥ ४२ ॥ एषधूर्तोथवाकश्चिद्यक्षोगंधर्वएववा ॥ मुनिपत्न्यायदुक्तंमेपरमापद्गतापिच ॥ ४३ ॥ व्रतमेतत्कुरुष्वेतितस्यवाफलमेववा ॥ योवर्षायुतसौभाग्यंममेत्याहद्विजोत्तमः ॥ ४४ ॥ नूनंतस्यवचःसत्यंकोविद्यादीश्वरंविना ॥ निमित्तानिचदृश्यंतेमंगलानिदिनेदिने ॥ ४५ ॥ प्रसन्नेपार्वतीनाथेकिमसाध्यंशरीरिणाम् ॥ इत्थंविमृश्यबहुधातांपुनर्भुक्तसंशयाम् ॥ ४६ ॥

त्ति आनेपरभी ॥ ४३ ॥ शिवव्रत किये जाना सो न जाने यह उसी व्रतका फल है, मेरे पिताके घर एक ब्राह्मणने जो कहा था कि दशहज़ार वर्षपर्यन्त यह अपने पतिके साथ सौभाग्य भोगेगी, ॥ ४४ ॥ सो यह उस ब्राह्मणका कथन सत्य हुआ, पर ईश्वरके विना कौन जाने कि यह क्या वार्ता है, किन्तु दिन दिन मंगलके शगुन दिखाई देते हैं ॥ ४५ ॥ शंकरके प्रसन्न होनेपर शरीरधारियोंको क्या असाध्य है, अर्थात् सब कुछ कर

सकते हैं, इसप्रकार बारंबार उसको समझाकर राजपुत्रने ॥ १४६ ॥ लज्जा और नम्रतासे नीचेको मुखकिये हुए राजपुत्रीसे फिर कहा कि, तुम शोक मत करो, हमारा एक कार्य और है कि शोकसे व्याकुल अपने मातापितासे यह वृत्तान्त कहनेको ॥ १४७ ॥ हम जाते हैं, हे भद्रे ! तुम्हारा मंगल हो, तुम अपने पतिसे शीघ्र मिलोगी, यह कह घोडेपर सवार हो राजपुत्र अपने राज्यकी ओर चलदिया ॥ १४८ ॥ उस राक्षस और नागकुमारके साथ क्षणमात्रमें अपने राज्यमें पहुँचगया, नगरके बाहर उपवनमें स्थित हो ॥ १४९ ॥ राज्यसिंहासनपर स्थितहुए अपने कुटुम्बियोंके पास नागक

लज्जानम्रमुखींकर्णेशशंसान्यत्प्रयोजनम् ॥ इमवृंत्तांतमाख्यातुंमत्पित्रोःशोकतप्तयोः॥४७॥ गच्छामःस्वस्तितेभद्रेसद्यःपतिमवाप्स्यसि ॥ इत्युक्त्वाश्वंसमारुह्यजगामनृपनंदनः ॥ ४८ ॥ ताभ्यांसहनिजंराष्ट्रंप्रत्यपद्यतत्तत्क्षणात् ॥ सपुरोपवनाभ्याशोस्थित्वातंफणिपुत्रकम्॥४९॥ विससर्जात्मदायादान्नृपासनगतान्प्रति ॥ सगत्वोवाचतान्सर्वानिंद्रसेनोविमुच्यताम् ॥ १५० ॥ चंद्रांगदस्तस्यसुतःप्राप्तोयंपन्नगालया त् ॥ नृपासनंविमुंचंतुभवंतोनविचार्यताम् ॥ ५१ ॥ नोचेच्चंद्रांगदस्याशुबाणाःप्राणान्हरंतिवः ॥ समम्नोयमुनातोयेगत्वातक्षकमंदिरम् ॥ ॥ ५२ ॥ लब्ध्वाचतस्यसाहाय्यंपुनर्लोकादिहागतः ॥ इत्याख्यातमशेषेणतद्वृत्तांतंनिशम्यते ॥ ५३ ॥ साधुसाध्वितिसंभ्रांताःशशंसुः परिपंथिनः ॥ अथेंद्रसेनायनिवेद्यसत्वरंनष्टस्यपुत्रस्यपुनःसमागमम् ॥ प्रसाद्यतंप्रातनरेश्वरासनंदायादमुख्यास्तुभयंप्रपेदिरे ॥ ५४ ॥

मारको भेजा, उसने राज्यसभामें जाकर सबसे कहा कि, इन्द्रसेनको छोड़दो ॥ १५० ॥ चंद्रांगदनाम उनका पुत्र पाताललोकसे आगया है, इस लिये विनाविचारेही राज्यसिंहासन छोड़ दो ॥ १५१ ॥ नहीं तो चन्द्रांगदके बाण शीघ्रही तुम्हारे प्राण संहार करेंगे, यमुनाके जलमें डूब वह नाग लोकको चलागया था ॥ १५२ ॥ वहाँसे उनकी सहायता ले फिर यहाँ आया है, इसप्रकार कहे हुए सब वृत्तान्तको सबने सुना॥ १५३॥ और उसके

सब विरोधियोंने भ्रान्त हो साधुःसाधु इसप्रकार कहा, अर्थात् चन्द्रांगद धन्य है, उसके पिता इन्द्रसेनसेभी शीघ्रही नष्टहुए पुत्रका फिर समागम कहकर उसे प्रसन्न किया, उसके मुख्य दायाद महाभय करने लगे ॥ १५४ ॥ सब पुरवासियोंने पुरके बाहर उद्यानमें राजपुत्रको देख राजा इन्द्रसेनसे आकर कहा कि तुम्हारा पुत्र आगया उनको इन्द्रसेनने बहुत धन दिया ॥ ५५ ॥ पुत्रका आगमन सुन राजा आनन्दके जलसे व्याप्त होगया, आनन्दके मारे संसारको भूल गया, इसीप्रकार रानीभी परमानन्द होगई ॥ ५६ ॥ फिर सब वृद्ध मंत्री, पुरोहित और नगरनिवासी हृदयसे लगाकर उसको राज्यमें

अथपौरजनाः सर्वेपुरोद्यानेनृपात्मजम् ॥ दृष्ट्वाराज्ञेद्रुतंप्रोचुर्लेभिरेचमहाधनम् ॥ ५५ ॥ आकर्ण्यपुत्रमायांतंराजानंदज़लाप्लुतः ॥ नव्य जानादिमंलोकंराज्ञीचपरयामुदा ॥ ५६ ॥ अथनागरिकाःसर्वेमंत्रिवृद्धाःपुरोधसः ॥ प्रत्युद्गम्यपरिष्वज्यतमानिन्युर्नृपांतिकम् ॥ ५७ ॥ अथोत्सवेनमहताप्रविश्यानिजमंदिरम् ॥ राजपुत्रःस्वपितरौववंदेबाष्पमुत्सृजन् ॥५८॥ तंपादमूलेपतितंस्वपुत्रंविवेदनासौपृथिवीपतिःक्षण म्॥प्रबोधितोमात्यजनैःकथंचिदुत्थाप्यक्लिन्नेनहृदालिलिंग ॥५९॥ क्रमेणमातॄरभिवंद्यताभिःप्रवर्धिताशीःप्रणयाकुलाभिः ॥ आलिंगितःपौ रजनानशेषान्संभावयामाससराजसूनुः ॥१६०॥ तेषांमध्येसमासीनःस्ववृत्तांतमशेषतः ॥ पित्रेनिवेदयामासतक्षकस्यचमित्रताम् ॥६१॥

लाये ॥ ५७ ॥ आनन्दपूर्वक बड़े उत्सवसे अपने नगरमें प्रवेश हो राजपुत्रने अपने मातापिताको आँसू छोड़ते हुए प्रणाम किया ॥ ५८ ॥ चरणोंपर गिरे हुए अपने पुत्रको आँखोंमें प्रेमका जल होनेके कारण राजाने क्षणमात्रतक जानाही नहीं जब मन्त्रीजनोंने बताया कि, यह तुम्हारा पुत्र चंद्रांगद है, तब बडी कठिनतासे राजाने उठाकर दुःखसे आर्द्रहुए हृदयसे पुत्रको आलिंगन किया ॥ ५९ ॥ फिर क्रमानुसार अपनी माताओंको प्रणाम किया, और प्रणयाकुल माताओंने उसको आशीर्वाद दिया, तदनन्तर पुरवासियोंको आलिंगन करके प्रसन्न किया ॥ ६० ॥ उन सबके बीचमें बैठे हुए राजपुत्रने

सर्व वृत्तान्त अपने पितासे निवेदन किया और तक्षकसे जिसप्रकार मित्रता हुई वहभी कहा ॥ ६१ ॥ तक्षकके दिये हुए, राक्षसके द्वारा लायेहुए सबधन और अनेक प्रकारके बहुमूल्य धन आदि पिताके अर्पण किये ॥ ६२ ॥ इस प्रकार राजपुत्रके चरित्रको देख और सुनकर राजा विह्वल होगया और अपनी पुत्रवधूके सौभाग्यको शंकरकी अर्चना करनेसे माना ॥ ६३ ॥ मंगलमय इस वार्ताको कहनेके लिये इन्द्रसेनराजाने दूतोंको राजा चित्रवर्माके पास भेजा ॥ ६४ ॥ अमृतसे भरीहुई इस वार्ताको सुन राजा आश्चर्यपूर्वक उठ खडा हुआ और उन दूतोंको बहुतसा धन दे बिदा किया, आप

दत्तंभुजंगराजेनरत्नादिधनसंचयम् ॥ दिव्यंतद्राक्षसानीतंपित्रेसर्वंन्यवेदयत् ॥ ६२ ॥ राजपुत्रस्यचरितंदृष्ट्वाश्रुत्वाचविह्वलः ॥ मेनेस्नुषायाःसौभाग्यंमहेशाराधनार्जितम् ॥ ६३ ॥ सौमांगल्यमयींवार्तामिमांनिषधभूपतिः॥ चारैर्निवेदयामासचित्रवर्ममहीपतेः ॥ ६४ ॥ श्रुत्वाऽमृतमयींवार्त्तांससमुत्थायसंभ्रमात् ॥ तेभ्योदत्त्वाधनंभूरिननर्तानंदविह्वलः ॥ ६५ ॥ अथाहूयस्वतनयांपरिरभ्यज्याश्रुलोचनः ॥ भूषणैर्भूषयामासत्यक्तवैधव्यलक्षणाम् ॥ ६६ ॥ अथोत्सवोमहानासीद्राष्ट्रग्रामपुरादिषु ॥ सीमंतिन्याःशुभाचारंशशंसुःसर्वतोजनाः ॥ ६७ ॥ चित्रवर्माथनृपतिः समाहूयेंद्रसेनजम् ॥ पुनर्विवाहविधिनासुतांतस्मैन्यवेदयत् ॥ ६८ ॥

आनन्दसे विह्वल हो नाचने लगा ॥ ६५ ॥ और त्यागदिये हैं भूषण जिसने ऐसी अपनी विधवा कन्याको बुलाकर हृदयसे लगाया और अनेक प्रकारके सब भूषण पहिराये ॥ ६६ ॥ चित्रवर्माके राज्य पुर और ग्रामोंमें जमाईके आनेका बडा उत्सव हुआ, सीमंतिनीसेभी यह शुभसमाचर पुर वासियोंने कहे ॥ ६७ ॥ चित्रवर्माने चन्द्रांगदको अपने राज्यमें बुलाया और फिर विधिपूर्वक उसके साथ विवाह करके कन्याको निवेदन

किया ॥ ६८ ॥ चन्द्रांगदनेभी (जो रत्नजटित भूषण मनुष्योंको दुर्लभ थे) तक्षकके यहाँसे लायेहुए उन आभूषणोंसे अपनी प्रिया सीमंतिनीको भूषित किया ॥ ६९ ॥ तपायेहुए सुवर्णके समान शोभायमान दिव्य अंगरागसे और सुवर्ण और कमलके कोशके समान है वर्ण जिसका ऐसी उज्ज्वल मालासे (जिसकी गंध दशयोजन जाती थी) शोभायमान, कल्पद्रुमसे उत्पन्न हुए पुष्पोंसे भूषित वह सीमंतिनी नाम राजपत्नी शोभायमान थी ॥ ७१ ॥ इस प्रकार शुभसमयमें पत्नीको पाकर श्वशुरसे अनुमोदित हो अपनी राजधानीको गया ॥ ७२ ॥ कुछ समयके उपरान्त इन्द्रसेनने

चंद्रांगदोपिरत्नाद्यैरानीतैस्तक्षकालयात् ॥ स्वांपत्नींभूषयांचक्रेमर्त्यानामतिदुर्लभैः ॥ ६९ ॥ अंगरागेणदिव्येनतप्तकांचनशोभिना ॥ शुशुभेसासुगंधेनदशयोजनगामिना ॥ १७० ॥ अम्लानमालयाशश्वद्धेमकिंजल्कवर्णया ॥ कल्पद्रुमोत्थयाबालाभूषिताशुशुभेसती ॥ ॥ ७१ ॥ एवंचंद्रांगदःपत्नीमवाप्यसमयेशुभे ॥ ययौस्वनगरींभूयःश्वशुरेणानुमोदितः ॥ ७२ ॥ इंद्रसेनोपिराजेंद्रोराज्येस्थाप्यनिजात्मजम् ॥ तपसाशिवमाराध्यलेभेसंयमिनांगतिम् ॥ ७३ ॥ दशवर्षसहस्राणिसीमंतिन्यास्वभार्यया ॥ सार्धंचंद्रांगदोराजाबुभुजेविषयान्बहून् ॥ ७४ ॥ प्रासूततनयानष्टौकन्यामेकांवराननाम् ॥ रेमेसीमंतिनीभर्त्रापूजयंतीमहेश्वरम् ॥ ७५ ॥ विचित्रमिदमाख्यानंमयासमनुवर्णितम् ॥ भूयोपिवक्ष्येमाहात्म्यंसोमवारव्रतोदितम् ॥ ७६ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेसोमवारव्रतवर्णनंनामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥

पुत्रको राज्यसिंसहान देदिया और आप तपसे शिवजीकी आराधना कर अन्तमें संयमियोंकी गति पाई ॥ ७३ ॥ दश हजारवर्ष पर्यन्त सीमंतिनीनाम अपनी स्त्रीके साथ चन्द्रांगदने अनेक भोग भोगे ॥ ७४ ॥ दशपुत्र और सुन्दर मुखवाली एक कन्या उत्पन्न की, पतिसमेत सीमंतिनीने शंकरका पूजन किया और बहुत समयतक आनन्द भोगे ॥ ७५ ॥ इतना कह सूतजी बोले कि, यह सोमवारका विचित्र आख्यान मैंने तुमसे वर्णन किया,

औरभी सोमवारका व्रतरूप माहात्म्य फिर वर्णन करता हूँ, हे मुनीश्वरो तुम मन लगाकर सुनो ॥ ७६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे
ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां सोमवारव्रतवर्णनं नामाष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ अथ नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ऋषि
बोले कि हे महाभागसूतजी ! तुम धन्यहो, जो कि तुमने शिवजीका विचित्र आख्यान कहा, और भी हमारी सुननेकी इच्छा है
सो कहिये ॥ १ ॥ यह सुन सूतजी बोले, कि एक विचित्र आख्यान वर्णन करता हूँ, सुनो, पूर्वसमयमें विदर्भदेशमें वेदशास्त्रका जान

॥ ऋषयऊचुः ॥ ॥ साधुसाधुमहाभागत्वयाकथितमुत्तमम् ॥ आख्यानंपुनरन्यच्चविचित्रंवक्तुमर्हसि ॥ १ ॥ सूतउवाच ॥ विदर्भ
विषयेपूर्वमासीदेकोद्विजोत्तमः ॥ वेदमित्रइतिख्यातोवेदशास्त्रार्थवित्सुधीः ॥ २ ॥ तस्यासीदपरोविप्रःसखासारस्वताह्वयः ॥ तावुभौ
परमस्निग्धावेकदेशनिवासिनौ ॥ ३ ॥ वेदमित्रस्यपुत्रोभूत्सुमेधानामसुव्रतः ॥ सारस्वतस्यतनयःसामवानितिविश्रुतः ॥ ४ ॥ उभौ
सवयसौबालौसमवेषौसमास्थिती ॥ समंचकृतसंस्कारौसमविद्यौबभूवतुः ॥ ५ ॥ सांगानधीत्यतौवेदांस्तर्कव्याकरणानिच ॥ इतिहासपु
राणानिधर्मशास्त्राणिकृत्स्नशः ॥ ६ ॥ सर्वविद्याकुशलिनौबाल्यएवमनीषिणौ ॥ प्रहर्षमतुलंपित्रोर्ददतुःसकलैर्गुणैः ॥ ७ ॥

नेवाला वेदमित्र नाम एक श्रेष्ठ ब्राह्मण था ॥ २ ॥ उसी देशमें उसका एक और ब्राह्मण सारस्वतनाम मित्र था, वे दोनों परम स्नेहसे एकही स्थानमें
निवास करतेथे ॥ ३ ॥ कुछ समयके उपरान्त वेदमित्रके सुमेधानाम सुन्दर पुत्र उत्पन्न हुआ, और सारस्वतकेभी सामवान् नाम पुत्र उत्पन्न हुआ ॥४॥
वे एक अवस्थावाले दोनों मित्रोंके बालक एकसेही वस्त्र पहिनते और एकही स्थानमें रहते थे, एक साथ उनके संस्कार हुए और समानही विद्या पढ़ी
॥ ५ ॥ वेदोंको अंगों सहित, तर्क, व्याकरण, इतिहास, पुराण और सम्पूर्ण धर्मशास्त्रोंको पढ़ा ॥ ६ ॥ वे दोनों ब्राह्मणकुमार बाल्यावस्थामेंही सम्पूर्ण

विद्यामें निपुण होगये, उनके गुणोंसे उनके मातापिताको परम हर्ष हुआ ॥ ७ ॥ एकसमय उनको (जिनकी अवस्था शोलहवर्षकी थी) उनके पिताने प्रीतिपूर्वक बुलाकर कहा ॥ ८ ॥ हे पुत्रो ! तुम बाल्यावस्थासे विद्या प्राप्त करके युवावस्थाको प्राप्त हुए, अब तुम्हारे विवाहका समय है ॥ ९ ॥ इसकारण अपनी विद्यासे इस विदर्भराजको प्रसन्न कर बहुतसा धन प्राप्त करो और अपना विवाह करो ॥ १० ॥ इसप्रकार अपने पिता

तावेकदास्वतनयौतावुभौब्राह्मणोत्तमौ ॥ आहूयावोचतांप्रीत्याषोडशाब्दौशुभाकृती ॥ ८ ॥ हेपुत्रकौयुवांबाल्येकृतविद्यौसुवर्चसौ ॥ वैवाहिकोयंसमयोवर्ततेयुवयोःसमम् ॥ ९ ॥ इमंप्रसाद्यराजानंविदर्भेशंस्वविद्यया ॥ ततः प्राप्यधनंभूरिकृतोद्वाहौभविष्यथः ॥ १० ॥ एवमुक्तौसुतौताभ्यांतावुभौद्विजनंदनौ ॥ विदर्भराजमासाद्यसमतोषयतांगुणैः ॥ ११ ॥ विद्ययापरितुष्टायतस्मैद्विजकुमारकौ ॥ विवाहार्थंकृतोद्योगौधनहीनावशंसताम् ॥१२॥ तयोरपिमतंज्ञात्वासविदर्भमहीपतिः ॥ प्रहस्यकिंचित्प्रोवाचलोकतत्त्वविवित्सया ॥१३॥ आस्तेनिषधराजस्यराज्ञीसीमंतिनीसती ॥ सोमवारेमहादेवंपूजयत्यंबिकायुतम् ॥ १४ ॥ तस्मिन्दिनेसपत्नीकान्द्विजाग्र्यान्वेदवित्तमान् ॥ संपूज्यपरयाभक्त्याधनंभूरिददातिच ॥ १५ ॥

ओंके कहनेपर वे दोनों ब्राह्मणकुमार राजाके पास गये और अपने गुणोंसे राजाको प्रसन्न किया ॥ ११ ॥ विद्यासे प्रसन्न हुए राजासे उन ब्राह्मणकुमारोंने अपने विवाहके निमित्त धन मांगा ॥ १२ ॥ राजा भी उनका अभिमत जान कुछ हँसकर लोकके तत्त्व जाननेकी इच्छासे बोला ॥ १३ ॥ कि निषधदेशके राजाकी सीमन्तिनी नाम राजपत्नी सोमवारको निरन्तर शंकरका पूजन करती है ॥ १४ ॥ और उसदिन वेदके ज्ञाता द्विजोत्तम ब्राह्म

णोंकी भक्तिपूर्वक पूजा कर बहुत धन देती है ॥ १५ ॥ इसलिये तुममेंसे एक स्त्री बनो और एक उसका पति बनो दोनों स्त्री पुरुष हो, उसके निकट जाओ ॥ १६ ॥ तुम दोनों उसके घर जा भोजन कर और बहुत धन ले फिर मेरे निकट आना ॥ १७ ॥ इसप्रकार राजाके आज्ञा देनेपर वे ब्राह्मणकुमार डरे और बोले कि हे राजन् ! ऐसा कर्म करते हमको भय उपस्थित होता है ॥ १८ ॥ देवता, गुरु, माता, पिता, राजा, इनके सामने

अतोऽत्रयुवयोरेकोनारीविभ्रमवेषधृक् ॥ एकस्तस्याःपतिर्भूत्वाजायेतांविप्रदंपती ॥ १६ ॥ युवांवधूवरौभूत्वाप्राप्यसीमंतिनीगृहम् ॥ भुक्त्वाभूरिधनंलब्ध्वापुनर्यातंममांतिकम् ॥ १७ ॥ इतिराज्ञासमादिष्टौभीतौद्विजकुमारकौ ॥ प्रत्यूचतुरिदंकर्मकर्तुंनौजायतेभयम् ॥ १८ ॥ देवतासुगुरौपित्रोस्तथाराजकुलेषुच ॥ कौटिल्यमाचरन्मोहात्सद्योनश्यतिसान्वयः ॥ १९ ॥ कथमंतर्गृहंराज्ञांछद्मनाप्रविशेत्पुमान् ॥ गोप्यमानोपियःकश्चित्कदाचित्ख्यातिमेष्यति ॥ २० ॥ येगुणाःसाधिताःपूर्वंशीलाचारश्रुतादिभिः ॥ सद्यस्तेनाशमायांतिकौटिल्यपथगामिनः ॥ २१ ॥ पापंनिंदाभयंवैरंचत्वार्येतानिदेहिनाम् ॥ छद्ममार्गप्रपन्नानांतिष्ठंत्येवहिसर्वदा ॥ २२ ॥

अज्ञानसेभी कुटिलता करनेसे मनुष्य कुटुम्बसमेत नष्ट होजाता है ॥ १९ ॥ पुरुष राजाओंके घरमें कपटसे किसप्रकार प्रवेश कर सकता है, कपटको छिपाकर कदाचित् चलाभी जाय और फिर वह कपट प्रकट होजाय तो ॥ २० ॥ पहिले शील आचार और वेदसे जो गुण संचित किये हैं, वे सब उस कुटिलगामीके तत्काल नष्ट होजाते हैं ॥ २१ ॥ कपट रूप धारण करनेवाले देहधारियोंके पाप, निन्दा, भय और वैर सदा

स्थित रहते हैं ॥ २२ ॥ हम श्रेष्ठ आचरणवाले हैं और पवित्र कुलमें हमारा जन्म हुआ है, इसलिये धूर्तोंके करनेयोग्य कार्योंको हम कदापि नहीं करसकते ॥ २३ ॥ राजा बोला, देवता, गुरु, माता, पिता और राजा इनकी शासनाका कभी उल्लंघन न करे, इसका कहीं प्रत्यादेश नहीं ॥ २४ ॥ यह जो कुछ शुभ वा अशुभ आज्ञा दें, उसको निरन्तर डरपूर्वक शुभचाहनेवालोंको करना चाहिए ॥ २५ ॥ इस कारण हम राजा हैं और तुम प्रजा, राजाकी आज्ञा माननेवालोंका कल्याण होता है, नहीं माननेवालोंको भय ॥ २६ ॥ इस कारण मेरी आज्ञाको शीघ्र करना चाहिए, इसप्रकार

अतआवांशुभाचारौजातौचशुचिनांकुले ॥ वृत्तंधूर्तजनश्लाघ्यंनाश्रयावःकदाचन ॥ २३ ॥ राजोवाच ॥ ॥ देवतानांगुरूणांचपित्रोश्च पृथिवीपतेः ॥ शासनस्याप्यलंघ्यत्वात्प्रत्यादेशोनकर्हिचित् ॥ २४ ॥ एतैर्यद्यत्समादिष्टंशुभंवायदिवाशुभम् ॥ कर्त्तव्यंनियतंभीतैरप्रम त्तैर्बुभूषुभिः ॥ २५ ॥ अतोवयंहिराजानःप्रजायूयंहिसंमताः ॥ राजाज्ञयाप्रवृत्तानांश्रेयःस्यादन्यथाभयम् ॥२६॥ अतोमच्छासनंकार्यंभव द्भ्यामविलंबितम् ॥ इत्युक्तंनरदेवेनतौतथेत्यूचतुर्भयात् ॥ २७ ॥ सारस्वतस्यतनयंसामवंतंनराधिपः ॥ स्त्रीरूपधारिणंचक्रेवस्त्राकल्पांज नादिभिः ॥ २८ ॥ सकृत्रिमोद्भूतकलत्रभावःप्रयुक्तकर्णाभरणांगरागः ॥ स्निग्धाञ्जनाक्षःस्पृहणीयरूपोबभूवसद्यःप्रमदोत्तमाभः ॥२९॥ तावुभौदंपतीकृत्वाद्विजपुत्रौनृपाज्ञया ॥ जग्मतुर्नैषधंदेशंयद्वातद्वाभवत्विति ॥ ३० ॥

राजाके आज्ञा देनेपर दोनोंने भयसे जाना स्वीकार किया ॥ २७ ॥ सारस्वतके पुत्र सामवान्को राजाने वस्त्र आभूषण और अंजनादिसे भूषित कर स्त्री बनाया ॥ २८ ॥ बनावटी स्त्री रूपधारी, पहिराये हैं कर्णोंके गहने जिसको, महावर आदिसे युक्त, स्निग्ध अंजन है नेत्रोंमें जिसके, बडाईके योग्यहै रूप जिसका, स्त्रियोंमें सुन्दर कान्तिवाला ॥ २९ ॥ इसप्रकार कान्तियुक्त वह सारस्वतका पुत्र स्त्री बन अपने मित्रके साथ राजाकी आज्ञासे जो

कुछ हो, ऐसा मनमें विचार निषधदेशको चलदिया ॥ ३० ॥ कुछ समयके उपरांत वे दोनों निषधदेशमें पहुँचे और सोमवारको सपत्नीक ब्राह्मणों के साथ राजभवनमें गये, वहाँ अतिथिसत्कारके निमित्त उनके चरण धोये गये ॥ ३१ ॥ उस रानीने सुन्दर आसनोंपर बैठेहुए सब सपत्नीक ब्राह्मणोंकी पृथक २ पूजा की ॥ ३२ ॥ उन कृत्रिमदंपती उनको रानी जानगई, और हँसी किन्तु उनसे कुछ न कहा, उनको पार्वती शिवही

उपेत्यराजसदनंसोमवारेद्विजोत्तमैः ॥ सपत्नीकैःकृतातिथ्यौधौतपादौबभूवतुः ॥ ३१ ॥ साराज्ञीब्राह्मणान्सर्वानुपविष्टान्वरासने ॥ प्रत्ये कमर्चयांचक्रेसपत्नीकान्द्विजोत्तमान् ॥ ३२ ॥ तौचविप्रसुतौदृष्ट्वाप्राप्तौकृतकदंपती ॥ ज्ञात्वाकिंचिद्विहस्याथमेनेगौरीमहेश्वरौ ॥ ३३ ॥ आवाह्यद्विजमुख्येषुदेवदेवंसदाशिवम् ॥ पत्नीष्वावाहयामाससादेवींजगदंबिकाम् ॥ ३४ ॥ गंधैर्माल्यैः सुरभिभिर्धूपैर्नीराजनैरपि ॥ अर्चयित्वाद्विजश्रेष्ठान्नमश्चक्रेसमाहिता ॥ ३५ ॥ हिरण्मयेषुपात्रेषुपायसंघृतसंयुतम् ॥ शर्करामधुसंयुक्तंशाकैर्जुष्टंमनोरमैः ॥ ३६ ॥ गंधशाल्योदनैर्हृद्यैर्मोदकापूपराशिभिः ॥ शष्कुलीभिश्चसंयावैः कृसरैर्माषपक्वकैः ॥ ३७ ॥ तथान्यैरप्यसंख्यातैर्भक्ष्यैर्भोज्यैर्मनोरमैः ॥ सुगंधैःस्वादुभिः सूपैःपानीयैरपिशीतलैः ॥ ३८ ॥

माना ॥ ३३ ॥ उसने सम्पूर्ण ब्राह्मणोंमें शंकरका आवाहन किया और उनकी स्त्रियोंमें जगदम्बा पार्वतीजीका आवाहन किया ॥ ३४ ॥ गन्ध माला सुगंधितधूप, नीराजनसे पूजा कर एकाग्रमनसे उनको प्रणाम किया ॥ ३५ ॥ और सुवर्णके पात्रोंमें घृतयुक्त पायस, शर्करा, मधु, अनेक प्रकारके शाक ॥ ३६ ॥ सुगंधित चावलोंका ओदन (भात) सुन्दर मोदक; अपूपराशि, पूरी, लपसी, उरदोंकी खिचड़ी, ॥ ३७ ॥ तथा अन्य विख्यात मनोहर

भक्ष्य और भोज्य पदार्थ, सुगंधित और स्वादिष्ठ दाल, शीतलपानी ॥ ३८ ॥ और बहुमूल्य अन्न उनके आगे परोसे और भक्तिपूर्वक उसने उनको सन्तुष्ट किया, दध्योदन परोसा जिससे वे बहुत प्रसन्न हुए ॥ ३९ ॥ भोजन करके उन ब्राह्मणोंके आचमन करनेपर सीमंतिनीने उनको प्रणाम करके ताम्बूल और यथायोग्य दक्षिणा दी॥४०॥धेनु, हिरण्य, वस्त्र, रत्नोंकी माला और अनेक प्रकारके गहने देकर फिर प्रणाम किया और ब्राह्मणोंको बिदाई दी ॥ ४१ ॥ उन ब्राह्मणपुत्रोंमें उसने एकको तो पार्वतीकी बुद्धिसे पूजा और दूसरेको शिवरूप मानकर पूजा, उसकी आज्ञासे फिर वे प्रणाम

कृतमन्नंद्विजाग्र्येभ्यः साभक्त्यापर्यतोषयत् ॥ दध्योदनंनिरुपमंनिवेद्यसमतोषयत् ॥ ३९ ॥ भुक्तवत्सुद्विजाग्र्येषुस्वाचांतेषुनृपांगना ॥ प्रणम्यदत्त्वाताम्बूलंदक्षिणांचयथार्हतः ॥४० ॥ धेनूर्हिरण्यवासांसिरत्नस्रग्भूषणानिच ॥ दत्त्वाभूयोनमस्कृत्यविससर्जद्विजोत्तमान् ॥ ॥ ४१ ॥ तयोर्द्वयोर्भूसुरवर्यपुत्रयोरेकस्तयाहैमवतीधियार्चितः ॥ एकोमहादेवधियाभिपूजितः कृतप्रणामौययतुस्तदाज्ञया ॥ ४२ ॥ सातुविस्मृतपुंभावातस्मिन्नेवद्विजोत्तमे ॥ जातस्पृहामदासिक्ताकंदर्पविवशाब्रवीत् ॥ ४३ ॥ अयिनाथविशालाक्षसर्वावयवसुंदर ॥ तिष्ठ तिष्ठक्वयासिमांनपश्यसितेप्रियाम् ॥ ४४ ॥ इदमग्रेवनंरम्यंसुपुष्पितमहाद्रुमम् ॥ अस्मिन्विहर्तुमिच्छामित्वयासहयथासुखम् ॥४५॥

करिके अपने देशको चलदिये ॥ ४२ ॥ जिसको रानीने पार्वती मानकर पूजाथा वह अपना पुरुषत्व भूलगया और कन्दर्पसे व्याकुल और मदयुक्त हो अपने मित्रमें प्रीति विहारकी इच्छासे बोला ॥ ४३ ॥ अयि सर्वावयवसुन्दर, विशालाक्ष, नाथ ! रुको २ कहाँ जातेहो, मुझ अपनी प्रियाको नहीं देखते ॥ ४४ ॥आगे सुन्दर पुष्प और वृक्षोंसे शोभित बन दीखपड़ता है, इस बनमें तुम्हारेसाथ सुखपूर्वक विहार करनेकी इच्छा करती हूँ॥ ४५॥

इसप्रकार उसका वचन सुन वह पीछे न फिरा, उसने विचारा और हँसा कि, यह क्या हुआ, तथा फिर आगेको चलदिया ॥ ४६ ॥ फिर उस बालाने कहा कि रुको २ कहाँ जातेहो कामदेवकी पीडासे व्यथित मुझको प्राप्त होओ ॥ ४७ ॥ मुझ कान्ताको हृदयसे लगाकर अधरपान करो, मैं कामदेवके बाणोंसे पीडित हूँ, मैं इससमय चल नहीं सकती ॥४८॥ इसप्रकार अद्भुत वाणीको सुन उसको बहुत शंका हुई और पीछे आतीहुई उसको देख वह बहुत आश्चर्य करने लगा ॥ ४९ ॥ कौन यह पद्मपलाशके समान नेत्रवाली, अति ऊँचे और कठोर जिसके कुच हैं, कोमल अंगवाली, कृशोदरी और

इत्थंतयोक्तमाकर्ण्यपुरोगच्छद्द्विजात्मजः ॥ विचिंत्यपरिहासोऽकिंगच्छतिस्मयथापुरा ॥ ४६ ॥ पुनरप्याहसाबालातिष्ठतिष्ठक्यास्यासि ॥ दुरुत्संगस्मरावेशांपरिभूतामुपेत्यमाम् ॥४७॥ परिष्वजस्वमांकांतांपाययस्वतवाधरम् ॥ नाहंगंतुंसमर्थास्मिस्मरबाणप्रपीडिता ॥ ४८ ॥ इत्थमश्रुतपूर्वांतांनिशम्यपरिशंकितः ॥ आयांतींपृष्ठतोवीक्ष्यसहसाविस्मयंगतः ॥ ४९ ॥ कैषापद्मपलाशाक्षीपीनोन्नतपयोधरा ॥ कृशोदरीबृहच्छ्रोणीनवपल्लवकोमला ॥ ५० ॥ सएवमेसखाकिंनुजातएववरांगना ॥ पृच्छाम्येनमतःसर्वमितिसंचिन्त्यसोऽब्रवीत् ॥५१॥ किमपूर्वइवाभासिसखेरूपगुणादिभिः ॥ अपूर्वंभाषसेवाक्यंकामिनीवसमाकुला ॥५२॥ यस्त्वंवेदपुराणज्ञोब्रह्मचारीजितेंद्रियः ॥ सारस्वतात्मजःशांतःकथमेवंप्रभाषसे ॥ ५३ ॥

बृहत्श्रोणी स्त्री चलीआती है ॥ ५० ॥ पर उसने विचारा कि, यह वही मेरा मित्र है, स्त्री किसप्रकार होगया, इसलिये इसीसे पूँछना चाहिये, यह विचार उससे बोला ॥ ५१ ॥ कि हे सखे । अपूर्वके समान तुम रूप और गुणोंसे किसप्रकार शोभित हो और कामिनी स्त्रीके समान व्याकुल हो अपूर्व वचन बोलते हो ॥ ५२ ॥ कारण कि तुमतो वेदपुराणके जाननेवाले, जितेंद्रिय ब्राह्मण हो, शान्त हो, सारस्वत तुम्हारे पिताका नाम है, फिर ऐसा

वचन किसप्रकार बोलते हो ॥५३॥ ब्राह्मणपुत्रके इसप्रकार कहनेपर वह बोली कि हे प्रभो ! मैं पुरुष नहीं हूँ, सारस्वती मेरा नाम है, तुमको प्रसन्न करूँगी ॥ ५४ ॥ हे कांत ! यदि तुमको मेरे स्त्री होनेमें कुछ सन्देह हो तो, मेरे अंग देखलो तब निश्चय होजायगा, इसप्रकार उसके कहनेपर परीक्षाके लिये उसने एकान्तमें उसके अंग देखे ॥ ५५ ॥ तो स्वाभाविक जूडेसे युक्त, जंघा और स्तनोंसे शोभित, और महास्वरूपवान् स्त्रीको देख कामसे कुछ व्याकुल हुआ ॥ ५६ ॥ फिर चित्तके विकारको रोक वह बुद्धिमान मुहूर्त्तमात्र आश्चर्य करने लगा और कुछ न बोला ॥ ५७ ॥ स्त्री

इत्युक्तासापुनःप्राहनाहमस्मिपुमान्प्रभो ॥ नाम्नासारस्वतीबालातवास्मिरतिदायिनी ॥ ५४ ॥ यदितेसंशयःकांतममांगानिविलोकय ॥ इत्युक्तःसहसामार्गैरहस्येनांव्यलोकयत् ॥ ५५ ॥ तामकृत्रिमधम्मिल्लांजघनस्तनशोभिनीम् ॥ सुरूपांवीक्ष्यकामेनकिंचिद्व्याकुलतामगात् ॥५६॥पुनःसंस्तभ्ययत्नेनचेतसोविकृतिंबुधः ॥ मुहूर्तेविस्मयाविष्टोनकिंचित्प्रत्यभाषत ॥५७॥ सार०३०॥ गतस्तेसंशयःकश्चित्तर्ह्यागच्छ भजस्वमाम् ॥ पश्येदंविपिनंकांतपरस्त्रीसुरतोचितम् ॥५८॥ सुमेधाउवाच ॥ ॥ मैवंकथयमर्यादांमाहिंसीर्मदमत्तवत् ॥ आवांविज्ञात शास्त्रार्थौत्वमेवंभाषसेकथम् ॥ ५९ ॥ अधीतस्यचशास्त्रस्यविवेकस्यकुलस्यच ॥ किमेषसदृशोधर्मोजारधर्मनिषेवणम् ॥ ६० ॥

बोली कि तुम्हारा संदेह निवृत्त होगया हो तो आओ और मेरे साथ रति करो, हे कान्त ! पराई स्त्रीके साथ रति करनेयोग्य इस सुन्दर बनको देखो ॥ ५८ ॥ इतना वचन सुन सुमेधानाम ब्राह्मण बोला, मदसे मत्तके समान हो ऐसा वचन मत कहो, मर्य्यादाका उल्लंघन मत करो, हम तुम शास्त्रार्थ सम्पन्न हैं तुम ऐसा वचन किसप्रकार कहते हो ॥ ५९ ॥ शास्त्रसम्पन्न, ज्ञानवान् और कुलीनोंका क्या यही धर्म है ? जो

जारकर्म सेवन करें ॥ ६० ॥ तुम स्त्री नहीं विद्वान्‌पुरुष हो, अपने आपको अपने आपसे जानो, यह हमारा कियाहुआही अनर्थ है कि जो हम दोनोंने किया ॥ ६१ ॥ धूर्तराजाकी आज्ञासे अपने मातापिताको वंचित करके जो अनुचित कर्म किया. यह उसीका फल हम भोग रहे हैं ॥ ६२ ॥ अनुचित जितने कर्म हैं, वे सब मनुष्योंके कल्याणका नाश करते हैं, जिस अनुचित कार्यके करनेसे तुम विद्वान् ब्राह्मण निन्दित स्त्रीत्वको प्राप्त हुए ॥ ६३ ॥ जो पुरुष मार्ग छोड बनमें जाता है वह कांटोंसे बिंधजाता है अथवा बलपूर्वक व्याघ्र आदि हिंसक जीवोंसे खाया जाता

नत्वंस्त्रीपुरुषोविद्वाञ्जानीह्यात्मानमात्मना ॥ अयंस्वयंकृतोनर्थआवाभ्यांयद्विचेष्टितम् ॥ ६१ ॥ वंचयित्वात्मपितरौधूर्त्तराजानुशासनात् ॥ कृत्वाचानुचितंकर्मतस्यैतद्भुज्यतेफलम् ॥ ६२ ॥ सर्वंत्वनुचितंकर्मनृणांश्रेयोविनाशनम् ॥ यस्त्वंविप्रात्मजोविद्वान्गतःस्त्रीत्वंविगर्हितम् ॥ ६३ ॥ मार्गंत्यक्त्वागतोरण्यंनरोविध्येतकंटकैः ॥ बलाद्धिंस्येतवाहिंस्रैर्यदात्यक्तसमागमः ॥ ६४ ॥ एवंविवेकमाश्रित्यतूष्णीमेहिस्वयंगृहम् ॥ देवद्विजप्रसादेनस्त्रीत्वंतवविलीयते ॥ ६५ ॥ अथवादैवयोगेनस्त्रीत्वमेवभवेत्तव ॥ पित्रादत्तामयासाकंरंस्यसे वरवर्णिनि ॥ ६६ ॥ अहोचित्रमहोदुःखमहोपापबलंमहत् ॥ अहोराज्ञःप्रभावोयंशिवाराधनसंभृतः ॥ ६७ ॥

है ॥ ६४ ॥ इसप्रकार ज्ञान धारण कर चुप हो घरको चलो, देवद्विजोंके प्रसादसे तुम्हारा स्त्रीपन दूर होजायगा ॥ ६५ ॥ अथवा दैवयोगसे तुम स्त्रीही रहोगी, हे वरवर्णिनि ! जब तुम्हारा पिता मेरे साथ तुम्हारा विवाह करदे तब तुम मेरे साथ रमण करियो ॥ ६६ ॥ अहो बड़ा आश्चर्य है, दैव विचित्र है, अहो बड़ा दुःख है, अहो पापका बड़ा बल है, अहो शिवकी आराधनासेही राजाका यह प्रभाव हुआहै ॥ ६७ ॥

उस ब्राह्मणकेइसप्रकार कहनेपरभी वह वधू शीघ्रही कामदेवसे व्याकुल होगई और बलपूर्वक उसको आलिंगन कर अधर पल्लवका पान करने लगी ६८॥ उसकेघर्षणा करनेपरभी उस धीर सुमेधानाम ब्राह्मणपुत्रने नवयौवना स्त्रीको रमण नहीं किया, और ज्यों त्यों बचताहुआ घर लाया, घर आकर अपने माता पितासे सब वृत्तान्त निवेदन किया ॥६९॥ जब उनके पिताओंने यह वृत्तान्त सुना तब वे क्रोधित हो शोकसे विह्वल होगये और उन दोनों कुमारोंको साथ ले विदर्भराजके पास पहुँचे ॥ ७० ॥ उस धूर्त राजासे सारस्वत ब्राह्मण बोला कि हे राजन् ! तुम्हारी शासनसे यन्त्रित हुए मेरे पुत्रको देखो

इत्युक्ताप्यसकृत्तेनसावधूरतिविह्वला ॥ बलेनतंसमालिंग्यचुचुंबाधरपल्लवम् ॥ ६८ ॥ धर्षितोपितयाधीरःसुमेधानूतनास्त्रियम् ॥ यत्नादानीयसदनंकृत्स्नंतत्रन्यवेदयत् ॥ ६९ ॥ तदाकर्ण्याथतौविप्रौकुपितौशोकविह्वलौ ॥ ताभ्यांसहकुमाराभ्यांविदर्भांतिकमीयतुः ॥ ७० ॥ ततःसारस्वतः प्राह राजानंधूर्तचेष्टितम् ॥ राजन्ममात्मजंपश्य तव शासनयंत्रितम् ॥ ७१ ॥ एतौतवाज्ञावशगौचक्रतुःकर्मगर्हितम् ॥ मत्पुत्रस्तत्फलंभुंक्तेस्त्रीत्वंप्राप्यजुगुप्सितम् ॥ ७२ ॥ अद्यमेसंततिर्नष्टानिराशाःपितरोमम ॥ नापुत्रस्यहिलोकोस्तिलुप्तपिंडादिसंस्कृतेः ॥ ७३ ॥ शिखोपवीतमजिनंमौंजींदंडंकमंडलुम् ॥ ब्रह्मचर्योचितंचिह्नंविहायेमांदशांगतः ॥ ७४ ॥ ब्रह्मसूत्रंचसावित्रींस्नानंसंध्यांजपार्चनम् ॥ विसृज्यस्त्रीत्वमाप्तोस्यकागतिर्वदपार्थिव ॥ ७५ ॥

॥ ७१ ॥ तुम्हारी आज्ञा मानकर इन्होंने यह निंदित कर्म किया, उसका फल मेरे पुत्रने निन्दनीय स्त्री होकर भोगा ॥ ७२ ॥ आज मेरी सन्तानके नष्ट होनेसे मेरे पितर निराश होगये, क्योंकि पिण्डादि संस्कारके नष्ट होजानेसे पुत्रहीनकी गति नहीं होती ॥ ७३ ॥ शिखा, उपवीत, मृगचर्म, मौंजी, दण्ड, और कमण्डलु ब्रह्मचारीके धारण करने योग्य इन चिन्होंको त्याग यह इस स्त्रीरूप दशाको प्राप्त होगया ॥ ७४ ॥ ब्रह्मसूत्र, गायत्री,

तुमने मेरी सन्तान नष्ट की, स्नान, सन्ध्या, जप और अर्चनको छोड़ यह स्त्रीत्वको प्राप्त हुआ, हे राजन् ! कहो, इसकी क्या गति होगी ? ॥ ७५ ॥ मेरा वेदमार्ग नष्ट किया, हे राजन् ! एक पुत्रवालेकी मेरी क्या गति होगी, सो कहो ॥ ७६ ॥ इस प्रकार सारस्वतका वचन सुन और सीमंतिनीका ऐसा प्रभाव जान राजा बड़ा आश्चर्य करने लगा ॥ ७७ ॥ इसके उपरान्त राजाने बड़ी कान्तिवाले सब ऋषि महर्षियोंको आदरपूर्वक बुला उनको प्रसन्न किया और उसके पुरुष होनेके निमित्त प्रार्थना की ॥ ७८ ॥ इसप्रकार राजाके प्रश्न करनेपर वे महर्षि बोले कि हे राजन् ! शिव और पार्वतीकी

त्वयामेसंततिर्नष्टानष्टोवेदपथश्चमे ॥ एकात्मजस्यमेराजन्कागतिर्वदशाश्वती ॥ ७६ ॥ इतिसारस्वतेनोक्तंवाक्यमाकर्ण्यभूपतिः ॥ सीमंतिन्याःप्रभावेणविस्मयंपरमंगतः ॥ ७७ ॥ अथसर्वान्समाहूयमहर्षीनामितद्युतीन् ॥ प्रसाद्यप्रार्थयामासतस्यपुस्त्वंमहीपतिः ॥ ॥ ७८ ॥ तेऽब्रुवन्नथपार्वत्याःशिवस्यचसमीहितम् ॥ तद्भक्तानांचमाहात्म्यंकोन्यथाकर्तुमीश्वरः ॥ ७९ ॥ अथराजाभरद्वाजमादायमु निपुंगवम् ॥ ताभ्यांसहद्विजाग्र्याभ्यांतत्सुताभ्यांसमन्वितः ॥ ८० ॥ अंबिकाभवनंप्राप्यभरद्वाजोपदेशतः ॥ तांदेवींनियमैस्तीव्रैरुपा स्तेस्ममहानिशि ॥ ८१ ॥ एवंत्रिरात्रंसुविसृष्टभोजनःसपार्वतीध्यानरतोमहीपतिः ॥ सम्यक्प्रणामैर्विविधैश्चसंस्तवैर्गौरींप्रपन्नार्तिहराम तोषयत् ॥ ८२ ॥

इच्छा और उनके भक्तोंका माहात्म्य मेटनेको कौन समर्थ है ॥ ७९ ॥ फिर राजाने मुनिपुंगव भरद्वाज मुनि और पुत्रोंसमेत उन श्रेष्ठ ब्राह्मणोंको साथ ले ॥ ८० ॥ अम्बिकाके भवनमें जा भरद्वाजके उपदेशसे तीव्र नियमों द्वारा महानिशिमें देवीजीकी उपासना की ॥ ८१ ॥ इसप्रकार भोजनपान छोड़ राजा तीनरात्रिपर्यन्त पार्वतीजीके ध्यानमें मग्न होगया और सम्यक् प्रणाम तथा अनेक प्रकारके स्तोत्रोंसे दुखियोंका दुःख दूर करनेवाली गौरीको

प्रसन्न किया ॥ ८२ ॥ अपने भक्त राजाके ऊपर प्रसन्न हुई देवीजीने कोटि चन्द्रमाके समान अपने रूपका राजाको दर्शन कराया ॥ ८३ ॥ और बोलीं कि हे राजन् ! जो तेरी इच्छा हो, वर माँग, राजा बोला हे अम्ब ! इस स्त्रीको पुरुष बना दो, यही मेरी इच्छा है ॥ ८४ ॥ यह सुन फिर पार्वती बोली कि मेरे भक्तोंने जो कर्म किया है वह सौवर्षमेंभी अन्यथा नहीं हो सकता, इसलिये अब यह तो स्त्रीही रहेगी ॥ ८५ ॥ राजा बोला, इस ब्राह्मणके एकही पुत्र था सो कर्मसे नष्ट होगया, अब पुत्रके विना यह वैसा सुख किसप्रकार पावे ॥ ८६ ॥ यह सुन फिर देवीजी बोलीं कि, मेरे

ततःप्रसन्नासादेवीभक्तस्यपृथिवीपतेः ॥ स्वरूपंदर्शयामासचंद्रकोटिसमप्रभम् ॥ ८३ ॥ अथाहगौरीराजानंकिंतेब्रूहिसमीहितम् ॥ सो प्याहपुंस्त्वमेतस्यकृपयादीयतामिति ॥ ८४ ॥ भूयोप्याहमहादेवीमद्भक्तैःकर्मयत्कृतम् ॥ शक्यतेनान्यथाकर्तुंवर्षायुतशतैरपि ॥ ८५ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ एकात्मजोहिविप्रोयंकर्मणानष्टसंततिः ॥ कथंसुखंप्रपद्येतविनापुत्रेणतादृशः ॥ ८६ ॥ देव्युवाच ॥ ॥ तस्यान्यो मत्प्रसादेनजनिष्यतिसुतोत्तमः ॥ विद्याविनयसंपन्नोदीर्घायुरमलाशयः ॥ ८७ ॥ एषासामवतीनामसुतातस्याद्विजन्मनः ॥ भूत्वासुमे धसःपत्नीकामभोगेनयुज्यताम् ॥ ८८ ॥ इत्युक्त्वांतर्हितादेवीतेचराजपुरोगमाः ॥ गताःस्वंस्वंगृहंसर्वेचक्रुस्तच्छासनेस्थितिम् ॥ ८९ ॥ सोपिसारस्वतोविप्रःपुत्रंपूर्वसुतोत्तमम् ॥ लेभे देव्याःप्रसादेनह्यचिरादेवकालतः ॥ ९० ॥

प्रसादसे इसके विद्या विनय सम्पन्न, दीर्घायु, यशस्वी और सुन्दर एक और पुत्र उत्पन्न होगा ॥ ८७ ॥ और सामवती नाम यह ब्राह्मणकी कन्या सुमेधाकी पत्नी हो काम भोगे ॥ ८८ ॥ इसप्रकार कहकर देवीजी अंतर्द्धान होगई और वे सब राजा आदि अपने २ घरको गये, देवीजीने जिसप्र कार आज्ञा दीथी सबने वैसाही किया ॥ ८९ ॥ उसका विवाह सुमेधाके साथ करदिया, और देवीजीके प्रसादसे थोडेही समयमें पहिले पुत्रसेभी

उत्तम पुत्र सारस्वतके उत्पन्न हुआ ॥ ९० ॥ और सामवती कन्या सुमेधाको व्याह दी, उन्होंने बहुतसमय तक बहुत सुख भोगा ॥ ९१ ॥ इतनी
कथा सुनाय फिर सूतजी बोले कि शिवभक्ता सीमंतिनी नाम नृपांगनाका प्रभाव और शंकरका माहात्म्य तुमसे कहा ॥ ९२ ॥ और भी सुननेवा
लोंको मंगल देनेवाला आश्चर्ययुक्त शिवभक्तोंका प्रभाव संक्षेपसे कहूँगा ॥ ९३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखण्डे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषा
टीकायां समिन्तिन्याः प्रभाववर्णनं नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ अथ दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ सूतजी बोले, हे शौनकादिमुनीश्वरो ! शिवजीका

तांचसामवतींकन्यांददौतस्मैसुमेधसे ॥ तौदंपतीचिरंकालंबुभुजातेपरंसुखम् ॥ ९१ ॥ इत्येतच्छिवभक्तायाःसीमंतिन्यानृपास्त्रियाः ॥
प्रभावः कथितःशंभोर्माहात्म्यमपिवर्णितम् ॥ ९२ ॥ भूयोपिशिवभक्तानांप्रभावंविस्मयावहम् ॥ समासाद्वर्णयिष्यामिश्रोतृणांमंगला
यनम् ॥ ९३ ॥ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेसीमंतिन्याःप्रभाववर्णनंनामनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ छ ॥ ॥ सूतउवाच ॥
विचित्रंशिवनिर्वाणंविचित्रंशिवचेष्टितम् ॥ विचित्रंशिवभक्तानांचरितंपापनाशनम् ॥ १ ॥ स्वर्गापवर्गयोःसत्यंसाधनंतद्ब्रवीम्यहम् ॥
अवंतीविषयेकश्चिद्ब्राह्मणोमंदराह्वयः ॥ २ ॥ बभूवविजयारामःस्त्रीजितोधनसंग्रही ॥ संध्यास्नानपरित्यक्तोगंधमाल्यांबरप्रियः ॥ ३ ॥
कुस्त्रीसक्तःकुमार्गस्थोयथापूर्वमजामिलः ॥ सवेश्यांपिंगलांनामरममाणोदिवानिशम् ॥ ४ ॥

प्रभाव और माहात्म्य विचित्र है, शिवभक्तोंका चरितभी विचित्र है जिसके सुननेमात्रसे पाप नष्ट होजाता है ॥ १ ॥ जो कि स्वर्ग और मोक्षका
सत्य साधन है, उस आख्यानका वर्णन करता हूँ, अवंतिदेशमें कोई मन्दर नाम ॥ २ ॥ विजयाप्रिय, स्त्री जित, धन संग्रही, सन्ध्या और स्नान न
करनेवाला, गन्ध माला और वस्त्र प्रिय ॥ ३ ॥ खोटी स्त्रियोंसे रति करनेवाला और अजामिलके तुल्य कुमार्गगामी एक ब्राह्मण था, वह सदा

(रातदिन) पिंगलानाम वेश्याके साथ रमण किया करता था ॥ ४ ॥ और इन्द्रियोंके वशीभूत हो सदा उस वेश्याके घरही रहता था, किसी एक समय (जब कि ब्राह्मणभी उसके घर था) ॥ ५ ॥ कोई एक ऋषभनाम धर्मात्मा शिवयोगी उस वेश्याके घर आया, आतेहुए उसको अपने पुण्यको मूर्तिमान् हुएके समान देख ॥ ६ ॥ उस वेश्या और ब्राह्मणने ऋषिका पूजन किया, कम्बल है बिछा जिसपर ऐसे महासिंहासनपर उसे बिठा ॥७॥ भक्तिपूर्वक चरण धोये और वह जल अपने २ मस्तकोंपर चढ़ाया, स्वागत, अर्घ्य, नमस्कार, गन्ध, पुष्प, अक्षत आदि, ॥ ८ ॥ उपचारोंसे उसकी

तस्याएवगृहेनित्यमासदिविजितेंद्रियः ॥ कदाचित्सदनेतस्यास्तस्मिन्निवसतिद्विजे ॥ ५ ॥ ऋषभोनामधर्मात्माशिवयोगीसमाययौ ॥
तमागतमभिप्रेक्ष्यमत्वास्वंपुण्यंमूर्तिमत् ॥ ६ ॥ सावेश्यासचविप्रश्चपर्यपूजयतासुभौ ॥ तमारोप्यमहापीठेकंबलांबरसंभृते ॥ ७ ॥
प्रक्षाल्यचरणौभक्त्यातज्जलंदधतुःशिरः ॥ स्वागतार्घ्यनमस्कारैर्गंधपुष्पाक्षतादिभिः ॥ ८ ॥ उपचारैःसमभ्यर्च्यभोजयामासतुर्मुदा ॥
तंभुक्तवंतमाचांतंपर्यंकेसुखसंस्तरे ॥ ९ ॥ उपवेश्यमुदायुक्तौतांबूलंप्रत्ययच्छताम् ॥ पादसंवाहनंभक्त्याकुर्वंतौदैवचोदितौ ॥ १० ॥
कल्पयित्वातुशुश्रूषांप्रीणयामासतुश्चिरम् ॥ एवंसमर्चितस्ताभ्यांशिवयोगीमहाद्युतिः ॥ ११ ॥ अतिवाह्यनिशामेकांययौप्रातस्तदादृतः ॥
एवंकालेगतप्रायेसविप्रोनिधनंगतः ॥ १२ ॥

पूजा कर प्रीतिपूर्वक भोजन कराया, भोजन और आचमनके उपरान्त सुन्दर बिछौने युक्त सुन्दर पलंगपर बैठाया और ताम्बूल निवेदन किया, तदनन्तर वह लेट गया, दैवसे प्रेरित हुए उन दोनोंने उसके चरण दबाये ॥९॥१०॥ इसप्रकार बहुतकाल तक उसकी सेवा कर प्रसन्न किया, उनसे पूजित हो महाद्युति शिवयोगीने ॥ ११ ॥ वहाँ एक रात्रि बिताई और प्रातःकाल होतेही उनसे आदृत हो चलदिया इसप्रकार विहार कर कुछ सम

यके उपरान्त वह ब्राह्मण मृत्युको प्राप्त हुआ ॥ १२ ॥ और वह वेश्याभी समयके फेरसे मर गई उसने अपने कर्मानुसार गति पाई, वह ब्राह्मण अपने कर्मानुसार दशार्ह देशके राजा वज्रबाहुकी बड़ी रानीके गर्भमें आया, बड़ी रानीके गर्भ देख ॥ १३ ॥ १४ ॥ उसकी सौतोंने ईर्षासे उसे छलसे विष दे दिया, घोर विष खाकरभी दैवयोगसे वह न मरी ॥ १५ ॥ किन्तु दुःखमरणसेभी अधिक हुआ, कुछ समयके उपरान्त उसके पुत्र उत्पन्न हुआ ॥ १६ ॥ पुत्रोत्पन्न होनेके उपरान्तभी वह महा क्लेशसे पीडित रही, उसके पुत्रको गर्भमेंही विषका स्पर्श होगया था ॥ १७ ॥ इस

साचवेश्यामृताकालेययौकर्मार्जितांगतिम् ॥ सविप्रःकर्मणानीतोदशार्हधरणीपतेः ॥ १३ ॥ वज्रबाहुकुटुंबिन्याःसुमत्यागर्भमास्थितः ॥ तांज्येष्ठपत्नींनृपतेर्गर्भसंपदमाश्रिताम् ॥ १४ ॥ अवेक्ष्यतस्यैगरलंसपत्न्यश्छद्मनाददुः ॥ साभुक्त्वागरलंघोरंनमृतादैवयोगतः॥१५॥ क्लेशमेवपरंप्रापमरणादतिदुःसहम् ॥ अथकालेसमायातेपुत्रमेकमजीजनत् ॥ १६ ॥ क्लेशेनमहतासाध्वीपीडितावरवर्णिनी ॥ सनिर्दशो राजपुत्रःस्पृष्टपूर्वोगरेणयत् ॥ १७ ॥ तेनावापमहाक्लेशंक्रंदमानोदिवानिशम् ॥ तस्यबालस्यमाताचसर्वांगव्रणपीडिता ॥ १८ ॥ बभूव तुरतिक्लिष्टौगरयोगप्रभावतः ॥ तौराज्ञाचसमानीतौवैद्यैश्चकृतभेषजौ ॥ १९ ॥ नस्वास्थ्यमापतुर्यत्नैरनेकैर्योजितैरपि ॥ नराज्ञौलभते निद्रांसाराज्ञीविपुलव्यथा ॥ २० ॥ स्वपुत्रस्यचदुःखेनदुःखितानितरांकृशा ॥ नीत्वैवंकतिचिन्मासान्सराजामातृपुत्रकौ ॥ २१ ॥

कारण उस बालकको भी महाक्लेश हुआ, वह रातदिन रुदन करता था, विषपान करनेके कारण उसकी माताके सब शरीरमें व्रण निकल आये ॥ १८॥ विषके प्रभावसे उन दोनोंको महा क्लेश हुआ, राजाने वैद्योंसे उनकी बहुत औषधि कराई ॥ १९ ॥ अनेक प्रकारकी औषधि करानेपरभी उनको आराम न हुआ, अधिक पीडाके कारण रानीको रात्रिमें निद्रातक नहीं आती थी ॥ २० ॥ तिसपर पुत्रके शोकसे औरभी कृश होगई थी, कुछ महीनोंके

उपरान्त राजा ॥ २१ ॥ जीतेहुएही यह मरेहुएके समान हैं, ऐसा देख मनमें विचारने लगा कि वह मेरे स्त्री, पुत्र नरकसे यहाँ आये हैं ॥ २२ ॥ इनका रोग शान्त नहीं होता, रातदिन रोते हैं, रात्रिको नींद नहीं आती, इन दोनों पापियोंका उपाय करना चाहिये, यह मरते हैं न जीते हैं, अपना कियाहुआ पाप भोगते हैं ॥ २३ ॥ इसप्रकार निश्चय कर अन्य स्त्री पुत्रोंमें आसक्त हुए राजाने सारथीको बुला अपनी रानी और पुत्रको रथमें बिठा दूर वनमें निकलवा दिया ॥ २४ ॥ सारथिके द्वारा दूर वनमें त्यागेहुए वे दोनों दुःखी हो भूंख प्याससे व्याकुल होगये ॥ २५ ॥ बालकको साथ

जीवंतौचमृतप्रायौविलोक्यात्मन्यचिंतयत् ॥ एतौमेगृहिणीपुत्रौनिरयादागताविह ॥ २२ ॥ अश्रांतरोगौक्रंदंतौनिद्राभंगविधायिनौ ॥ अत्रोपायंकरिष्यामिपापयोर्ध्रुवमेतयोः ॥ मर्तुवाजीवितुंवापिनक्षमौपापभोगिनौ ॥ २३ ॥ इत्थंविनिश्चित्यचभूमिपालःसक्तःसपत्नीषुतदात्मजेषु ॥ आहूयसूतंनिजदारपुत्रौनिर्वापयामासरथेनदूरम् ॥ २४ ॥ तौसूतेनपरित्यक्तौकुत्रचिद्विजनेवने ॥ अवापतुःपरांपीडांक्षुत्तृड्भ्यां भृशविह्वलौ ॥ २५ ॥ सोद्वहंतीनिजंबालंनिपतंतीपदेपदे ॥ विश्वसंतीनिजंकर्मनिंदंतीचकिताभृशम् ॥ २६ ॥ क्वचित्कंटकभिन्नांगीमुक्तकेशीभयातुरा ॥ क्वचिद्व्याघ्रस्वनैर्भीताक्वचिद्व्यालैरनुद्रुता ॥ २७ ॥ भर्त्स्यमानापिशाचैश्चवेतालैर्ब्रह्मराक्षसैः ॥ महागुल्मेषुधावंती भिन्नपादाक्षुराश्मभिः ॥ २८ ॥

लिये वह वज्रबाहुकी रानी पदपदपर गिरती पड़ती, अपने कर्मकी निन्दा करतीहुई बहुत चकित होगई ॥ २६ ॥ कहीं काँटे पैरोंमें चुभगये थे, बाल उसके खुलेहुए थे, भयसे व्याकुल थी, कहीं व्याघ्रोंके शब्दोंसे डरती थी, कहीं सर्पोंसे भय होता था ॥ २७ ॥ पिशाच, वेताल और ब्रह्मराक्षसोंसे भर्त्स्यमान हुईभी वह रानी कि, जिसके चरण गोखरू और पत्थरोंसे छिदगये हैं, महा गुल्मस्थानमें फिरने लगी ॥ २८ ॥

इसप्रकार घोर वनमें फिरते फिरते उसको दैवयोगसे, गौ, घोड़े और मनुष्योंसे सेवित वैश्यमार्ग दिखाई दिया ॥२९॥ वह उसी मार्गसे थोड़ी दूरतक चली गई, वहाँ उसने अनेक स्त्री पुरुषोंसे युक्त नगर देखा ॥ ३० ॥ उस नगरका शासन करनेवाला महाराजाके समान पद्माकर नाम महावैश्य था ॥३१॥ उस राजाकी कोई एक दासी थी, उसने राजाकी स्त्रीको दूरसे आते देखा और उसके निकट गई ॥ ३२ ॥ दासीने उसका सब वृत्तान्त जाना, पुत्रसमेत बहुत पीडित हुई और स्वयं जानलिया है वृत्तान्त जिसका ऐसी उस नृपांगनाको राजाको दिखाया ॥ ३३ ॥ पुत्रसमेत रोगसे युक्त हुई उसको राजाने

सैवंघोरेमहारण्येभ्रमंतीनृपगेहिनी ॥ दैवात्प्राप्तावणिङ्मार्गंगोवाजिनरसेवितम् ॥ २९ ॥ गच्छंतीतेनमार्गेणसुदूरमतियत्नतः ॥ ददर्शवै श्यनगरंबहुस्त्रीनरसेवितम् ॥ ३० ॥ तस्यगोप्तामहावैश्योनगरस्यमहाजनः ॥ अस्तिपद्माकरोनामराजराजइवापरः ॥ ३१ ॥ तस्यवैश्यपतेःकाचिद्गृहदासीनृपांगनाम् ॥ आयांतींदूरतोदृष्ट्वातदंतिकमुपाययौ ॥ ३२ ॥ सादासीनृपतेःकांतांसपुत्रांभृशपीडिताम् ॥ स्वयंविदितवृत्तांतास्वामिनेप्रत्यदर्शयत् ॥ ३३ ॥ सतांदृष्ट्वाविशांनाथोरुजार्त्तांक्लिष्टपुत्रकाम् ॥ नीत्वारहसिसुव्यक्तंतद्वृत्तांतमपृच्छत॥३४॥ तयानिवेदिताशेषवृत्तांतःसवणिक्पतिः ॥ अदोकष्टमितिज्ञात्वानिशश्वाससुहुर्मुहुः ॥ ३५ ॥ तामंतिकेस्वगेहस्यसंनिवेश्यरहोगृहे ॥ वासो न्नपानशयनैर्मातृसाम्यमपूजयत् ॥ ३६ ॥ तस्मिन्गृहेनृपवधूर्निवसंतीसुरक्षिता ॥ व्रणयक्ष्मादिरोगाणांनशांतिंप्रत्यपद्यत ॥ ३७ ॥

देखा और अपने स्थानपर लेजा एकान्तमें उसका वृत्तान्त पूँछा ॥ ३४ ॥ उसके सम्पूर्ण वृत्तान्त निवेदन करनेपर राजाने जानकर कहा कि इसपर बहुत कष्ट है और बारंबार दीर्घश्वास लेने लगा ॥ ३५ ॥ इसके उपरान्त उसने अपने घरके निकट एकान्तमें ठहराकर वस्त्र, अन्न, पान और शयना दिसे उसकी माताके समान पूजा की ॥ ३६ ॥ उस घरमें वह रक्षित हो रहने लगी, किन्तु व्रण और यक्ष्माआदि रोगोंकी शांति वहाँभी

न हुई ॥ ३७ ॥ कुछ दिनोंके उपरान्त वह बालक व्रणोंसे बहुत पीडित हुआ किसी वैद्यकी औषधिने गुण नहीं किया, अन्तमें प्रारब्धके वश हो वह नृपांगनाका पुत्र मरगया ॥ ३८ ॥ पुत्रके मरनेपर रानीने बहुत शोक किया, हा तात, हा तात, हा पुत्र, हा मेरी प्राणरक्षाके करनेवाले ॥ ३९॥ हा राजकुलके पूर्ण चन्द्रमा, हा मेरा आनन्द बढ़ानेवाले, हे नृपात्मज ! इस अनाथ, दुखी, बांधवोंसे त्यागी हुई ॥ ४० ॥ अपनी माताको छोड कहाँ जाते हो, इसप्रकार शोक, चिन्ताको बढ़ानेवाले रुदनके वाक्योंसे विलाप करतीहुई ॥ ४१ ॥ पुत्रशून्य रानीको उस समय कौन शान्त कर सकताथा

ततोदिनैःकतिपयैःसबालोव्रणपीडितः ॥ विलंघितभिषक्सत्त्वोममारचविधेर्वशात् ॥ ३८ ॥ मृतेस्वतनयेराज्ञीशोकेनमहतावृता ॥ हाता ततातहापुत्रहाममप्राणरक्षण ॥ ३९ ॥ हाराजकुलपूर्णेन्दोहाममानंदवर्धन ॥ इमामनाथांकृपणांत्वत्प्राणांत्यक्तबांधवाम् ॥ ४० ॥ मातरंते परित्यज्यक्वयातोसिनृपात्मज॥इत्येभिरुदितैर्वाक्यैःशोकचिंताविवर्धकैः ॥४१॥ विलपंतींमृतापत्यांकोनुसांत्वयितुंक्षमः ॥ एतस्मिन्समयेत स्यादुःखशोकचिकित्सकः॥४२॥ऋषभःपूर्वमाख्यातःशिवयोगीसमाययौ॥ सयोगीवैश्यनाथेनसार्घहस्तेनपूजितः ॥४३॥ तस्याःसकाशम गमच्छोचन्त्याइदमब्रवीत् ॥ ॥ ऋषभउवाच ॥ अकस्मात्किमहोवत्सेरोरवीषिविमूढधीः ॥ ४४ ॥ कोजातःकतमोलोकेकोमृतोवदसांप्र तम् ॥ अमीदेहादयोभावास्तोयफेनसधर्मकाः ॥ ४५ ॥

महावैश्य आदि सब नगरनिवासियोंने समझाया, उसने किसीका कहना न माना, इसी अवसरमें उसका दुःख शोक दूर करनेके निमित्त ॥ ४२ ॥ वही ऋषभनाम शिवभक्त महायोगी वहाँ आया, महावैश्यने हाथमें अर्घ ला उसकी पूजा की॥ ४३ ॥तदनन्तर महावैश्यके साथ वह ऋषभनाम महा योगी रुदन करती उस रानीके पास पहुँचा और कहा, ऋषभ बोला, हे पुत्रि ! मूढात्मा हुई तू अकस्मात् इतना रोदन क्यों करती है ॥४४॥ संसारमें कौन

उत्पन्न हुआ है, कौन मरा है, सो मुझसे कह, यह शरीर आदिके भाव जलके फेनके समान धर्मवाले हैं ॥ ४५ ॥ कहीं भ्रांति, कहीं शांति और कहीं स्थिति होती है, इसकारण फेनके समान इस देहके मृतक होनेपर ॥ ४६ ॥ शोकका अवकाश न होनेसे विद्वज्जन इसमें शोक नहीं करते गुणोंसे प्राणी उत्पन्न होकर अपने कर्मोंसे भ्रमण करते हैं ॥ ४७ ॥ और अवस्था पूरी होजानेपर संहारको प्राप्त होजाते हैं तथा कर्मवासना भोगते हैं, सत, रज, तम, यह तीनों गुण मायासे उत्पन्न होते हैं॥ ४८॥ उन्हींसे तल्लक्षणाश्रित हो देह उत्पन्न होते हैं, सतोगुणसे देवत्वको, रजोगुणसे मनुष्यत्वको॥ ४९॥

क्वचिद्भ्रांतिः क्वचिच्छांतिःस्थितिर्भवतिवापुनः ॥ अतोस्मिन्फेनसदृशेदेहेपंचत्वमागते ॥ ४६ ॥ शोकस्यानवकाशत्वान्नशोचंतिविप श्चितः ॥ गुणैर्भूतानिसृज्यंतेभ्राम्यंतेनिजकर्मभिः ॥ ४७ ॥ कालेनाथविकृष्यंतेवासनायांचशेरते ॥ माययोत्पत्तिमायांतिगुणाःसत्त्वा दयस्त्रयः ॥ ४८ ॥ तैरेवदेहाजायंतेजातास्तल्लक्षणाश्रयाः ॥ देवत्वंयातिसत्त्वेनरजसाचमनुष्यताम् ॥ ४९ ॥ तिर्यक्त्वतमसाजं तुर्वासनानुगतोवशः ॥ संसारेवर्तमानेस्मिञ्जंतुःकर्मानुबंधनात् ॥ ५० ॥ दुर्विभाव्यांगतिंयातिसुखदुःखमयींसुहृः ॥ अपिकल्पायुषांतेषां देवानांतुविपर्ययः ॥ ५१ ॥ अनेकामयबद्धानांकाकथानरदेहिनाम् ॥ केचिद्वदंतिदेहस्यकालमेवहिकारणम् ॥ ५२ ॥ कर्मकेचिद्गु णाःकेचिद्देहःसाधारणोह्ययम् ॥ कालकर्मगुणाधानंपञ्चात्मकमिदंवपुः ॥ ५३ ॥

और तमोगुणसे वासनाके वशीभूत हुआ प्राणी तिर्यग्योनिको प्राप्त होता है, इस वर्तमान संसारमें कर्मके बन्धनसे प्राणी ॥ ५० ॥ बारंबार सुखदुःख देनेवाली दुर्विभाव्य गतिको प्राप्त होता है, जिन देवताओंकी कल्पभरकी आयु है, अन्तमें उनके देहकाभी पात होता है ॥ ५१ ॥ अनेक रोगोंसे पीडित देहधारियोंकी तो कथाही क्याहै, कोई कालको देहका कारण कहते हैं ॥ ५२ ॥ कोई कर्म कोई गुण और कोई देहको साधारण मानते हैं,

कोई कहते हैं कि, काल, कर्म गुण आदि युक्त यह शरीर पंचात्मक है ॥ ५३ ॥ विद्वान् पुरुष उत्पन्न हुए देहको देखकर प्रसन्न नहीं होते और मृतक होनेपर शोक नहीं करते, यह प्राणी अव्यक्तमें उत्पन्न होता है और अव्यक्तमेंही लीन होजाता है ॥ ५४ ॥ मध्यमें जलके बुद्बुदेके समान व्यक्तसा प्रतीत होताहै, जिस समय प्राणी माताके गर्भमें आता है उसी दिन उसका मृत्युनियत करदिया जाता है ॥ ५५ ॥ फिर परमात्माकी इच्छासे चाहे वह दीर्घायु हो और चाहे उत्पन्न होतेही मरजाय, इसप्रकार कह ऋषभमुनि फिर उपदेश करनेलगे कि, हे पुत्रि ! कोई गर्भमेंही मरजाते

जातंदृष्ट्वानहृष्यंतिनशोचंतिमृतंबुधाः ॥ अव्यक्तेजायतेजंतुरव्यक्तेचप्रलीयते ॥५४॥ मध्येव्यक्तवदाभातिजलबुद्बुदसन्निभः ॥ यदा गर्भंगतोदेहीविनाशःकल्पितस्तदा ॥ ५५ ॥ दैवाज्जीवतिवाजातोम्रियतेसहसैववा ॥ गर्भस्थाएवनश्यंतिजातमात्रास्तथापरे ॥५६॥ क्वचिद्युवानोनश्यंतिम्रियंतेकेपिवार्धके ॥ यादृशंप्राक्तनंकर्मतादृशंविंदतेवपुः ॥ ५७ ॥ भुंक्तेतदनुरूपाणिसुखदुःखानिवैह्यसौ ॥ माया नुभावेरितयोःपित्रोःसुरतसंभ्रमात् ॥ ५८ ॥ देहउत्पद्यतेकोपिपुंयोषित्क्लीबलक्षणः ॥ आयुःसुखंचदुःखंचपुण्यंपापंश्रुतंधनम् ॥ ५९ ॥ ललाटेलिखितंधात्रावहञ्जंतुःप्रजायते ॥ कर्मणामविलंघ्यत्वात्कालस्याप्यनतिक्रमात् ॥ ६० ॥

हैं, कोई उत्पन्न होतेही ॥५६॥ कोई युवावस्थामें और कोई वृद्ध होकर मरजाते हैं, पूर्वजन्ममें जिसने जैसा कर्म किया है वह वैसाही उसका फल भोगता है ॥ ५७ ॥ उसीके अनुसार सुखदुःख भोगता है, मायासे प्रेरित हुए मातापिताके सुरतसंभ्रमसे कोई स्त्री कोई पुरुष और कोई नपुंसक रूपसे शरीर धारण करता है,आयु, सुख, दुःख, पुण्य, पाप, विद्या और धन॥ ५८॥ ५९॥ जो कुछ ब्रह्माजीने मस्तकमें लिखदियाहै उसको धारण करके प्राणी

उत्पन्न होते हैं, उसे कोई न्यूनाधिक नहीं करसकता, कारण कि कर्मका फल और काल किसीके मेटे नहीं मिटसकता ॥ ६० ॥ हे पुत्रि ! भाव अनित्य है, इसकारण तुझको शोक कदापि नहीं करना चाहिये, स्वप्नमें क्या निश्चय है, इंद्रजालमें क्या सत्यता है ॥ ६१ ॥ शरदृतुमें मेघकी क्या नित्यता है, इसीप्रकार इस पंचभौतिक शरीरमेंभी क्या निरंतर स्थिति है, तेरे सैंकडों करोडों जन्म बीतगये ॥ ६२ ॥ किस २ की पुत्री बनी, किस किसकी माता बनी, किसकिसकी स्त्री बनी, तेरे करोडों जन्म बीतगये हैं ॥ ६३ ॥ यह पंचभूतात्मक देह त्वचा, असृक्, मांससे लिपटाहुआ मेदा,

अनित्यत्वाच्चभावानांनशोकंकर्तुमर्हसि ॥ कस्स्वप्नेनियतंस्थैर्यमिंद्रजालेकसत्यता ॥ ६१ ॥ क्वनित्यताशरन्मेघेक्वशश्वत्त्वंकलेवरे ॥ तवजन्मान्यतीतानिशतकोटचयुतानिच ॥ ६२ ॥ कस्यकस्यासितनयाजननीकस्यकस्यवा ॥ कस्यकस्यासिगृहिणीभवकोटिषुव र्त्तिनी ॥ ६३ ॥ पञ्चभूतात्मकोदेहस्त्वगसृङ्मांसबंधनः ॥ मेदोमज्जास्थिनिचितोविण्मूत्रश्लेष्मभाजनम् ॥ ६४ ॥ शरीरांतरमप्ये तान्निजदेहोद्भवंमलम् ॥ मत्वास्वतनयंमूढेमाशोकंकर्तुमर्हसि ॥६५॥ यदिनामजनःकश्चिन्मृत्युंतरतियत्नतः ॥ कथंतर्हिविपद्येरन्सर्वेपू र्वेविपश्चितः ॥ ६६ ॥ तपसाविद्ययाबुद्ध्यामंत्रौषधिरसायनैः ॥ अतियातिपरंमृत्युंनकश्चिदपिपंडितः ॥ ६७ ॥

मज्जा और अस्थिसे युक्त तथा मल मूत्रका पात्र है ॥ ६४ ॥ अपने शरीरसे उत्पन्न दूसरे शरीरधारी पुत्रको मानकर हे मूढे ! तुझको शोक नहीं करना चाहिये ॥ ६५ ॥ यदि कोई यत्न करनेसे मृत्युको जीतलेता तो पूर्व विद्वान् आजतक क्यों न जीते रहते, उनपर क्यों विपत्ति पडती, वे मृत्युके ग्रास क्यों होते ॥ ६६ ॥ तप, विद्या, बुद्धि, मन्त्र, औषधि, रसायन आदि प्रयोगोंसे मृत्यु दूर करनेमें कोई समर्थ नहीं यह निश्चय होता है ॥ ६७ ॥

हे वरानने ! एककी आज मृत्यु हुई, दूसरेकी कल होगी इस कारण इस शरीरके अनित्य होनेसे तू शोक मत करे ॥ ६८ ॥ मृत्यु सदा निकट है फिर कहो कि, देहधारियोंको सुख कहाँ, व्याघ्रके आगे बकरी आदि पशु किसप्रकार घास चरसकते हैं ॥ ६९ ॥ इसलिये हे वरानने ! यदि तुझको मृत्यु, रोग, जन्म और जरा आदिका भय है तो, सबके स्वामी और मृत्युको दूर करनेवाले पार्वतीपति महादेवकी शरण हो ॥ ७० ॥ तभीतक घोर मृत्यु और जराका भय है जबतक कि प्राणी शंकरके चरणकमलकी शरण नहीं होता ॥ ७१ ॥ महादारुण इस संसारमें दुःखोंका अनुभव करते

एकस्याद्यमृतिर्जतोःश्वश्चान्यस्यवरानने ॥ तस्मादनित्यावयवेनत्वंशोचितुमर्हसि ॥ ६८ ॥ नित्यंसन्निहितोमृत्युःकिंसुखंवददेहिनाम् ॥ व्याघ्रेपुरःस्थितेग्रासःपशूनांकिंनुरोचते ॥ ६९ ॥ अतोजन्मजरांजेतुंयदीच्छसिवरानने ॥ शरणंव्रजसर्वेशंमृत्युंजयमुमापतिम् ॥ ७० ॥ तावन्मृत्युभयंघोरंतावज्जन्मजराभयम् ॥ यावन्नोयातिशरणंदेहीशिवपदांबुजम् ॥ ७१ ॥ अनुभूयेहदुःखानिसंसारेभृशदारुणे ॥ मनो यदावियुज्येततदाध्येयोमहेश्वरः ॥ ७२ ॥ मनसापिबतःपुंसःशिवध्यानरसामृतम् ॥ भूयस्तृष्णानजायेतसंसारविषयासवे ॥ ७३ ॥ विमुक्तंसर्वसंगेभ्यश्चमनोवैराग्ययंत्रितम् ॥ यदाशिवपदेमग्नंतदानास्तिपुनर्भवः ॥ ७४ ॥ तस्मादिदंमनोभद्रेशिवध्यानैकसाधनम् ॥ शोकमोहसमाविष्टंमाकुरुष्वशिवंभज ॥ ७५ ॥

हुए जब मनुष्यका मन विरक्त हो तभी शंकरकी आराधना करनी चाहिये ॥ ७२ ॥ शिवध्यानरूप अमृतका मनसे पान करनेसे फिर संसारके विषयों में तृष्णा नहीं रहती ॥ ७३ ॥ इसलिये हे पुत्रि ! सब ओरसे मन रोककर वैराग्यमें लगाना चाहिये, जिससमय प्राणी शंकरके चरणकमलका ध्यान करता है, फिर उसको आवागमनकी पीडा नहीं होती अर्थात् मुक्त होजाता है ॥ ७४ ॥ इसकारण हे भद्रे ! इस मनको शिवके ध्यानमें लगा, शोक

मोह मतकर, शंकरका भजन कर ॥ ७५ ॥ इतनी कथा सुना सूतजी बोले कि, इसप्रकार अनुनयपूर्वक शिवयोगीके द्वारा उपदेश की हुई रानी गुरु रूप उसको प्रणाम करके बोली ॥ ७६ ॥ हे भगवन् ! मृतपुत्रा, प्रियबंधुओंसे त्यागीहुई और महारोगोंसे व्याकुल मेरी मरनेके बिना क्या गति होगी ॥ ७७ ॥ इसकारण इस पुत्रके साथही मरना चाहती हूँ, मरणके समय आज तुम्हारे दर्शनसे मैं कृतार्थ हुई ॥ ७८ ॥ फिर सूतजी बोले कि, इस प्रकार उसका वचन सुन और पूर्वजन्ममें जो उसकी सेवा की थी, उस उपकारका स्मरण कर वह दयानिधि शिवयोगी उस मृतक बालकके निकट गया

॥ सूतउवाच ॥ ॥ इत्थंसानुनयंराज्ञीबोधिताशिवयोगिना ॥ प्रत्याचष्टगुरोस्तस्यप्रणम्यचरणांबुजम् ॥ ७६ ॥ राज्युवाच ॥ ॥ भगवन्मृतपुत्रायास्त्यक्तायाःप्रियबंधुभिः ॥ महारोगातुरायामेकागतिर्मरणंविना ॥ ७७ ॥ अतोहंमर्तुमिच्छामिसहैवशिशुनामुना ॥ कृतार्थाहंयद्यत्वामपश्यंमरणोन्मुखी ॥ ७८ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ इतितस्यावचःश्रुत्वाशिवयोगीदयानिधिः ॥ पूर्वोपकारंसंस्मृत्यमृतस्यांतिकमाययौ ॥ ७९ ॥ सतदाभस्मसंगृह्यशिवमंत्राभिमंत्रितम् ॥ विदीर्णेतन्मुखेक्षिप्त्वामृतंप्राणैरयोजयत् ॥ ८० ॥ सबालःसंगतःप्राणैःशनैरुन्मील्यलोचने ॥ प्राप्तपूर्वेन्द्रियबलोरुरोदस्तनकांक्षया ॥ ८१ ॥ मृतस्यपुनरुत्थानंवीक्ष्यबालस्यविस्मिताः ॥ जनाससमुदिरेसर्वेनगरेषुपुरोगमाः ॥ ८२ ॥ अथानंदभराराज्ञीविह्वलोन्मत्तलोचना ॥ जग्राहतनयंशीघ्रंबाष्पव्याकुललोचना ॥ ८३ ॥

॥ ७९ ॥ और शिवमंत्रसे अभिमंत्रित कर भस्म उसके खुलेहुए मुखमें डाली, भस्मके डालतेही शरीरमें प्राण आगये ॥ ८० ॥ शरीरमें प्राणोंका संचार होनेसे बालकने शनैःशनैः नेत्र खोले. पूर्वके समान उसकी सब इंद्रियोंमें बल आगया और माताका स्तन पान करनेके निमित्त रोदन करनेलगा ॥ ८१ ॥ मृतकहुए बालकका फिर जीवित होना देख सब नगरनिवासी विस्मितहुए और सबको आनन्द हुआ ॥ ८२ ॥ आँसुओंसे व्याकुल हैं नेत्र जिसके ऐसी

उस रानीने आनन्दसे विह्वलहो शीघ्रही पुत्रको गोदमें लेलिया ॥ ८३ ॥ और छातीसे लगाकर परमानन्दको प्राप्त हुई, परिश्रमसे सोतेहुएके समान उसको अपना वा अन्यका ज्ञान न रहा॥८४॥ फिर उस ऋषभनाम शिवयोगीने विषव्रणयुक्त उनके शरीरको भस्म लगाकर शुद्ध करदिया॥८५॥ भस्मके स्पर्शमात्रसे उन दोनोंका दिव्य शरीर होगया, देवताओंके सदृश कांतियुक्त रूप धारण किया ॥ ८६ ॥ पुण्यकर्म सेवन करनेवालोंको देवताओंका ऐश्वर्य

उपगुह्यतदातन्वीपरमानंदनिर्वृता ॥ नवेदात्मानमन्यंवासुषुप्तेवपरिश्रमात् ॥ ८४ ॥ पुनश्चऋषभोयोगीतयोर्मातृकुमारयोः ॥ विषव्रण युतंदेहंभस्मनैवपरामृशत् ॥ ८५ ॥ तौचतद्भस्मनास्पृष्टौप्राप्तदिव्यकलेवरौ ॥ देवानांसदृशंरूपंदधतुःकांतिभूषितम् ॥ ८६ ॥ संप्राप्तेत्रिदि वैश्वर्येयत्सुखंपुण्यकर्मणाम् ॥ तस्माच्छतगुणंप्रापसाराज्ञीसुखमुत्तमम् ॥ ८७ ॥ तांपादयोर्निपतितामृषभःप्रेमविह्वलः ॥ उत्थाप्याश्वा सयामासदुःखैर्मुक्तामुवाचह ॥ ८८ ॥ अयिवत्सेमहाराज्ञिजीवत्वंशाश्वतीःसमाः ॥ यावज्जीवसिलोकेस्मिन्नतावत्प्राप्स्यसेजराम् ॥ ८९ ॥ एषतेतनयःसाध्विभद्रायुरितिनामतः ॥ ख्यातिंयास्यतिलोकेषुनिजंराज्यमवाप्स्यति ॥ ९० ॥ अस्यवैश्यस्यसदनेतावत्तिष्ठशुचिस्मिते ॥ यावदेवकुमारस्तेप्राप्तविद्योभविष्यति ॥ ९१ ॥

प्राप्त होनेपर जो सुख होता है रानीको उससे सौगुना सुख प्राप्त हुआ ॥ ८७ ॥ वह ऋषभयोगीके चरणोंपर गिरपरी इसकारण वहभी प्रेमसे विह्वल होगया और दुःखोंसे निर्मुक्त हुई उसको उठाया और समझाकर बोला ॥ ८८ ॥ अयि वत्से ! महाराज्ञि ! तू निरन्तर अवस्थाका सुख भोग, इस संसारमें तू वृद्धावस्थातक जीवित रहेगी ॥८९॥ यह तेरा दीर्घजीवी पुत्रभी भद्रायुनामसे प्रसिद्ध हो अपना राज्य पावेगा ॥९०॥ जबतक तेरा पुत्र

विद्या अध्ययन करे तबतक तुझको इस वैश्यके सुन्दर स्थानपर रहना चाहिये ॥ ९१ ॥ इतनी कथा सुनाय फिर सूतजी बोले, कि हे मुनीश्वरो ! इसप्रकार उस रानी और उसके पुत्रको भस्मसे जिवाकर ऋषभनाम शिवयोगी यथेष्ट अर्थात जहाँ जानाथा उन देशोंको गये ॥ ९२ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पंडितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां भद्रायोराख्यानं नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ अथैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ सूतजी बोले कि, हे शौनकादि महर्षियो ! पिंगलानाम वेश्या जो हमने पूर्वअध्यायमें वर्णनकी थी वह ऋषभनाम शिवयोगीकी पूजाके प्रभावसे शरीरान्त

॥ सूतउवाच ॥ ॥ इतितानृषभोयोगीतंचराजकुमारकम् ॥ संजीव्यभस्मवीर्येणययौदेशान्यथेप्सितान् ॥ ९२ ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडेभद्रायोराख्यानेदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ ॥ सूतउवाच ॥ पिंगलानामयावेश्यामयापूर्वमुदाहृता ॥ शिवपूजार्चनात्पुण्यात्त्यक्त्वापूर्वकलेवरम् ॥ १ ॥ चंद्रांगदस्यसाभूयःसीमंतिन्यामजायत ॥ रूपौदार्यगुणोपेतानाम्नावैकीर्तिमालिनी ॥ २ ॥ भद्रायुरपि तत्रैवराजपुत्रोवणिक्पतेः ॥ ववृधेसदनेभानुःशुचाविवमहातपाः ॥ ३ ॥ तस्यापिवैश्यनाथस्यकुमारस्त्वेकउत्तमः ॥ सनाम्नासुनयः प्रोक्तोराजसूनोःसखाभवत् ॥ ४ ॥ तावुभौपरमस्निग्धौराजवैश्यकुमारकौ ॥ चित्रक्रीडावुदारांगौरत्नाभरणमंडितौ ॥ ५ ॥

के उपरान्त ॥ १ ॥ चन्द्रांगदनाम राजाकी रानीके गर्भमें आई और कछ दिनोंमें उत्पन्न हुई, रूप और उदारता आदि गुणसम्पन्न थी, नाम उसका कीर्तिमालिनी रनखागया ॥ २ ॥ वह भद्रायु नाम महातेजस्वी राजपुत्रभी महावैश्यके यहाँ ज्येष्ठके सूर्य्यके समान दिन २ बढनेलगा ॥ ३ ॥ उस महावैश्यकेभी सुनयनाम एक पुत्रथा, वह उसका मित्रहुआ ॥ ४ ॥ वे दोनों परमप्रीतिसे चित्रक्रीडा करते, उनका शरीर अति

सुन्दर था, रत्नभूषण धारण कियेहुए थे ॥ ५ ॥ विनयपूर्वक उन दोनोंने सर्व विद्यायें पढीं, राजकुमारका सोलहवाँ वर्ष प्राप्त होनेपर ॥ ६ ॥ वही ऋषभनाम शिवयोगी फिर उसके घर आये, रानी और राजकुमारने उनको आतादेख ॥ ७ ॥ दोनोंने बारंबार प्रसन्नतापूर्वक प्रणाम किया. उनकी पूजासे ऋषभयोगी प्रसन्न हुए ॥८॥ और करुणापूर्वक राजपुत्रसे बोले कि, हे तात ! तुम कुशल हो, तुम्हारी माता अनामय युक्त है ॥९॥

चक्रतुःसर्वविद्यानांसंग्रहंविनयान्वितौ ॥ अथराजकुमारस्यप्राप्तेषोडशहायने ॥ ६ ॥ सएवऋषभोयोगीतस्यवेश्मन्युपाययौ ॥ साराज्ञीसकुमारश्चशिवयोगिनमागतम् ॥ ७ ॥ मुहुर्मुहुःप्रणम्योभौपूजयामासतुर्मुदा ॥ ताभ्यांचपूजितःसोथयोगीशोहृष्टमानसः ॥ ८ ॥ तंराजपुत्रमुद्दिश्यबभाषेकरुणार्द्रधीः ॥ शिवयोग्युवाच ॥ कच्चित्तेकुशलंतातत्वन्मातुश्चाप्यनामयम् ॥ ९ ॥ कच्चित्त्वंसर्वविद्यानामकार्षीश्चप्रतिग्रहम् ॥ कच्चिद्गुरूणांसततंशुश्रूषातत्परोभवान् ॥ १० ॥ कच्चित्स्मरसिमांताततवप्राणसखंगुरुम् ॥ एवंवदतियोगीशे राज्ञीसाविनयान्विता ॥ ११ ॥ स्वपुत्रंपादयोस्तस्यनिपात्यैनमभाषत ॥ एषपुत्रस्तवगुरोत्वमस्यप्राणदःपिता ॥ १२ ॥ एषशिष्यस्तु संग्राह्योभवताकरुणात्मना ॥ अतोबंधुभिरुत्सृष्टमनाथंपरिपालय ॥ १३ ॥

क्या तुमने सर्वविद्यासंग्रह करलिया, क्या तुम निरन्तर गुरुजीकी सेवामें तत्पर रहतेहो ॥ १० ॥ क्या कभी मेरा स्मरणभी करतेहो, मैं तुम्हारा प्राणदान करनेवाला गुरु हूँ, इस प्रकार ऋषभयोगीके कहनेपर विनयपूर्वक रानीने ॥ ११ ॥ अपने पुत्रको ऋषिके चरणोंमें गिराया और उन (ऋषि) से बोली, हे गुरो ! यह तुम्हाराही पुत्र है, प्राणदान करनेसे तुम इसके पिता हो ॥ १२ ॥ करुणा करनेवाले

आपको यह अपना शिष्य बनाना चाहिये, बन्धुओंसे त्यागे हुए और अनाथ इसके ऊपर कृपा करो ॥ १३ ॥ इसको भलीभांति श्रेष्ठ पुरुषोंके मार्ग का उपदेश दो, इसप्रकार रानीके द्वारा प्रसन्न हुए वे महाबुद्धिमान् शिवयोगी ॥ १४ ॥ राजकुमारको सदुपदेश देनेलगे, ऋषभ बोले, कि श्रुति, स्मृति और पुराणोंमें जो सनातन धर्म कहा है ॥ १५ ॥ वह वर्णाश्रमके अनुसार मनुष्योंको सदा सेवन करना चाहिये, हे पुत्र! सत् पुरुषोंके मार्ग और सच्चरितका सेवन कर ॥ १६ ॥ देवताओंकी आज्ञाका कभी उल्लंघन मत करो, देवताओंसे हँसीमत करो, गौ, ब्राह्मण, देवता और गुरुजनोंमें

अस्मैसम्यक्सतांमार्गमुपदेष्टुंत्वमर्हसि ॥ इतिप्रसादितोराज्ञ्याशिवयोगीमहामतिः ॥ १४ ॥ तस्मैराजकुमारायसन्मार्गमुपदिष्टवान् ॥ ॥ ऋषभउवाच ॥ ॥ श्रुतिस्मृतिपुराणेषुप्रोक्तोधर्मःसनातनः ॥ १५ ॥ वर्णाश्रमानुरूपेणनिषेव्यःसर्वदाजनैः ॥ भजवत्ससतांमार्गंसदे वचरितंचर ॥ १६ ॥ नदेवाज्ञांविलंघेथामाकार्षीर्देवहेलनम् ॥ गोदेवगुरुविप्रेषुभक्तिमान्भवसर्वदा ॥ १७ ॥ चांडालमपिसंप्राप्तंसदासं भावयातिथिम् ॥ सत्यंनत्यजसर्वत्रप्राप्तेपिप्राणसंकटे ॥ १८ ॥ गोब्राह्मणानांरक्षार्थमसत्यंमावदक्वचित् ॥ परस्वेषुपरस्त्रीषुदेवब्राह्मण वस्तुषु ॥ १९ ॥ तृष्णांत्यजमहाबाहोदुर्लभेष्वपिवस्तुषु ॥ सत्कथायांसदाचारेसद्व्रतेचसदागमे ॥ २० ॥

सदा भक्ति रक्खो ॥ १७ ॥ यदि समयपर चांडालभी अपने स्थानपर आजाय तौभी उसका यथोचित अतिथिसत्कार करो, प्राणसंकट प्राप्त होनेप रभी सत्यका त्याग मत करो ॥ १८ ॥ गौ, ब्राह्मणकी रक्षाके निमित्त झूंठ बोलनेमें दोष नहीं अन्यथा सर्वत्र निषेध है, पराया धन, पराई स्त्री और देव, ब्राह्मणकी वस्तु॥ १९ ॥चाहे यह दुर्लभभी होंतोभी लोभ न करना चाहिये, सुन्दर कथा, सदाचार, सुन्दर व्रत, सुन्दरशास्त्र ॥ २० ॥

और धर्मादिके संग्रहमें हे महामते ! सदा तृष्णा रखनी चाहिये, स्नान, जप, होम, वेदाध्ययन, पितृतर्पण॥ २१ ॥ और गौ, देवता, इनकी पूजामें आलस्य नहीं करना, क्रोध, द्वेष, भय, शठता, पिशुनता तथा अन्य दुष्कर्म ॥ २२ ॥ कुटिलता, दम्भ, उद्वेग, इनको यत्नपूर्वक त्यागो, मृगया, द्यूत, पान और स्त्रियोंमें ॥ २३ ॥ अतिआसक्त मत होओ, सुखी पुरुषोंसे मित्रता करो, दुखियोंपर दया करो ॥ २४ ॥ पुण्यात्माओंमें संतोष और कुबुद्धियोंमें उदासीनता रक्खो, अतिभोजन, अतिक्रोध, अतिनिद्रा, अतिपरिश्रम ॥ २५ ॥ बहुत बोलना और अतिक्रीड़ा इनको सदैव त्यागना चाहिये, अतिविद्या,

धर्मादिसंग्रहेनित्यंतृष्णांकुरुमहामते ॥ स्नानेजपेचहोमेचस्वाध्यायेपितृतर्पणे ॥ २१ ॥ गोदेवातिथिपूजासुनिरालस्योभवानघ ॥ क्रोधंद्वेषंभयंशाठ्यंपैशुन्यमसदाग्रहम् ॥ २२ ॥ कौटिल्यंदंभमुद्वेगंयत्नेनपरिवर्जय ॥ मृगयाद्यूतपानेषुस्त्रीषुस्त्रीविजितेषुच ॥ २३ ॥ अत्यासक्तिंचमाकार्षीस्तथादुर्विजितेषुच ॥ मैत्रींकुरुसुखाढ्येषुदुःखितेषुदयांकुरु ॥२४॥ पुण्यकृत्सुचसंतोषमौदासीन्यंकुबुद्धिषु ॥ अत्याहारमतिक्रोधमतिनिद्रामतिश्रमम् ॥ २५ ॥ अत्यालापमतिक्रीडांसर्वदापरिवर्जय ॥ अतिविद्यामतिश्रद्धामतिपुण्यमतिस्मृतिम् ॥ २६ ॥ अत्युत्साहमतिख्यातिमतिधैर्यंचसाधय ॥ सकामोनिजदारेषुसक्रोधोनिजशत्रुषु ॥ २७ ॥ सलोभः पुण्यनिचयेसाभ्यसूयोह्यधर्मिषु ॥ सद्वेषोभवपाखंडेसरागःसज्जनेषुच ॥ २८ ॥ दुर्बोधोभवदुर्मंत्रेबधिरःपिशुनोक्तिषु ॥ धूर्त्तंचंडंशठंक्रूरंकितवंचपलंखलम् ॥ २९ ॥

अतिश्रद्धा, अतिपुण्य, अतिस्मृति ॥ २६ ॥ अतिउत्साह, अतिख्याति और अतिधैर्यका साधन करना चाहिये, अपनी स्त्रियोंमें प्रीति और अपने शत्रुओंमें क्रोध करो ॥ २७ ॥ पुण्यसंचयमें लोभ और अधार्मियोंमें असूया (गुणोंमें दोषारोपण करना) पाखंडियोंसे द्वेष, तथा सज्जनोंसे प्रीति करो ॥ २८ ॥ खोटे मित्रमें अज्ञान और पिशुनोंके वचन सुननेमें बधिर होजाओ, धूर्त, चंड, शठ, क्रूर, कपटी वा छली ॥ २९ ॥

चंचल और दुष्ट, पतित, नास्तिक तथा कुटिल, इनको दूरसेही त्याग दो अर्थात् इनका संग कदापि मत करो, अपनी प्रशंसा मत करो, दूसरेके अभिप्रायको समझो ॥३०॥ धन और सर्व कुटुम्बीजनोंमें अत्यासक्त मत रहो, पतिव्रता, पत्नी, माता, श्वशुर ॥३१॥ श्रेष्ठपुरुष और गुरुजनोंके वचनमें सदा विश्वास करो, सदा अपनी रक्षा करो, अप्रमत्त रहो, दृढप्रतिज्ञा रक्खो ॥ ३२ ॥ चोरका कदापि विश्वास मतकरो, हे महामते ! मंत्रीजनोंमें शंकित रहो अपने सत्यको मत त्यागो ॥ ३३ ॥ अनाथ, कृपण, वृद्ध, स्त्री बालक और निरपराधी इनकी धन, प्राण, बुद्धि, शक्ति और बलसे सदा रक्षा करो

पतितंनास्तिकंजिह्मंदूरतःपरिवर्जय ॥ अतिप्रशंसांमाकार्षीःपरिज्ञातेंगितोभव ॥ ३० ॥ धने सर्वेकुटुंबेचनात्यासक्तःसदाभव ॥ पत्न्याः पतिव्रतायाश्चजनन्याः श्वशुरस्यच॥३१॥सतांगुरोश्चवचनेविश्वासंकुरुसर्वदा ॥ आत्मरक्षापरोनित्यमप्रमत्तोदृढव्रतः॥३२॥विश्वस्तंमावधीः किंचिदपिचोरंमहामते ॥ अमात्येषुचशंकेथाःसत्यान्नचलितोभव ॥ ३३ ॥ अनाथंकृपणंवृद्धंस्त्रियंबालंनिरागसम् ॥ परिरक्षधनैःप्राणैर्बुद्ध्याशक्त्याबलेनच ॥ ३४ ॥ अपिशत्रुंवधस्यार्हंमावधीःशरणागतम् ॥ अप्यपात्रंसुपात्रंवानीचोवापिमहत्तमः ॥ ३५ ॥ योवाकोवापियाचेत्तस्मैदेहिशिरोपिच ॥ अपियत्नेनमहताकीर्तिमेवसमार्जय ॥ ३६ ॥ राज्ञांचविदुषांचैवकीर्तिरेवहिभूषणम् ॥ सत्कीर्तिप्रभवालक्ष्मीः पुण्यंसत्कीर्तिसंभवम् ॥ ३७ ॥ सत्कीर्त्याराजतेलोकश्चंद्रश्चंद्रिकयायथा ॥ गजाश्वहेमनिचयंरत्नराशिंनगोपमम् ॥ ३८ ॥

॥ ३४ ॥ यदि वध करनेके योग्य शत्रुभी अपने शरण आजाय तो उसको मत मारो, अपात्र हो वा सुपात्र, नीच हो वा तपस्वी ॥ ३५ ॥ चाहें कोईभी हो यदि याचना करे तो, उसको अपना शिरतक देदो, देनेसे कदापि विमुख मत हो, कीर्तिका यत्नपूर्वक सम्पादन करो ॥ ३६ ॥ राजा और विद्वानोंका कीर्तिही भूषण है, कीर्तिसेही लक्ष्मी और पुण्य बढ़ताहै ॥ ३७ ॥ जिसप्रकार चन्द्रमाकी चांदनीसे शोभा होतीहै, उसीप्रकार सत्कीर्तिसे

लोकमें मनुष्य शोभा पाता है, हाथी, घोड़े, सुवर्णके ढेर, पहाड़के समान रत्नराशि ॥ ३८ ॥ इनके ग्रहण करनेमें यदि कीर्ति नष्ट होती हो तो तृणके समान शीघ्र त्याग दो, माता, पिता और गुरुका कोप, धनका व्यय ॥ ३९ ॥ पुत्रों और ब्राह्मणोंका अपराध सदा सहो, जिसमें ब्राह्मण प्रसन्न रहैं उसीमें उनका हिताचरण करो ॥ ४० ॥ क्योंकि संकटमें प्राप्तहुए राजाका ब्राह्मणही उद्धार करतेहैं, जिस कर्मसे अवस्था, यश, बल, सुख, धन, पुण्य और प्रजाकी उन्नति हो ॥ ४१ ॥ तुमको सदा उसी कर्मका सेवन करना चाहिये, देश, काल, अपनी शक्ति, कार्य, अकार्य ॥ ४२ ॥ इनको

अकीर्त्योपहतंसर्वंतृणवन्मुंचसत्वरम् ॥ मातुःकोपंपितुःकोपंगुरोःकोपंधनव्ययम् ॥३९॥ पुत्राणामपराधंचब्राह्मणानांक्षमस्वभोः ॥ यथाद्विजप्रसादःस्यात्तथातेषांहितंचर ॥ ४० ॥ राजानंसंकटेमग्नमुद्धरेयुर्द्विजोत्तमाः ॥ आयुर्यशोबलंसौख्यंधनंपुण्यंप्रजोन्नतिः ॥ ४१ ॥ कर्मणा येनजायेततत्सेव्यंभवतासदा ॥ देशंकालंचशक्तिंचकार्यंचाकार्यमेवच ॥ ४२ ॥ सम्यग्विचार्ययत्नेनकुरुकार्यंचसर्वदा ॥ नकुर्यात्कस्यचिद्बाधांपरबाधांनिवारय ॥ ४३ ॥ चोरान्दुष्टांश्चबाधेथाः सुनीत्याशक्तिमत्तया ॥ स्नानेजपेचहोमेचदैवेपित्र्येचकर्मणि ॥ ४४ ॥ अत्वरोभव निद्रायांभोजनेभवसत्वरः ॥ दाक्षिण्ययुक्तमशठंसत्यंजनमनोहरम् ॥ ४५ ॥ अल्पाक्षरमनंतार्थंवाक्यंब्रूहिमहामते ॥ अभीतोभवसर्वत्र विपक्षेषुविपत्सुच ॥ ४६ ॥

भलीभाँति विचार सदा यत्नपूर्वक अपना कार्य करो, किसीको बाधा मत दो, दूसरोंकी बाधाका निवारण करो ॥ ४३ ॥ सुनीति और अपनी शक्तिके अनुसार चोर और दुष्टोंको दण्ड दो, स्नान, जप, होम, देवकार्य, पितृकर्म ॥ ४४ ॥ इनमें शीघ्रता मत करो, निद्रा और भोजन शीघ्र करो, हे महामते ! चतुराईसे युक्त, सरल, सत्य, सुननेवालोंका मन हरनेवाला ॥ ४५ ॥ थोड़े अक्षर और बहुत अर्थसे गर्भित, इसप्रकारका वचन बोलो, शत्रु

और विपत्तिसे सदा अभय रहो ॥ ४६ ॥ ब्राह्मण, पाप और गुरुजनोंसे डरते रहो, ज्ञाति, बन्धु, ब्राह्मण, भार्या, और पुत्र इनमें समानभावसे रहो ॥ ४७ ॥ भोजनकी पंक्तिमें भेद मत करो, सत्पुरुषोंके हितकारी उपदेश, पवित्र कथा ॥ ४८ ॥ और धर्मसंबंधवाली विद्याकी गोष्ठियोंसे कभी विमुख मत हो, प्रेमपूर्वक श्रवण करो, पवित्र, सुन्दर जलयुक्त, प्रसिद्ध, ब्राह्मणोंसे व्याप्त ॥ ४९ ॥ और कल्याणकारी देशमें तुमको निरन्तर निवास करना चाहिये, कुलटा, वेश्या, कामी और नीच पुरुष जहाँ हों ॥ ५० ॥ ऐसे दुर्देशमें कदापि निवास मत करो, तीनों भुवनके स्वामी एक शंकरके अनन्य

भीतोभवब्रह्मकुलेपापेचगुरुशासने ॥ ज्ञातिबंधुषुविप्रेषुभार्यासुतनयेषुच ॥ ४७ ॥ समभावेनवर्तेथास्तथाभोजनपंक्तिषु ॥ सतांहितोपदेशेषुतथापुण्यकथासुच ॥ ४८ ॥ विद्यागोष्ठीषुधर्म्यासुक्वचिन्माभूःपराङ्मुखः ॥ शुचौपुण्यजलस्यांतिप्रख्यातेब्रह्मसंकुले ॥ ४९ ॥ महादेशेशिवमयेवस्तव्यंभवतासदा ॥ कुलटागणिकायत्रतत्रतिष्ठतिकामुकः ॥ ५० ॥ दुर्देशेनीचसंबाधेकदाचिदपिमावस ॥ एकमेवाश्रितोपित्वंशिवंत्रिभुवनेश्वरम् ॥ ५१ ॥ सर्वान्देवानुपासीथास्तद्दिनानिचमानद ॥ सदाशुचिःसदादक्षःसदाशांतःसदास्थिरः ॥ ५२ ॥ सदाविजितषड्वर्गः सदाकांतोभवानघ ॥ विप्रान्वेदविदःशांतान्यतींश्चनियतोज्ज्वलान् ॥ ५३ ॥ पुण्यवृक्षान्पुण्यनदीःपुण्यतीर्थंमहत्सरः ॥ धेनुंचवृषभंरत्नंयुवतींचपतिव्रताम् ॥ ५४ ॥ आत्मनोगृहदेवांश्चसहसैवनमस्कुरु ॥ उत्थायसमयेब्राह्मेस्वाचम्यविमलाशयः ॥ ५५ ॥

भक्त होतेहुएभी तुमको उन उनके उत्सवोंमें ॥ ५१ ॥ सब देवताओंकी उपासना करनी चाहिये, सदा पवित्र, चतुर, शान्त और स्थिर रहो ॥ ५२ ॥ अनघ ! काम, क्रोध आदि शत्रुओंके षड्वर्गको सदा जीतो, वेदके ज्ञाता ब्राह्मण, नियममें स्थित संन्यासी ॥ ५३ ॥ पवित्र वृक्ष, पवित्र नदी, पवित्र तीर्थ, बड़े सरोवर, धेनु, वृषभ, रत्न, पतिव्रता नारी ॥ ५४ ॥ और अपने कुलदेवताओंको सदा नमस्कार करो, ब्राह्ममुहूर्त अर्थात् प्रातः

काल उठ ॥ ५५ ॥ और आचमन कर गुरुजीको नमस्कार, करो, तदनन्तर उमापति महादेवजीके ध्यानमें लग जाओ फिर लक्ष्मीपति नारायण, ब्रह्मा, गणेश ॥ ५६ ॥ स्कन्द, कात्यायनी देवी, महालक्ष्मी, सरस्वती, इन्द्र आदि लोकपाल और बडे बडे ऋषि महर्षियोंका स्मरण करो ॥ ५७ ॥ इनका स्मरण करनेके उपरान्त उदय होतेहुए सूर्यको सदा प्रणाम करो, गन्ध, पुष्प ताम्बूल, शाक और पके फल आदि ॥ ५८ ॥ भक्ष्य, भोज्य जो कुछ नवीन पदार्थ हों वह सब शिवजीको निवेदन करके अपने काममें लाओ, जो दान, जप, स्नान, होम, स्मरण ॥ ५९ ॥ दान किया है, वह सब

नमस्कृत्यात्मगुरवेध्यात्वादेवमुमापतिम् ॥ नारायणंचलक्ष्मीशंब्रह्माणंचविनायकम् ॥ ५६ ॥ स्कंदंकात्यायनींदेवींमहालक्ष्मींसरस्वतीम् ॥ इंद्रादीनथलोकेशान्पुण्यश्लोकानृषीनपि ॥ ५७ ॥ चिंतयित्वाथमार्तंडमुद्यंतंप्रणमेत्सदा ॥ गंधपुष्पंचतांबूलंशाकंपक्कफलादिकम्॥ ५८ ॥ शिवायदत्वोपभुंक्ष्वभक्ष्यंभोज्यंप्रियंनवम् ॥ यद्दत्तंयत्कृतंजप्तंयत्स्नातंयद्धुतंस्मृतम् ॥ ५९ ॥ यच्चतप्तंतपःसर्वंतच्छिवायनिवेदय ॥ भुंजा नश्चपठन्वापिशयानोविहरन्नपि ॥ पश्यञ्छृण्वन्वदन्गृह्णञ्छिवमेवानुचिंतय ॥ ६० ॥ रुद्राक्षकंकणलसत्करदंडयुग्मोमालांतरालधृतभस्म सितत्रिपुंड्रः ॥ पंचाक्षरंपरिपठन्परमंत्रराजंध्यायन्सदापशुपतेश्चरणंरमेथाः ॥ ६१ ॥ इतिसंक्षेपतोवत्सकथितोधर्मसंग्रहः ॥ अन्येषुच पुराणेषुविस्तरेण प्रकीर्तितः ॥ ६२ ॥

शंकरके निवेदन कर दो अर्थात् उसका फल मत चाहो; खाते, पीते, पढ़ते, सोते, विहार करते, देखते, सुनते, देते, लेते, सदा शंकरका स्मरण रक्खो ॥ ॥ ६० ॥ हाथमें रुद्राक्षका कंकण, कण्ठमें रुद्राक्षकी माला, मस्तकपर श्वेतभस्मका त्रिपुण्ड्र धारण करो, मंत्रराज शिवपंचाक्षरमंत्रका जप और शंकरका ध्यान करतेहुए उनके चरणकमलमें रमण करो ॥ ६१ ॥ हे पुत्र ! यह संक्षेपसे धर्मका संग्रह तुम्हारेप्रति कथनकिया, यही धर्म और पुराणोंमें विस्तार

पूर्वक कहागया है ॥ ६२ ॥ ॥ औरभी संपूर्ण पुराणोंमें गुप्त, संपूर्ण पापसमूहको नष्ट करनेवाला, पवित्र, जयका दाता; सर्वप्रकारकी विपत्तियोंको दूर करनेवाला एक शिवजीका कवच तुम्हारे हितके निमित्त वर्णन करताहूँ ॥ ६३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखण्डे पंडित बाबूरामशर्मकृतभाषाटीकाया मृषभोपदेशो नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ इसप्रकार भद्रायुको उपदेश दे ऋषभयोगी शिवकवचका उपदेश देनेलगे, विश्वव्यापी, ईश्वर महा देवको नमस्कार कर मनुष्योंकी सब प्रकार रक्षा करनेवाला शिवकवच वर्णन करताहूँ ॥ १ ॥ पवित्र स्थानमें विधिपूर्वक कल्पना किये आसनपर बैठ, जितेन्द्रिय

अथापरंसर्वपुराणगुह्यंनिःशेषपापौघहरंपवित्रम् ॥ जयप्रदंसर्वविपत्प्रमोचनंवक्ष्यामिशैवंकवचंहितायते ॥ ६३ ॥ ॥ ॥ इतिश्री स्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेऋषभोपदेशोनामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ ॥ छ॥ ॥ ॥ ऋषभउवाच ॥ ॥ नमस्कृत्वामहा देवंविश्वव्यापिनमीश्वरम् ॥ वक्ष्येशिवमयंवर्मसर्वरक्षाकरंनृणाम् ॥ १ ॥ ॥ शुचौदेशेसमासीनोयथावत्कल्पितासनः ॥ जितेंद्रि योजितप्राणश्चिंतयेच्छिवमव्ययम् ॥ २ ॥ हृत्पुंडरीकांतरसन्निविष्टंस्वतेजसाव्याप्तनभोवकाशम् ॥ अतींद्रियंसूक्ष्ममनंतमाद्यं ध्यायेत्परानंदमयंमहेशम् ॥ ३ ॥ ध्यानावधूताखिलकर्मबंधश्चिरंचिदानंदनिमग्नचेताः ॥ षडक्षरन्याससमाहितात्माशैवेनकुर्या त्कवचेनरक्षाम् ॥ ४ ॥ मांपातुदेवोखिलदेवतात्मासंसारकूपेपतितंगभीरे ॥ तन्नामदिव्यंवरमंत्रमूलंधुनोतुमेसर्वमघंहृदिस्थम् ॥ ५ ॥

और जितप्राण हो अविनाशी शंकरका ध्यान करे ॥ २ ॥ हृत्पुण्डरीकांतर संनिविष्ट, अपने तेजसे व्याप्त है नभोवकाश, अतीन्द्रिय, सूक्ष्म, अनन्त, सबसे आदि इसप्रकारके आनन्दमय महेश्वरका ध्यान करना चाहिये ॥ ३ ॥ ध्यानमें मग्न, सम्पूर्ण कर्मबन्धनसे परे, चिर और चिदानन्द शंकरमें चित्त लगाकर षडक्षरन्याससे समाहित चित्त हो शिवकवचसे अपनी रक्षा करे ॥ ४ ॥ संसाररूपी गम्भीर कूपमें पतित मेरी सम्पूर्ण देवताओंकी आत्मा शंकर रक्षा करें.

उनका दिव्यनाम और सुन्दर मूलमंत्र हृदयमें स्थित हुए मेरे सम्पूर्ण पापोंको नष्ट करे ॥ ५ ॥ विश्वमूर्ति, ज्योतिर्मयानन्द घनाश्चिदात्मा शंकर मेरी सब प्रकारसे रक्षा करें, अणोरणीयान्. एक उरुशक्ति ईश्वर मेरी सब पापोंसे रक्षा करो॥ ६॥जो पृथिवीरूपसे संसारका पालन करतेहैं वे अष्टमूर्ति शंकर भूमिसे मेरी रक्षा करें, जो जलरूपसे संसारको जिलाते हैं, वे शंकर जलोंसे मेरी रक्षा करें ॥ ७ ॥ कल्पके अवसानमें सब भुवनोंको दग्धकर जो लीला

सर्वत्रमांरक्षतुविश्वमूर्त्तिर्ज्योतिर्मयानंदघनश्चिदात्मा ॥ अणोरणीयानुरुशक्तिरेकः सईश्वरःपातुभयादशेषात् ॥ ६ ॥ योभूस्वरूपेणबिभर्ति विश्वंपायात्सभूमेर्गिरिशोष्टमूर्तिः ॥ योपांस्वरूपेणनृणांकरोतिसंजीवनंसोऽवतुमांजलेभ्यः ॥ ७ ॥ कल्पावसानेभुवनानिदग्ध्वासर्वाणि योनृत्यतिभूरिलीलः ॥ सकालरुद्रोवतुमांदवाग्नेर्वात्यादिभीतेरखिलाच्चतापात् ॥ ८ ॥ प्रदीप्तविद्युत्कनकावभासोविद्यावराभीतिकुठारपाणिः ॥ चतुर्मुखस्तत्पुरुषस्त्रिनेत्रःप्राच्यांस्थितंरक्षतुमामजस्रम् ॥ ९ ॥ कुठारवेदांकुशपाशशूलकपालढक्काक्षगुणान्दधानः ॥ चतुर्मुखोनीलरुचिस्त्रिनेत्रःपायादघोरोदिशिदक्षिणस्याम् ॥ १० ॥ कुंदेंदुशंखस्फटिकावभासोवेदाक्षमालावरदाभयांकः ॥ त्र्यक्षश्चतुर्वक्त्रउरुप्रभावःसद्योधिजातोवतुमांप्रतीच्याम् ॥ ११ ॥

पूर्वक नृत्य करते हैं वे कालरुद्र दावाग्नि, वात्यादिभीति और सर्व तापोंसे मेरी रक्षा करें ॥ ८ ॥ प्रदीप्त बिजली, और सुवर्णके समान कान्तियुक्त विद्यावराभीतिकुठारपाणि चतुर्मुख, तत्पुरुष और त्रिनेत्र शंकर पूर्वदिशामें निरन्तर मेरी रक्षा करें ॥ ९ ॥ कुठार, वेदांकुश, पाश, शूल, कपाल, ढक्का और अक्ष आदि गुणोंको धारण करनेवाले, चतुर्मुख, नीलरुचि, त्रिनेत्र और अघोर शंकर दक्षिणदिशामें मेरी रक्षा करें ॥ १० ॥ कुंई, चन्द्रमा और शंख तथा स्फटिकमणिकी समान कांतिमान् वेद और रुद्राक्षकी माला धारण किये वरदायक अभयरूप अंकवाले तीन नेत्र चारमुख बडे प्रभाव

वाले सद्योजातरूप मेरी पश्चिमदिशासे रक्षाकरैं ॥ ११ ॥ वर अक्षमाला अभय और टंक हाथमें लिये कमलके परागकी समान वर्णवाले त्रिलोचन सुन्दर चतुर्मुख वामदेव मुझको उदीचीदिशामें रक्षित करैं ॥ १२ ॥ वेद अभय इष्ट कुश टंक पाश कपाल ढक्का अक्ष शूलधारी श्वेतकांति पंचमुख ईशान परमप्रकाशरूप मेरी ऊर्ध्वदिशामें रक्षा करैं ॥ १३ ॥ चंद्रमौलि मेरे मूर्धास्थानकी रक्षाकरैं, भालनेत्र मेरे भालकी रक्षा करैं, भगदेवताके नेत्र

वराक्षमालाभयटंकहस्तःसरोजकिंजल्कसमानवर्णः ॥ त्रिलोचनश्चारुचतुर्मुखोमांपायादुदीच्यांदिशिवामदेवः ॥ १२ ॥ वेदाभयेष्टांकुश टंकंपाशकपालढक्काक्षकशूलपाणिः ॥ सितद्युतिःपंचमुखोवतान्मामीशानऊर्द्ध्वेपरमप्रकाशः ॥ १३ ॥ मूर्धानमव्यान्ममचंद्रमौलिर्भा लंममाव्यादथभालनेत्रः ॥ नेत्रेममाव्याद्भगनेत्रहारीनासांसदारक्षतुविश्वनाथः ॥ १४ ॥ पायाच्छ्रुतीमेश्रुतिगीतकीर्तिःकपोलमव्यास त्सततंकपाली ॥ वक्त्रंसदारक्षतुपंचवक्त्रोजिह्वांसदारक्षतुवेदजिह्वः ॥ १५ ॥ कंठंगिरीशोवतुनीलकंठःपाणिद्वयंपातुपिनाकपाणिः ॥ दोर्मूलमव्यान्ममधर्मबाहुर्वक्षःस्थलंदक्षमखांतकोव्यात् ॥ १६ ॥ ममोदरंपातुगिरींद्रधन्वामध्यंममाव्यान्मदनान्तकारी ॥ हेरंबताता ममपातुनाभिंपायात्कटींधूर्जटिरीश्वरोमे ॥ १७ ॥

हरनेवाले मेरे नेत्रोंकी विश्वनाथ मेरी नासिकाकी सदा रक्षा करैं ॥ १४ ॥ वेदोंसे गुणानुवाद गायेहुए मेरे कानोंकी, कपाली मेरे कपोलोंकी, पंचवक्त्र सदा मुखकी और वेदरूपी जिह्वावाला मेरी जिह्वाकी सदा रक्षाकरैं ॥ १५ ॥ नीलकंठ मेरे कंठकी पिनाकपाणि मेरे दोनों हाथोंकी धर्मबाहु मेरी दोनों भुजाओंकी दक्षके यज्ञ विनाश करनेवाले मेरे वक्ष स्थलकी रक्षा करैं ॥ १६ ॥ गिरीन्द्रधन्वा मेरे उदरकी रक्षा करैं, कामनाशक मेरे मध्य

भागकी रक्षा करें, गणेशपिता मेरी नाभिकी रक्षा करें, धूर्जटी ईश्वर मेरी कटिकी रक्षा करें ॥ १७ ॥ कुबेरमित्र मेरी दोनों ऊरुओंकी, जगदीश्वर मेरे दोनों जानुओंकी, बडी केतुवाले मेरी दोनों जंघाओंकी, देवताओंसे वंदितचरणवाले मेरे दोनों चरणोंकी रक्षा करें ॥ १८ ॥ दिनके पहले पहरमें महेश्वर, दूसरे पहरमें वामदेव, तीसरे पहरकी त्र्यम्बक और संध्याकाल चौथे पहरमें वृषभध्वज मेरी रक्षाकरें ॥ १९॥ शशिशेखर रात्रिके पहले पहरमें, आधीरातमें गंगाधर, तीसरे पहरमें गौरीपति और चौथे पहरमें मृत्युंजय मेरी रक्षा करें ॥ २० ॥ भीतर स्थित शंकर मेरी रक्षा करें, बाहर स्थितिमें

ऊरुद्वयंपातुकुबेरमित्रोजानुद्वयंमेजगदीश्वरोव्यात् ॥ जंघायुगंपुंगवकेतुरव्यात्पादौममाव्यात्सुरवंद्यपादः ॥ १८ ॥ महेश्वरःपातुदिनादियामेमांमध्ययामेवतुवामदेवः ॥ त्रियंबकःपातुतृतीययामेवृषध्वजःपातुदिनांत्ययामे ॥ १९ ॥ पायान्निशादौशशिशेखरोमांगंगाधरोरक्षतुमांनिशीथे ॥ गौरीपतिःपातुनिशावसानेमृत्युंजयोरक्षतुसर्वकालम् ॥ २० ॥ अंतःस्थितंरक्षतुशंकरोमांस्थाणुःसदापातुबहिःस्थितंमाम् ॥ तदंतरेपातुपतिःपशूनांसदाशिवोरक्षतुमांसमंतात् ॥ २१ ॥ तिष्ठंतमव्याद्भुवनैकनाथःपायाद्व्रजंतंप्रमथाधिनाथः ॥ वेदांतवेद्योवतुमांनिषण्णंमामव्ययःपातुशिवःशयानम् ॥ २२ ॥ मार्गेषुमांरक्षतुनीलकंठःशैलादिदुर्गेषुपुरत्रयारिः ॥ अरण्यवासादिमहाप्रवासेपायान्मृगव्याधउदारशक्तिः ॥ २३ ॥

स्थाणु मेरी सदा रक्षा करें, उसके अन्तरमें पशुपति मेरी रक्षा करें और सबओरसे सदाशिव मेरी रक्षा करें ॥ २१ ॥ भुवनके एकपति स्थित होते हुए मेरी रक्षा करें, प्रमथाधिपति चलतेहुए मेरी रक्षा करें, बैठे हुए वेदान्तसे जाननेयोग्य मेरी रक्षा करें, शयनकरतेहुए अविनाशी शिव मेरी रक्षा करें ॥ २२ ॥ नीलकंठ मार्गमें, शैलादि दुर्गस्थानोंमें त्रिपुरान्तक, अरण्य वास और महाप्रवासमें उदारशक्ति मृग व्याध मेरी रक्षा करें ॥ २३ ॥

कल्पांत कोटिअग्निकी समान प्रबल कोपवाला स्फुट ऊँचे स्वरके हँसनेसे ब्रह्मांडको चलायमान करनेवाले घोरशत्रुसेनासे निवारणके अयोग्य महाभयसे वीरभद्र मेरी रक्षा करैं॥२४॥पैदल अश्व मातंग रथोंकी सेना सहस्रों लाखों करोडों बडी भयंकर तथा आततायियोंकी सैंकडों अक्षौहिणी घोर कुठारकी तीक्ष्ण धारसे शंकर छेदन करदें ॥ २५ ॥ प्रलयकालकी अग्निकी समान कान्तिवाले दस्युओंको नष्ट करैं तथा त्रिपुरके संहारकरनेवालेका त्रिशूल

कल्पांतकाटोपपटुप्रकोपःस्फुटाट्टहासोच्चलितांडकोशः ॥ घोरारिसेनार्णवदुर्निवारमहाभयाद्रक्षतुवीरभद्रः ॥ २४ ॥ पत्त्यश्वमातंगरथावरूथसहस्रलक्षायुतकोटिभीषणम् ॥ अक्षौहिणीनांशतमाततायिनांछिंद्यान्मृडोघोरकुठारधारया ॥ २५ ॥ निहंतुदस्यून्प्रलयानलार्चिर्ज्वलत्त्रिशूलंत्रिपुरांतकस्य ॥ शार्दूलसिंहर्क्षवृकादिहिंस्रान्संत्रासयत्वीशधनुःपिनाकः ॥ २६ ॥ दुःस्वप्नदुःशकुनदुर्गतिदौर्मनस्यदुर्भिक्षदुर्व्यसनदुःसहदुर्यशांसि ॥ उत्पाततापविषभीतिमसद्ग्रहार्तिंव्याधींश्चनाशयतुमेजगतामधीशः ॥ २७ ॥ ओंनमोभगवतेसदाशिवायसकलतत्त्वात्मकायसकलतत्त्वविदूरायसकललोकैककर्त्रे सकललोकैकभर्त्रेसकललोकैकहर्त्रे सकललोकैकगुरवेसकललोकैकसाक्षिणेसकलनिगमगुह्यायसकलवरप्रदायसकलदुरितार्तिभंजनायसकलजगदभयंकराय शशांकशेखरायशाश्वतनिजाभासायनिरामयायनि

दस्युओंको नष्ट करै, शार्दूलसिंह वृकादि हिंसक जन्तुओंको शंकरका पिनाक धनुष त्रास दे ॥२६॥ दुःस्वप्न खोटे शकुन दुर्गति दुर्मनस्यता दुर्भिक्ष दुर्व्यसन दुःसह दुर्यश,उत्पात ताप विषभीति असद्ग्रह दुःख और व्याधी जगतके ईश्वर विनाश करैं॥२७॥ ॐ नमो भगवते सदाशिवाय, सकल तत्त्वात्मकाय, सकलतत्त्वविदूराय, सकललोकैककर्त्रे, सकललोकैकभर्त्रे,सकललोकैकहर्त्रे, सकललोकैकगुरवे, सकललोकैकसाक्षिणे,सकलनिगमगुह्याय,सकलवरदाय, सकल

दुरितार्तिभंजनाय, सकलजगदभयंकराय, शशांकशेखराय, शाश्वतनिजाभासाय, निरामयाय, निष्प्रपंचाय, निष्कलंकाय, निर्द्वंद्वाय, निस्संगाय, निर्मलाय, निरुपमविभाय. निराधाराय. नित्यशुद्धबुद्धपरिपूर्णसच्चिदानन्दाद्वयाय, परमशान्तप्रकाशतेजोरूपाय, जय महारुद्र महारौद्र भद्रावतार महाभैरव काल भैरव कल्पान्तभैरव कपालमालाधर खट्वांगखड्गचर्मपाशांकुशडमरुशूलचापबाणगदाशक्तिभिंदिपालतोमरमुसलमुद्गरपाशपट्टिशपरशुपरिघभुशुंडी

षप्रपंचायनिष्कलंकायनिर्द्वंद्वायनिःसंगायनिर्मलायनिरुपमविभवायनिराधारायनित्यशुद्धबुद्धपरिपूर्णसच्चिदानंदाद्वयायपरमशांतप्रकाशते
जोरूपायजयजयमहारुद्रमहारौद्रभद्रावतारमहाभैरवकालभैरवकल्पान्तभैरवकपालमालाधरखट्वांगखड्गचर्मपाशांकुशडमरुशूलचापबाणग
दाशंक्तिभिंदिपालतोमरमुसलमुद्गरपाशपट्टिशपरशुपरिघभुशुंडीशतघ्नीचक्राद्यायुधभीषणकरसहस्रमुखदंष्ट्राकरालविकटाट्टहासविस्फारितब्र
ह्मांडमंडलनागेंद्रकुंडलनागेंद्रहारनागेंद्रचर्मधरमृत्युंजयत्र्यंबकत्रिपुरांतकविरूपाक्षविश्वेश्वरविश्वरूपवृषभवाहनविषभूषणविश्वतोमुखसर्वतो
रक्षरक्षमांज्वलज्वलमहामृत्युमपमृत्युभयंनाशयनाशय ममशत्रूनुच्चाटयोच्चाटयशूलेनविदारयविदारयकुठारेणभिंधिभिंधिखड्गेन छिन्धि
छिंधिखट्वांगेन विपोथयविपोथयमुसलेन निष्पेषयनिष्पेषयबाणैः सन्ताडयसन्ताडयरक्षांसिभीषयभीषय भूतानिविद्रावयविद्रावयकूष्मां

शतघ्नीचक्राद्यायुधभीषणकरसहस्रमुख दंष्ट्राकराल विकटाट्टहासविस्फारितब्रह्मांडमण्डल नागेन्द्रकुण्डल नागेन्द्रहार नागेन्द्रचर्मधर मृत्युंजय त्र्यम्बक त्रिपुरान्तक विरूपाक्ष विश्वेश्वर विश्वरूप वृषभवाहन विषभूषित विश्वतोमुख सर्वतोरक्षमां ज्वल ज्वल महामृत्युमपमृत्युभयं नाशय २ इत्यादि मंत्रोंद्वारा अपने सब अंगोंकी रक्षा और प्रार्थना आदि करै. यह शिवकवच है। इसप्रकार कवचका उपदेश कर ऋषभयोगी बोले कि कि सर्व

बाधाको दूर करनेवाला सर्वप्राणियोंको छिपाने योग्य और वर देनेवाला यह शिवजीका कवच मैंने तुमसे कहा ॥ २८ ॥ जो प्राणी इस उत्तम शिव कवचका पाठ करता है शिवजीकी कृपासे उसको कहीं भय नहीं रहता ॥ २९ ॥ क्षीणआयु मृत्युको प्राप्तहुआ और महारोगोंसे व्याप्त पुरुषभी इस कवचके प्रभावसे शीघ्रही सुख भोगकर दीर्घायु पाता है ॥ ३० ॥ सम्पूर्ण दरिद्रताको दूर करनेवाले और सौमांगल्य बढानेवाले इस कवचको जो

डवेतालमारीगणब्रह्मराक्षसान्संत्रासयसंत्रासयममाभयंकुरुकुरुवित्रस्तं मामाश्वासयाश्वासयनरकभयान्मामुद्धारयोद्धारयसंजीवयसंजीवयक्षुत्तृड्भ्यांमामाप्याययाप्याययदुःखातुरंमामानंदयानंदय शिवकवचेनमामाच्छादयाच्छादयत्र्यंबकसदाशिवनमस्ते ॥ ॥ ऋषभ उवाच ॥ ॥ इत्येतत्कवचंशैवंवरदंव्याहृतंमया ॥ सर्वबाधाप्रशमनंरहस्यंसर्वदेहिनाम् ॥ २८ ॥ यःसदाधारयेन्मर्त्यःशैवंकवचमुत्तमम् ॥ नतस्यजायतेक्वापिभयंशंभोरनुग्रहात ॥ २९ ॥ क्षीणायुर्मृत्युमापन्नोमहारोगहतोपिवा ॥ सद्यःसुखमवाप्नोतिदीर्घमायुश्चविन्दति ॥ ३० ॥ सर्वदारिद्र्यशमनंसौमांगल्यविवर्धनम् ॥ योधत्तेकवचंशैवंसदेवैरपिपूज्यते ॥ ३१ ॥ महापातकसंघातैर्मुच्यतेचोपपातकैः ॥ देहांतेशिवमाप्नोतिशिववर्मानुभावतः ॥ ३२ ॥ त्वमपिश्रद्धयावत्सशैवंकवचमुत्तमम् ॥ धारयस्वमयादत्तंसद्यःश्रेयोह्यवाप्स्यसि ॥ ३३ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ इत्युक्त्वाऋषभोयोगीतस्मैपार्थिवसूनवे ॥ ददौशंखंमहारावंखड्गंचारिनिषूदनम् ॥ ३४ ॥

प्राणी धारण करता है उसकी देवताभी पूजा करते हैं ॥३१॥ शिवकवचके प्रभावसे प्राणी बडे २ महापातक और उपपातकोंसे मुक्त होजाता है और देहान्तमें सीधा शिवलोकको चलाजाता है ॥३२॥ हे पुत्र ! भद्रायु ! मेरे दियेहुए इस शिवकवचको तूभी श्रद्धापूर्वक धारण कर इसके धारण करनेसे शीघ्र कल्याण होगा ॥ ३३ ॥ इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले, हे महर्षियो ! इसप्रकार कह ऋषभयोगीने राजपुत्रको बडे शब्दवाला एक शंख और

शत्रुओंको नष्ट करनेवाला एक खड्ग दिया ॥ ३४ ॥ इसके उपरान्त भस्मसे अभिमंत्रित कर उसके सब अंग स्पर्श किये और बारह हजार हाथियोंका बल उसके शरीरमें दिया ॥ ३५ ॥ भस्मके प्रभावसे बल, ऐश्वर्य, धैर्य और स्मृतिको प्राप्तकर वह राजपुत्र शरद् ऋतुके सूर्यके समान शोभित हुआ ॥ ३६ ॥ जोड़े हैं हाथ जिसने ऐसे राजपुत्रसे शिवयोगी फिर बोला कि तप और मन्त्रप्रभाव सम्पन्न यह खड्ग तुझको दिया है ॥ ३७ ॥ तीक्ष्णधारवाला यह खड्ग तू जिसको दिखावेगा; वह शत्रु उसीसमय मृत्युको प्राप्त होवेगा, यह साक्षात् मृत्युरूप है ॥ ३८ ॥ इस शंखके शब्दको

पुनश्चभस्मसंमंत्र्यतदंगंसर्वतोस्पृशत् ॥ गजानांषट्सहस्रस्यद्विगुणंचबलंददौ ॥ ३५ ॥ भस्मप्रभावात्संप्राप्यबलैश्वर्यधृतिस्मृतीः ॥ सराजपुत्रःशुशुभेशरदर्कइवश्रिया ॥ ३६ ॥ तमाहप्रांजलिंभूयःसयोगीराजनंदनम् ॥ एषखड्गोमयादत्तस्तपोमंत्रानुभावतः ॥ ३७ ॥ शितधारमिमंखड्गंयस्मैदर्शयासिस्फुटम् ॥ ससद्योम्रियतेशत्रुःसाक्षान्मृत्युरपिस्वयम् ॥ ३८ ॥ अस्यशंखस्यनिह्रादंयेशृण्वंतितवाहिताः ॥ तेमूर्च्छिताःपतिष्यंतिन्यस्तशस्त्राविचेतनाः ॥ ३९ ॥ खड्गशंखाविमौदिव्यौपरसैन्यविनाशिनौ ॥ आत्मसैन्यस्वपक्षाणांशौर्यतेजोविवर्धनौ ॥ ४० ॥ एतयोश्चप्रभावेणशैवेनकवचेनच ॥ द्विषट्सहस्रनागानांबलेनमहतापिच ॥ ४१ ॥

जो तेरे शत्रु सुनेंगे वे शस्त्र त्याग मूर्च्छित हो तत्काल पृथ्वीपर गिरपडेंगे ॥ ३९ ॥ यह दोनों शंख और खड्ग शत्रुसेनाका विनाश कर अपनी सेना और अपने पक्षियोंकी सूरता और तेज बढातेहैं ॥ ४० ॥ इन दोनोंके प्रभाव, शिवकवचके प्रभाव, हजार हाथियोंके बल और भस्मधारणके सामर्थ्यसे तू शत्रुसेनाको जीतेगा और पिताके सिंहासनपर स्थित हो इस सम्पूर्ण पृथिवीकी रक्षा करेगा ॥ ४१ ॥

॥ ४२ ॥ इस प्रकार मातासमेत भद्रायुको विधिपूर्वक उपदेश दे और उनसे पूजित हो वह ऋषभनाम शिवयोगी यथेष्ट देशको गये ॥ ४३ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां शिवकवचकथनं नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ अथ त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ सूतजी बोले, हे महर्षियो ! वह दशार्णदेशका वज्रबाहुनाम राजा, स्त्रीपुत्रको घरसे निकाल सुखपूर्वक राज्य करने लगा, कुछ समयके उपरान्त बड़े प्रतापी और वीर मगध देशके हेमरथ नाम राजाने उससे शत्रुता कर बड़ी सेना साथ ले चारोंओरसे नगरको घेर

भस्मधारणसामर्थ्याच्छत्रुसैन्यंविजेष्यसि ॥ प्राप्यसिंहासनंपैत्र्यंगोप्तासिपृथिवीमिमाम् ॥४२॥ इतिभद्रायुषंसम्यगनुशास्यसमातृकम् ॥ ताभ्यांसंपूजितःसोथयोगीस्वैरगतिर्ययौ ॥ ४३ ॥ इति श्रीस्क०पु०ब्रह्मोत्तरखंडेशिवकवचकथनंनामद्वादशोऽध्यायः ॥१२॥ सूतउवाच ॥ दशार्णाधिपतेस्तस्यवज्रबाहोर्महाभुजः ॥ बभूवशत्रुर्बलवान्राजामगधराट्ततः ॥ १ ॥ सवैहेमरथोनामबाहुशालीरथोत्कटः ॥ बलेनमहतावृत्यदशार्णन्यरुधद्बली ॥ २ ॥ चमूपास्तस्यदुर्धर्षाःप्राप्यदेशंदशार्णकम् ॥ व्यलुंपन्वसुरत्नानिगृहाणिददहुःपरे ॥ ३ ॥ केचिद्धनानिजगृहुःकेचिद्बालास्त्रियोपरे ॥ गोधनान्यपरेगृह्णन्केचिद्धान्यपरिच्छदान् ॥ ४ ॥ केचिदारामसस्यानिगृहोद्यानान्यनाशयन्॥ एवंविनाश्यतद्राज्यंस्त्रीगोधनजिघृक्षवः ॥ ५ ॥

लिया ॥ १ ॥ २ ॥ और उसके दुर्धर्ष सिपाहियोंने देशमें घुस बड़ी लूट मार मचाई, रत्नादि छीने, कितनोंने दीन प्रजाके घरोंमें आग देदी ॥ ३ ॥ कितनोंने धन लिया, कितनोंने सुन्दर स्त्रियें ग्रहण कीं, कोई गाय, भैंस और कोई धान्य वा पात्रादि अथवा वस्त्र ग्रहण करने लगे ॥ ४ ॥ कोई सरोवर और बगीचोंकोही नष्ट करते थे, इसप्रकार उसके राज्यका विनाश कर स्त्री, गौ और धनके जीतनेकी इच्छासे ॥ ५ ॥

मगधाधिपति हेमरथने नगरके भीतर घुसनेकी इच्छा की, तब अपने नगरनिवासियोंको व्याकुल देख ॥ ६ ॥ वज्रबाहुनाम राजा अपनी सेनाको साथ ले युद्ध करनेको निकला, राजा और उसके मन्त्री आदि ॥ ७ ॥ सब सेनाने राजा हेमरथके साथ युद्ध करके शत्रुसेनाका हनन किया, रथमें स्थित हो राजाने स्वयं मगधराजकी सेनाको काटा ॥८॥ जब इसप्रकार अपनी सेना नष्ट होने लगी तब दुःसह युद्ध करतेहुए वज्रबाहुको देख ॥९॥ सब सेनाके जन क्रोधकर वज्रबाहुसे बोले कि अब हम प्रहार करते हैं, इसप्रकार कह सब मगधसेनाने इकट्ठा हो दृढपराक्रमसे ॥ १० ॥ वज्रबाहुकी सेनाको मार

आवृत्यतस्यनगरींवज्रबाहोस्तुमागधः ॥ एवंपर्याकुलंवीक्ष्यराजानगरमेवच ॥ ६ ॥ युद्धायनिर्जगामाशुवज्रबाहुःससैनिकः ॥ वज्रबाहुश्चभूपालस्तथामंत्रिपुरःसराः ॥ ७ ॥ युयुधुर्मागधैःसार्धंनिजघ्नुःशत्रुवाहिनीम् ॥ वज्रबाहुर्महेष्वासोदंशितोरथमास्थितः ॥ ८ ॥ विकिरन्बाणवर्षाणिचकारकदनंमहत् ॥ दशार्णराजंयुध्यंतंदृष्ट्वायुद्धेसुदुःसहम् ॥ ९ ॥ तमेवतरसावव्रुःसर्वेमागधसैनिकाः ॥ कृत्वातुसुचिरंयुद्धं मागधादृढविक्रमाः ॥ १० ॥ तत्सैन्यंनाशयामासुर्लेभिरेचजयश्रियम् ॥ केचित्तस्यरथंजघ्नुःकश्चित्तद्धनुराच्छिनत् ॥११॥ सूतंतस्यजघानैकस्त्वपरःखड्गमाच्छिनत् ॥ संछिन्नखड्गधन्वानंविरथंहतसारथिम् ॥ १२ ॥ बलाद्गृहीत्वाबलिनोबबंधुर्नृपतिंरुषा ॥ तस्यमंत्रिगणंसर्वंतत्सैन्यंचविजित्यते ॥ १३ ॥ मागधास्तस्यनगरींविविशुर्जयकाशिनः ॥ अश्वान्नरान्गजानुष्ट्रान्पशूंश्चैवधनानिच ॥ १४ ॥

भगाया और जय प्राप्त की, जब राजा अकेला रहगया तब किसीने तो उसका रथ तोड़ा किसीने धनुष भंग किया ॥ ११ ॥ और किसीने खड्गसे सारथीका शिर काट डाला, जब राजाका खड्ग, धनुष, रथ और सारथी जाता रहा ॥ १२ ॥ तब बलपूर्वक क्रोधसे राजाको मगधराजकी सेनाने बाँध लिया, बाकी बचे मन्त्रीवर्ग और सेनाको भी जीत लिया ॥ १३ ॥ इसप्रकार जय प्राप्त कर मगधराजकी सेना वज्रबाहुके नगरमें घुस गई.

वहाँ जा अश्व, पुरुष, हाथी, ऊंट पशु, धन ॥ १४ ॥ सुन्दर स्त्रियें और कन्या ग्रहण कीं, राजाकी रानियें और हज़ारों दासियें भी लीं ॥ १५ ॥ और सम्पूर्ण कोश और सब रत्न लेलिये, इसप्रकार वज्रबाहुकी नगरीका नाश कर और स्त्री, गो धनादिका हरण कर ॥ १६ ॥ बँधेहुए वज्रबाहुको बलपूर्वक रथमें डाल मगधदेशको लौट गये, इसप्रकार कोलाहल और पिताके राज्यका नाश ॥ १७ ॥ निकालेहुए वज्रबाहुके पुत्र बली भद्रायुने सुना, शत्रुओंसे पिताका बन्धन पितृपत्नियोंका हरण ॥ १८ ॥ और राज्यकी नष्टता सन उसने सिंहके समान क्रोध किया, और शिवयोगीके दिये खड्ग

जगृहुर्युवतीस्सर्वाश्चार्वङ्गीश्चैवकन्यकाः ॥ राज्ञोबवंधुर्महिषीर्दासीश्चैवसहस्रशः ॥ १५ ॥ कोशंचरत्नसंपूर्णंजहुस्तेप्याततायिनः ॥ एवंविना श्यनगरींहृत्वास्त्रीगोधनादिकम् ॥ १६ ॥ वज्रबाहुंबलाद्बद्ध्वारथेस्थाप्यविनिर्ययुः ॥ एवंकोलाहलेजातेराष्ट्रनाशेचदारुणे ॥ १७ ॥ राजपु त्रोथभद्रायुस्तद्वार्तामशृणोद्बली ॥ पितरंशत्रुनिर्बद्धंपितृपत्नीस्तथाहृताः ॥ १८ ॥ नष्टंदशार्णराष्ट्रंचश्रुत्वाचुक्रोशसिंहवत् ॥ सखड्गशं खावादायवैश्यपुत्रसहायवान् ॥ १९ ॥ दंशितोरथमारुह्यकुमारोविजिगीषया ॥ जवेनागत्यतंदेशंमागधैरभिपूजितम् ॥ २० ॥ दह्यमानं क्रंदमानंहृतस्त्रीसुतगोधनम् ॥ दृष्ट्वाराज्यजनंसर्वंराज्यंशून्यंभयाकुलम् ॥ २१ ॥ क्रोधाध्मातमनास्तूर्णंप्रविश्यारिपुवाहिनीम् ॥ आकर्णाकृष्टकोदंडोववर्षशरसंततीः ॥ २२ ॥

और शंखको ले वैश्यपुत्रकी सहायतासे ॥ १९ ॥ जीतकी इच्छा कर वह भद्रायु कमार बड़ी शीघ्रतापूर्वक दशार्णनाम अपने देशमें आया तो क्या देखता ह कि मगधराजकी सेनाभी अभी वहीं है ॥ २० ॥ और कहीं कुछ जल रहा है, कोई रोदन कररहाहै । किसीकी स्त्री किसीका गो धनादि हरण होगया है, इसप्रकारकी आपत्तिसे युक्त सर्व राज्य जन और राज्यको राजासे शून्य देख ॥ २१ ॥ उसका बहुत क्रोध हुआ और शीघ्रही शत्रुसेनामें घुसकर

कानतक खींचेहुए धनुषसे बाणोंकी वर्षा करने लगा ॥ २२ ॥ राजपुत्रके बाण मारनेपर शत्रुसेना हत होने लगी तथापि उन्होंने बड़े तीक्ष्ण बाणोंसे राजपुत्रके ऊपर प्रहार किया ॥ २३ ॥ युद्धमें उन दुर्मदोंके प्रहार करनेपरभी शिवकवचके प्रभावसे वह रणधीर राजपुत्र चलायमान न हुआ ॥ २४ ॥ अस्त्र कष्टको सहकर वह शीघ्रही गजलीलासे शत्रुसेनामें घुस सब रथ, हाथी और अनेक पैदल चलनेवालोंको मारने लगा ॥ २५ ॥ उस सेनामें एक सारथी समेत रथीको मार वैश्यपुत्रको अपना सारथी बना उस रथमें स्थित हो ॥ २६ ॥ वह धीर राजपुत्र शत्रुसेनामें इसप्रकार फिरने लगा जैसे मृगोंके

तेहन्यमानारिपवोराजपुत्रेणसायकैः ॥ तमभिद्रुत्यवेगेनशरैर्विव्यधुरुल्बणैः ॥ २३ ॥ हन्यमानोस्त्रपूगेनरिपुभिर्युद्धदुर्मदैः ॥ नचचालरणेधीरःशिववर्माभिरक्षितः ॥ २४ ॥ सोस्त्रकर्षंप्रसह्याशुप्रविश्यगजलीलया ॥ जघानाशुरथान्नागान्पदातीनपिभूरिशः ॥ २५ ॥ तत्रैकंरथिनंहत्वाससूतंनृपनंदनः ॥ तमेवरथमास्थायवैश्यनंदनसारथिः ॥ २६ ॥ विचचाररणेधीरःसिंहोमृगकुलंयथा ॥ अथसर्वेसुसंरब्धाःशूराःप्रोद्यतकार्मुकाः ॥ २७ ॥ अभिसस्रुस्तमेवैकंचमूपाबलशालिनः ॥ तेषामापततामग्रेखड्गमुद्यम्यदारुणम् ॥ २८ ॥ अभ्युद्ययौमहावीरान्दर्शयन्निवपौरुषम् ॥ करालांतकजिह्वाभंतस्यखड्गंमहोज्ज्वलम् ॥ २९ ॥ दृष्ट्वैवसहसामम्लुश्चमूपास्तत्प्रभावतः ॥ येयेपश्यंतितंखड्गंप्रस्फुरंतंरणांगणे ॥ ३० ॥

कुलमें सिंह, ऐसा देख बाण चढ़ाकर युद्ध करनेको तय्यार शत्रुओंने ॥ २७ ॥ अपने बली सेनापतियोंको साथ ले उस अकेले राजपुत्रको चारों ओरसे घेर लिया, युद्धके निमित्त संमुख आयेहुए शत्रुओंके सामने दारुण खड्गको उठाया ॥ २८ ॥ और अपना पुरुषार्थ दिखाते हुए, उन महावीरोंके संमुख गया, कालकी जिह्वाके समान और महा उज्ज्वल उसका खड्ग ॥ २९ ॥ देखतेही उसके प्रभावसे सब सेनाके जन सहसा प्राणरहित होगये, युद्धमें

चमकतेहुए खड्गको जो जो देखते थे ॥ ३० ॥ वे सब इसप्रकार नष्ट होते थे जैसे अग्निमें पडकर पतंग नष्ट होजाते हैं, जो सेना बची उस सब सेनाके विनाशके निमित्त महाभुज राजपुत्रने ॥ ३१ ॥ महाशब्दवाला शंख बजाया जिससे आकाश पूर्ण होगया, तीक्ष्ण विषसे भरेहुएके समान उस शंखध्वनिके ॥ ३२ ॥ सुनने मात्रसे शत्रु मूर्च्छित हो पृथिवीपर गिरपड़े, जो घोडोंपर थे वे वहीं मूर्च्छित हो गिरपड़े; जो हाथियोंपर स्थित थे वे हाथियोंपर मूर्च्छित हो ॥ ३३ ॥ क्षणमात्रमें पृथिवीपर गिरपड़े, शंखध्वनिसे सबका पराक्रम जाता रहा, शस्त्र रहित और मूर्च्छित उन सबको ॥ ३४ ॥

तेसर्वेनिधनंजग्मुर्वह्निंप्राप्येवकीटकः ॥ अथासौसर्वसैन्यानांविनाशायमहाभुजः ॥ ३१ ॥ शंखंदध्मौमहारावंपूरयन्निवरोदसी ॥ तेनशंखनिनादेनविषाक्तेनेवभूयसा ॥ ३२ ॥ श्रुतमात्रेणरिपवोमूर्छिताःपतिताभुवि ॥ अश्वपृष्ठेरथेयेचयेचदंतिषुसंस्थिताः ॥ ३३ ॥ तेविसंज्ञाःक्षणात्पेतुःशंखनादहतौजसः ॥ तान्भूमौपतितान्सर्वान्नष्टसंज्ञान्निरायुधान् ॥ ३४ ॥ विगणय्यशवप्रायान्नावधीच्छास्त्रधर्मवित् ॥ आत्मनः पितरंबद्धंमोचयित्वारणाजिरे ॥ ३५ ॥ तत्पत्नीःशत्रुवशगाःसर्वाःसद्योव्यमोचयत् ॥ पत्नीश्चमंत्रिमुख्यानांतथान्येषांपुरौकसाम् ॥ ३६ ॥ स्त्रियोबालांश्चकन्याश्चगोधनादीन्यनेकशः ॥ मोचयित्वारिपुभयात्तमाश्वासयदाकुलः ॥ ३७ ॥ अथारिसैन्येषुचरंस्तेषांजग्राहयोषितः ॥ मरुन्मनोजवानश्वान्मातंगान्गिरिसन्निभान् ॥ ३८ ॥

मरेहुएके तुल्य जान शास्त्रधर्मको जाननेवाले राजपुत्रने वध नहीं किया, इसके उपरान्त युद्धभूमिमें अपने पिताको बन्धनसे छुटाया ॥ ३५ ॥ शत्रुओंके वशमें गई सब पितृपत्नियोंको तत्काल मुक्त किया, मुख्य मन्त्रियोंकी स्त्री, अन्य पुरवासियोंकी स्त्री ॥ ३६ ॥ बालक , कन्या और अनेक गोधनादिको शत्रुभयसे छुडाकर उनको भलीप्रकार समझाया ॥ ३७ ॥ फिर शत्रुसेनामें विचर उनकी स्त्रियें छीनीं, पवन और मनके समान वेगवाले घोड़े, पर्व

तके समान हाथी ॥ ३८ ॥ चाँदीके रथ, सुन्दर मुखवाली दासी इन सबका हरण और बहुतसे धनका ग्रहण कर ॥ ३९ ॥ पराजितहुए मगधराजको बाँधा, उसके मुख्य मन्त्री, भूप, उनमें मुख्यनायक ॥ ४० ॥ इन सबको बाँध और पकड़कर शीघ्रही अपनी पुरीमें आगया, पहिले जो युद्धसे परा जित हो चारोंओर भाग गये थे ॥ ४१ ॥ वे सब मुख्यमन्त्री और नायक विश्वासकर (हमारा राजा जीत गया यह जान) फिर लौट आये, राजकु

स्यंदनानिचरौक्माणिदासीश्चरुचिराननाः ॥ सर्वमाहृत्यवेगेनगृहीत्वातद्धनंबहु ॥ ३९ ॥ मागधेशंहेमरथंनिर्बबंधपराजितम् ॥ तन्मं त्रिणश्चभूपांश्चतत्रमुख्यांश्चनायकान् ॥ ४० ॥ गृहीत्वातरसाबद्धापुरींप्रावेशयद्द्रुतम् ॥ पूर्वंयेसमरेभग्नाविवृत्ताःसर्वतोदिशम् ॥ ४१ ॥ तेमंत्रिमुख्याविश्वस्तानायकाश्चसमाययुः ॥ कुमारविक्रमंदृष्ट्वासर्वेविस्मितमानसाः ॥ ४२ ॥ तंमेनिरेसुरश्रेष्ठंकारणादागतंभुवम् ॥ अहोनःसुमहाभाग्यमहोनस्तपसःफलम् ॥ ४३ ॥ केनाप्यनेनवीरेणमृताःसंजीविताःखलु ॥ एषकिंयोगसिद्धोवातपःसिद्धोथवाऽमरः ॥ ॥ ४४ ॥ अमानुषमिदंकर्मयदनेनकृतंमहत् ॥ नूनमस्यभवेन्मातासागौरीतिशिवःपिता ॥ ४५ ॥ अक्षौहिणीनांनवकंजिगायानंतशक्ति धृक् ॥ इत्याश्चर्ययुतैर्हृष्टैःप्रशंसाद्भिःपरस्परम् ॥ ४६ ॥

मारका पराक्रम देख सब आश्चर्य करने लगे ॥ ४२ ॥ और किसी कारणसे पृथिवीपर आयेहुए उसको श्रेष्ठ देवता माना, तथा अपनेको धन्यवाद दिया कि हमारा भाग्य श्रेष्ठ है, यह हमारे तपका फल है ॥ ४३ ॥ कौनसे इस वीरने मरेहुए हमको फिर जिला दिया यह कोई योगसिद्ध, तपस्वी, सिद्ध अथवा देवता है ॥ ४४ ॥ क्योंकि इसने यह अमानुषकार्य किया, निश्चय यह शिव पार्वतीका पुत्र है ॥ ४५ ॥ इस अनन्त शक्तिधारी महापु

रुषने नव अक्षौहिणी सेना नष्ट करदी, इसप्रकार आश्चर्य कर सब प्रजाजन प्रसन्नतापूर्वक परस्पर प्रशंसा करने लगे ॥ ४६ ॥ मन्त्रीजनोंके पूँछनेपर उसने अपना सब वृत्तान्त कथन किया, विस्मय और प्रसन्नतासे आह्लादयुक्त, दूसरोंके अधिकारसे आयेहुए ॥ ४७ ॥ और आनन्दपूर्वक नेत्रोंसे जल छोडतेहुए अपने पिताको प्रेमसे विह्वल हो प्रणाम किया, प्रणयपूर्वक अपने पुत्रसे पूजित हो राजाने ॥ ४८ ॥ शीघ्र आलिंगन किया और प्रेमसे कातर होकर बोला, हे महामते ! तुम कौन हो ? देवता हो, मनुष्य वा गन्धर्व हो ॥ ४९ ॥ कौन तुम्हारी माता है, कौन तुम्हारा पिता है । किसदेशमें तुम

पृष्टोमात्यजनेनासावात्मानंप्राहतत्त्वतः ॥ समागतंस्वपितरंविस्मयाह्लादविह्वतम् ॥ ४७ ॥ मुंचंतमानंदजलंववंदेप्रेमविह्वलः ॥ सराजानिजपुत्रेणप्रणयादभिवंदितः ॥४८॥ आश्लिष्यगाढंतरसाबभाषेप्रेमकातरः ॥ कस्त्वंदेवोमनुष्योवागंधर्वोवामहामते ॥४९॥ कामाताजनकःकोवाकोदेशस्तवनामाकिम् ॥ कस्मान्नःशत्रुभिर्बद्धान्मृतानिवहतौजसः ॥५०॥ कारुण्यादिहसंप्राप्यसपत्नीकान्सुमोचयः ॥ कुतोलब्धमिदंशौर्यधैर्यतेजोबलोन्नतिः ॥ ५१ ॥ जिगीषसीवलोकांस्त्रीन्सदेवासुरमानुषान् ॥ अपिजन्मसहस्रेणतवानृण्यंमहौजसः ॥ ५२ ॥ कर्तुंनाहंसमर्थोस्मिसहैभिर्दारबांधवैः ॥ इमान्पुत्रानिमाःपत्नीरिदंराज्यमिदंपुरम् ॥ ५३ ॥ सर्वंविहायमच्चित्तंत्वय्येवप्रेमबंधनम् ॥ सर्वंकथयमेतातमत्प्राणपरिरक्षक ॥ ५४ ॥

निवास करते हो और तुम्हारा नाम क्या है, बलहीन, मरेहुओंके तुल्य, शत्रुओंसे बन्धेहुए हमको हमारी रानियोंसमेत किसकारण करुणासे यहाँ आ छुटाया, यह शौर्य, तेज, बल और उन्नति कहाँसे प्राप्त की ॥५०॥५१॥इष बल और शूरतासे तुम त्रिलोकीको जीत सकते हो, मनुष्योंकी तो कथाही क्या है, हे महापुरुष ! मैं इन दारा और बांधवों समेत सौजन्ममेंभी उऋण नहीं हो सकता, इन स्त्री, पुत्र, राज्य; पुर ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ सबको छोड

मेरा चित्त तुम्हारेही प्रेममें बँध रहा है, इसकारण हे मेरे प्राणोंकी रक्षा करनेवाले महापुरुष ! हे तात ! मुझसे अपना सब वृत्तान्त कथन करो ॥ ५४ ॥ इन मेरी स्त्रियोंका जीवन तुम्हारेही आधीन है । इतनी कथा सुनाय श्रीसूतजी बोले कि इसप्रकार पिताके पूँछनेपर भद्रायु बोला ॥ ५५ ॥ हे राजन् ! सुनय नाम यह वैश्यपुत्र मेरा सखा है, मैं इसीके सुन्दर घरमें मातासमेत निवास करता हूँ ॥ ५६ ॥ भद्रायु मेरा नाम है, और वृत्तान्त पीछे कहूँगा, अपनी स्त्री और सुहज्जनों समेत पुरमें प्रवेश करो, तुम्हारा कल्याण हो ॥ ५७ ॥ शत्रुओंका भय त्याग सुखपूर्वक

एतासांममपत्नीनांत्वदधीनंहिजीवितम् ॥ ॥ सूतउवाच ॥ इतिपृष्टःसभद्रायुःस्वपित्रातमभाषत ॥ ५५ ॥ एषवैश्यसुतोराजन्सुनयो नाममत्सखा ॥ अहमस्यगृहेरम्येवसामिसहमातृकः ॥ ५६ ॥ भद्रायुर्नाममद्वृत्तंपश्चाद्विज्ञापयामिते ॥ पुरंप्रविश्यभद्रंतेसदारःससुहृज्जनः॥ ॥ ५७ ॥ त्यक्त्वाभयमरातिभ्योविहरस्वयथासुखम् ॥ नैतान्मुंचारिपूंस्तावद्यावदागमनंमम ॥ ५८ ॥ अहमद्यगमिष्यामिशीघ्रमात्मनिवे शनम् ॥ इत्युक्त्वानृपमामंत्र्यभद्रायुर्नृपनंदनः ॥ ५९ ॥ आजगामस्वभवनंमात्रेसर्वंन्यवेदयत् ॥ सापिहृष्टास्वतनयंपरिरेभेऽश्रुलो चना ॥ ६० ॥ सचवैश्यपतिःप्रेम्णापरिष्वज्याभ्यपूजयत् ॥ वज्रबाहुश्चराजेंद्रःप्रविष्टोनिजमंदिरम् ॥ ६१ ॥ स्त्रीपुत्रामात्यसहितः प्रहर्षमतुलंययौ ॥ तस्यांनिशायांव्युष्टायामृषभोयोगिनांवरः ॥ ६२ ॥

राज्य करो, जबतक मैं न आऊं तबतक इन शत्रुओंको मत छोडिये ॥ ५८ ॥ अब मैं जाता हूँ और शीघ्र आऊँगा, इसप्रकार भद्रायुनाम राजपुत्र राजाको समझाकर ॥ ५९ ॥ अपने घर आया और सब वृत्तान्त मातासे निवेदन किया, इस वृत्तान्तको सुन माता प्रसन्न हुई और प्रेमसे अश्रुपात होने लगा ॥ ६० ॥ उस वैश्यपतिनेभी प्रेमपूर्वक उसका आलिंगन कर पूजन किया, वज्रबाहुनाम राजाभी अपने भवनको गया ॥ ६१ ॥ स्त्री पुत्र और मंत्रीगणोंसमेत उसको

परमानन्द प्राप्त हुआ, उस रात्रिके बीतनेपर योगियोंमें श्रेष्ठ ऋषभ योगी ॥ ६२ ॥ सीमन्तिनीके पति चन्द्रांगद राजाके पास आये और भद्रायुकी उत्पत्ति और उसका अमानुष कर्म ॥ ६३ ॥ प्रेमपूर्वक राजासे कहा और यह जो कीर्तिमालिनी नाम तुम्हारी कन्या है इसका भद्रायुके साथ विवाह कर दो, इस प्रकार निषधराजको समझा ॥ ६४ ॥ देशकालार्थके तत्त्वको जाननेवाले ऋषभनाम शिवयोगी वहांसे चल दिये, उनके जानेके उपरान्त चन्द्रांगदने सुन्दर मुहूर्त्तमें ॥ ३५ ॥ भद्रायुको बुला कीर्तिमालिनी नाम अपनी कन्याका विवाह उसके साथ करदिया, विवाहके उपरान्त वह राजपुत्र भार्या

चंद्रांगदंसमागत्यसीमंतिन्याःपतिंनृपम् ॥ भद्रायुषः समुत्पत्तिंतस्यकर्माप्यमानुषम् ॥ ६३ ॥ आवेद्यरहसिप्रेम्णात्वत्सुतांकीर्तिमालिनीम् ॥ भद्रायुषेप्रयच्छेतिबोधयित्वाचनैषधम् ॥ ६४ ॥ ऋषभोनिर्जगामाथदेशकालार्थतत्त्ववित् ॥ अथचंद्रांगदोराजामुहूर्त्तेमंगलोचिते ॥ ६५ ॥ भद्रायुषंसमाहूयप्रायच्छत्कीर्त्तिमालिनीम् ॥ कृतोद्वाहःसराजेंद्रतनयः सहभार्यया ॥ ६६ ॥ हेमासनस्थः शुशुभेरोहिण्येवनिशाकरः ॥ वज्रबाहुंतत्पितरंसमाहूयसनैषधः ॥ ६७ ॥ पुरंप्रवेश्यसामात्यःप्रत्युद्गम्याभ्यपूजयत ॥ तत्रापश्यत्कृतोद्वाहंभद्रायुषमरिंदमम् ॥ ६८ ॥ पादयोःपतितंप्रेम्णाहठात्तंपरिषस्वजे ॥ एष मेप्राणदोवीरएषशत्रुनिषूदनः ॥ ६९ ॥

समेत ॥ ६६ ॥ सुवर्णसिंहासनपर स्थित हो इसप्रकार शोभित हुआ जैसे कि रोहिणीसे चन्द्रमा, फिर निषधाधिपति चन्द्रांगदने वज्रबाहु नाम उसके पिताको बुलाया ॥ ६७ ॥ और पुरमें प्रवेश कर मंत्रीसमेत प्रत्युद्गमन कर उनका पूजन किया, वहाँ उसने विवाहित हुए और शत्रुओंका दमन करनेवाले भद्रायुको देखा ॥ ६८ ॥ और प्रेमपूर्वक चरणोंपर गिरेहुए उसको हठसे उठाकर हृदयसे लगाया और निषधराजसे बोला कि मेरे प्राणोंकी

रक्षा करनेवाला और मेरे शत्रुओंका वध करनेवाला यही है ॥ ६९ ॥ हे नृप चन्द्रांगद ! यह तुम्हारा जमाई अज्ञातवंश, अनन्त पराक्रमी और महाबली है मैं इसका वंश नहीं जानता ॥ ७० ॥ मैं इसके वंशकी उत्पत्ति सुना चाहता हूँ, इसप्रकार वज्रबाहुके प्रार्थना करनेपर निषधराज॥ ७१ ॥ एकान्तमें जा हँसकर यह बोला हे राजन् ! यह तुम्हारा पुत्र है, बालकपनमें रोगसे पीडित होजानेके कारण ॥ ७२ ॥ तुमने इसको मातासमेत वनमें त्याग दिया था, वह इसकी माता अपने बालकको साथ लिये वनमें घूमने लगी ॥ ७३ ॥ दैवयोगसे उसको एक महावैश्यका घर मिला और

अथाप्यज्ञातवंशोयंमयानंतपराक्रमः ॥ एषतेनृपजामाताचंद्रांगदमहाबलः ॥ ७० ॥ अस्यवंशमथोत्पत्तिंश्रोतुमिच्छामितत्त्वतः ॥ इत्थंदशार्णराजेनप्रार्थितोनिषधाधिपः ॥ ७१ ॥ विविक्तमुपसंगम्य प्रहसन्निदमब्रवीत् ॥ एषतेतनयोराजञ्छैशवेरोगपीडितः ॥७२॥ त्वयावनेपरित्यक्तःसहमात्रारुजार्तया ॥ परिभ्रमंतीविपिनेसानारीशिशुनासह ॥ ७३ ॥ दैवाद्वैश्यगृहंप्राप्तातेनवैश्येनरक्षिता ॥ अथासौ बहुरोगार्तोमृतस्तवकुमारकः ॥ ७४ ॥ केनापियोगिराजेनमृतःसंजीवितःपुनः ॥ ऋषभस्यैषतस्यैवप्रभावाच्छिवयोगिनः ॥ ७५ ॥ रूपंचदेवसदृशंप्राप्तौमातृकुमारकौ ॥ तेनदत्तेनखड्गेनशंखेनाभिविघातिना ॥ ७६ ॥ जिगायसमरेशत्रूञ्छिववर्माभिरक्षितः ॥ अतएनं समादायमातरंचास्यसुव्रताम् ॥ ७७ ॥

उसीने रक्षा की, उस वैश्यके बहुत औषधि करनेपरभी इस तुम्हारे पुत्रका रोग बढ गया और कुछकालके उपरान्त इसकी मृत्यु होगई ॥ ७४ ॥ फिर किसीएक योगिराजने इसको जिला दिया, ऋषभनाम शिवयोगीके प्रभावसे ॥ ७५ ॥ इन दोनोंका देवताओंके सदृश रूप होगया, और उसी शिवयोगीके दियेहुए शत्रुघाती खड्ग और शंखसे ॥ ७६ ॥ शिवकवचसे रक्षित हो इसने युद्धमें शत्रुओंको जीता, इसलिये सुव्रता मातासमेत इसको अपने

साथ लेकर ॥ ७७ ॥ हे राजन् ! अपनी नगरीको जाओ और सुन्दर कल्याणके भागी बनो, इसप्रकार सब वृत्तान्त कह चन्द्रांगद राजाने घरके भीतर स्थित हुई ॥ ७८ ॥ और रत्नालंकारोंसे भूषित उसकी पटरानीको लाकर दिखाया, इत्यादि सब आख्यान देख और सुन राजा ॥ ७९ ॥ बहुत लज्जित हुआ और मढतासे कियेहुए अपने कर्मकी निन्दा करने लगा, किंतु उनके दर्शनके कौतुकसे आनन्दभी बहुत प्राप्त हुआ ॥ ८० ॥ उसके

गच्छस्वनगरींराजन्प्राप्स्यसिश्रेय उत्तमम् ॥ इतिचंद्रांगदःसर्वमाख्यायांतर्गृहेस्थिताम् ॥ ७८ ॥ तस्याग्रपत्नीमाहूयदर्शयामासभूषिताम् ॥ इत्यादिसर्वमाकर्ण्यदृष्ट्वाचसमहीपतिः ॥ ७९ ॥ व्रीडितोनितरांमौढ्यात्स्वकृतंकर्मगर्हयन् ॥ प्रातश्चपरमानन्दंतयोर्दर्शनकौतुकात् ॥ ८० ॥ पुलकांकितसर्वांगस्तावुभौपरिषस्वजे ॥ एवंनिषधराजेनपूजितश्चाभिनन्दितः ॥ ८१ ॥ सभोजयित्वातंसम्यक्स्वयंचसहमंत्रिभिः ॥ तामात्मनोग्रमहिषींपुत्रंतमपितांस्नुषाम् ॥ ८२ ॥ आदायसपरीवारोवज्रबाहुःपुरींययौ ॥ ससंभ्रमेणमहताभद्रायुःपितृमंदिरम् ॥ ८३ ॥ संप्राप्यपरमानंदंचक्रेसर्वपुरौकसाम् ॥ कालेनदिवमारूढेपितरिप्राप्तयौवनः ॥ ८४ ॥

सब अंग पुलकायमान होगये और उन दोनोंको हृदयसे लगाया, इसप्रकार निषधराजसे पूजित और अभिनन्दित हो ॥ ८१ ॥ मंत्रियों समेत आप भोजन किया और उसको कराया, फिर अपनी पटरानी, पुत्र और पुत्रवधूको साथ ले कुटुम्बसमेत ॥ ८२ ॥ वज्रबाहु राजा अपनी पुरीमें आया, बडे आश्चर्य से भद्रायु अपने पिताके भवनमें ॥ ८३ ॥ प्राप्त हुआ, उसके आनेसे सब पुरवासियोंको परमानन्द प्राप्त हुआ, कुछ समयके उपरान्त पिताका वैकुंठ

वास हुआ ॥ ८४ ॥ युवावस्थाको प्राप्तहुए भद्रायुने अद्भुत पराक्रमसे सब प्रजाका पालन किया और हेमरथ नामक मगधदेशके राजाकोभी बंधनसे छोडदिया तथा ब्रह्मर्षियोंके संमुख उसने मित्रता करली ॥ ८५ ॥ इसप्रकार पूर्वजन्ममें शिवयोगीके पूजाके प्रभावसे वह राजपुत्र ऐसी दुःसह आपत्ति से छुटा और गयेहुए राज्यको फेर, चन्द्रांगदकी तनया (पुत्री) के साथ रमणकर सुखपूर्वक निष्कंटक राज्य करने लगा ॥ ८६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखण्डे पण्डितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां भद्रायुर्विवाहकथनं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ अथ चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

भद्रायुःपृथिवींसर्वांशशासाद्भुतविक्रमः ॥ मागधेशंहेमरथंमोचयामासबंधनात् ॥ संधायैमैत्रींपरमांब्रह्मर्षीणांचसन्निधौ ॥ ८५ ॥ इत्थंत्रैलोक्यविहितांशिवयोगिपूजांकृत्वापुरातनभवेपिसराजसूनुः ॥ निस्तीर्यदुःसहविपद्गणमात्तराज्यश्चंद्रांगदस्यतनयासहसाधुरेमे ॥८६॥ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेभद्रायुर्विवाहकथनंनामत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ छ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ प्राप्तसिंहासनोवीरो भद्रायुःसमहीपतिः ॥ प्रविवेशवनंरम्यंकदाचिद्भार्ययासह ॥ १ ॥ तस्मिन्विकसिताशोकप्रसूननवपल्लवे ॥ प्रोत्फुल्लमल्लिकाखंडकूजद्भ्रमरसंकुले ॥ २ ॥ नवकेसरसौरभ्यबद्धरागिजनोत्सवे ॥ सद्यःकोरकिताशोकतमालगहनांतरे ॥ ३ ॥

इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे शौनकादि मुनीश्वरो ! राज्यसिंहासनपर स्थित हो वह भद्रायुनाम वीर राजा अपनी स्त्रीसमेत किसीसमय एक सुन्दर वनमें गया ॥ १ ॥ उसमें अशोकके नवीन पल्लव और फूल फलरहे थे, चमेलीके फूल खिलरहे थे, भौंरोंके समूह गूँज रहेथे ॥ २ ॥ नई केसरकी सुन्दरतासे मनुष्योंको अति प्रसन्नता होती थी, तत्काल निकलीहुई अशोककी कलियें अलगही शोभित, होती थीं तमाल वृक्षोंसें वन सघन

होरहा था ॥ ३ ॥ बहुत फूलोंके कारण माधवी वनमंडप नम्र होरहा था, मूँगोंके फूल और फूलेहुए आम्र अपनीही शोभा दिखाते थे ॥ ४ ॥ पुंनागके बनोंसे मत्त होकर कोकिला शब्द करती थीं, इसप्रकार उस वनकी शोभा होरही थी, इसप्रकार शोभायमान उस वनमें रानीसमेत राजा चारों ओर विहार करने लगा ॥ ५ ॥ इसी अवसरमें राजाने यह देखा कि, कुछ दूर एक ओरसे पुकारते और दौडतेहुए ब्राह्मण और उसकी स्त्री चले आते हैं, पीछे उनके एक व्याघ्र दौडा चला आता है ॥६॥ राजाको देख वे बोले कि हे महाराज ! हे राजन् ! हे करुणानिधे ! हमारी रक्षा करो, रक्षा

प्रसूनप्रकरानम्रमाधवीवनमंडपे ॥ प्रवालकुसुमोद्द्योतचूतशाखिभिरञ्चिते ॥ ४ ॥ पुन्नागवनविभ्रांतपुंस्कोकिलविराविणि ॥ सर्वतःसमयेरम्येविजहारस्त्रियासह ॥ ५ ॥ अथाविदूरेक्रोशंतौधावंतौद्विजदंपती ॥ अन्वीयमानौव्याघ्रेणददर्शनृपसत्तमः ॥ ६ ॥ पाहिपाहिमहाराजहाराजन्करुणानिधे ॥ एषधावतिशार्दूलोजग्धुमावांमहारयः ॥ ७ ॥ एषपर्वतसंकाशःसर्वप्राणिभयंकरः ॥ यावन्नखादतिप्राप्य तावन्नोरक्षभूपते ॥८॥ इत्थमाक्रंदितंश्रुत्वासराजाधनुराददे॥ तावदागत्यशार्दूलोमध्येजग्राहतांवधूम् ॥ ९ ॥ हानाथनाथहाकांतहाशंभो जगतःपते ॥ इतिरोरूयमाणांतांयावज्जग्राहभीषणः ॥ १० ॥

करो, यह महाभयंकर दुष्ट सिंह हमें खानेको दौडा चला आता है ॥ ७ ॥ हे भूपते ! पर्वतके समान कान्तिवाला और सर्व प्राणियोंको भय देनेवाला कराल जन्तु जबतक हमारे निकट न आवे, तब तक हमारी रक्षा करो ॥ ८ ॥ इस प्रकार उनका रुदन सुन राजाने धनुष उठाया, तबतक सिंहने वहाँ आ उसकी ब्राह्मणीपर प्रहार किया ॥ ९ ॥ हा नाथ ! हा नाथ ! हा कान्त ! हा जगत्के स्वामी शंभो ! इसप्रकार विलाप करती

हुई ब्राह्मणीको वह भीषणजन्तु भक्षण करनेहीको था ॥ १० ॥ कि राजाने उसपर तीक्ष्ण बाणोंसे प्रहार किया, किंतु वह उनसे इसप्रकार व्यथित नहीं हुआ जैसे वर्षासे पर्वत, अर्थात् वे बाण उसके किसी अंगमेंभी न लगसके ॥ ११ ॥ राजाके अस्त्रोंसे व्यथा न होनेके कारण वह महाबलवान् सिंह शीघ्रतासे बलपूर्वक उसको आक्रमण कर चलदिया ॥ १२ ॥ व्याघ्रके द्वारा हरणहुई अपनी स्त्रीको देख बहुत दुखी हुआ और हा प्रिये ! हा बाले ! हा कान्ते ! हा पतिव्रते ! इसप्रकार कहकर रुदन करने लगा ॥ १३ ॥ कि इस वनमें अकेला छोड़ तू लोकान्तरको किसप्रकार चली

तावत्सराजानिशितैर्भल्लैर्व्याघ्रमताडयत्॥नचतैर्विव्यथेकिंचिद्गिरिर्द्रिइववृष्टिभिः॥११॥सशार्दूलोमहासत्त्वोराज्ञोस्त्रैरकृतव्यथः॥बलादाकृष्य तांनारीमपाक्रामतसत्वरः॥१२॥व्याघ्रेणापहृतांपत्नींवीक्ष्यविप्रोऽतिदुःखितः॥रुरोदहाप्रियेबालेहाकांतेहापतिव्रते॥१३॥ एकंमामिहसंत्यज्य कथंलोकांतरंगता ॥ प्राणेभ्योपिप्रियांत्यक्त्वाकथंजीवितुमुत्सहे ॥१४॥ राजन्क्वतेमहास्त्राणिक्वतेश्लाघ्यंमहद्धनुः ॥ क्वतेद्वादशसाहस्रमहा नागांतिकंबलम् ॥१५॥ किंतेशंखेनखड्गेनकिंतेमंत्रास्त्रविद्यया ॥ किंचतेनप्रयत्नेनकिंप्रभावेणभूयसा॥१६॥तत्सर्वंविफलंजातंयच्चान्यत्त्वयि तिष्ठति॥यस्त्वंवनौकसंजंतुंनिवारयितुमक्षमः॥१७॥क्षात्रस्यायंपरोधर्मःक्षताद्यत्पारिरक्षणम्॥तस्मात्कुलोचितेधर्मेनष्टेत्वज्जीवितेनाकिम् ॥१८॥

गई, प्राणोंसे भी अधिक प्यारी तुझको छोड मैं कैसे जी सकता हूँ ॥ १४ ॥ और राजासे बोला कि, हे राजन् ! वे तुम्हारे महाअस्त्र और श्लाघ नीय धनुष कहाँ हैं, बारह हजार हाथियोंका बल जो तुमने पाया है सो इससमय कहाँ चलागया ॥ १५ ॥ तुम्हारे शंख, खड्ग और मंत्रविद्यासे क्या प्रयोजन है, उस प्रयत्न और बडे प्रभावसे क्या ॥ १६ ॥ तथा और भी तुममें जो कुछ बलादि है वह सब आज निष्फल हुआ, क्योंकि बनके एक जन्तुको भी तुम निवारण न करसके ॥ १७ ॥ क्षत्रियका यह परमधर्म है कि आपत्तिग्रसित पुरुषकी रक्षा करे, इसकारण कुलोचित

धर्मके नष्ट होजानेपर तुम्हारे जीवनसे क्या प्रयोजन है ॥ १८ ॥ क्योंकि जो धर्मात्मा राजा हैं वे दुखी और शरणमें आयेहुओंकी प्राण और धनसे रक्षा करते हैं, जो ऐसा नहीं करते वे जीतेहुए भी मृतक तुल्य हैं ॥ १९ ॥ दान न करनेवाले धनियोंका जीवन मरणके तुल्य है, जो दुखियोंकी रक्षा नहीं करते उनको गृहस्थ आश्रम छोड भीख मांगना श्रेष्ठ है ॥ २० ॥ अनाथ; शरण आयेहुए और दीनोंकी जो राजा रक्षा नहीं करते उनको विषखाना और अग्निमें प्रवेश करना ही श्रेष्ठ है ॥ २१ ॥ इस प्रकार उसके विलाप और अपने पराक्रमकी निन्दा सुन राजा शोकसे व्याकुल

आर्तानांशरणार्तानांत्राणंकुर्वंतिपार्थिवाः ॥ प्राणैरर्थैश्चधर्मज्ञास्तद्विहीनामृतोपमाः ॥ १९ ॥ धनिनांदानहीनानांजीवितंमरणोपमम् ॥ आर्तत्राणविहीनानांगार्हस्थ्याद्भिक्षुतावरा ॥२०॥ वरंविषादनंराज्ञोवरमग्नौप्रवेशनम् ॥ अनाथानांप्रपन्नानांकृपणानामरक्षणात् ॥ २१ ॥ इत्थंविलपितंतस्यस्ववीर्यस्यचगर्हणम् ॥ निशम्यनृपतिःशोकादात्मन्येवमचिंतयत् ॥ २२ ॥ अतोमेपौरुषंनष्टमद्यदैवविपर्ययात् ॥ अद्यकीर्तिश्चमेनष्टापातकंप्राप्तमुत्कटम् ॥ २३ ॥ धर्मःकालोचितोनष्टोमंदभाग्यस्यदुर्मतेः ॥ नूनंमेसंपदोराज्यमायुष्यंक्षयमेष्याति ॥ २४ ॥ अपुंसांसंपदोभोगाःपुत्रदाराधनानिच ॥ दैवेनक्षणमुद्यंतिक्षणादस्तंव्रजंतिच ॥ २५ ॥ अतएनंद्विजन्मानंहतदारंशुचार्दितम् ॥ गतशोकंकरिष्यामिदत्त्वाप्राणानपिप्रियान् ॥ २६ ॥

हो मनमें विचारने लगा ॥ २२ ॥ कि प्रारब्धके विगड जानेसे आज मेरा सब पुरुषार्थ नष्ट होगया, मेरी सब कीर्ति नष्ट हुई, मुझको बडा पाप लगा ॥ २३ ॥ आज मन्दभागी और दुर्बुद्धि मेरा समयोचित धर्म नष्ट होगया, अवश्य मेरी संपत्ति राज्य और आयु नष्ट होजायगी ॥ २४ ॥ कुपुरुषोंकी संपत्ति, भोग, पुत्र, स्त्री और धन प्रारब्धसे क्षणमात्रमें उत्पन्न और क्षणमात्रमें नष्ट होजाते हैं ॥ २५ ॥ इसलिये हरणहुई है स्त्री जिसकी

ऐसे शोकसे व्याकुल इस ब्राह्मणको अपने प्राण देकर शोकरहित करूँ ॥२६॥ इस प्रकार मनमें विचार वह भद्रायुनाम श्रेष्ठराजा ब्राह्मणके चरणोंपर गिरपडा और समझाकर बोला ॥२७॥ हे ब्रह्मन् ! नष्ट होगया है पराक्रम जिसका ऐसे मुझपर कृपा करो, हेमहाबुद्धे ! शोक मत करो तुमको मनवांछित वर देता हूँ ॥२८॥ यह राज्य, रानी और मेरा शरीर सबकुछ तुम्हारे आधीन है, और कहो मैं तुम्हारा क्या अभिलषित करूँ॥२९॥इस प्रकार राजाका बचन सुन ब्राह्मण बोला जिस प्रकार अंधेको दर्पणसे क्या, भिक्षावृत्ति करनेवालेको सुंदर गृहोंसे क्या, और मूर्खको पुस्तकोंसे क्या लाभहै, इसी प्रकार स्त्रीहीन

इतिनिश्चित्यमानोसौभद्रायुर्नृपसत्तमः ॥ पतित्वापादयोस्त्वस्यबभाषेपरिसांत्वयन् ॥ २७ ॥ कृपांकुरुमयिब्रह्मन्क्षत्रबंधौहतौजसि ॥ शोकंत्यजमहाबुद्धेदास्याम्यर्थंतवेप्सितम् ॥ २८॥ इदंराज्यमियंराज्ञीममेदंचकलेवरम् ॥ त्वदधीनमिदंसर्वंकिंतेभिलषितंवद ॥ २९ ॥ ब्राह्मण उवाच ॥ किमादर्शेनचांधस्यकिंगृहैर्भैक्ष्यजीविनः ॥ किंपुस्तकेनमूर्खस्यह्यस्त्रीकस्यधनेनकिम् ॥ ३० ॥ अतोहंगतपत्नीकोभुक्तभोगोन्नकर्हिचित् ॥ इमांतवाग्रमहिषींकामार्थंदीयतांमम ॥ ३१ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ब्रह्मन्किमेषधर्मस्तेकिमेतद्गुरुशासनम् ॥ आत्मदेहस्यवाक्वापि नकलत्रस्यकर्हिचित् ॥ ३२ ॥ परदारोपभोगेनयत्पापंसमुपार्जितम् ॥ नतत्क्षालयितुंशक्यंप्रायश्चित्तशतैरपि ॥ ३३ ॥

पुरुषकोभी धनसे क्या प्रयोजन है ॥ ३० ॥ पत्नी न होनेके कारण मैं सुख किसी प्रकार नहीं भोग सकता, यदि मेरा भला चाहते हो तो यह अपनी बड़ी रानी मेरे लिये अर्पण करदो ॥ ३१ ॥ यह सुन राजा बोला कि हे ब्रह्मन् ! यह तुम्हारा कैसा धर्म है और कैसी तुम्हारे गुरुकी आज्ञा है, राज्य, अपना शरीर तथा अन्य सम्पत्ति भी मनुष्य देदेते हैं परन्तु अपनी स्त्री कोई नहीं देता ॥ ३२ ॥ पराई स्त्री सेवन करनेसे जो पाप लगता है. वह

सैकड़ों प्रायश्चित्तोंसे भी दूर नहीं होसकता ॥ ३३ ॥ यह सुन फिर ब्राह्मण बोला कि हे राजन् ! घोर ब्रह्महत्या और मद्यपान आदि महापातकोंकोभी मैं अपने तपसे दूर करसकता हूँ, परस्त्री गमनका पाप तो एक ओर रहा ॥ ३४ ॥ इसलिये इस अपनी भार्याको तुम मुझे अवश्य देदो नहीं तो शरणागतोंकी रक्षा न करनेके पापसे तुम सीधे नरकको चले जाओगे ॥ ३५ ॥ इस प्रकार ब्राह्मणका वचन सुन राजा डरा और विचारने लगा, कि शरणागतकी यदि मैं रक्षा नहीं करता हूँ तो महापाप लगता है, उस पापसे स्त्रीका देदेना अच्छा है ॥ ३६ ॥ ऐसा सोच राजाने विचारा कि अपनी

ब्राह्मणउवाच ॥ अपिब्रह्मवधंघोरमपिमद्यनिषेवणम् ॥ तपसानाशयिष्यामिकिंपुनःपारदारिकम्॥३४॥तस्मात्प्रयच्छमेभार्यामिमांत्वंध्रुवमन्यथा ॥ अरक्षणाद्भयार्तानांगंतासिनिरयंध्रुवम् ॥ ३५ ॥ इतिविप्रगिराभीतश्चिंतयामासपार्थिवः ॥ अरक्षणान्महत्पापंपत्नीदानंततोवरम्॥ ॥ ३६ ॥ अतःपत्नींद्विजाग्र्यायदत्त्वानिर्मुक्तकिल्बिषः ॥ सद्योवह्निंप्रवेक्ष्यामिकीर्तिश्चनिहिताभवेत् ॥ ३७ ॥ इतिनिश्चित्यमनसासमुज्ज्वाल्यहुताशनम् ॥ तंब्राह्मणंसमाहूयददौपत्नींसहोदकाम् ॥ ३८ ॥ स्वयंस्नातःशुचिर्भूत्वाप्रणम्यविबुधेश्वरान् ॥ तमग्निंत्रिःपरिक्रम्यशिवंदेवंसमाहितः ॥ ३९ ॥ तमथाग्नौपतिष्यंतंस्वपदासक्तचेतसम् ॥ प्रत्यदृश्यतविश्वेशःप्रादुर्भूतोजगत्पतिः ॥ ४० ॥

स्त्री ब्राह्मणको देकर पापसे छुट जाऊंगा और मैं भी तत्काल अग्निमें प्रवेश कर प्राण त्यागूंगा जिससे मेरी कीर्ति भी निश्चल रहेगी ॥ ३७ ॥ ऐसा मनमें विचार उसने काष्ठ इकट्ठे कर अग्नि जलाई और ब्राह्मणको बुला अपनी पत्नीका संकल्प करदिया ॥ ३८ ॥ अपने आप स्नान कर पवित्र हो ब्राह्मणोंके प्रति प्रणामकर अग्निकी तीन परिक्रमा करीं और शिवजीका हृदयमें ध्यान किया ॥ ३९ ॥ अग्निमें प्रवेश करनेको उद्यत देख उसी समय

जगत्पति श्री महादेवजी प्रकट हुए ॥ ४० ॥ पंचवक्त्र, त्रिनेत्र, पिनाक धारण किये, चन्द्रकला जिनके मस्तकपर है, पीली जटायें जिनकी विखरी हुई हैं, करोड़ सूर्य्यके समान तेजस्वी ॥ ४१ ॥ मृणालके समान गौरवर्ण, गजचर्म ओढ़े, गंगाजीकी तरंगें जिनकी जटाओंसे निकल रही हैं, सर्पों का हार और कंकण धारण किये, किरीटकी कोटि, बाजूबन्द और कंकणसे उज्वल ॥ ४२ ॥ त्रिशूल; खट्वांग, कुठार, ढाल, मृग, वर, अभय, और कमल तथा धनुष धारण किये, वृषभ पर आरूढ इसप्रकार शोभायमान प्रकटहुए शितिकण्ठ ईश शंकरका सम्मुख दर्शन किया॥ ४३॥ भद्रायुके

तमीश्वरंपंचवक्त्रंत्रिनेत्रंपिनाकिनंचंद्रकलावतंसम् ॥ आलंबितापिंगजटाकलापंमध्यंगतंभास्करकोटितेजसम् ॥ ४१ ॥ मृणालगौरंगजच मैवाससंगंगातरंगोक्षितमौलिदेशम् ॥ नागेंद्रहारावलिकंकणोर्मिकाकिरीटकोटचंगदकुंडलोज्वलम् ॥ ४२ ॥ त्रिशूलखट्वांगकुठारचर्म मृगाभयेष्टार्थपिनाकहस्तम् ॥ वृषोपरिस्थंशितिकंठमीशंप्रोद्भूतमग्रेनृपतिर्ददर्श ॥ ४३ ॥ अथांबराद्भुतंपेतुर्दिव्याःकुसुमवृष्टयः ॥ प्रणेदुर्दे वतूर्याणिदेवाश्चननृतुर्जगुः ॥ ४४ ॥ तमाजग्मुर्नारदाद्याःसनकाद्याःसुरर्षयः ॥ इंद्रादयश्चलोकेशास्तथाब्रह्मर्षयोमलाः ॥ ४५ ॥ तेषां मध्येसमासीनोमहादेवःसहोमया ॥ ववर्षकरुणासारंभक्तिनम्रेमहीपतौ ॥ ४६ ॥ तद्दर्शनानंदविजृंभिताशयःप्रवृद्धबाष्पांबुपरिप्लुतांगः ॥ प्रहृष्टरोमागलगद्गदाक्षरंतुष्टावगीर्भिर्मुकुलीकृतांजलिः ॥ ४७ ॥

ऊपर उस समय फूलोंकी वर्षा होने लगी, देवताओंने प्रसन्न हो दुन्दुभी बजाई और आकाशमें नृत्य किया ॥ ४४ ॥ महादेवजीको वहाँ आया जान नारद और सनकादि महर्षिभी वहीं आये, इन्द्रादि आठ लोकपाल, तथा निर्मल ब्रह्मर्षिभी आये ॥ ४५ ॥ उन सबके मध्यमें पार्वती सहित महादेवजी स्थित हो भक्ति पूर्वक नम्र हुए राजाको करुणाकी अतिवर्षा करने लगे ॥ ४६ ॥ उनका दर्शन पाय राजाके रोमांच होगये और प्रेमसे

विह्वल हो अश्रुपात करने लगा इसके उपरान्त राजाने हाथ जोड सुन्दर स्तोत्रसे उनको प्रसन्न किया ॥ ४७ ॥ राजा बोला, हे देव आपका कोई नाथ नहीं, आप अविनाशी हैं, आप प्रधान अप्रकाशित गुणवाले, महान् कारणोंसे रहित कारणके भी कारण, परम शिव चिदानन्दमय शांत हो ॥ ४८ ॥ तुम विश्वके साक्षी इस सब जगत्के कर्ता अप्रगट धाम वाले हृदयमें सन्निविष्ट हो इस कारणसे अनेक योगोंसे चित्तको रोककर विद्वान तुम्हारा खोज करते हैं ॥ ४९ ॥ एकात्मा भाव करनेवाले को आप एक हो अनेक बुद्धिवालोंको तुम अनेक हो तुम इन्द्रियोंसे परे सबके साक्षी

राजोवाच ॥ नतोस्मितेदेवमनाथमव्ययंप्रधानमव्यक्तगुणंमहांतम्॥अकारणंकारणकारणंपरंशिवंचिदानंदमयंप्रशांतम् ॥ ४८ ॥ त्वंविश्वसाक्षीजगतोस्यकर्त्ताविमूढधामाहृदिसन्निविष्टः ॥ अतोविचिन्वंतिविधौविपाश्चितोयोगैरनेकैःकृतचित्तरोधैः ॥ ४९ ॥ एकात्मतांभावयतांत्वमेकोनानाधियांयस्त्वमनेकरूपः ॥ अतींद्रियंसाक्ष्युदयास्तविभ्रमंमनःपथात्संह्वियतेपदंते ॥ ५० ॥ तंत्वांदुरापंवचसोधियश्चव्यपेतमोहंपरमात्मरूपम् ॥ गुणैकनिष्ठाःप्रकृतौविलीनाःकथंवपुःस्तोतुमलंगिरोमे ॥ ५१ ॥ तथापिभक्त्याश्रयतामुपेयुस्तवांघ्रिपद्मंप्रणतार्तिभंजनम् ॥ सुघोरसंसारदवाग्निपीडितोभजामिनित्यंभवभीतिशांतये ॥ ५२ ॥

उदय अस्त रूप विलासवाले मनके मार्गसे तुम्हारा पद परे है ॥ ५० ॥ सो बुद्धिमानोंकी बुद्धियें भी आपको वाणीसे परे कहती हैं, आप मोहरहित परमात्मारूप हो गुणोंमें ही एक निष्ठावाली प्रकृतिमें लीन हुई मेरी वाणी आपके शरीरकी स्तुति किस प्रकार कर सकती है ॥ ५१ ॥ तौ भी भक्तिके आश्रय करनेवाले प्रणाम करनेवालोंके दुख दूर करनेवाले आपके चरणकमलको प्राप्त होते हैं, घोर संसाररूपी दावाग्निसे पीडित संसारके आवागमन

रूप भयकी शान्तिके लिये नित्य आपको भजन करता हूँ ॥ ५२ ॥ महादेव शंभु देवदेव आपको प्रणाम है, त्रिमूर्तिरूप होकर संसारकी उत्पत्ति पालन और संहार करनेवाले आपको प्रणाम है ॥ ५३ ॥ विश्वादिरूप संसारके प्रथम साक्षी सत्तामात्र तत्त्वबोध आनन्दघनरूपको नमस्कार है ॥५४॥ सबके हृदयोंमें निवास करनेवाले क्षेत्रोंसे भिन्न आत्मशक्तिरूप असक्त शक्ताभासरूप महान् आपको प्रणाम है ॥ ५५ ॥ निराभास नित्य सत्यज्ञान अन्तरात्मारूप विशुद्ध दूर सब कर्मोंसे विमुक्त आपको प्रणाम है ॥ ५६ ॥ वेदान्तसे जाननेयोग्य, वेदकी मूलमें निवास करनेवाले, एकान्त चेष्टावाले

नमस्तेदेवदेवायमहादेवायशंभवे ॥ नमस्त्रिमूर्तिरूपायसर्गस्थित्यंतकारिणे ॥ ५३ ॥ नमोविश्वादिरूपायविश्वप्रथमसाक्षिणे ॥ नमःसन्मात्र तत्त्वायबोधानंदघनायच ॥ ५४ ॥ सर्वक्षेत्रनिवासायक्षेत्रभिन्नात्मशक्तये ॥ असक्तायनमस्तुभ्यंसक्ताभासायभूयसे ॥ ५५ ॥ निराभासा यनित्यायसत्यज्ञानांतरात्मने ॥ विशुद्धायविदूरायविमुक्ताशेषकर्मणे ॥ ५६ ॥ नमोवेदांतवेद्यायवेदमूलनिवासिने ॥ नमोविविक्तचेष्टाय निवृत्तगुणवृत्तये ॥ ५७ ॥ नमःकल्याणवीर्यायकल्याणफलदायिने ॥ नमोनंतायमहतेशांतायशिवरूपिणे ॥ ५८ ॥ अघोरायसुघोरा यघोराघौघविदारिणे ॥ भर्गायभवबीजानांभंजनायगरीयसे ॥ ५९ ॥ नमोविध्वस्तमोहायविशदात्मगुणायच ॥ पाहिमांजगतांनाथपा हिशंकरशाश्वत ॥ पाहिरुद्रविरूपाक्षपाहिमृत्युंजयाव्यय ॥ ६० ॥

गुणवृत्तिसे निवृत्त आपको प्रणाम है ॥ ५७ ॥ कल्याणवीर्य कल्याणरूप फल देनेवाले अनन्त महान् शान्त शिवरूप आपको प्रणाम है ॥५८॥ अघोर घोररूप घोरसेभी घोर पापोंको दूर करनेवाले भर्ग तेजस्वरूप संसारबीजके भंजन करनेवाले महान् हो ॥ ५९ ॥ मोहसे रहित प्रकाशमान आत्माके गुणवाले आपको प्रणाम है। हे जगन्नाथ ! हे कल्याणकारी ! हे निरन्तर रहनेवाले रुद्र ! विरूपाक्ष मृत्युंजय अविनाशी मेरी रक्षा कीजिये ॥६०॥

हे शिव ! हे माथेपर चन्द्रमा धारण करनेवाले ! हे शांत मूर्ति गौरीपति इन्द्रियोंके पति ! चन्द्र और अग्निरूप नेत्रवाले, हे गंगाधर ! हे अंगजविदारण ! हे पुण्य कीर्तिवाले ! भूतोंके पति पर्वतपर निवास करनेवाले आपको प्रणाम है॥६१॥ इतनी कथा सुनाय श्रीसूतजी बोले कि इसप्रकार भद्रायुके स्तोत्र करनेपर दयाके समुद्र भगवान् महेश्वर पार्वतीसहित प्रसन्न होकर बोले ॥ ६२ ॥ हे राजन् ! भक्ति और पवित्र स्तोत्र करनेसे हम तेरे ऊपर प्रसन्न हैं,

शंभोशशांककृतशेखरशांतमूर्तेगौरीशगोपतिनिशापहुताशनेत्र ॥ गंगाधरांगजविदारणपुण्यकीर्तेभूतेशभूधरनिवाससदानमस्ते ॥ ६१ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ एवंस्तुतःसभगवान्महादेवोमहेश्वरः ॥ प्रसन्नःसहपार्वत्याप्रत्युवाचदयानिधिः ॥ ६२ ॥ ॥ ईश्वर उवाच ॥ ॥ राजंस्तेपरितुष्टोस्मिभक्त्यापुण्यस्तवेनच ॥ अनन्यचेतायोनित्यंसदामांपर्यपूजयत् ॥ ६३ ॥ तवभावपरीक्षार्थंद्विजो भूत्वाहमागतः ॥ व्याघ्रेणयापरिग्रस्तासैषादेवीगिरींद्रजा ॥ ६४ ॥ व्याघ्रोमायामयोयस्तेशरैरक्षतविग्रहः ॥ धीरतांद्रष्टुकामस्तेपत्नीं याचितवानहम् ॥ ६५ ॥ अस्याश्चकीर्तिमालिन्यास्तवभक्त्याचमानद ॥ तुष्टोहंसंप्रयच्छामिवरंवरयदुर्लभम् ॥ ६६ ॥ राजोवाच ॥ एषएववरोदेवयद्भवान्परमेश्वरः ॥ भवतापपरीतस्यममप्रत्यक्षतांगतः ॥ ६७ ॥

क्योंकि अनन्य भावसे तू मेरी सदा पूजा करता है ॥६३॥ तेरी भक्तिकी परीक्षाके लिये मैंही ब्राह्मण बनकर आया था और जिसको सिंह उठाकर लेगया था वह यह पार्वती थी ॥ ६४॥ सिंह मायाका था, इसी कारण तेरे बाणोंसे उसका शरीर नहीं बिंधा, तेरी धीरता देखनेके निमित्त मैंनेही तेरी पत्नीकी याचना की थी ॥ ६५ ॥ हे राजन् ! तेरी कीर्तिमालिनीनाम पत्नीकी और तेरी भक्तिसे मैं प्रसन्न हूँ, तू दुर्लभ वर माँग ॥ ६६ ॥ यह सुन राजा

बोला, हे देव ! यह वर क्या थोडा है कि जो संसारसागरके दुःखसे दुःखीहुए मुझको आपने आ दर्शन दिया ॥ ६७ ॥ यदि आप मुझे वर दिया चाहते हैं तो मैं, मेरी यह रानी, मेरे माता पिता ॥ ६८ ॥ पद्माकरनाम वैश्य और सुनयनाम उसका पुत्र जो कि मेरा मित्र है, हे महादेव इन सबको सदा अपने निकट रक्खो ॥ ६९ ॥ फिर सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! इसप्रकार भद्रायुके वर माँगनेपर उसकी रानीने भी भक्तिसे शंकरको प्रसन्न कर वर माँगा ॥ ७० ॥ रानी बोली, हे महादेव ! चन्द्रांगदनाम मेरा पिता और सीमन्तिनी नाम मेरी माता सदा तुम्हारे चरणोंमें वास करें

नान्यंवरंवृणेदेवभवतोवरदर्षभात् ॥ अहंचसेयंसाराज्ञीममभाताचमत्पिता ॥ ६८ ॥ वैश्यःपद्माकरोनामतत्पुत्रःसुनयाभिधः ॥ सर्वा नेतान्महादेवसदात्वत्पार्श्वगान्कुरु ॥ ६९ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ अथराज्ञीमहाभागाप्रणताकीर्तिमालिनी ॥ भक्त्याप्रसाद्यगिरिशंययाचे वरमुत्तमम् ॥ ७० ॥ राज्ञ्युवाच ॥ चंद्रांगदोममपितामातासीमंतिनीचमे ॥ तयोर्याचेमहादेवत्वत्पार्श्वेसन्निधिंसदा ॥ ७१ ॥ एवमस्त्विति गौरीशःप्रसन्नोभक्तवत्सलः ॥ तयोःकामवरंदत्त्वाक्षणादंतर्हितोभवत् ॥ ७२ ॥ सोपिराजसुतैःसार्द्धप्रसादंप्राप्यशूलिनः ॥ सहितःकीर्तिमालिन्याबुभुजेविषयान्प्रियान् ॥ ७३ ॥ कृत्वावर्षायुतंराज्यमव्याहतबलोन्नतिः ॥ राज्यंपुत्रेषुविन्यस्यभेजेशंभोःपरंपदम् ॥ ७४ ॥ चंद्रांगदोपिराजेंद्रोराज्ञीसीमंतिनीचसा ॥ भक्त्यासंपूज्यगिरिशंजग्मतुःशांभवंपदम् ॥ ७५ ॥

॥ ७१ ॥ यह सुन प्रसन्नता पूर्वक भक्तवत्सल शंकरने उनको वर दिया, उनको मनवांछित वर दे महादेवजी क्षणमात्रमें वहीं अन्तर्द्धान होगये ॥ ७२ ॥ राजाभी शंकरका वर पाकर पुत्र और अपनी कीर्तिमालिनीनाम पत्नीके साथ अनेक भोग भोगनेलगा ॥ ७३ ॥ दश हजार वर्ष राज्य करनेके उपरान्त पुत्रको राज्यतिलक कर सीधा शिवलोकको चला गया ॥ ७४ ॥ चन्द्रांगद राजा और सीमंतिनी नाम उसकी रानी

भक्तिपूर्वक पार्वतीपति महादेवका पूजन करके अन्तमें शिवलोकको गये ॥ ७५ ॥ इस पवित्र, पापनाशक, विचित्र शंकरके गुणोंसे युक्त और परमरहस्य शंकरके आख्यानको जो पुरुष विद्वज्जनोंको निरन्तर सुनाता है, वा पढता है वह इस लोकमें अनेक सुख भोगकर अन्तमें शिवलोकको चला जाता है ॥ ७६ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डित बाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां भद्रायुर्माहात्म्यकथनं नाम चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

अथ पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ सूतजी बोले कि, हे मुनीश्वरों ! हमने ऋषभनाम शिवयोगीका प्रभाव वर्णन किया अब एक और शिवयोगीका

एतत्पवित्रमघनाशकरंविचित्रंशंभोर्गुणानुकथनंपरमंरहस्यम् ॥ यःश्रावयेद्बुधजनान्प्रयतःपठेद्वासंप्राप्यभोगविभवंशिवमेतिसोंते ॥ ७६ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेभद्रायुर्माहात्म्यकथनंनामचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ ऋषभस्यानुभावोयंवर्णितः शिवयोगिनः ॥ अथान्यस्यापिवक्ष्यामिप्रभावंशिवयोगिनः ॥ १ ॥ भस्मनश्चापिमाहात्म्यंवर्णयामिसमासतः ॥ कृतकृत्याभविष्यंति यच्छ्रुत्वापापिनोजनाः ॥ २ ॥ अस्त्येकोवामदेवाख्यःशिवयोगीमहातपाः ॥ निर्द्वंद्वोनिर्गुणःशांतोनिःसंगःसमदर्शनः ॥ ३ ॥ आत्मारामो जितक्रोधोगृहदारविवर्जितः ॥ अतर्कितगतिर्मौनीसंतुष्टोनिष्परिग्रहः ॥ ४ ॥ भस्मोद्धूलितसर्वांगोजटामंडलमंडितः ॥ वल्कलाजिनसं वीतोभिक्षामात्रपरिग्रहः ॥ ५ ॥

प्रभाव ॥ १ ॥ और विभूतिका माहात्म्य संक्षेपसे वर्णन करते हैं, जिसके सुनने मात्रसे पापी जनभी कृतकृत्य होजाते हैं ॥ २ ॥ निर्द्वन्द्व, निर्गुण, शान्त, निःसंग, समदर्शी ॥ ३ ॥ आत्मामें रमण करनेवाला, क्रोधको जीतनेवाला, घर और स्त्रीसे वर्जित, जिसकी गति जानी न जाय, मौनधारी, नित्य संतुष्ट, गृहस्थीरहित ॥ ४ ॥ सब अंगोंमें भस्म लगाये, जटाधारी, वृक्षकी छालके वस्त्र धारण किये और भिक्षासे अपना उदर पूर्ण

करनेवाला वामदेव नामक एक शिवयोगी था ॥ ५ ॥ एक समय वह सबके अनुग्रहमें तत्पर अपनी इच्छासे सब लोकोमें भ्रमण करते २ क्रौंचारण्य नाम एक घोर वनमें गया ॥ ६ ॥ उस निर्जन वनमें अति भयंकर भूँख प्याससे व्याकुल एक ब्रह्मराक्षस रहता था ॥ ७ ॥ वनमें आयेहुये शिव योगीको देख वह ब्रह्मराक्षस भूँखसे पीडित हो उसके खानेको वेगसे दौड़ा ॥ ८ ॥ महाकाय, मुँह फैलाये हुए, बडी २ डाढोंसे भयंकर आते हुए उस राक्षसको देख वह शिवयोगी चलायमान न हुआ ॥ ९ ॥ और उस राक्षसने बडे वेगसे दौड और दोनों भुजाओंसे पकड न कपते हुए शिवयोगीको

सएकदाचरँल्लोकान्सर्वानुग्रहतत्परः ॥ क्रौंचारण्यंमहाघोरंप्रविवेशयदृच्छया ॥ ६ ॥ तस्मिन्निर्मनुजेऽरण्येतिष्ठत्येकोतिभीषणः ॥ क्षुत्तृषाकुलितोनित्यंयःकश्चिद्ब्रह्मराक्षसः ॥ ७ ॥ तंप्रविष्टंशिवात्मानंसदृष्ट्वाब्रह्मराक्षसः ॥ अभिदुद्रावेवेगेनजग्धुंक्षुत्परिपीडितः ॥ ८ ॥ व्यात्ताननंमहाकायंभीमदंष्ट्रंभयानकम् ॥ तमायांतमभिप्रेक्ष्ययोगीशोनचचालसः ॥ ९ ॥ अथाभिद्रुत्यतरसासघोरोवनगोचरः ॥ दोर्भ्यां निष्पीडयजग्राहनिष्कंपंशिवयोगिनम् ॥१०॥ तदंगस्पर्शनादेवसद्योविध्वस्तकिल्बिषः ॥ सब्रह्मराक्षसोघोरोविषण्णःस्मृतिमाययौ॥११॥ यथाचिंतामणिंस्पृष्ट्वालोहःकांचनतांव्रजेत् ॥ यथाजंबूनदींप्राप्यमृत्तिकास्वर्णतांव्रजेत् ॥१२॥ यथामानसमभ्येत्यवायसायांतिहंसताम् ॥ यथामृतंसकृत्पीत्वानरोदेवत्वमाप्नुयात् ॥१३॥ तथैवहिमहात्मानोदर्शनस्पर्शनादिभिः ॥ संतःपुनंत्यघोपेतान्सत्संगोदुर्लभोह्यतः ॥१४॥

ग्रहण किया ॥ १० ॥ शिवयोगीका स्पर्श करतेही उसके सब पाप नष्ट होगये, दुःखी होकर वह घोर ब्रह्मराक्षस पूर्वस्मृति और दिव्य देहको प्राप्त हुआ ॥ ११ ॥ जिसप्रकार चिन्तामणिको स्पर्शकर लोहा सुवर्ण होजाता है, जैसे जम्बूनदीको प्राप्त हो मिट्टी सुवर्ण होजाती है ॥ १२ ॥ जैसे मानस सरोवरको प्राप्त हो कौवे हंस होजाते हैं, जैसे एकवारभी अमृतका पानकर मनुष्य देवता होजाता है ॥ १३ ॥ इसी प्रकार महात्माओंके दर्शन

और स्पर्श आदिसे बडे २ पापीभी तर जाते हैं, इस कारण सत्संग बडा दुर्लभ है ॥ १४ ॥ जो पहिले भूँख प्याससे व्याकुल हो ब्रह्मराक्षसरूप धारण कर वनमें विचरता था, वह शिवयोगीके स्पर्शमात्रसे तत्काल तृप्त हो पूर्णानन्दको प्राप्त हुआ ॥ १५ ॥ शिवयोगीके शरीरमें जो श्वेतभस्म लग रही थी उसके एक कणमात्र लगनेसे उस ब्रह्मराक्षसके सब पाप नष्ट होगये और पूर्वजन्मकी स्मृति भी हो आई, पूर्वजन्मकी स्मृति होतेही महाकार्य करनेवाला वह ब्रह्मराक्षस शिवयोगीके चरणकमलमें गिरकर बोला ॥ १६ ॥ हे महायोगिन् ! हे करुणानिधे ! हे संसार.सागरमें डूबतेहुओंके निमित्त

यःपूर्वंक्षुत्पिपासार्तोघोरात्माविपिनेचरः ॥ ससद्यस्तृप्तिमायातःपूर्णानंदोबभूवह ॥ १५ ॥ तद्गात्रलग्नसितभस्मकणानुविद्धः सद्योविधूतघनपापतमस्वभावः ॥ संप्राप्तपूर्वभवसंस्मृतिरुग्रकार्यस्तत्पादपद्मयुगुलेपरितोबभाषे ॥ १६ ॥ प्रसीदमेमहायोगिन्प्रसीदकरुणानिधे ॥ प्रसीदभवतप्तानामानंदामृतवारिधे ॥ १७ ॥ क्वाहंपापमतिर्घोरःसर्वप्राणिभयंकरः ॥ क्वतेमहानुभावस्यदर्शनंकरुणात्मनः ॥ १८ ॥ उद्धरोद्धरमांघोरेपतितंदुःखसागरे ॥ तवसान्निधिमात्रेणमहानंदोभिवर्धते ॥ १९ ॥ वामदेवउवाच ॥ कस्त्वंवनेचरोघोरोराक्षसोत्रकिमास्थितः ॥ कथमेतांमहाघोरांकष्टांगतिमवाप्तवान् ॥ २० ॥

आनन्दरूपी अमृतके समुद्र ! मेरे ऊपर प्रसन्न हो ॥ १७ ॥ सर्व प्राणियोंको भय देनेवाला पापबुद्धि मैं कहाँ और करुणा करनेवाले आपसरीखे महात्माओंका दर्शन कहाँ ॥ १८ ॥ घोर दुःखसागरमें पडे हुए मेरा उद्धार करो, आपकी संनिधिमात्रसे मुझको महा आनन्द उत्पन्न होता है ॥ १९ ॥ यह सुन वामदेवनाम शिवयोगी बोला, इस घोर राक्षसरूपको धारणकर तुम यहाँ क्यों रहते हो, तुम कौन हो, क्यों इस कष्टदायक घोर गतिको प्राप्त

हुए ॥ २० ॥ ब्रह्मराक्षस बोला, इससे पचीस जन्म पहिले मैं दुर्जय नाम देशका बडा वीर राजा था ॥ २१ ॥ वह मैं दुराचारी, पापी, स्वच्छन्द चारी बडी उत्कटतासे प्रजाको दण्ड देनेवाला, प्रचंड, लज्जारहित हुआ ॥ २२ ॥ युवावस्था प्राप्त होनेपर मेरे बहुत स्त्रियेंभी थीं तोभी कामासक्त हो मैं अपनी इन्द्रियोंको न जीत सका, फिर मैंने एक बड़ा पाप कर्म किया ॥ २३ ॥ कि प्रतिदिन एक नवीन स्त्रीके साथ भोग करनेलगा, मेरी आज्ञासे मेरे भृत्य अनेक देशोंसे स्त्रियें लाये ॥ २४ ॥ प्रतिदिन एक स्त्रीको भोग त्यागदेता, उनको राजमहलमें रखता फिर औरोंको भोगता ॥ २५ ॥ इस

॥ राक्षसउवाच ॥ ॥ राक्षसोऽहमितःपूर्वंपंचविंशतिमेभवे ॥ गोप्तायवनराष्ट्रस्यदुर्जयोनामवीर्यवान् ॥ २१ ॥ सोहंदुरात्मापापीयान्स्वैरचारीमहोत्कटः ॥ दंडधारीदुराचारःप्रचंडोनिर्घृणःखलः ॥ २२ ॥ युवाबहुकलत्रोपिकामासक्तोऽजितेंद्रियः ॥ इमांपापीयसींचेष्टांपुनरेकांगतोस्म्यहम् ॥ २३ ॥ प्रत्यहंनूतनामन्यांनारींभोक्तुमनाःसदा ॥ आहृताःसर्वदेशेभ्योनार्योभृत्यैर्मदाज्ञया ॥ २४ ॥ भुक्त्वाभुक्त्वापरित्यक्तामेकांमेकांदिनेदिने ॥ अंतर्गृहेषुसंस्थाप्यपुनरन्याःस्त्रियोधृताः ॥ २५ ॥ एवंस्वराष्ट्रात्परराष्ट्रतश्चदेशाकरग्रामपुरव्रजेभ्यः ॥ आहृत्यनार्योरमितादिनेदिनेभुक्तापुनःक्वापिनभुज्यतेमया ॥ २६ ॥ अथान्यैश्चनभुज्यंतेमयाभुक्तास्तथास्त्रियः ॥ अंतर्गृहेषुनिहिताःशोचंतेचदिवानिशम् ॥ २७ ॥ ब्रह्मविट्क्षत्रशूद्राणांयदानार्योमयाहृताः ॥ ममराज्येस्थिताविप्राःसहदारैःप्रदुद्रुवुः ॥ २८ ॥

प्रकार अपने तथा दूसरोंके राज्य, देश, ग्राम, पुर और ब्रजोंसे स्त्रियें बुलाई, और उनके साथ रमण किया, जिनको एकबार भोगलेता फिर उनको नहीं भोगता ॥ २६ ॥ और मेरी भोगी स्त्रीको कोई अन्य न भोगे इसकारण उनको महलके भीतर रखता, वे स्त्रियें रातदिन शोचसे व्याकुल रहतीं ॥ २७ ॥ जब मैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्णोंकी स्त्रियोंको भोगने लगा तब मेरे राज्यमें स्थित अनेक ब्राह्मण अपनी स्त्रियोंको साथ

ले मेरे राज्यसे भाग गये ॥ २८ ॥ कामसे व्याकुल हो मैंने सधवा, विधवा, कन्या, और रजस्वला इन सबको भोगा ॥ २९ ॥ ब्राह्मणोंकी तीनसौ, क्षत्रियोंकी चारसौ, वैश्योंकी छःसौ, शूद्रोंकी हजार ॥ ३० ॥ चाडालोंकी सौ, भीलोंकी हजार; पाँचसौ नटनी, चारसौ धोबिनें ॥ ३१ ॥ तथा और अनेक सुन्दर सुन्दर असंख्य स्त्रियोंको मैंने भोगा, तो भी मुझको तृप्ति न हुई ॥ ३२ ॥ इसप्रकार अनेक खोटे व्यसनोंमें आसक्त

सभर्तृकाश्चकन्याश्चविधवाश्चरजस्वलाः ॥ आहृत्यनार्योरमितामयाकामहतात्मना ॥ २९ ॥ त्रिशतंद्विजनारीणांराजस्त्रीणांचतुःशतम् ॥
षट्शतंवैश्यनारीणांसहस्रंशूद्रयोषिताम् ॥ ३० ॥ शतंचांडालनारीणांपुलिंदीनांसहस्रकम् ॥ शैलूषीणांपंचशतंरजकीनांचतुःशतम् ॥
॥ ३१ ॥ असंख्यावारमुख्याश्चमयाभुक्तादुरात्मना ॥ तथापिमयिकामस्यनतृप्तिःसमजायत ॥ ३२ ॥ एवंदुर्विषयासक्तंमत्तंपानरतंसदा॥
यौवनेपिमहारोगाविविशुर्यक्ष्मकादयः ॥३३॥ रोगार्दितोऽनपत्यश्चशत्रुभिश्चापिपीडितः ॥ त्यक्तोमात्यैश्चभृत्यैश्चमृतोहंस्वेनकर्मणा ॥३४॥
आयुर्विनश्यत्ययशोविवर्धतेभाग्यंक्षयंयात्यातिदुर्गतिंव्रजेत् ॥ स्वर्गाच्च्यवंतेपितरःपुरातनाधर्मव्यपेतस्यनरस्यनिश्चितम् ॥ ३५ ॥

और मद्यपान करनेमें तत्पर रहा, इसकारण युवावस्थामेंही मैं राजयक्ष्मा आदि महारोगोंसे ग्रसित होगया ॥ ३३ ॥ रोगोंसे व्याकुल और पुत्रहीन मुझको शत्रुओंने भी पीडित किया, मन्त्री और भृत्यजनोंने भी मुझको त्याग दिया, कुछ समयके उपरान्त अपने कर्मसे मैं मृत्युको प्राप्त हुआ ॥३४॥ कारण कि धर्म छोड अधर्माचरण करनेवालेकी आयु क्षीण होजाती है, अपयश बढता है, भाग्यका क्षय होता है, अन्तमें कुयोनि प्राप्त होती है,

स्वर्गमें प्राप्त हुए भी उसके पितर नरकमें पडते हैं यह निश्चित है इसमें सन्देह नहीं ॥ ३५ ॥ मृत्यु होनेपर मुझको यमराजके दूत यमलोकमें लाये यमराजने मेरे कर्म देख हजारवर्षके लिये घोर नरकमें भेजा ॥ ३६ ॥ वह वीर्यका नरक था मैं कर्मवश उसमें पडा, और यमके दूतोंसे पीडित हो रह ने लगा, हज़ारवर्ष पाप भोगकरभी जो पाप शेष रहा उससे निर्जन वनमें जा पिशाच योनिको प्राप्त हुआ ॥ ३७ ॥ मेरे हज़ार शिश्नेन्द्रिय होगए और भूंख प्याससे व्याकुल रहने लगा, पिशाचयोनि भोगते मुझको दिव्य सौवर्ष बीते ॥ ३८ ॥ दूसरे जन्ममें प्राणियोंको भय देनेवाला व्याघ्र, तीस

अथाहंकिंकरैर्याम्यैर्नीतोवैवस्वतालयम् ॥ ततोहंनरकेघोरेवर्षाणामयुतंभयम् ॥३६॥ रेतःपिबन्पीडयमानोन्यवसंयमकिंकरैः ॥ ततःपापा वशेषेणपिशाचोनिर्जनेवने ॥३७॥ सहस्रशिश्नःसंजातोनित्यंक्षुत्तृषयाकुलः ॥ पैशाचींगतिमाश्रित्यनीतोदिव्यंशरच्छतम् ॥३८॥ द्विती येहंभवेजातोव्याघ्रःप्राणिभयंकरः ॥ तृतीयेऽजगरोघोरश्चतुर्थेहंभवेवृकः ॥ ३९ ॥ पंचमेविड्वराहश्चषष्ठेहंकृकलासकः ॥ सप्तमेहंसारमेयोसृ गालश्चाष्टमेभवे ॥४०॥ नवमेगवयोभीमोमृगोहंदशमेभवे ॥ एकादशेमर्कटश्चगृध्रोहंद्वादशेभवे ॥४१॥ त्रयोदशेहंनकुलोवायसश्चचतुर्दशे॥ ऋच्छभल्लःपंचदशेषोडशेवनकुक्कुटः ॥ ४२ ॥ गर्दभोहंसप्तदशेमार्जारोष्टादशेभवे ॥ (१) उलूकोहंत्रयोविंशेचतुर्विंशेवनद्विपः ॥ ४३ ॥

रेमें घोर अजगर, चौथेमें भेडिया ॥ ३९ ॥ पाँचवेंमें ग्रामशूकर, छठेमें गिरगट, सातवेंमें कुत्ता, आठवें जन्ममें शृगाल (गीदड) ॥ ४० ॥ नवमेंमें गवय (नीलगाय) दशवें में मृग, ग्यारहवेंमें बन्दर, बारहवेंमें गृध्र ॥ ४१ ॥ तेरहवेंमें नकुल (नौला) चौदहवेंमें वायस (कौवा) पंद्रहवेंमें रीछ, शोलहवेंमें वनका मुर्गा ॥ ४२ ॥ सत्रहवेंमें गर्दभ, अठारहवें जन्ममें मार्जार (बिलाव) (१) तेईसवें जन्ममें उलूक (उल्लू) चौबीसवें जन्ममें वनका हाथी

१ अत्र ग्रन्थः स्खलितः एकोनविंशं भवमारभ्य द्वाविंशभवपर्यंतं तत्तद्योनिजन्मकथनानुपलम्भात्-इति।

हुआ ॥ ४३ ॥ और पच्चीसवें इस जन्ममें ब्रह्मराक्षसयोनिको धारण कर निराहार, भूखसे व्याकुल हो इस महावनमें रहता हूँ ॥ ४४ ॥ इस समय आते देख तुमको खानेकी इच्छा की, तुम्हारे शरीरके स्पर्श मात्रसे मुझको पूर्वजन्मोंका स्मरण होआया ॥ ४५ ॥ हे महामते ! हे ऋषीश्वर ! इस प्रकारका प्रभाव तुमको कैसे प्राप्त हुआ, किस तप वा तीर्थसेवनसे ॥ ४६ ॥ योगसे किस देवशक्तिसे वा अनन्त शक्तिवाले मन्त्रोंसे यह प्रभाव प्राप्त हुआ, हे भगवन् ! विधिपूर्वक मुझसे कहो, मैं तुम्हारी शरण हूँ ॥ ४७ ॥ इसप्रकार ब्रह्मराक्षसका वचन सुन वामदेव शिवयोगी बोला कि मेरे शरीरमें

पंचविंशेभवेचास्मिन्जातोहंब्रह्मराक्षसः॥क्षुत्परीतोनिराहारोवसाम्यत्रमहावने ॥४४॥ इदानीमागतंदृष्ट्वाभवंतंजग्धुमुत्सुकः॥त्वद्देहस्पर्शमात्रेणजातापूर्वभवस्मृतिः ॥४५॥ ईदृशोयंप्रभावस्तेकथंलब्धोमहामते ॥ तपसावापितीव्रेणकिमुतीर्थनिषेवणात् ॥४६॥ योगेनदेवशक्त्यावामंत्रैर्वानंतशक्तिभिः ॥ तत्त्वतोब्रूहिभगवंस्त्वामहंशरणंगतः ॥ ४७ ॥ वामदेवउवाच ॥ एषमद्गात्रलग्नस्यप्रभावोभस्मनोमहान् ॥ यत्संपर्कात्तमोवृत्तेस्तवेयंमतिरुत्तमा ॥ ४८ ॥ कोवेदभस्मसामर्थ्यंमहादेवादृतेपरः ॥ दुर्विभाव्यंयथाशंभोर्माहात्म्यंभस्मनस्तथा ॥ ४९ ॥ पुराभवादृशःकश्चिद्ब्राह्मणोधर्मवर्जितः ॥ द्राविडेषुस्थितोमूढःकर्मणाशूद्रतांगतः ॥ ५० ॥

लगी हुई इस भस्मका यह प्रभाव है, कि जो इसके स्पर्श मात्रसे अन्धकारमें पड़े हुए तेरी ऐसी उत्तम बुद्धि होगई ॥ ४८ ॥ महादेवके सिवाय भस्मके प्रभावको कौन जान सकता है, जैसे महादेवजीके माहात्म्यको कोई नहीं जानसकता, वैसे ही भस्मका माहात्म्य भी कोई नहीं जानसकता ॥ ४९ ॥ पूर्व समयमें द्राविडदेशका रहनेवाला धर्महीन कोई एक ब्राह्मण था, कुकर्म करते २ वह मूढबुद्धि ब्राह्मण शूद्र होगया ॥ ५० ॥

अनेक चोरी करीं, अनेक पाप किये अनेक व्यभिचारिणीं स्त्रियोंके साथ रमण किया; एक समय वह परस्त्रीगमनके निमित्त रात्रिमें एक शूद्रके घरमें घुसा, शूद्रने देख उसको मार डाला ॥ ५१ ॥ और उस मृतकशरीरको ग्रामके बाहर फेंक आया, इसी अवसरमें अपनी इच्छासे घूमता हुआ एक श्वान (जिसके चरणोंमें किसीकारण शिवभस्म लग गई थी) उस मृतकपर चरण रख उतरगया ॥ ५२ ॥ उस भस्मस्पर्शके प्रभावसे घोर नरकमें पडे हुए इसे लेनेके निमित्त शिवदूत आये यमदूत भी आये किन्तु यमदूतोंको जीत शिवदूत शिवलोकको लेजाने लगे ॥५३॥

चौर्यवृत्तिर्नैष्कृतिकोवृषलीरतिलालसः ॥ कदाचिज्जारतांप्राप्तःशूद्रेणनिहतोनिशि ॥ ५१ ॥ तच्छवस्यबहिर्ग्रामात्क्षिप्तस्यप्रेतकर्मणः ॥ चचारसारमेयोंगेभस्मपादोयदृच्छया ॥ ५२ ॥ अथतंनरकेघोरेपातितंशिवकिंकराः ॥ निन्युर्विमानमारोप्यप्रसह्ययमकिंकरान् ॥ ५३ ॥ शिवदूतान्समभ्येत्ययमोपिपरिपृष्टवान् ॥ महापातककर्तारंकथमेनंनिनीषथ ॥ ५४ ॥ अथोचुःशिवदूतास्तेपश्यास्यशिवविग्रहम् ॥ वक्षो ललाटदोर्मूलान्यंकितानिसुभस्मना ॥ ५५ ॥ अतएनंसमानेतुमागताःशिवशासनात् ॥ नास्मान्निषेद्धुंशक्तोसिमास्त्वत्रतवसंशयः ॥५६॥ इत्याभाष्ययमंशंभोर्दूतास्तंब्राह्मणंततः ॥ पश्यतांसर्वलोकानांनिन्युर्लोकमनामयम् ॥ ५७ ॥

तब व्याकुल हो यमराजभी वहाँ आये और शिवदूतोंसे पूँछने लगे कि इस महापातकीको तुम शिवलोकमें कैसे लिये जाते हो ॥ ५४ ॥ यह सुन शिवदूत बोले कि देखो ! इसके वक्षस्थल, ललाट और भुजाओंमें शिवभस्म लगी है ॥ ५५ ॥ इस कारण शिवजीकी आज्ञासे हम इसको लेने आये हैं, तुम इसमें निषेध नहीं कर सकते और इसमें कुछ सन्देहभी मत करो ॥५६॥ इस प्रकार यमराजको समझा शिवदूत उस ब्राह्मणको सबके देखते

देखते शिवलोकको लेगये ॥ ५७ ॥ इस लिये मैं कहता हूँ कि शिवभस्म शीघ्रही सब पापोंको दूर करदेता है, भस्म शिवजीका भूषण है, उसे मैं निरन्तर धारण करता हूँ ॥ ५८ ॥ इस प्रकार भस्मका माहात्म्य सुन ब्रह्मराक्षस विस्तारपूर्वक सुननेकी इच्छासे उत्कंठापूर्वक यह बोला ॥ ५९ ॥ कि हे महायोगिन् ! तुम धन्यहो और तुम्हारे दर्शनसे मैंभी धन्य हूँ, हे धर्मात्मन् ! मुझे इस ब्रह्मराक्षसरूप कुयोनिसे मुक्त करो ॥ ६० ॥ उस जन्ममें राजा हो मैंने अनेक पाप किये किन्तु एक पुण्यभी किया जिसका मुझे अब स्मरण हुआ है, हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! इसी कारण तुम्हारे प्रसादसे आज मैं

तस्मादशेषपापानांसद्यःसंशोधनंपरम् ॥ शंभोर्विभूषणंभस्मसततंध्रियतेमया ॥ ५८ ॥ इत्थंनिशम्यमाहात्म्यंभस्मनोब्रह्मराक्षसः ॥ विस्तरेणपुनःश्रोतुमौत्कंठ्यादित्यभाषत ॥ ५९ ॥ साधुसाधुमहायोगिन्धन्योस्मितवदर्शनात् ॥ मांविमोचयधर्मात्मन्घोरादस्मात्कुजन्मनः ॥ ६० ॥ किंचिदस्तीहमेभातिममपुण्यंपुराकृतम् ॥ अतोहंत्वत्प्रसादेनमुक्तोस्म्यद्यद्विजोत्तम ॥ ६१ ॥ एकस्मैशिवभक्तायतस्मिन्पार्थिवजन्मनि ॥ भूमिर्वृत्तिकरीदत्तासस्यारामान्वितामया ॥ ६२ ॥ यमेनापितदैवोक्तंपंचविंशतिमेभवे ॥ कस्यचिद्योगिनःसंगान्मोक्षसेसंसृतेरिति ॥६३॥ तदद्यफलितंपुण्यंयत्किंचित्प्राक्तनार्जितम् ॥ यतोनिर्मनुजारण्येसंप्राप्तस्तवसंगमः ॥ ६४ ॥

मुक्त हुआ ॥ ६१ ॥ उस राजजन्ममें मैंने एक शिवभक्तको अन्न और सुन्दर बगीचेसे पूर्ण पृथिवी आजीविकाके निमित्त दी ॥ ६२ ॥ जब मैं नरकमें पहुँचा तब यमराजने भी मुझसे कहा कि पृथिवी दानके पुण्य प्रभावसे तुमको पच्चीसवें जन्ममें किसी शिवयोगीका दर्शन होगा और उसीके संगसे तू संसारसे मुक्त होगा ॥ ६३ ॥ सो जो मैंने पहिले पुण्य संचय किया था उसका आज फल प्राप्त हुआ, क्योंकि इस निर्जन वनमें आज तुम्हारा

संगम हुआ ॥ ६४ ॥ इसलिये, घोर पापी और कुयोनिमें स्थित हुए मुझको हे कृपासिन्धो ! अभिमन्त्रित भस्म देकर उद्धार करो ॥ ६५ ॥ यह भस्म किसप्रकार धारण करनी चाहिये, क्या इसके धारण करनेका मन्त्र है, क्या इसकी विधि है, कौन इसके धारण करनेका समय है, किस देशमें धारण करे हे गुरो ! यह सब मुझसे कहो ॥ ६६ ॥ आप सरीखे महात्मा जन सदा लोकोंके ऊपर हित करनेमें तत्पर रहते हैं और कल्पवृक्षके समान अपने हितकी इच्छा नहीं करते ॥ ६७ ॥ इतनी कथा सुनाय श्रीसूतजी बोले कि इसप्रकार उस घोर वनचारी ब्रह्मराक्षसके कहनेपर तत्त्ववित् वह

अतोमांघोरपाप्मानंसंसरंतंकुजन्मनि ॥ समुद्धरकृपासिंधोदत्त्वाभस्मसमंत्रकम् ॥ ६५ ॥ कथंधार्यमिदंभस्मकोमंत्रःकोविधिःशुभः ॥ कःकालःकश्चवादेशःसर्वंकथयमेगुरो ॥६६॥ भवादृशामहात्मानःसदालोकहितेरताः ॥ नात्मनोहितमिच्छंतिकल्पवृक्षसधर्मिणः ॥६७॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ इत्युक्तस्तेनयोगीशोघोरेणवनचारिणा ॥ भूयोपिभस्ममाहात्म्यंवर्णयामासतत्त्ववित् ॥ ६८ ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडेभस्ममाहात्म्यकथनंनामपंचदशोध्यायः ॥ १५ ॥ ॥ वामदेवउवाच ॥ ॥ पुरामंदरशैलेंद्रेनानाधातुविचित्रिते ॥ नाना सत्त्वसमाकीर्णेनानाद्रुमलताकुले ॥ १ ॥ कालाग्निरुद्रोभगवान्कदाचिद्विश्ववंदितः ॥ समाससादभूतेशःस्वेच्छयापरमेश्वरः ॥ २ ॥

शिवयोगी फिर विभूतिका माहात्म्य वर्णन करने लगा ॥ ६८ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डित बाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां भस्ममाहात्म्यकथनं नाम पञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ अथ षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ वामदेवऋषि बोले कि, पूर्वसमयमें अनेक धातुओंसे विराजित, अनेक जीवोंसे व्याप्त और अनेक वृक्षबेलोंसें आच्छादित मन्दराचल पर्वतपर ॥ १ ॥ एकसमय संसारसे पूजित, प्राणियोंके स्वामी, परमेश्वर कालाग्निरुद्र

भगवान् अपनी इच्छासे विचरतेहुए आये ॥ २ ॥ उनके चारोंओर करोड़ों रुद्र स्थित थे, उनकें बीचमें त्रिनेत्र शंकर भगवान् विराजरहेथे ॥ ३ ॥ उनका आगमन सुन इन्द्रभी सब देवताओंको साथ ले वहाँ आये, तथा अग्नि, वरुण, वायु, यम, वैवस्वत ॥ ४ ॥ चित्रसेन आदि गन्धर्व, आकाशचारी सर्प, विद्याधर, किंपुरुष, सिद्ध, साध्य, गुह्यक ॥ ५ ॥ वसिष्ठ आदि ब्रह्मर्षि, नारद अदि सुरर्षि, महात्मा, पितर, दक्ष आदि प्रजेश्वर ॥ ६॥

समंतात्समुपातिष्ठन्रुद्राणांशतकोटयः ॥ तेषांमध्येसमासीनोदेवदेवस्त्रिलोचनः ॥ ३ ॥ तत्रागच्छत्सुरश्रेष्ठोदेवैःसहपुरंदरः ॥ तथाग्निर्वरुणोवायुर्यमोवैवस्वतस्तथा ॥ ४ ॥ गंधर्वाश्चित्रसेनाद्याःखेचराःपन्नगादयः ॥ विद्याधराःकिंपुरुषाःसिद्धाःसाध्याश्चगुह्यकाः ॥५॥ ब्रह्मर्षयोवसिष्ठाद्यानारदाद्याःसुरर्षयः ॥ पितरश्चमहात्मानोदक्षाद्याश्चप्रजेश्वराः ॥ ६ ॥ उर्वश्याद्याश्चाप्सरसश्चंडिकाद्याश्चमातरः ॥ आदित्यावसवोदस्रौविश्वेदेवामहौजसः ॥ ७ ॥ अथान्येभूतपतयोलोकसंहरणेक्षमाः ॥ महाकालश्चनंदीचतथाशंखकपालकौ ॥ ८ ॥ वीरभद्रोमहातेजाःशंकुकर्णोमहाबलः ॥ घंटाकर्णश्चदुर्धर्षोमणिभद्रोवृकोदरः ॥ ९ ॥ कुंडोदरश्चविकटोतथान्येचमहौजसः ॥ कृष्णवर्णास्तथाश्वेताःकेचिन्मंडूकसप्रभाः ॥ १० ॥ हरिताधूसराधूम्राःकर्बुराःपीतलोहिताः ॥ चित्रवर्णविचित्रांगाश्चित्रलीलामदोत्कटाः ॥ ११ ॥

उर्वशी आदि अप्सरायें, चंडिका आदि मातायें, आदित्य, वसु, अश्विनीकुमार, बड़े पराक्रमी विश्वेदेवा ॥ ७ ॥ तथा प्राणियोंकी रक्षा करनेवाले अन्य भूतपति, महाकाल, नन्दी, शंख, कपालक, ॥ ८ ॥ महातेजस्वी वीरभद्र, महाबली शंकुकर्ण, दुर्धर्ष घण्टाकर्ण, मणिभद्र, वृकोदर ॥ ९ ॥ कुंडोदर; विकट, तथा अन्य बड़े पराक्रमी कृष्ण और श्वेतवर्णके, कोई मण्डूकके समान प्रभावाले ॥१०॥ कोई हरे, धूसर, धूम्र, कबरे, कोई पीत, कोई लोहित,

चित्रित, चित्र विचित्र अंगवाले, कोई लीला और मदसे उत्कट ॥ ११ ॥ अनेक शस्त्रधारी, बडे २ हाथवाले, अनेक भषण धारण किये, किन्हीका व्याlके समान मुख था, कोई सूकर और मृगकासा मुख धारण किये थे ॥ १२ ॥ कोई शारभ, भेरुण्ड, सिंह, उष्ट्र और वककी आकृति बनाये थे, किन्हींके एक मुख था, किन्हींके दो, किन्हींके तीन और कोई चार मुख धारण किये थे ॥ १३ ॥ किसीके एक, किसीके तीन और किसीके पांच हाथ थे, किन्हींके हाथ थेही नहीं, किन्हीके चरण न थे और कोई बहुत चरणवाले थे, किन्हींके बहुत कान थे और किन्हीके थेही नहीं ॥ १४ ॥

नानायुधोद्यतकरानानावाहनभूषणाः ॥ केचिद्व्याघ्रमुखाःकेचित्सूकरास्यामृगाननाः ॥ १२ ॥ केचिच्छारभभेरुंडसिंहाश्वोष्ट्रबकाननाः ॥ एकवक्त्राद्विवक्त्राश्चत्रिमुखाश्चैवानिर्मुखाः ॥ १३ ॥ एकहस्तास्त्रिहस्ताश्चपंचहस्तास्त्वहस्तकाः ॥ अपादाबहुपादाश्चबहुकर्णैककर्णकाः ॥ ॥ १४ ॥ एकनेत्राश्चतुर्नेत्रादीर्घाःकेचनवामनाः ॥ समंतात्परिवार्यैवंशंभूतनाथमुपासते ॥ १५ ॥ अथागच्छन्महातेजामुनीनांप्रवरः सुधीः ॥ सनत्कुमारोधर्मात्मातंद्रष्टुंजगदीश्वरम् ॥ १६ ॥ तंदेवदेवंविश्वेशंसूर्यकोटिसमप्रभम् ॥ महाप्रलयसंक्षुब्धसप्तार्णवघनस्वनम् ॥ ॥ १७ ॥ संवर्त्ताग्निसमाटोपंजटामंडलशोभितम् ॥ अक्षीणभालनयनंज्वालाम्लानमुखत्विषम् ॥ १८ ॥

किसीके एक और किसीके बहुत नेत्र थे, कोई बड़े लम्बे थे और कोई बहुत छोटे थे, यह सब भूतनाथ शंकरकी उपासना, सेवाके निमित्त चारोंओर आकर स्थित हुए ॥ १५ ॥ इसके उपरान्त महातेजस्वी, मुनियोंमें श्रेष्ठ और सुन्दर बुद्धिवाले धर्मात्मा सनत्कुमार शंकरके दर्शनार्थ वहाँ आये ॥ १६ ॥ देवताओंके देवता, विश्वके स्वामी करोड शूर्य्यके समान प्रकाशमान महाप्रलयके समय क्षुभित सात समुद्रके समान गम्भीर शब्दवाले ॥ १७ ॥ प्रलय अग्निके

समान मस्तकपर जटा धारण किये, भालनेत्रसे अतिप्रचण्ड, जिनके मुखसे निरन्तर ज्वाला निकल रही है ॥ १८ ॥ प्रदीप्त चूडामणि शशिखंडसे शोभित, बायें हाथमें तक्षक और सीधे हाथमें वासुकीको धारण किये ॥ १९ ॥ दोनों कुण्डलोंसे शोभायमान, विषपान करनेके कारण नीलकण्ठसे शोभित, नीलरत्न और महाहनुवाले, बड़ी भुजाओंसे युक्त, नागहारसे विराजित ॥ २० ॥ शेषनाग जिनके चारोंओर विराज रहेहैं, कंकण और बाजूबन्दोंसे भूषित, अनन्त गुण और मणियोंकी है मेखला जिनकी ॥ २१ ॥ व्याघ्रचर्म धारण किये, घण्टा और दर्पणसे भूषित, जिनके चरणोंमें

प्रदीप्तचूडामणिनाशशिखंडेनशोभितम् ॥ तक्षकंवामकर्णेनदक्षिणेनचवासुकिम् ॥ १९ ॥ बिभ्राणंकुंडलयुगंनीलरत्नमहाहनुम् ॥ नीलग्रीवंमहाबाहुंनागहारविराजितम् ॥ २० ॥ फणिराजपरिभ्राजत्कंकणांगदमुद्रितम् ॥ अनंतगुणसाहस्रमणिरंजितमेखलम् ॥ २१ ॥ व्याघ्रचर्मपरीधानंघंटादर्पणभूषितम् ॥ कर्कोटकमहापद्मधृतराष्ट्रधनंजयम् ॥ २२ ॥ कूजन्नूपुरसंघुष्टपादपद्मविराजितम् ॥ प्रासतोमरखट्वांगशूलटंकधनुर्धरम् ॥ रत्नसिंहासनारूढंप्रणनाममहामुनिः ॥ २३ ॥ तंभक्तिभारोच्छ्वसितांतरात्मासंस्तूयवाग्भिःश्रुतिसंमिताभिः॥ कृतांजलिःप्रश्रयनम्रकंधरःपप्रच्छधर्मानखिलाञ्छुभप्रदान् ॥ २४ ॥ यान्यानपृच्छतमुनिस्तांस्तान्धर्मानशेषतः ॥ प्रोवाचभगवान्रुद्रोभूयोमुनिरपृच्छत ॥ २५ ॥

कर्कोटक, महापद्म, धृतराष्ट्र और धनंजय ॥ २२ ॥ आदि महासर्प नूपुर बनेहैं । प्रास, तोमर, खट्वांग, शूल, टंक और धनुषधारी, इसप्रकारकी शोभा युक्त और रत्नसिंहासनपर विराजमान शंकरको देख सनत्कुमार महामुनिने प्रणाम किया ॥ २३ ॥ और भक्तिभावसे नम्र हो हाथ जोड अनेक वेदकी श्रुतियोंद्वारा स्तुति कर उनसे अनेक सुन्दर धर्म पूँछे ॥ २४ ॥ जो प्रश्न मुनिने किये उन सब धर्मोंका उत्तर उनकी भक्ति जान भगवान् रुद्रने दिया,

फिरभी सनत्कुमारने प्रश्न किया ॥ २५ ॥ सनत्कुमार पूँछतेहैं हे भगवन् ! तुम्हारे मुखसे निकलेहुए मुक्तिके हेतु धर्म सुने, जिनके द्वारा मनुष्य पापोंसे छूटकर संसारसागरसे पार होजातेहैं ॥ २६ ॥ किन्तु उनमें परिश्रम बहुत है, अब वह धर्म कहिये कि जो थोड़े परिश्रमसे बहुत फल दे, और जिसके धारणसे मनुष्योंकी शीघ्र मुक्ति होजाय ॥ २७ ॥ हे महात्मन् ! बहुत अभ्याससे सिद्ध होनेवाले तो शास्त्रोंमें अनेक धर्म देखे हैं, बहुत समय तक विधिपूर्वक सेवन करनेसे सिद्धि देते हैं और नहीं भी देते ॥ २८ ॥ इसकारण हे महेश्वर ! लोकका हितकारी, गुह्य और भुक्तिमुक्तिका साधन

सनत्कुमारउवाच ॥ ॥ श्रुतास्तेभगवन्धर्मास्त्वन्मुखान्मुक्तिहेतवः ॥ यैर्मुक्तपापामनुजास्तरिष्यंतिभवार्णवम् ॥ २६ ॥ अथापरंमहाधर्ममल्पायासंमहाफलम् ॥ ब्रूहिकारुण्यतोमह्यंसद्योमुक्तिप्रदंनृणाम् ॥ २७ ॥ अभ्यासबहुलाधर्माःशास्त्रदृष्टाःसहस्रशः ॥ सम्यक्संसेविताःकालात्सिद्धिंयच्छंतिवानवा ॥ २८ ॥ अतोलोकहितंगुह्यंभुक्तिमुक्त्योश्चसाधनम् ॥ धर्मंविज्ञातुमिच्छामित्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥ २९ ॥ ॥ श्रीरुद्रउवाच ॥ सर्वेषामपिधर्माणामुत्तमंश्रुतिचोदितम् ॥ रहस्यंसर्वजंतूनांयत्त्रिपुंड्रस्यधारणम् ॥ ३० ॥ सनत्कुमारउवाच ॥ त्रिपुंड्रस्यविधिंब्रूहिभगवञ्जगतांपते ॥ तत्त्वतोज्ञातुमिच्छामित्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥ ३१ ॥ कतिस्थानानिकिंद्रव्यंकाशक्तिःकाचदेवता ॥ किंप्रमाणंचकःकर्त्ताकिंमंत्रास्तस्यकिंफलम् ॥ ३२ ॥

धर्म तुम्हारे प्रसादसे सुनना चाहताहूँ ॥ २९ ॥ यह सुन कालरुद्र बोले कि त्रिपुंड्रका जो धारण करताहै वह सब धर्मोंसे उत्तम है, वेदमेंभी कहागया है, यह सब प्राणियोंको गुप्त रखना चाहिये ॥ ३० ॥ फिर सनत्कुमार बोले, हे जगतके स्वामी ! हे भगवन् ! हे महेश्वर ! तुम्हारे प्रसादसे मेरी विधिपूर्वक त्रिपुंड्रविधिके सुननेकी इच्छा है ॥ ३१ ॥ इसके धारणके कौन स्थान हैं, क्या द्रव्य है, क्या शक्ति है, कौन देवता है, क्या प्रमाण है,

कौन कर्ता है, और कौनसे मन्त्रहैं तथा इसके धारण करनेसे क्या फल होता है ॥ ३२ ॥ हे जगतके स्वामी शंकर ! लोकके अनुग्रहके निमित्त त्रिपुण्ड्रविधिको विस्तारपूर्वक मुझसे कहो ॥ ३३ ॥ यह सुन कालाग्निरुद्र बोले, हे महामुने ! जिस गोबरको जलाकर अग्नि भस्म करदेतीहै वह तो त्रिपुण्ड्रकां द्रव्य है ॥ ३४ ॥ और 'सद्योजाता,दि ब्रह्ममय पाँच मन्त्रोंसे उस भस्मको ग्रहण कर 'अग्निः' इत्यादिमन्त्रोंसे भस्मको अभिमन्त्रित करे ॥ ३५॥ 'मानस्तोके' इत्यादि मन्त्रसे जल डाल भस्मको मर्दन करे, 'त्र्यम्बकं यजामहे' इत्यादि मन्त्रसे शिरपर, 'त्र्यायुषं जमदग्नेः' इत्यादि मन्त्रोंसे ललाट, दोनों

एतत्सर्वमशेषेणत्रिपुंड्रस्यचधारणम् ॥ ब्रूहिमेजगतांनाथलोकानुग्रहकाम्यया ॥ ३३ ॥ ॥ श्रीरुद्रउवाच ॥ अग्नेर्यन्मुच्यतेभस्मादग्धगोमयसंभवम् ॥ तदेवद्रव्यमित्युक्तंत्रिपुंड्रस्यमहामुने ॥ ३४ ॥ सद्योजातादिभिर्ब्रह्ममयैर्मंत्रैश्चपंचभिः ॥ परिगृह्याग्निरित्यादिमंत्रैर्भस्माभिमंत्रयेत ॥ ३५ ॥ मानस्तोकेतिसंमृज्यशिरोलिंपेच्चत्र्यंबकम् ॥ त्रियायुषादिभिर्मंत्रैर्ललाटेचभुजद्वये ॥ ३६ ॥ स्कंधेचलेपयेद्भस्मसजलंमंत्रभावितम् ॥ तिस्रोरेखाभवंत्येषुस्थानेषुमुनिपुंगव ॥ ३७ ॥ भ्रुवोर्मध्येसमारभ्ययावदंतोभ्रुवोर्भवेत् ॥ मध्यमानामिकांगुल्योर्मध्येतुप्रतिलोमतः ॥ ३८ ॥ अंगुष्ठेनकृतारेखात्रिपुंड्रस्याभिधीयते ॥ तिसृणामपिरेखाणांप्रत्येकंनवदेवताः ॥ ३९ ॥ अकारोगार्हपत्यश्चऋग्भूर्लोकोरजस्तथा ॥ आत्माचैवक्रियाशक्तिःप्रातःसवनमेवच ॥ ४० ॥

भुजा ॥ ३६ ॥ और स्कन्धोंमें भस्मलेपन करे, हे मुनिश्रेष्ठ ! इन इन स्थानोंमें तीन तीन रेखा लगाई जातीहैं ॥ ३७ ॥ भ्रूके मध्यभागसे आरम्भ कर जहाँतक अन्त हो वहाँतक सीधे हाथकी मध्यमा और अनामिकाके मध्यमें प्रतिलोमसे ॥ ३८ ॥ अंगुष्ठसे तीन रेखा करे, यह त्रिपुंड्रकी विधि है, उलटी रेखाको प्रतिलोम कहते हैं, इन तीनों रेखाओंमें प्रत्येक रेखाके नव नव देवताहैं॥ ३९ ॥अकार, गार्हपत्याग्नि, ऋग्वेद, भूलोक, रजोगुण, आत्मा,क्रियाशक्ति,

प्रातःसवन ॥ ४० ॥ और महादेव यह पहिली रेखाके देवता हैं। उकार,दक्षिणाग्नि, आकाश, सतोगुण, यजुर्वेद, ॥४१॥ मध्यदिन, सवन, इच्छाशक्ति, अन्तरात्मा और महेश्वर यह दूसरी रेखाके देवता हैं ॥४२॥ मकार,आहवनीय अग्नि, जल, परमात्मा, तमोगुण, ज्ञानशक्ति, सामवेद, तृतीयसवन॥४३॥ और शिव यह तीसरी रेखाके देवता हैं, इन सबको नित्य नमस्कार कर बुद्धिमान् पुरुषको त्रिपुण्ड्र धारण करना चाहिये ॥ ४४ ॥ त्रिपुण्ड्रधारणरूप यह

महादेवस्तुरेखायाःप्रथमायास्तुदेवता ॥ उकारोदक्षिणाग्निश्चनभःसत्त्वंयजुस्तथा ॥ ४१ ॥ मध्यंदिनंचसवनमिच्छाशक्त्यंतरात्मकौ ॥
महेश्वरश्चरेखायाद्वितीयायाश्चदेवताः ॥ ४२ ॥ मकाराहवनीयौचपरमात्मातमोदिवः ॥ ज्ञानशक्तिःसामवेदस्तृतीयसवनंतथा ॥ ४३ ॥
शिवश्चेतितृतीयायारेखायाश्चाधिदेवताः ॥ एतानित्यंनमस्कृत्यत्रिपुंड्रंधारयेत्सुधीः ॥ ४४ ॥ महेश्वरव्रतमिदंसर्ववेदेषुकीर्तितम् ॥ मुक्ति
कामैर्नरैःसेव्यंपुनस्तेषांनसंभवः ॥ ४५ ॥ त्रिपुंड्रंकुरुतेयस्तुभस्मनाविधिपूर्वकम् ॥ ब्रह्मचारीगृहस्थोवावनस्थोयतिरेववा ॥ ४६ ॥
महापातकसंघातैर्मुच्यतेचोपपातकैः ॥ वीरहत्याश्वहत्याभ्यांमुच्यतेनात्रसंशयः ॥ ४७ ॥ अमंत्रेणापियःकुर्यादज्ञात्वामहिमोन्नतिम् ॥
त्रिपुंड्रंभालपटलेमुच्यतेसर्वपातकैः ॥ ४८ ॥

शंकरका व्रत सब वेदोंमें कथन कियागया है, मुक्ति चाहनेवालोंको इसका नित्य सेवन करना चाहिये, इसके धारणसे फिर उनका जन्म नहीं होता॥४५॥ ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्याशी, इनमेंसे कोईभी जो विधिपूर्वक भस्मका त्रिपुण्ड्र धारण करतेहैं ॥ ४६ ॥ वे महापातक, उपपातक,वीरहत्या और अश्वहत्यासे मुक्त होजातेहैं, इसमें सन्देह नहीं ॥ ४७ ॥ जो पुरुष त्रिपुंड्रकी महिमा और उन्नतिको विनाजाने और विना मंत्र त्रिपुंड्रको ललाटमें धारण

करता है वह सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त होजाता है ॥ ४८ ॥ दूसरेके द्रव्यका हरण, दूसरेकी स्त्रीको कुटिल दृष्टिसे देखना, दूसरेकी निन्दा करना, दूसरेके क्षेत्रका हरण करना, दूसरेको पीडा देना ॥ ४९ ॥ अन्न, बगीचे आदिका काटना, दूसरेके घरको जलाना, असत्य काव्य बोलना, चुगली करना, कठोर वचन बोलना, वेदका बेचना ॥ ५० ॥ झूँठी साक्षी भरना, व्रतका त्यागना, छल करना, नीचकी सेवा करना, और गौ, भूमि सुवर्ण, भैंस, कम्बल वस्त्र ॥ ५१ ॥ अन्न, धान्य, जल आदि इनका नीचोंसे दान लेना, दासी, वेश्याओंमें रमण करना, जार पुरुषोंकी संगति करना, व्यभिचारिणी,

परद्रव्यापहरणंपरदाराभिमर्शनम् ॥ परनिंदापरक्षेत्रहरणंपरपीडनम् ॥ ४९ ॥ सस्यारामादिहननंगृहदाहादिकर्मच ॥ असत्यकाव्यंपैशुन्यंपारुष्यंवेदविक्रयः ॥ ५० ॥ कूटसाक्ष्यंव्रतत्यागःकैतवंनीचसेवनम् ॥ गोभूहिरण्यमहिषीतिलकंबलवाससाम् ॥ ५१ ॥ अन्नधान्यजलादीनांनीचेभ्यश्चपरिग्रहः ॥ दासीवेश्यासुभुजंगेषुवृषलीषुनटीषुच ॥ ५२ ॥ रजस्वलासुकन्यासुविधवासुचसंगमः ॥ मांसचर्मरसादीनांलवणस्यचविक्रयः ॥ ५३ ॥ एवमादीन्यसंख्यानिपापानिविविधानिच ॥ सद्यएवविनश्यंतित्रिपुंड्रस्यचधारणात् ॥ ५४ ॥ शिवद्रव्यापहरणंशिवनिंदाचकुत्रचित् ॥ निंदाचशिवभक्तानांप्रायश्चित्तैर्नशुद्ध्यति ॥ ५५ ॥ रुद्राक्षायस्यगात्रेषुललाटेचत्रिपुंड्रकम् ॥ सचांडालोपिसंपूज्यःसर्ववर्णोत्तमोभवेत् ॥ ५६ ॥

नटनी, ॥ ५२ ॥ रजस्वला, कन्या और विधवा, इन स्त्रियोंमें संगम करना, मांस, चर्म, रस आदि और लवणका बेचना ॥ ५३ ॥ इत्यादि तथा अन्य असंख्य अनेक प्रकारके पाप त्रिपुंड्रके धारण करनेसे शीघ्रही नष्ट होजाते हैं ॥ ५४ ॥ केवल शिवद्रव्यका हरण करना, कहीं शिवकी निन्दा करनी और शिवभक्तोंकी निन्दा करनी, यह पाप प्रायश्चित्तोंसे भी शुद्ध नहीं होते ॥ ५५ ॥ जिसके शरीरमें रुद्राक्षमाला और ललाटपर त्रिपुंड्र

है वह चांडाल भी पूज्य है, उसको सर्ववर्णोत्तम जानो ॥५६॥ इस संसारमें जितने गंगाआदि तीर्थ और नदियें हैं उसने सबमें स्नान कर लिया जिसके ललाटपर त्रिपुंड्र लगा है ॥ ५७ ॥ पंचाक्षर मंत्रसे प्रारम्भ करके सात करोड मंत्र, तथा अन्य करोडों शिवमन्त्र हैं कि जिनसे मुक्ति होती है ॥ ५८ ॥ उसने इन सबका जप करलिया जिसके मस्तकपर त्रिपुंड्र है, त्रिपुंड्र धारण करनेवालेके हजार पहिले और हजार अगले पुरुष स्वर्गमें जाते हैं, त्रिपुंड्र धारी पुरुष यहाँ अनेक भोगोंको भोग, रोगरहित और दीर्घायु होता है ॥ ५९ ॥ ६० ॥ देहान्तमें सुखपूर्वक मरणको प्राप्त होता है, और अष्टै

यानितीर्थानिलोकेस्मिन्गंगाद्याःसरितश्चयाः॥ स्नातोभवतिसर्वत्रललाटेयस्त्रिपुंड्रधृक् ॥५७॥ सप्तकोटिमहामंत्राःपंचाक्षरपुरःसराः॥ तथान्ये कोटिशोमंत्राःशैवाःकैवल्यहेतवः ॥ ५८ ॥ तेसर्वेंयेनजप्ताःस्युर्योबिभर्तित्रिपुंड्रकम् ॥ सहस्रंपूर्वजातानांसहस्रंचजनिष्यताम् ॥५९॥ स्ववंशजानांमर्त्यानामुद्धरेद्यस्त्रिपुंड्रधृक् ॥ इहभुक्त्वाखिलान्भोगान्दीर्घायुर्व्याधिवर्जितः ॥ ६० ॥ जीवितांतेचमरणंसुखेनैवप्रपद्यते ॥ अष्टैश्वर्यगुणोपेतंप्राप्यदिव्यंवपुःशुभम् ॥६१॥ दिव्यंविमानमारुह्यदिव्यस्त्रीशतसेवितः ॥ विद्याधराणांसिद्धानांगंधर्वाणांमहौजसाम् ॥ ६२ ॥ इंद्रादिलोकपालनांलोकेषुचयथाक्रमम् ॥ भुक्त्वाभोगान्सुविपुलान्प्रजेशानां पुरेषु च ॥ ६३ ॥ ब्रह्मणःपदमासाद्यतत्रकल्पशतंरमेत् ॥ विष्णोर्लोकेचरमतेयावद्ब्रह्मशतत्रयम् ॥ ६४ ॥ शिवलोकंततःप्राप्यरमतेकालमक्षयम् ॥ शिवसायुज्यमाप्नोतिनसभूयोभिजायते ॥ ६५ ॥

श्वर्यगुणयुक्त दिव्य देह पाय ॥ ६१ ॥ दिव्य विमानमें आरूढ हो सैकडों दिव्य स्त्रियोंसे सेवित हुआ विद्याधर, सिद्ध, बडे पराक्रमी गन्धर्व ॥ ६२ ॥ और इन्द्रादि आठ लोकपालोंके लोकोंमें क्रमसे सुंदर भोग भोगकर प्रजापतियोंके लोकोंमें जाता है ॥६३॥ फिर ब्रह्मपदको प्राप्त हो वहाँ सौ कल्पतक रमण करता है, इसके उपरान्त जबतक तीन ब्रह्मा बदलें तबतक विष्णुलोकमें रमता है ॥ ६४ ॥ और अन्तमें शिवलोकको प्राप्त हो निरंतर

रमता है. उसकी शिव सायुज्यमुक्ति होजाती है और फिर वह जन्म नहीं लेता ॥ ६५ ॥ बारम्बार जो सम्पूर्ण उपनिषदोंका सार विचारा तो यही निर्णय हुआ कि त्रिपुंड्रका धारणकरना ही परम कल्याणका कारण है ॥ ६६ ॥ इस प्रकार उपदेश कर कालाग्नि रुद्र बोले कि हे सनत्कुमार ! यह त्रिपुंड्रका माहात्म्य मैंने तुम्हारे प्रति संक्षेपसे कहा, सब प्राणियोंका रहस्य यह तुमको छिपाकर रखना चाहिये. अर्थात् जिस तिससे मत कहो. अधिकारीको उपदेश दो, अनधिकारीको नहीं ॥ ६७ ॥ इस प्रकार कह भगवान् कालाग्नि रुद्र वहीं अन्तर्द्धान होगये और सनत्कुमार भी ब्रह्मलोक

सर्वोपनिषदांसारंसमालोच्यमुहुर्मुहुः ॥ इदमेवहिनिर्णीतंपरंश्रेयस्त्रिपुंड्रकम् ॥ ६६ ॥ एतत्त्रिपुंड्रमाहात्म्यंसमासात्कथितंमया ॥ रहस्यं सर्वभूतानांगोपनीयमिदंत्वया ॥ ६७ ॥ इत्युक्त्वाभगवान्रुद्रस्तत्रैवांतरधीयत ॥ सनत्कुमारोपिमुनिर्जगामब्रह्मणः पदम् ॥ ६८ ॥ तवापिभस्मसंपर्कात्संजाताविमलामतिः ॥ त्वमपिश्रद्धयापुण्यंधारयस्वत्रिपुंड्रकम् ॥ ६९ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ इत्युक्त्वावामदेवस्तुशिवयोगीमहातपाः ॥ अभिमंत्र्यददौभस्मघोरायब्रह्मरक्षसे ॥ ७० ॥ तेनासौभालपटलेचक्रेतिर्यक्त्रिपुंड्रकम् ॥ ब्रह्मराक्षसतांसद्यो जहौतस्यानुभावतः ॥ ७१ ॥ सबभौसूर्यसंकाशस्तेजोमंडलमंडितः ॥ दिव्यावयवरूपैश्चदिव्यमाल्यांबरोज्ज्वलः ॥ ७२ ॥

को चलेगये ॥ ६८ ॥ इतनी कथा सुनाय ब्रह्मराक्षससे फिर वामदेव शिवयोगी बोले कि भस्मधारणके प्रभावसे तेरी भी सुन्दर बुद्धि होगई. तू भी श्रद्धापूर्वक पवित्र त्रिपुंड्रको धारण कर ॥ ६९ ॥ सूतजी बोले कि इसप्रकार कह महातपस्वी वामदेव शिवयोगीने भस्म अभिमंत्रित कर घोर ब्रह्मराक्षसको दी ॥ ७० ॥ उसने अपने ललाटपर त्रिपुंड्र धारण की. त्रिपुंड्रके धारण करतेही भस्मके प्रभावसे उसने ब्रह्मराक्षसताको तत्काल त्याग दिया ॥ ७१ ॥ वह सूर्यके समान तेजस्वी तेजमंडलसे मंडित. दिव्य अवयव और रूपसे शोभित, दिव्य माला और सुन्दर वस्त्रोंसे उज्वल होगया ॥७२॥

भक्तिपूर्वक शिवयोगी गुरुकी प्रदक्षिणा कर और दिव्य विमानमें आरूढ हो पवित्र लोकोंको गया ॥ ७३ ॥ और साक्षात् शिवके समान वह गूढात्मा शिवयोगीभी ब्रह्मराक्षसको मुक्तकर संसारमें बिचरने लगा ॥ ७४ ॥ जो इस त्रिपुंड्रके माहात्म्यको सुनता सुनाता वा पढता है वह परम गतिको प्राप्त होता है ॥ ७५ ॥ जो शिवयशको कहताहै, उनके पदोंको नमताहै और त्रिपुण्ड्र धारण करताहै, वह माताके गर्भमें फिर नहीं आताहै ॥ ७६ ॥ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पंडित बाबूरामशर्मकृतभाषाटीकयां भस्ममाहात्म्यकथनंनाम षोडशोऽध्यायः ॥

भक्त्याप्रदक्षिणीकृत्यतंगुरुंशिवयोगिनम् ॥ दिव्यंविमानमारुह्यपुण्यलोकाञ्जगामसः ॥ ७३ ॥ वामदेवोमहायोगीदत्त्वातस्मैपरांगतिम् ॥ चचारलोकेगूढात्मासाक्षादिवशिवः स्वयम् ॥ ७४ ॥ यएतद्भस्ममाहात्म्यंत्रिपुंड्रंशृणुयान्नरः ॥ श्रावयेद्वापठेद्वापिसयातिप रांगतिम् ॥ ७५ ॥ कथयतिशिवकीर्तिसंसृतेर्मुक्तिहेतुंप्रणमतिशिवयोगिध्येयमीशांघ्रिपद्मम् ॥ रचयतिशिवभक्तोद्भासिभालेत्रिपुंड्रंन पुनरिहजनन्यागर्भवासंभजेत्सः ॥ ७६ ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडेभस्ममाहात्म्यकथनंनामषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ छ ॥ ॥ ऋषयऊचुः ॥ ॥ वेदवेदांगतत्त्वज्ञैर्गुरुभिर्ब्रह्मवादिभिः ॥ नृणांकृतोपदेशानांसद्यःसिद्धिर्हिजायते ॥ १ ॥ अथान्यजनसामान्यैर्गुरु भिर्नीतिकोविदैः ॥ नृणांकृतोपदेशानांसिद्धिर्भवतिकीदृशी ॥ २ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ श्रद्धैवसर्वधर्मस्यचातीवहितकारिणी ॥ श्रद्धयैवनृणांसिद्धिर्जायतेलोकयोर्द्वयोः ॥ ३ ॥

॥ १६ ॥ ऋषि पूँछने लगे कि हे सूतजी ! वेदवेदांगके तत्त्वको जाननेवाले ब्रह्मवादी गुरुओंके उपदेश करनेसे मनुष्योंको तत्काल सिद्धि प्राप्त होजाती है ॥ १ ॥ किन्तु इस प्रकारका गुरु न मिलें तो साधारण पुरुषोंके समान नीतिमें चतुर गुरुओंके उपदेश करनेसे मनुष्योंकी कैसी सिद्धि होती है सो हमसे कहो ॥ २ ॥ यह सुन सूतजी बोले कि श्रद्धाही सर्वधर्मोंकी हितकारिणी है. श्रद्धासेही दोनों लोकमें मनुष्योंको सिद्धि होती है ॥ ३ ॥

श्रद्धापूर्वक शिलाका पूजन करनेसेभी फल प्राप्त होता है, मूर्ख गुरुभी भक्तिपूर्वक पूजनेसे सिद्धि देता है ॥ ४ ॥ श्रद्धासे विनाविधिभी जपाहुआ मंत्र फल देता है. श्रद्धासे पूजेहुए देवता नीचकोभी फल देते हैं ॥ ५ ॥ अश्रद्धासे किया हुआ सब पूजा, दान, यज्ञ, तप और व्रत वंध्यतरुके पुष्पके समान निष्फल होजाते हैं ॥ ६ ॥ सर्वत्र संशय करनेवाला, श्रद्धाहीन, अतिचञ्चल और परमार्थ नहीं करनेवाला पुरुष संसारसागरसे कभी मुक्त नहीं होता ॥ ७ ॥ मंत्र, तीर्थ; द्विज, देव, दैवज्ञ, भेषज और गुरु इनमें जैसी जिसकी भावना होती है वैसीही उसको सिद्धि प्राप्त

श्रद्धयाभजतःपुंसःशिलापिफलदायिनी ॥ मूर्खोपिपूजितोभक्त्यागुरुर्भवतिसिद्धिदः ॥ ४ ॥ श्रद्धयाभजतोमंत्रस्त्वबद्धोपिफलप्रदः ॥
श्रद्धयापूजितोदेवोनीचस्यापिफलप्रदः ॥५॥ अश्रद्धयाकृतापूजादानंयज्ञस्तपोव्रतम् ॥ सर्वंनिष्फलतांयातिपुष्पंवंध्यतरोरिव ॥ ६ ॥
सर्वत्रसंशयाविष्टःश्रद्धाहीनोतिचंचलः ॥ परमार्थात्परिभ्रष्टःसंसृतेर्नहिमुच्यते ॥ ७ ॥ मंत्रेतीर्थेद्विजेदेवेदैवज्ञेभेषजेगुरौ ॥ यादृशी
भावनायत्रसिद्धिर्भवतिताहशी ॥ ८ ॥ अतोभावमयंविश्वंपुण्यंपापंचभावतः ॥ तेउभेभावहीनस्यनभवेतांकदाचन ॥ ९ ॥
अत्रेदंपरमाश्चर्यमाख्यानमनुवर्ण्यते ॥ अश्रद्धासर्वमर्त्यानामसिद्धेःकारणंपरम् ॥ १० ॥ आसीत्पांचालराजस्यसिंहकेतुरितिश्रुतः ॥
पुत्रःसर्वगुणोपेतःक्षात्रधर्मरतःसदा ॥ ११ ॥ सएकदाकतिपयैर्भृत्यैर्युक्तोमहाबलः ॥ जगाममृगयोहेतोर्बहुसत्त्वान्वितंवनम् ॥ १२ ॥

होती है ॥ ८ ॥ इसकारण संसारमें भावना ही मुख्य है, भावनाहीसे पाप, पुण्य होता है, और भावनाहीन पुरुषको पाप, पुण्य दोनोंही नहीं लगते ॥ ९ ॥ इस विषयमें एक बडा आश्चर्य करनेवाला आख्यान वर्णन करते हैं, अश्रद्धाही सब प्राणियोंकी असिद्धिका कारण है ॥ १० ॥ पांचाल देशके राजाका सिंहकेतु नाम सर्वगुण सम्पन्न क्षात्रधर्म रत और बडा पराक्रमी एक पुत्र था ॥ ११ ॥ एक समय वह महाबली राजपुत्र थोडे

नौकरोंको साथ ले मृगया (शिकार) के निमित्त बहुत जीवोंसे युक्त एक वनमें पहुँचा ॥ १२ ॥ और अनेक हिंसक जीवोंका वध किया, इसी अवसरमें शिकार करते २ उसके एक भील नौकरने टूटाफूटा स्फटिकका एक देवालय देखा ॥ १३ ॥ उसके भीतर घुसा तो एक टूटीहुई जलहरीके पास बडा सुन्दर सीधा और सूक्ष्म शिवलिंग मानो अपना भाग्य जैसे प्राप्त हो, पडा देखा ॥ १४ ॥ पूर्वजन्मकी प्रेरणासे वह भील शीघ्रतासे उसको उठा लाया और लाकर उस बुद्धिमान् राजपुत्रको दिखानेलगा कि ॥ १५ ॥ हे प्रभो ! इस सुन्दर शिवलिंगको देखो मैंने इसी वनमें इसे देखा है,

तद्भृत्यःशबरःकश्चिद्विचरन्मृगयांवने ॥ ददर्शजीर्णस्फुटितंपतितंदेवतालयम् ॥ १३ ॥ तत्रापश्यद्भिन्नपीठंपतितंस्थंडिलोपरि ॥
शिवलिङ्गमृजुंसूक्ष्मंसूर्तभाग्यमिवात्मनः ॥ १४ ॥ ससमादायवेगेनपूर्वकर्मप्रचोदितः ॥ तस्मैसंदर्शयामासराजपुत्रायधीमते ॥१५॥
पश्येदंरुचिरंलिङ्गंमयादृष्टमिहप्रभो ॥ तदेतत्पूजयिष्यामियथाविभवमादरात् ॥ १६ ॥ अस्यपूजाविधिंब्रूहियथादेवोमहेश्वरः ॥
अमंत्रज्ञैश्चमंत्रज्ञैःप्रीतोभवतिपूजितः ॥ १७ ॥ इतितेननिषादेनपृष्टःपार्थिवनंदनः ॥ प्रत्युवाचप्रहस्यैनंपरिहासविचक्षणः ॥ १८ ॥
संकल्पेनसदाकुर्यादभिषेकंनवांभसा ॥ उपवेश्यासनेशुद्धेशुभैर्गंधाक्षतैर्नवैः ॥ १९ ॥

सो अपने विभवके अनुसार आदरपूर्वक मैं इस शिवलिंगकी पूजा करूँगा॥ १६ ॥ हे प्रभो ! विना मन्त्र पूजन करनेसे जिसप्रकार भगवान् शंकर प्रसन्न होजायँ उस पूजा विधिको मुझसे विधिपूर्वक वर्णन करो ॥ १७ ॥ इसप्रकार उस निषादके पूछनेपर हँसनेवालोंमें चतुर राजपुत्र उससे हँसकर बोला ॥ १८ ॥ इसकी बहुत सीधी विधि है सुनो, पहिले संकल्प करे फिर सुन्दर नवीन जलसे स्नान करावे और सुन्दर शुद्ध आसनपर अपने संमुख स्थित

कर सुन्दर गन्ध अक्षत ॥ १९ ॥ वनके नवीन पत्र, पुष्प, धूप और दीपसे पूजन करे तदनन्तर पहिले चिताकी भस्म चढाय ॥ २० ॥ पीछे अपने घर जो कुछ अपने लिये भोजन बना हो उससे नैवेद्य भोग लगावे फिर धूप, दीप आदि उपचार करे ॥ २१ ॥ इसके उपरान्त विधिपूर्वक प्रणाम कर बुद्धिमान् पुरुष प्रसाद पावै, यह शिवपुजनकी साधारण विधि तुमसे कही ॥ २२ ॥ किन्तु चिताभस्मके चढानेसे भगवान् शंकर तत्काल प्रसन्न होजाते हैं, सूतजी बोले कि राजपुत्रने तो हँसीसेही यह पूजन कहा ॥ २३ ॥ किन्तु उस चण्डकनाम भीलने उसका वचन अपने मस्तकपर धारण किया

वन्यैःपत्रैश्चकुसुमैर्धूपैर्दीपैश्चपूजयेत् ॥ चिताभस्मोपहारंचप्रथमंपरिकल्पयेत् ॥ २० ॥ आत्मोपभोग्येनान्नेननैवेद्यंकल्पयेद्बुधः ॥ पुनश्च धूपदीपादीनुपचारान्प्रकल्पयेत् ॥२१॥ नमस्कृत्वातुविधिवत्प्रसादंधारयेद्बुधः ॥ एषसाधारणःप्रोक्तःशिवपूजाविधिस्तव ॥ २२॥ चिताभस्मोपहारेणसद्यस्तुष्यतिशंकरः ॥ सूतउवाच ॥ परिहासरसेनेत्थंशासितःस्वामिनाऽमुना ॥ २३ ॥ सचंडकाख्यःशबरोमूर्ध्नाजग्राहतद्वचः॥ ततःस्वभवनंप्राप्यलिंगमूर्तिंमहेश्वरम् ॥२४॥ प्रत्यहंपूजयामासचिताभस्मोपहारकृत् ॥ यद्यात्मनःप्रियंवस्तुगंधपुष्पाक्षतादिकम् ॥२५॥ निवेद्यशंभवेनित्यमुपायुंक्ततःस्वयम् ॥ एवंमहेश्वरंभक्त्यासहपत्न्याभ्यपूजयत् ॥ २६ ॥ शबरःसुखमासाद्यनिनायकतिचित्समाः ॥ एकदाशिवपूजायैप्रवृत्तःशबरोत्तमः ॥ २७ ॥ नददर्शचिताभस्मपात्रेपूरितमण्वपि ॥ अथासौत्वरितोदूरमन्विष्यन्परितोभ्रमन् ॥ २८ ॥

और घर आकर शिवजीकी लिंगमूर्तिको ॥ २४ ॥ नित्यप्रति चिताकी भस्म द्वारा पूजने लगा, वह जोजो अपनी प्रिय वस्तु देखता सोसो और गन्ध पुष्प, अक्षत आदि ॥ २५ ॥ शिवजीको निवेदन करदेता फिर आप भोजन करता, इसप्रकार स्त्रीसमेत भक्तिपूर्वक शंकरका पूजन करते करते ॥२६॥ उस निषादने सुखपूर्वक कईवर्ष बिताये, एकसमय जब वह भील पूजा करने लगा ॥ २७ ॥ तब उसने चिताभस्म चढानेके निमित्त जो पात्रमें हाथ

डाला तो उसमें (जिसमें सदा भस्म भरी रहती थी) जरासी भस्मभी न निकली तब पूजास्थानसे उठ दूर वनमें जा चिताभस्म ढूँढने लगा ॥ २८ ॥ किन्तु दैवयोगसे वहाँभी चिताभस्म नहीं मिली और थककर घर आगया घर आकर अपनी स्त्रीको निकट बुलाकर यह वचन बोला ॥ २९ ॥ कि हे प्रिये ! मैंने चिताभस्म सब जगह ढूंढी पर कहीं नहीं मिली, बता अब मैं क्या करूँ किसी पाप कर्मसे आज मेरी शिवपूजामें विघ्न हुआ ॥ ३० ॥ शिवपूजाके विना मैं क्षणमात्रभी नहीं जीसकता, पूजाके उपकरण हत होनेपर यहाँ मैं कोई उपाय

नलब्धवांश्चिताभस्मश्रांतागृहमगात्पुनः ॥ ततआहूयपत्नींस्वांशबरोवाक्यमब्रवीत् ॥ २९ ॥ नलब्धंमेचिताभस्मकिंकरोमिवदप्रिये ॥
शिवपूजांतरायोमेजातोह्यवतपाप्मनः ॥ ३० ॥ पूजांविनाक्षणमपिनाहंजीवितुमुत्सहे ॥ उपायंनात्रपश्यामिपूजोपकरणेहते ॥ ३१ ॥
नगुरोश्चविहन्येतशासनंसकलार्थदम् ॥ इतिव्याकुलितंदृष्ट्वाभर्त्तारंशबरांगना ॥ ३२ ॥ प्रत्यभाषतमाभैस्त्वमुपायंप्रवदामिते ॥
इदमेवगृहंदग्ध्वाबहुकालोपबृंहितम् ॥ ३३ ॥ अहमग्निंप्रवेक्ष्यामिचिताभस्मभवेत्ततः ॥ ॥ शबरउवाच ॥ ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणांदेहः
परमसाधनम् ॥ ३४ ॥ कथंत्यजसितंदेहंसुखार्थंनवयौवनम् ॥ अधुनात्वनपत्यात्वमभुक्तविषयासवा ॥ ३५ ॥

नही देखता ॥ ३१ ॥ और सर्वकामना सिद्ध करनेवाली गुरुजीकी आज्ञाका उल्लंघनभी नहीं करसकता, इसप्रकार बहुत व्याकुल हुए अपने पतिको देख भीलनी (उसकी स्त्री) बोली ॥ ३२ ॥ हे स्वामिन् ! डरो मत मैं इसका उपाय तुम्हें बतातीहूँ कि बहुत कालसे वृद्धिको प्राप्तहुए इस घरको जलादो ॥ ३३ ॥ और मैं इसमे प्रवेश किये जातीहूँ जब मेरी भस्म होजाय तब तुम शंकरको चढ़ा देना इसप्रकार अपनी स्त्रीका वचन सुन बोला कि यह शरीर धर्म, अर्थ, काम और मोक्षका साधन है ॥ ३४ ॥ सुख देनेवाले और नवयौवन युक्त इस देहको क्यों त्यागतीहै, अभी तेरे कोई

सन्तान नहीं हुई, संसारके भोग नहीं भोगे ॥ ३५ ॥ संसारके भोग भोगनेके योग्य इस देहको यहाँ क्यों जलाना चाहतीहै, भीलनी बोली, हे स्वामिन् ! संसारमें जन्म लेकर जीनेकी यही सफलता है ॥ ३६ ॥ कि जो परोपकारके निमित्त प्राण त्यागे, और श्रीमहादेवके निमित्त देह त्यागनेकी तो बातही क्या है, कोई बडाभारी तप, दान ॥ ३७ ॥ वा अनेक जन्मोंमें श्रीमहादेवजीका पूजन कियाहो अथवा मेरे माता पिताने कोई बडा तप कियाहो ॥ ३८ ॥ तो मैं जलतीहुई अग्निमें अपने इस देहको त्यागूँ और यह देवताके काम आवे, अब विलम्ब मतकरो और अग्निमें प्रवेश

भोगयोग्यमिदंदेहंकथंदग्धुमिहेच्छसि ॥ ॥ शबर्युवाच ॥ ॥ एतावदेवसाफल्यंजीवितस्यचजन्मनः ॥ ३६ ॥ परार्थेयस्त्यजेत्प्राणाञ्छिवार्थेकिंसुतस्वयम् ॥ किंनुततंतपोघोरंकिंवादत्तंमयापुरा ॥ ३७ ॥ किंवार्चनंकृतंशंभोःपूर्वजन्मशतांतरे ॥ किंवापुण्यंममपितुःकावामातुःकृतार्थता ॥ ३८ ॥ यच्छिवार्थेसमिद्धेग्नौत्यजाम्येतत्कलेवरम् ॥ इत्थंस्थिरांमतिंदृष्ट्वातस्याभक्तिंचशंकरे ॥ ३९ ॥ तथेतिदृष्टसंकल्पःशबरःप्रत्यपूजयत् ॥ साभर्त्तारमनुप्राप्यस्नात्वाशुचिरलंकृता ॥ ४० ॥ गृहमादीप्यतंवह्निंभक्त्याचक्रेप्रदक्षिणम् ॥ नमस्कृत्वात्मगुरवेध्यात्वाहृदिसदाशिवम् ॥ ४१ ॥ अग्निप्रवेशाभिमुखीकृतांजलिरिदंजगौ ॥ ॥ शबर्युवाच ॥ ॥ पुष्पाणिसंतुतवदेवममेंद्रियाणिधूपोगुरुर्वपुरिदंहृदयंप्रदीपः ॥ प्राणाहवींषिकरणानितवाक्षताश्चपूजाफलंव्रजतुसांप्रतमेषजीवः ॥ ४२ ॥

होनेकी आज्ञा दो, इसप्रकार उसका दृढ निश्चय और शंकरमें भक्ति देख ॥ ३९ ॥ भीलने उसका संकल्प स्वीकार करलिया, स्वामीकी आज्ञा पा उसने स्नानकर पवित्र हो और अपने सब आभूषण पहिन ॥ ४० ॥ घरमें अग्नि लगा उस घरकी भक्तिसे प्रदक्षिणा की तथा अपने गुरुको प्रणाम और सदाशिवको हृदयमें धारण कर ॥ ४१ ॥ अग्निमें प्रवेश करनेको उद्यतहो इसप्रकार श्रीशंकरकी स्तुति करनेलगी भीलनी बोली, हे देवमहेश्वर ! यह

मेरी इंद्रियों तुम्हारे पुष्प हों, यह मेरा भारी शरीर धूप होकर लगे, हृदय दीपक हो, प्राण हवि हो, और मेरे कान अक्षत हों इसप्रकार यह मेरा जीव पूजाके फलको प्राप्त होवे ॥ ४२ ॥ मैं सर्वधन, सन्तान, स्वर्ग, अचलभूमि और ब्रह्माजीका पद इनमेंसे कुछ नहीं चाहती, जन्म जन्मान्तरमें यदि मेरा जन्म हो तो तुम्हारे चरणकमलके परागकी भौंरी बनी रहूँ ॥४३॥ हे देव ! चाहें मेरे सैकडों जन्म क्यों न हों किंतु अबोधके हेतु माया मेरे हृदयमें प्रवेश न करे, आधाक्षणभी तुम्हारे चरणाविन्दसे मेरा हृदय अलग न हो हे ईश ! तुमको प्रणाम है ॥ ४४ ॥ इसप्रकार शंकरको प्रसन्नकर दृढ निश्च

वांछामिनाहमपिसर्वधनाधिपत्यंनस्वर्गभूमिमचलांनपदंविधातुः ॥ भूयोभवामियदिजन्मनिजन्मनिस्यांत्वत्पादपंकजलसन्मकरंदभृंगी ॥ ४३ ॥ जन्मानिसंतुममदेवशताधिकानिमायानमेविशतुचित्तमबोधहेतुः ॥ किंचित्क्षणार्धमपितेचरणारविंदान्नापैतुमेहृदयमीशनमो नमस्ते ॥ ४४ ॥ इतिप्रसाद्यदेवेशंशबरीदृढनिश्चया ॥ विवेशज्वलितंवह्निंभस्मसाद्भवत्क्षणात् ॥ ४५ ॥ शबरोपिचतद्भस्मयत्नेन परिगृह्यसः ॥ चक्रेदग्धगृहोपान्तेशिवपूजांसमाहितः ॥ ४६ ॥ अथसस्मारपूजांतेप्रसादग्रहणोचिताम् ॥ दयितांनित्यमायांतींप्रांजलिंविनयान्विताम् ॥ ४७ ॥

यवाली वह भीलनी जलती अग्निमें प्रवेश होगई और क्षणमात्रमें उसका भस्म होगया ॥ ४५ ॥ उस भीलनेभी उस भस्मको यत्नसे ग्रहण करलिया और समाहित चित्तसे जले घरके समीप एकान्तमें बैठ शिवपूजन करनेलगा ॥ ४६ ॥ पूजा करते समय स्त्रीके मरण और घरके जलनेका स्मरणभी न रहा, पूजनके अन्तमें नित्यके अनुसार प्रसाद लेनेके निमित्त अपनी स्त्रीको बुलाया, पूर्वके अनुसार वहभी विनयसे नम्र हो हाथ जोड सन्मुख स्थित

होगई ॥ ४७ ॥ भक्तिसे नम्र, विस्मित और पूर्व अवयवयुक्त उसको स्मरण करतेही अपने पीछे स्थित देखा ॥ ४८ ॥ पूर्वके समान हाथजोडे हुए स्थित अपनी पत्नीको और जोकि पूर्व भस्मसे घर शेष होगयाथा उसको देख भील बडा आश्चर्य करनेलगा ॥ ४९ ॥ और बोला हे प्रिये ! तू तो अग्निमें प्रवेशकर भस्म हागई थी और यह घरभी भस्मीभूत होगया था, अग्नि अपने तेजसे जलाता है, सूर्य किरणोंसे जलाता है, राजा दंडसे जलाता है, और ब्राह्मण मनसे जलाता है ॥ ५० ॥ यह स्वप्न है, भ्रम है, अथवा कोई और परमेश्वरकी माया है कुछ जानी नहीं जाती, यह विस्मयही कररहा

स्मृतमात्रांतदापश्यदागतांपृष्ठतःस्थिताम् ॥ पूर्वेणावयवेनैवभाक्तिनम्रांसुविस्मिताम् ॥ ४८ ॥ तांवीक्ष्यशबरःपत्नींपूर्ववत्प्राजलिंस्थिताम् ॥ भस्मावशेषितगृहंयथापूर्वमवस्थितम् ॥ ४९ ॥ अग्निर्दहतितेजोभिःसूर्योदहतिरश्मिभिः ॥ राजादहतिदंडेनब्राह्मणोमनसादहेत् ॥ ५० ॥ किमयंस्वप्नआहोस्वित्किंवामायाभ्रमात्मिका ॥ इतिविस्मयसंभ्रांतस्तावत्पूर्ववदास्थितम् ॥ ५१ ॥ ॥ शबर्युवाच ॥ यदागृहंसमुद्दीप्यप्रविष्टाहंहुताशने ॥ तदात्मानंनजानामिनपश्यामिहुताशनम् ॥ ५२ ॥ नतापलेशोप्यासीन्मेप्रविष्टायाइवोदकम् ॥ सुषुप्तेवक्षणार्धेनप्रबुद्धास्मिपुनःक्षणात् ॥ ५३ ॥ तावद्भवनमद्राक्षमदग्धमिवसुस्थितम् ॥ अधुनादेवपूजांतेप्रसादंलब्धुमागता ॥ ५४ ॥

था कि इतनेमें उसका घरभी पूर्वके समान सुन्दर बनगया ॥ ५१ ॥ और उसकी स्त्री हाथ जोडकर बोली, हे प्राणनाथ ! जिस समय घरमें अग्नि लगाकर मैं अग्निमें प्रवेशहुई तब मैं अपने आत्माको भूलगई, अग्निकोभी मैंने नहीं देखा ॥ ५२ ॥ अग्निमें प्रवेश होनेसे मुझको ताप नहींहुआ किंतु ऐसा जानपडा कि इससमय मैंने जलमें प्रवेश किया है, आधे क्षण सोतेहुएके समान होगई और अब जग उठीहूँ ॥ ५३ ॥ तबतक मैंने देखा कि यह घर जलासा नहीं दीखता किन्तु पूर्वसेभी सुन्दर ज्ञातहोता है, इससमय आपके बुलानेसे पूजनके अन्तमें प्रसाद लेनेके निमित्त चलीआतीहूँ और मैं

कुछ नहीं जानती ॥ ५४ ॥ इसप्रकार प्रेमपूर्वक वे दोनों स्त्री पुरुष भाषण कररहेथे कि इतनेहीमें उनके सम्मुख एक दिव्यविमान आकाशसे प्रादुर्भूत हुआ ॥ ५५ ॥ सौ चन्द्रमाके समान कान्तिवाले उस विमानमें शंकरके चार अनुचर स्थित थे उन्होंने उन दोनोंको हाथ पकडकर विमानमें बिठाया ॥ ५६ ॥ शिवदूतोंके हाथका स्पर्श होतेही क्षणमात्रमें उनका वह भीलका देह उनकी सारूप्यताको प्राप्त होगया ॥५७॥ इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि इसलिये सब पुण्यात्मा पुरुषोंको श्रद्धाहीका अवलंबन करना चाहिये, देखो श्रद्धाके प्रभावसेही नीचयोनिवाला भीलभी योगियोंकी गति

एवंपरस्परंप्रेम्णादंपत्योर्भाषमाणयोः॥प्रादुरासीत्तयोरग्रेविमानंदिव्यमद्भुतम् ॥५५॥ तस्मिन्विमानेशतचंद्रभास्वरेचत्वारईशानुचराःपुरःस राः॥हस्तेगृहीत्वाथनिषाददंपतीआरोपयामासुरमुक्तविग्रहौ ॥५६॥ तयोर्निषाददंपत्योस्तत्क्षणादेवतद्वपुः ॥ शिवदूतकरस्पर्शात्तत्सारूप्यम वापह ॥ ५७ ॥ तस्माच्छ्रद्धैवसर्वेषुविधेयापुण्यकर्मसु ॥ नीचोपिशबरःप्रापश्रद्धयायोगिनांगतिम् ॥५८॥ किंजन्मनासकलवर्णजनोत्तमे नकिंविद्ययासकलशास्त्रविचारवत्या ॥ यस्यास्तिचेतसिसदापरमेशभक्तिःकोन्यस्ततस्त्रिभुवनेपुरुषोस्तिधन्यः ॥५९॥ इतिश्रीस्कंदपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडेसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ सूतउवाच ॥ अथाहंसंप्रवक्ष्यामिसर्वधर्मोत्तमोत्तमम् ॥ उमामहेश्वरंनामव्रतंसर्वार्थसिद्धिदम्॥१॥

को प्राप्त हुआ ॥ ५८ ॥ इससे न तो उत्तमकुलमें जन्म लेनेसे कुछ लाभ है, सम्पूर्णशास्त्रोंकी विचारशक्तिवाली विद्यासे भी क्या लाभ है. केवल जिसके हृदयमें ईश्वरकी भक्ति है वही कल्याणका भागी है और उसीको त्रिलोकीमें धन्य जानो ॥ ५९ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पण्डित बाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले हे मुनीश्वरो ! सब धर्मोंमें उत्तम, सर्वकामनाओंको सिद्ध

करनेवाला एक उमामहेश्वरका व्रत मैं तुमसे कहता हूँ ॥ १ ॥ आनर्तदेशमें स्त्री पुत्र युक्त विद्वान् और उत्तम वंशमें उत्पन्न वेदरथनाम एक ब्राह्मण था ॥२॥ गृहस्थ आश्रममें स्थित उस ब्राह्मणके कमलके समान नेत्रवाली एककन्या उत्पन्न हुई, शारदा उसका नाम रक्खा ॥३॥ वह पिताके घरमें बढने लगी, जब बारह वर्षकी हुई तब रूप लक्षण संपन्न उस बालाको अपने विवाहके निमित्त एक पद्मनाभ ब्राह्मणने कि जिसकी स्त्री पूर्व मरचुकी थी, उसके पितासे माँगा ॥ ४ ॥ वह ब्राह्मण महाधनी था. शान्तचित्त था और सदा राजाका सखा था, इसकारण याचना भंगके भयसे उसके पिताने उस पद्मनाभ

आनर्त्तसंभवःकश्चिन्नाम्नावेदरथोद्विजः ॥ कलत्रपुत्रसंपन्नोविद्वानुत्तमवंशजः ॥ २ ॥ तस्यैवंवर्तमानस्यब्राह्मणस्यगृहाश्रमे ॥ बभूव शारदानामकन्याकमललोचना ॥ ३ ॥ तांरूपलक्षणोपेतांबालांद्वादशहायनाम् ॥ ययाचेपद्मनाभाख्योमृतदारश्चसद्विजः ॥ ४ ॥ महा धनस्यशांतस्यसदाराजसखस्यच ॥ याञ्चाभंगभयात्तस्यतांकन्यांप्रददौपिता ॥ ५ ॥ मध्यंदिनेकृतोद्वाहःसविप्रःश्वशुरालये ॥ संध्या मुपासितुंसायंसरस्तटमुपाययौ ॥ ६ ॥ उपास्यसंध्यांविधिवत्प्रत्यागच्छत्तमोवृते ॥ मार्गेदष्टोभुजंगेनममारनिजकर्मणा ॥ ७ ॥ त स्मिन्मृतेकृतोद्वाहेसहसातस्यबांधवाः ॥ चुकुशुःशोकसंततौश्वशुरावस्यकन्यका ॥ ८ ॥ निर्हृत्यतंबंधुजनाजग्मुःस्वंस्वंनिवेशनम् ॥ शारदाप्राप्तवैधव्यापितुरेवालयेस्थिता ॥ ९ ॥

ब्राह्मणके साथ अपनी कन्याका विवाह करदिया ॥ ५ ॥ विवाहके उपरान्त श्वशुरके घर एकदिन वह ब्राह्मण सन्ध्यासमय सन्ध्या करनेके निमित्त किसी एक सरोवरके तटपर गया ॥ ६ ॥ वहीं विधिपूर्वक सन्ध्या करके जो लौटा तो मार्गमें अन्धकार बहुत होरहा था इसकारण मार्गमें उसको एक सर्पने डसलिया और वह घर आते २ अपने कर्मसे मृत्युवश होगया ॥७॥ विवाहितहुए उसके मरनेपर उसके सब बांधव, सास, ससुर और वह कन्या शोकसे संतप्त हो रुदन करनेलगे ॥८॥ और सबसे मिल उसका क्रियाकर्म किया, क्रियाके उपरान्त सब बंधुजन अपने २ घरको गये और वह शारदा विधवा हो पिताके घर

ही स्थित रही ॥९॥ उस बालाने कुछ महीने अपने पिताके घरमें बिताये॥१०॥ एक समय नैकध्रुव नामके वृद्ध और अन्धा मुनि शिष्यको पकड़े हुए उस शारदाके घर आया ॥११॥ उस समय उसके स्थान पर कोई न था, उसने उसको साक्षात् अपने प्रारब्धके समान माना ॥ १२ ॥ और कहा कि हे महाभाग ! तुम्हारा शुभागमन हुआ, इस सिंहासनपर विराजो, हे मुनिनाथ ! मैं तुमको प्रणाम करती हूँ, और मुझे आज्ञा दो कि मैं तुम्हारा क्या प्रिय

भृताच्छादनभोज्येनभर्त्रोविरहितासती ॥ निनायकतिचिन्मासान्साबालापितृमंदिरे ॥ १० ॥ एकदानैध्रुवोनामकश्चिद्वृद्धतरो मुनिः ॥ अंधःशिष्यकरग्राहीतन्मंदिरमुपाययौ ॥ ११ ॥ तस्मिन्वृद्धेगृहंप्राप्तेकापियातेषुबंधुषु ॥ साक्षादिवात्मनोदैवंसाबालास मुपागमत् ॥ १२ ॥ स्वागतंतेमहाभागपीठेऽस्मिन्नुपविश्यताम् ॥ नमस्तेमुनिनाथायप्रियंतेकरवाणिकिम् ॥ १३ ॥ इत्युक्त्वाभक्ति मास्थायकृत्वापादावनेजनम् ॥ वीजयित्वापरिश्रांतंतंमुनिंपर्यतोषयत् ॥ १४ ॥ श्रांतंपीठेसमावेश्यकृत्वाभ्यंगंस्वपाणिना ॥ कृतस्नानंचविधिवत्कृतदेवार्चनंमुनिम् ॥ १५ ॥ सुखासनोपविष्टंतंधूपमाल्यानुलेपनैः ॥ अर्चयित्वावरान्नेनभोजयामाससादरम् ॥१६॥ भुक्त्वाचसम्यक्छनैकेस्तृप्तश्चानंदनिर्भरः ॥ चकारांधमुनिस्तस्यैसुप्रीतःपरमाशिषम् ॥ १७॥

करूं ॥ १३ ॥ इस प्रकार कहकर उसने भक्तिपूर्वक उनकी चरणसेवा की, थके हुए उनको पवनकर सन्तुष्ट किया ॥ १४ ॥ और सिंहासपर बिठा अपने हाथसे उबटन किया, इसके उपरान्त स्नान कराया तब मुनिने देवार्चन किया ॥ १५ ॥ और सुखसे बैठे हुए मुनिकी उस शारदाने धूप, दीप, चन्दन, अक्षत और मालासे पूजाकी, इसके पीछे आदर पूर्वक सुन्दर अन्नका भोजन कराया ॥ १६ ॥ इस प्रकार भोजनकर उसकी सेवासे मुनि

बहुत प्रसन्न हुए और प्रसन्न हो उसको आशीर्वाद देने लगे ॥ १७ ॥ कि अपने पतिके साथ बहुत दिनों तक सुख भोग और सुन्दर गुणसंपन्न पुत्र प्राप्तकर तथा निर्मल कीर्ति पाय अन्तमें सद्गति पावे गी और देवता भी तुझपर प्रसन्न रहेगें ॥ १८ ॥ इस प्रकार अन्धे मुनिने जब उसको आशीर्वाद दिया तब वह बाला बड़ा आश्चर्य करने लगी और हाथ जोड़कर बोली ॥ १९ ॥ कि हे ब्रह्मन् ! तुम्हारा वचन कभी झूंठा नहीं हो सकता सो मुझ मन्दभागिनीमें किस प्रकार फल देगा ॥ २० ॥ जिस प्रकार ऊषरमें वृष्टि व्यर्थ होती है इसीप्रकार मुझ मन्द भाग्यामें आपका आशीर्वाद व्यर्थ हुआ

विहृत्यभर्त्रासहसाचतेनलब्ध्वासुतंसर्वगुणैर्वरिष्ठम् ॥ कीर्तिंचलोकेमहतीमवाप्यप्रसादयोग्याभवदेवतानाम् ॥ १८ ॥ इत्यभिव्याहृतंतेनमुनिनागतचक्षुषा ॥ निशम्यविस्मिताबालाप्रत्युवाचकृतांजलिः ॥ १९ ॥ ब्रह्मंस्त्वद्वचनंसत्यंकदाचिन्नमृषाभवेत् ॥ तदेतन्मंदभाग्यायाःकथमेतत्फलिष्यति ॥ २० ॥ ऊष्यामिवचसद्वृष्टिःशुनक्यामिवसत्क्रिया ॥ विफलामंदभाग्यायामाशीर्ब्रह्मविदामपि ॥ २१ ॥ सैषाहंविधवाब्रह्मन्दुष्कर्मफलभागिनी ॥ त्वदाशीर्वचनस्यास्यकथंयास्यामिपात्रताम् ॥ २२ ॥ ॥ मुनिरुवाच ॥ ॥ त्वामनालक्ष्ययत्प्रोक्तमंधेनापिमयाऽधुना ॥ तदेतत्साधयिष्यामिकुरुमच्छासनंशुभे ॥ २३ ॥ उमामहेश्वरंनामव्रतंयदिचरिष्यसि ॥ तेनव्रतानुभावेनसद्यःश्रेयोनुभोक्ष्यसे ॥ २४ ॥ शारदोवाच ॥ त्वयोपदिष्टंयत्नेनचारिष्याम्यपिदुश्चरम् ॥ तद्व्रतंब्रूहिमेब्रह्मन्विधानंवदविस्तरात् ॥२५॥

॥ २१ ॥ क्योंकि दुष्कर्मका फल भोगनेवाली मैं विधवा हूँ, फिर तुम्हारे इस आशीर्वादके पाने योग्य मैं किसप्रकार हो सकती हूँ ॥ २२ ॥ यह सुन मुनि बोले, हे शुभे ! इस समय मुझ अन्धेने तुझको विना देखे जो मैंने आशीर्वाद दिया सो इसका साधन करूँगा, अब मैं जैसे कहूँ सो कर॥२३॥ उमा महेश्वरका एक व्रत है यदि तू उसका आचरण करेगी तो उसके प्रभावसे शीघ्रही कल्याणकी भागिनी बनेगी ॥ २४ ॥ शारदा बोली, हे

ब्रह्मन् ! तुम जिस दुष्कर व्रतका उपदेश करोगे उसको मैं यत्नपूर्वक करूँगी उस उमामहेश्वर व्रतका आप विस्तारपूर्वक विधान कहिये ॥ २५ ॥ मुनि बोले, कि चैत्र वा मार्गशीर्षके शुक्लपक्षके शुभदिनमें गुरुकी आज्ञानुसार इस व्रतका आरंभ करे ॥ २६ ॥ अष्टमी, चतुर्दशी और दोनों पर्वोंमें विधि पूर्वक संकल्प कर प्रातःकाल स्नान करे ॥ २७ ॥ फिर अपने घर जा पितर और देवता आदिकोंका तर्पण करे और एक सुन्दर मण्डप रचै, वितान आदि लगा कर उसकी शोभा बढ़ावे ॥ २८ ॥ पक्के फल, पुष्प आदि तोरणसे अलंकृत कर बीचमें पाँच रंगोंसे कमल बनावे ॥ २९ ॥

॥ मुनिरुवाच ॥ ॥ चैत्रेवामार्गशीर्षेवाशुक्लपक्षेशुभेदिने ॥ व्रतारंभंप्रकुर्वीतयथावद्गुर्वनुज्ञया ॥ २६ ॥ अष्टम्यांचचतुर्दश्यामुभयोरपिपर्वणोः ॥ संकल्पंविधिवत्कृत्वाप्रातःस्नानंसमाचरेत् ॥ २७ ॥ सन्तर्प्यपितृदेवादीन्गत्वास्वभवनंप्रति ॥ मंडपंरचयेद्दिव्यंवितानाद्यैरलंकृतम् ॥ २८ ॥ फलपल्लवपुष्पाद्यैस्तोरणैश्चसमन्वितम् ॥ पंचवर्णैश्चतन्मध्येरजोभिःपद्ममुद्धरेत् ॥ २९ ॥ चतुर्दशदलैर्बाह्येद्वाविंशद्भिस्तदंतरे ॥ तदंतरेषोडशभिरष्टभिश्चतदंतरे ॥ ३० ॥ एवंपद्मंसमुद्धृत्यपंचवर्णैर्मनोरमम् ॥ चतुरस्रंततःकुर्यादंतर्वर्तुलमुत्तमम् ॥ ३१ ॥ व्रीहितंडुलराशिंचतन्मध्येचसकूर्चकम् ॥ कूर्चोपरिसुसंस्थाप्यकलशंवारिपूरितम् ॥ ३२ ॥ कलशोपरिविन्यस्यवस्त्रंस्वर्णमनुत्तमम् ॥ तस्योपरिष्टात्सौवर्ण्यौप्रतिमेशिवयोःशुभे ॥ ३३ ॥

उस कमलके बाहर चौदह दल, भीतर बाईस दल उसके भीतर सोलह दल और उसके भीतर आठ कमल दल बनावे ॥ ३० ॥ इस प्रकार पाँच रंग युक्त कमलदलको रचकर उसके बाहर एक वृत्त बनावे, उसमें चतुरस्र चतुष्कोण करे ॥ ३१ ॥ उसको व्रीहि और चावलोंसे पूर्णकर बीचमें कुशाका कूर्च बना कर स्थापन करे, और कूर्चके ऊपर जलसे भरा कलश रक्खे ॥ ३२ ॥ कलशके ऊपर सुवर्णका पात्र स्थापन करे उस पात्रके ऊपर शंकर और

माता पार्वतीजीकी सुवर्णकी सुन्दर मूर्ति स्थापन करे ॥ ३३ ॥ फिर अपने विभवके अनुसार भक्तिपूर्वक उनका पूजन करे, पंचामृतसे शंकर पार्वतीको स्नान करावे फिर शुद्ध जलसे स्नान करावे ॥ ३४ ॥ और ग्यारह पाठ रुद्राध्यायके करे तथा पंचाक्षर मन्त्रका आठ सौ जप करे फिर सिंहासनपर स्थापन कर अर्चन करे ॥ ३५ ॥ और स्वयं स्वेतवस्त्र धारे शुद्धासनपर बैठ आसन शुद्धिकर तीन प्राणायाम करे ॥ ३६ ॥ इसके उपरान्त शिवजीके आगे हाथ जोड़ संकल्प करे, कि सैकड़ों जन्मोंमें जो मैंने घोर पाप किये है ॥ ३७ ॥ उन सबके विनाश और सौभाग्य, विजय,

निधायपूजयेद्भक्त्यायथाविभवविस्तरम् ॥ पंचामृतैस्तुसंस्नाप्यतथाशुद्धोदकेनच ॥ ३४ ॥ रुद्रैकादशकंजप्त्वापंचाक्षरशताष्टकम् ॥ अभिमंत्र्यपुनःस्थाप्यपीठमध्येतथार्चयेत् ॥ ३५ ॥ स्वयंशुद्धासनासीनोधौतशुक्लांबरःसुधीः ॥ पीठमामंत्र्यमंत्रेणप्राणायामान्समाचरेत् ॥ ३६ ॥ संकल्पंप्रवदेत्तत्रशिवाग्रेविहितांजलिः ॥ यानिपापानिघोराणिजन्मांतरशतेषुमे ॥३७॥ तेषांसर्वविनाशायशिवपूजांसमारभे ॥ सौभाग्यविजयारोग्यधर्मैश्वर्याभिवृद्धये ॥३८॥ स्वर्गापवर्गसिद्ध्यर्थंकरिष्येशिवपूजनम् ॥ इतिसंकल्पमुच्चार्ययथावत्सुसमाहितः ॥ ॥३९॥ अंगन्यासंततःकृत्वाध्यायेदीशंचपार्वतीम् ॥ कुंदेंदुधवलाकारंनागाभरणभूषितम् ॥४०॥ वरदाभयहस्तंचबिभ्राणंपरशुंमृगम् ॥ सूर्यकोटिप्रतीकाशंजगदानंदकारणम् ॥ ४१ ॥

आरोग्य, धर्म, ऐश्वर्यकी वृद्धिके निमित्त ॥ ३८ ॥ तथा स्वर्ग, और अपवर्ग अर्थात् मुक्तिके अर्थ मैं शिवपार्वतीका पूजन आरम्भ करता हूँ, इस प्रकार विधि पूर्वक संकल्प उच्चारण कर ॥ ३९ ॥ अंगन्यास करे, इसके पीछे शंकर और पार्वतीजीका ध्यान करे कि कुन्द और उज्ज्वल चन्द्रमाके समान आकारवाले, सर्पोंके भूषणसे भूषित ॥ ४० ॥ चारों हाथोंमें बर, अभय, परशु और मृगलिये, कोटिसूर्य्यके समान प्रकाशमान, संसारको आनन्द

देने वाले ॥ ४१ ॥ गंगाजीके जलसे जिनकी जटा पिंग और दीर्घ हो गई हैं, नागोंका मुकुट धारण किये हैं ॥ ४२ ॥ खंडचन्द्रमाके समान जिनके बाजूबन्द और भूषण चमक रहे हैं, सूर्य और चन्द्रमाके समान जिनके नेत्र तथा मस्तकपर नेत्र प्रकाशमान हो रहा है ॥ ४३ ॥ नीलकंठ, चतुर्बाहु हाथीका चर्म धारण किये, रत्नसिंहासनपर आरूढ, अनेक आभषणोंसे शोभित ॥ ४४ ॥ इस प्रकारके महादेव जगत्पति शंकरका मैं ध्यान करता हूँ । अब पार्वतीजीका ध्यान लिखते हैं, दिव्यवस्त्र धारण किये, प्रातःकालके दशहजार सूर्य्यके समान कान्तिवाली, बालवेषा, तन्वंगी, बालचन्द्रमाको

जाह्नवीजलसंपर्कादीर्घपिंगजटाधरम् ॥ उरगेंद्रफणोद्भूतमहामुकुटमंडितम् ॥ ४२ ॥ शीतांशुखंडाविलसत्कोटीरांगदभूषणम् ॥ उन्मीलद्भालनयनंतथासूर्येंदुलोचनम् ॥ ४३ ॥ नीलकंठंचतुर्बाहुंगजेंद्राजिनवाससम् ॥ रत्नसिंहासनारूढंनानाभरणभूषितम् ॥ ४४ ॥ देवींचदिव्यवसनांबालसूर्यायुतद्युतिम् ॥ बालवेषांचतन्वंगींबालशीतांशुशखराम् ॥ ४५ ॥ पाशांकुशवराभीतिंबिभ्रतींचचतुर्भुजाम् ॥ प्रसादसुमुखामंबांलीलारसविहारिणीम् ॥ ४६ ॥ लसत्कुरबकाशोकपुन्नागनवचंपकैः ॥ कृतावतंसामुत्फुल्लमल्लिकोत्कलितालकाम् ॥ ॥ ४७ ॥ कांचीकलापपर्यस्तजघनाभोगशालिनीम् ॥ उदारकिंकिणीश्रेणीनूपुराढ्यपदद्वयाम् ॥ ४८ ॥

मस्तकपर धारण कर रक्खा है जिन्होंने ऐसी ॥ ४५ ॥ पाश, अंकुश, बर और अभय धारण किये हैं, चार भुजावाली, प्रसन्न मुखवाली माता, लीलाके रसमें विहार करनेवाली ॥४६॥ कुरबक, अशोक, पुन्नाग, नवचम्पक इनके फूले हुए नयें कलियों और फूलोंके धारण किये हैं करण फूल जिन्होंने ऐसी॥४७॥तगड़ीके धारण करनेसे जिनकी चारों ओरसे शोभा हो रही है, बडी तगड़ी और नूपुरसे जिनके चरणोंकी शोभा हो रही है॥४८॥

दोनों गाल जिनके रत्न मंडलसे शोभित हो रहे हैं, दांतोंकी पंक्तियोंकी किरणें बिंबाफलके समान लाल होठोंमेंसे निकल रही हैं ॥ ४९ ॥ बहुमूल्य रत्नोंके हारोंसे शोभायमान हो रही है ग्रीवा जिनकी ऐसी, सुन्दर और नवीन माणिक्यसे कंकण और बाजबन्द जिनके शोभायमान होरहे हैं ॥५०॥ रत्न, अंकुश और रत्नोंकी माला धारण किये, उन्नत और पुष्टहुए दोनों कुचोंसे निन्दा करदी है कमल कलीकी जिन्होंने ऐसी, लीलासे चलायमान और बडे नेत्रोंवाली, भक्तोंके ऊपर कृपाकरनेवाली ऐसी पार्वतीजीका मैं ध्यान करताहूँ ॥ ५१ ॥ इसप्रकार हृदयकमलमें जगत्‌के माता पिता शिव

गंडमंडलसंसक्तरत्नकुंडलशोभिताम् ॥ बिंबाधरानरक्तांशुलसद्दशनकुड्मलाम् ॥ ४९ ॥ महार्हरत्नग्रैवेयतारहारविराजिताम् ॥ नवमाणिक्यरुचिरकंकणांगदमुद्रिकाम् ॥ ५० ॥ रत्नांकुशपरीधानांरत्नमाल्यानुलेपनाम् ॥ उद्यत्पीनकुचद्वंद्वनिंदितांभोजकुड्मलाम् ॥ लीलालोलासितापांगींभक्तानुग्रहदायिनीम् ॥ ५१ ॥ एवंध्यात्वातुहृत्पद्मेजगतःपितरौशिवौ ॥ जप्त्वातदात्मकंमंत्रंतदंतेबहिरर्चयेत् ॥ ५२ ॥ आवाह्यप्रतिमायुग्मेकल्पयेदासनादिकम् ॥ अर्घ्यंचदद्याच्छिवयोर्मंत्रेणानेनमंत्रवित् ॥ ५३ ॥ नमस्तेपार्वतीनाथत्रैलोक्यवरदर्षभ ॥ त्र्यंबकेशमहादेवगृहाणार्घ्यंनमोस्तुते ॥ ५४ ॥ नमस्तेदेवदेवेशिप्रपन्नभयहारिणि ॥ अंबिकेवरदेदेविगृहाणार्घ्यंशिवप्रिये ॥ ५५ ॥ इतित्रिवारमुच्चार्यदद्यादर्घ्यंसमाहितः ॥ गन्धपुष्पाक्षतान्सम्यग्धूपदीपान्प्रकल्पयेत् ॥ ५६ ॥

पार्वतीका ध्यान और उनके मन्त्रका जप करनेके उपरान्त बाहर अर्चन करे ॥५२॥ शंकर और पार्वती दोनोंका आवाहन कर आसन आदिविधान करें ॥५३॥ और नमस्ते पार्वतीनाथ त्रैलोक्यवरदर्षभ ! इस मंत्रसे शिवपार्वतीको अर्घ्यप्रदान करे ॥ हे अम्बके ! हे ईश ! हे महादेव ! इस अर्घ्यको ग्रहण करो मैं तुमको प्रणाम करता हूँ ॥ ५४ ॥ हे देवदेवेशि ! आये हुए भयको हरनेवाली हे अम्बिके ! हेवरदे ! हे देवि ! हे शिवप्रिये !

इस मेरे अर्घ्यको ग्रहण करो, ऐसे तीनवार उच्चारण कर समाहित चित्तहो अर्घ्य प्रदान करै गन्ध पुष्प, अक्षत, धूपदीप विधिपूर्वक करे ॥५५॥५६॥ दूध और और घीसे युक्त नैवेद्यका भोग लगावे और मूलमन्त्रसे हविके द्वारा एकसौ आठ आहुति दे॥५७॥नैवेद्य और धूप नीराजन आदिका उत्सादन करे फिर ताम्बूल निवेदन कर विधिपूर्वक नमस्कार करे ॥ ५८ ॥ तदनन्तर षोडशोपचारसे एक सपत्नीक ब्राह्मणका पूजनकर उन दोनोंको भोजन करावै इसप्रकार सायंकालकी पूजा कर विप्रसे अनुमोदित हो ॥ ५९ ॥ रात्रिमें वाणीको रोक अर्थात् मौन साध कर दूधसे बनी हुई हविका भोजन करे

नैवेद्यंपायसान्नेनघृताक्तंपरिकल्पयेत् ॥ जुहुयान्मूलमंत्रेणहविरष्टोत्तरंशतम् ॥ ५७ ॥ ततउत्साद्यनैवेद्यंधूपनीराजनादिकम् ॥ कृत्वानिवे द्यतांबूलंनमस्कुर्यात्समाहितः ॥ ५८ ॥ अथाभ्यर्च्योपचारेणभोजयेद्विप्रदंपती ॥ एवंसायंतनींपूजांकृत्वाविप्रानुमोदितः ॥ ५९ ॥ भुंजीतवाग्यतोरात्रौहविष्यंक्षीरभावितम् ॥ एवंसंवत्सरंकुर्याद्व्रतंपक्षद्वयेबुधः ॥ ६० ॥ ततःसंवत्सरेपूर्णेव्रतोद्यापनमाचरेत् ॥ शतरुद्राभिजप्तेनस्नापयेत्प्रतिमेजलैः ॥ ६१ ॥ आगमोक्तेनमंत्रेणसंपूज्यगिरिजांशिवम् ॥ सवस्त्रंससुवर्णंचकलशंप्रतिमान्वितम् ॥६२॥ दत्त्वाचार्यायमहतेसदाचाररतायच ॥ ब्राह्मणान्भोजयेद्भक्त्यायथाशक्त्यभिपूज्यच ॥ ६३ ॥ प्रसाद्यदक्षिणांतेभ्योगोहिरण्यांबरादिकम्॥ भुंजीततदनुज्ञातःसहेष्टजनबंधुभिः ॥ ६४ ॥

इस प्रकार एकवर्ष तक बुद्धिमान् पुरुष दोनों पक्षोंमें शंकर पार्वतीका व्रत करता रहे ॥ ६० ॥ एकवर्ष पूर्ण होजानेपर व्रतधारण कर उद्यापन करे फिर शतरुद्रसे दोनों प्रतिमाओंको जलके द्वारा स्नान करावे ॥ ६१ ॥ और शास्त्रोक्त विधिसे मन्त्रोंके द्वारा शिव पार्वतीका पूजन करे, वस्त्र, सुवर्ण, कलश, प्रतिमा तथा और सब सामग्री ॥ ६२ ॥ सदाचार सम्पन्न विद्वान् आचार्यको निवेदन करे और ब्राह्मणोंको भोजन करावे तथा उनका पूजन

करे, उनको प्रसन्न कर गौ, सुवर्ण, और वस्त्रादिकी दक्षिणा देवे उनसे आज्ञा लेकर स्वयं अपने इष्ट और बन्धुओंके साथ भोजन करे ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ इस प्रकार त्रिलोकीमें विख्यात इस व्रतका जो पुरुष अनुष्ठान करता है वह अपने इक्कीस कुलका उद्धार करता है और इस संसारमें अनेक भोगोंको भोग ॥ ६५ ॥ अन्तमें इन्द्रादि लोकपालोंके स्थानमें विहार कर क्रमसे ब्रह्मलोक और विष्णुलोकमें रमण कर ॥ ६६ ॥ शिवलोकमें सौकल्प तक निवास करता है वहाँ अनेक सुन्दर भोगोंको भोग शिवमें लीन होजाता है ॥ ६७ ॥ हे शारदा ! यह महाव्रत मैंने तुझसे कहा, तू भी

एवंयःकुरुतेभक्त्याव्रतंत्रैलोक्यविश्रुतम् ॥ त्रिःसप्तकुलमुद्धृत्यभुक्त्वाभोगान्यथेप्सितान् ॥६५॥ इंद्रादिलोकपालानांस्थानेषुरमतेध्रुवम् ॥ ब्रह्मलोकेचरमतेविष्णुलोकेचशाश्वते ॥ ६६ ॥ शिवलोकमथप्राप्यतत्रकल्पशतंपुनः ॥ भुक्त्वाभोगान्सुविपुलाञ्छिवमेवप्रपद्यते ॥६७॥ महाव्रतमिदंवक्ष्येत्वमपिश्रद्धयाचर ॥ अत्यंतदुर्लभंवापिलप्स्यसेचमनोरथम् ॥ ६८ ॥ इत्यादिष्टामुनींद्रेणसाबालामुदिताभृशम् ॥ प्रत्यग्रहीत्सुविश्रब्धातद्वाक्यंसुमनोहरम् ॥ ६९ ॥ अथतस्याःसमायाताःपितृमातृसहोदराः ॥ तंमुनिंसुखमासीनंददृशुःकृतभोजनम् ॥ ॥ ७० ॥ सहसागत्यतेसर्वेनमश्चक्रुर्महात्मने ॥ प्रसीदनःप्रसीदेतिगृणंतःपर्यपूजयन् ॥ ७१ ॥ श्रुत्वाचतेतयासाध्व्यापूजितंपरमंमुनिम् ॥ अनुग्रहंव्रतंतस्यैश्रुत्वाहर्षपरंययुः ॥ ७२ ॥

श्रद्धापूर्वक इस व्रतका आचरण कर इस व्रतके आचरण करनेसे तू अत्यन्त दुर्लभ भी मनोरथको पावेगी ॥ ६८ ॥ इस प्रकार अन्धमुनिके उपदेश देनेपर वह बाला बहुत प्रसन्न हुई. और विश्वासपूर्वक उसके मनोहर वचनोंका ग्रहण किया ॥ ६९ ॥ इसी अवसरमें उसके माता, पिता और भाई भी वहाँ आगये भोजन कर सुखपूर्वक बैठेहुए अंधमुनिको देख ॥ ७० ॥ सबने उनको प्रणाम किया ॥ हे मुने ! हमारे ऊपर प्रसन्न होओ, प्रसन्न

प्रसन्न होओ, इस प्रकार उनका पूजन किया, अपनी कन्याके मुखसे उनका वृत्तान्त सुन और भी पूजा की, जब यह सुना कि, अपने अनुग्रहसे इन्हों ने कन्याको व्रतोपदेश किया है तब औरभी प्रसन्न हुए ॥७१॥७२॥ और हाथ जोड मुनिसे बोले ॥ ७३ ॥ हे मुने ! तुम्हारे आगमनमात्रसे ही हम धन्य हुए, हमारा कुल और घर पवित्र हुआ ॥ ७४ ॥ किसी बडे पापकर्मसे यह शारदा नाम हमारी कन्या विधवा होगई है ॥ ७५ ॥ वही यह आज तुम्हारे चरणोंके शरण आई है, घोर और असह्य दुःखसागरसे इसका उद्धार करो ॥ ७६ ॥ और तबतक आप भी हमारे इस घरमें निवास

तेकृतांजलयःसर्वेतमूचुर्मुनिपुंगवम् ॥७३॥ अथधन्यावयंसर्वेतवागमनमात्रतः॥ पावितंनःकुलंसर्वंगृहंचसफलीकृतम् ॥७४॥ इयंचशारदा नामकन्यावैधव्यमागता ॥ केनापिकर्मयोगेनदुर्विलंघ्येनभूयसा ॥७५॥ सैषाद्यतवपादाब्जंप्रपन्नाशरणंसती ॥ इमांसमुद्धरासह्यात्सुघोरा दुःखसागरात् ॥ ७६ ॥ त्वयापितावदत्रैवस्थातव्यंनोगृहांतिके ॥ अस्मद्गृहमठेप्यस्मिन्स्नानपूजाजपोचिते ॥ ७७ ॥ एषाबालापिभगव न्कुर्वतीत्वत्पदार्चनम् ॥ व्रतंत्वत्सन्निधावेवचरिष्यतिमहामुने ॥ ७८ ॥ यावत्समाप्तिमायातिव्रतमस्यास्त्वदंतिके ॥ उषित्वातावदत्रैवकृ तार्थान्कुरुनोगुरो ॥ ७९ ॥ एवमभ्यर्थितः सर्वैस्तस्याभ्रातृजनादिभिः ॥ तथेतिसमुनिश्रेष्ठस्तत्रोवासमठेशुभे ॥ ८० ॥

करो, यहीं भगवद्भजन और पूजन किया करो ॥ ७७ ॥ हे भगवन् ! यह बाला भी तुम्हारी चरणसेवा करती रहेगी, हे महामुने ! जिस व्रतका तुमने उपदेश किया है उसका अनुष्ठान भी करती रहेगी ॥ ७८ ॥ हे गुरो ! जबतक इस बालाका व्रत समाप्त हो तबतक आप यहाँ रहकर ही हमको कृतार्थ करो ॥ ७९ ॥ इस प्रकार उसके भाई और पुरवासियोंके बारम्बार कहने पर वे अन्धमुनि उसीके स्थानपर निवास करने

लगे ॥ ८० ॥ और वह बाला भी उनके उपदेश कियेहुए मार्गसे किसी सुन्दर दिवस और मुहूर्त्तमें शिव पार्वतीका व्रत करने लगी ॥ ८१ ॥ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखण्डे पंडितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां उमामहेश्वरव्रताचरणं नामाष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ अथ एकोनविंशोऽध्यायः ॥ ॥ १९ ॥ इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले, हे मुनीश्वरो ! इसप्रकार गुरुके निकट नियमपूर्वक व्रताचरण करते उसको एकवर्ष बीता ॥ १ ॥ एक वर्ष पूर्ण होनेपर पिताके घरही उसने विधिपूर्वक उद्यापन किया और ब्राह्मणोंको श्रद्धापूर्वक भोजन भी कराया ॥ २ ॥ माता पितासे अभि

सापितेनोपादिष्टेनमार्गेणगिरिजाशिवौ ॥ अर्चयंतीव्रतंसम्यक्चचारविमलासती ॥ ८१ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेउमामहेश्वरव्रताचरणंनामाष्टादशोध्यायः ॥ १८ ॥ सूतउवाच ॥ एवंमहाव्रतंतस्याश्चरंत्यागुरुसन्निधौ ॥ संवत्सरोव्यतीयायनियमासक्तचेतसः ॥ १ ॥ संवत्सरांतेसाबालातत्रैवपितृमंदिरे ॥ चकारोद्यापनंसम्यग्विप्रभोजनपूर्वकम् ॥ २ ॥ दत्त्वाचदक्षिणांतेभ्योब्राह्मणेभ्योयथार्हतः ॥ विसृज्यतान्नमस्कृत्यपितृभ्यामभिनंदिता ॥ ३ ॥ उपोषितास्वयंतस्मिन्दिनेनियममाश्रिता ॥ जजापपरमंमंत्रमुपदिष्टंमहात्मना ॥ ४ ॥ अथप्रदोषसमयेप्राप्तेसंपूज्यशंकरम्॥ तस्मिन्गृहांतिकमठेगुरोस्तस्यचसन्निधौ ॥ ५ ॥ जपार्चनरतासाध्वीध्यायंतीपरमेश्वरम् ॥ तस्मिञ्जागरणेरात्रौउपविष्टाशिवांतिके ॥ ६ ॥ तस्यांरात्रौतयासार्धंसमुनिर्जगदंबिकाम् ॥ जपध्यानतपोभिश्चतोषयामासपार्वतीम् ॥ ७ ॥

नन्दित हो उसने यथायोग्य दक्षिणादे नमस्कार कर विसर्जन किया ॥ ३ ॥ और उस दिनभी व्रती रही तथा महात्माके उपदेश किये मन्त्रका नियम पूर्वक जप किया ॥ ४ ॥ प्रदोष (सायंकाल) समय प्राप्त होनेपर शंकरका पूजन कर घरके निकट मठमें गुरुके साथ ॥ ५ ॥ जप तथा पूजन कर परमेश्वरका ध्यान करने लगी, उस रात्रिमें उसने जागरण किया, गुरु समेत शंकरके निकट बैठी रही ॥ ६ ॥ उस रात्रिमें शारदाके साथ वह मुनी

भी जप, ध्यान और तपसे जगदम्बा पार्वतीको प्रसन्न करनेलगे ॥ ७ ॥ शारदाके व्रतभक्ति और मुनिके तप, योग तथा समाधिसे जगत्की माता भवानी प्रसन्न होगई और सुन्दर मूर्ति धारण कर प्रकट हुई ॥ ८ ॥ जिस समय जगदम्बा पार्वती प्रकट हुई उसी समय क्षणमात्रमें अन्धमुनिके दोनों नेत्र खुल गये ॥ ९ ॥ प्रकट हुई जगत्की माता पार्वतीको अपने सम्मुख स्थित देख उनके चरणोंमें मुनि और कन्याने प्रणाम किया ॥ १० ॥ और स्तुति की, भक्तिभावसे लेते हुए, निर्मल है आशय जिनका ऐसे, आनन्दके पसीनेसे भीग गये हैं, सब शरीर जिनके ऐसे उन दोनोंको उठा

तस्याश्चभक्त्याव्रतभावितायामुनेस्तपोयोगसमाधिनाच ॥ तुष्टाभवानीजगदेकमाताप्रादुर्बभूवाकृतसांद्रमूर्तिः ॥ ८ ॥ प्रादुर्भूतातदागौरीतयोरग्रेजगन्मयी ॥ अंधोपितत्क्षणादेवमुनिःप्रापदृशोर्द्वयम् ॥ ९ ॥ तांवीक्ष्यजगतांधात्रीमाविर्भूतांपुरः स्थिताम् ॥ निपेततुस्तत्पदयोः समुनिः साच कन्यका ॥ १० ॥ तौभक्तिभावोच्छ्वसितामलाशयावानंदबाष्पोक्षितसर्वगात्रौ ॥ उत्थाप्यदेवीकृपयापरिप्लुताप्रेम्णाबभाषेमृदुवल्गुभाषिणी ॥ ११ ॥प्रीतास्मितेमुनिश्रेष्ठवत्सेप्रीतास्मितेऽनघे ॥ किंवाददाम्यभिमतं देवानामपिदुर्लभम् ॥ १२ ॥ मुनिरुवाच ॥ ॥ एषातुशारदानामकन्यातुगतभर्तृका ॥ मयाप्रतिश्रुतंचास्यैतुष्टेनगतचक्षुषा ॥ १३ ॥ सहभर्त्राचिरंकालंविहृत्यसुतमुत्तमम् ॥ लभस्वेतिमयाप्रोक्तंसत्यंकुरुनमोस्तुते ॥ १४ ॥

कर पार्वतीजी कृपा पूर्वक प्रेमयुक्त हो, मनोहर वाणीसे बोलीं ॥ ११ ॥ हे मुने ! और हे पुत्रि ! मैं तुम दोनोंपर प्रसन्न हूँ, जो देवताओंको भी दुर्लभ है ऐसा वर मैं तुमको दूंगी, जो तुम्हारे मनमें हो सो माँगो ॥ १२ ॥ मुनि बोले कि, शारदा नाम जो यह कन्या है, इसका पति मृतक होगया है, नेत्रहीन मैंने प्रसन्न होकर इससे कहा कि, ॥ १३ ॥ तू पतिके साथ चिरकाल तक विहार कर पुत्र प्राप्त करेगी, सो जिस प्रकार मेरा कथन सत्य

हो वही उपाय करो, मैं तुमको बारंबार प्रणाम करता हूँ ॥ १४ ॥ यह सुन पार्वती बोलीं कि, पूर्वजन्ममें यह बाला द्राविड़ देशके एक ब्राह्मणकी दूसरी पत्नी थी और भामिनी इसका नाम था ॥ १५ ॥ इसने अपनी मधुरवाणी आदि गुण और रूपकी सुन्दरता आदि छलसे पतिको अपने वशीभूत कर लिया था ॥ १६ ॥ वह पति भी इसमें आसक्त और मोहसे यन्त्रित हो उस पतिव्रता ज्येष्ठपत्नीके निकट कभी न जाता ॥ १७ ॥ पतिके निकट न आनेसे वह ज्येष्ठ पत्नी पुत्र प्राप्त न करसकी और सदा शोकसे सन्तप्त रहती, इस प्रकार कुछ समयके उपरान्त शोकाकुल हो मृत्युको प्राप्त

देव्युवाच ॥ ॥ एषापूर्वभवेबालाद्राविडस्यद्विजन्मनः ॥ आसीद्द्वितीयादयिताभामिनीनामविश्रुता ॥ १५ ॥ साभर्तृप्रेयसीनित्यंरूपमाधुर्यपेशला ॥ भर्तारंवशमानिन्येरूपवश्यादिकैतवैः ॥ १६ ॥ अस्यांचासक्तहृदयःसविप्रोमोहयंत्रितः ॥ कदाचिदपिनैवागाज्ज्येष्ठपत्नींपतिव्रताम् ॥ १७ ॥ अनभ्यागमनाद्भर्तुःसानारीपुत्रवर्जिता ॥ सदाशोकेनसंतप्ताकालेननिधनंगता ॥ १८ ॥ अस्यागृहसमीपस्थोयःकश्चिद्ब्राह्मणोयुवा ॥ इमांवीक्ष्याथचार्वंगींकामार्तःकरमग्रहीत् ॥ १९ ॥ अनयारोषताम्राक्ष्यासविप्रस्तुनिवारितः ॥ इमांस्मरन्दिवानक्तंनिधनंप्रत्यपद्यत ॥ २० ॥ एषासंमोह्यभर्तारंज्येष्ठपत्न्यांपराङ्मुखम् ॥ चकारतेनपापेनभवेस्मिन्विधवाभवत् ॥ २१ ॥ याःकुर्वंतिस्त्रियोलोकेजायापत्योश्चविप्रियम् ॥ तासांकौमारवैधव्यमेकविंशतिजन्मसु ॥ २२ ॥

हुई ॥ १८ ॥ इसके घरके निकट एक युवा ब्राह्मण रहता था, सुन्दर अंगवालीने उसको देख और कामसे व्याकुल हो एकान्तमें उसका हाथ पकड़ा ॥ १९ ॥ तब उसने क्रोधकर अपना हाथ छुटा उसको निवारण किया, किन्तु वह इसका रात दिन स्मरण करते करते ही मृत्युको प्राप्त होगया ॥ २० ॥ इस शारदाने पतिको मोहित कर ज्येष्ठ पत्नीसे प्रीति छुडवा दी, उसी पापसे यह इस जन्ममें विधवा हुई ॥ २१ ॥ इस संसारमें जो स्त्रियें

स्त्री और पतिकी प्रीति छुडवाती हैं, वे इक्कीस जन्म तक कुमारी अवस्थामेंही विधवा होजाती हैं ॥ २२ ॥ किन्तु पूर्वजन्ममें भी इसने मेरी बड़ी पूजा की थी, उसी पुण्यसे इसका सब पाप तभी नष्ट होगया ॥ २३ ॥ और जो ब्राह्मण इसके विरहसे व्याकुल और कामसे मोहित हो मरा था वही इस जन्ममें भी इसका पाणिग्रहण कर मृतक हुआ ॥ २४ ॥ इसके पूर्व जन्मका पति पांड्यदेशमें उत्तम ब्राह्मणके कुलमें उत्पन्न हुआ है तथा उसके स्त्री पुत्र आदि सब कुटुम्ब है ॥ २५ ॥ उसी पतिके साथ प्रतिरात्रिको यह स्वप्नमें संग किया करे गी और वह स्वप्नका सुख जागरणसे भी श्रेष्ठ होगा

यदेतयापूर्वभवेमत्पूजामहतीकृता ॥ तेनपुण्येनतत्पापंनष्टंसर्वंतदैवहि ॥ २३ ॥ योविप्रोविरहार्तःसन्मृतःकामविमोहितः ॥ सोस्याः पाणिग्रहंकृत्वाभवेस्मिन्निधनंगतः ॥ २४ ॥ प्राग्जन्मपतिरेतस्याःपांड्यराष्ट्रेषु सोधुना ॥ जातोविप्रवरःश्रीमान्सदारःसपरिच्छदः ॥ २५ ॥ तेनभर्त्राप्रतिनिशंसैषाप्रेम्णाभिसंगता ॥ स्वप्नेरतिसुखंयातिश्रेष्ठंजागरणादपि ॥ २६ ॥ षष्ट्युत्तरत्रिशतयोजनदूरसंस्थोदेशादितोद्विजवरःसचकर्मगत्या ॥ एनांवधूंप्रतिनिशंमनसोभिरामांस्वप्नेषुपश्यतिचिरंरतिमादधानः ॥ २७ ॥ सैषावैस्वप्नसंगत्यापत्युःप्रतिनिशंसती ॥ कालेनलप्स्यतेपुत्रंवेदवेदांगपारगम् ॥ २८ ॥ एतस्यांतनयंजातमात्मनाश्चिरसंगमात् ॥ सोपिविप्रो निशंस्वप्नेद्रक्ष्यतिप्रेमभावितम् ॥ २९ ॥

॥ २६ ॥ वह यहाँसे तीन सौ छः योजन दूर है किन्तु कर्मकी गतिसे मनकी प्यारी इस अपनी बधूके निकट नित्य रात्रिको स्वप्नमें मेरे प्रसादसे आवेगा और चिरकाल तक प्रेम भोगेगा ॥२७॥ यह शारदा भी स्वप्नमें पतिके साथ सदा संगकर कुछ समयके उपरान्त वेदवेदांगका पारंगम पुत्र प्राप्त करेगी ॥ २८ ॥ इसमें पुत्र उत्पन्न होनेके उपरांत उसको भी विश्वास होजायगा कि मेरे चिरकालके संगमसे यह पुत्र उत्पन्न हुआ है, और प्रेमासक्त

हो वह इसको देखेगा ॥ २९ ॥ हे महामुने ! पूर्वजन्ममें इसने मेरी आराधना की थी, इसकारण इसीको वर देनेके निमित्त इस समयमें प्रकट हुई हूँ ॥ ३० ॥ इतनी कथा सुनाय फिर सूतजी बोले कि इसप्रकार देवीजी उस बालासे बोलीं कि हे पुत्रि ! हे महाभागे ! मेरा वचन सुन ॥ ३१ ॥ जब कभी किसी देशमें भी तू अपने स्वप्नके पतिको देखेगी तभी पहिचान लेगी ॥ ३२ ॥ और स्वप्नमें मिलीहुई तुझको जब वह तेरा पति देखेगा तब वहभी तुझको पहिचान लेगा और परस्पर तुम दोनोंका आलाप होगा ॥ ३३ ॥ उस समय हे भद्रे ! तू अपने स्वप्नके संगमसे उत्पन्न हुए बहु

अनयाराधितापूर्वेभवेसाहंमहामुने ॥ अस्यैववरदानायप्रादुर्भूतास्मिसांप्रतम् ॥ ३० ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ अथोवाचमहादेवी तांबालांप्रतिसादरम् ॥ अयिवत्सेमहाभागेशृणुमेपरमंवचः ॥ ३१ ॥ यदाकदापिभर्त्तारंक्वापिदेशेपुरातनम् ॥ द्रक्ष्यसिस्वप्नदृष्टंग्रा ग्ज्ञास्यसेत्वंविचक्षणा ॥ ३२ ॥ त्वांद्रक्ष्यतिसविप्रोपिसुनयांस्वप्नलक्षणाम् ॥ तदापरस्परालापोयुवयोःसंभविष्यति ॥ ३३ ॥ तदास्वतनयंभद्रेतस्मैदेहिबहुश्रुतम् ॥ फलमस्यव्रतस्यार्घ्यंतस्यहस्तेसमर्पय ॥ ३४ ॥ ततःप्रभृतितस्यैववशेतिष्ठसुमध्यमे ॥ युवयो र्दैहिकःसंगोमाभूत्स्वप्नरताहते ॥ ३५ ॥ कालात्पंचत्वमापन्नेतस्मिन्ब्राह्मणसत्तमे ॥ अग्निंप्रविश्यतेनैवसहयास्यासिमत्पदम् ॥ ३६ ॥ पुत्रस्तेभवितासुभ्रुसर्वलोकमनोरमः ॥ संपदश्चभविष्यंतिप्राप्स्यतेपरमंपदम् ॥ ३७ ॥

श्रुत पुत्रको और अपने व्रतके आधे फलको उसके हाथमें समर्पण करना ॥ ३४ ॥ तबसे फिर तू उसके आधीन रहना, किन्तु स्वप्नके विना तुम्हारा संग कदापि न होगा ॥ ३५ ॥ अपनी आयु भोग जब वह मृतक हो तब तू भी उसके साथ अग्निमें प्रवेश हो सती होना, ऐसा करनेसे तुम दोनो मेरे लोकको पाओगे ॥ ३६ ॥ हे सुभ्रु ! थोडे समयमेंही सब संसारको आनन्द देनेवाला पुत्र उत्पन्न होगा तथा सब सम्पत्तियें मिलेंगी और अन्तमे

मेरा लोक प्राप्त होगा ॥ ३७ ॥ सूतजी बोले कि इसप्रकार उनका वर और मनोरथ पूर्णकर त्रिलोकीकी माता पार्वतीजी उन दोनोंके देखते देखते अन्तर्द्धान होगईं ॥ ३८ ॥ उस शारदानेभी करुणानिधि पार्वतीजीसे वर प्राप्तकर परमानन्द माना और उन गुरुजीकी पूजाकी ॥ ३९ ॥ उस रात्रिके बीतनेपर वह मुनि नेत्र पा और उसके मातापितासे एकान्तमें सब वृत्तान्त कहकर ॥ ४० ॥ शारदा और सबको समझाबुझा और उनके ऊपर अनुग्रहकर प्रातःकाल अपनी इच्छानुसार चलदिये ॥ ४१ ॥ इस प्रकार कुछ दिन बीतने पर प्रतिक्षण रात्रिके स्वप्नमें वह बाला सुखपूर्वक पतिके

सूतउवाच ॥ इत्युक्त्वात्रिजगन्मातादत्त्वातस्मैमनोरथम् ॥ तयोःसंपश्यतोरेवक्षणेनादर्शनंगता ॥३८॥ सापिबालावरंलब्ध्वापार्वत्याःकरुणा निधेः ॥ अवापपरमानंदंपूजयामासतंगुरुम् ॥३९॥ तस्यांरात्र्यांव्यतीतायांसमुनिर्लब्धलोचनः ॥ तस्याःपित्रोश्चतत्सर्वंसहसाचष्टधर्मवित् ॥४०॥ अथसर्वाननुपामंत्र्यशारदांचयशस्विनीम् ॥ विधायानुग्रहंतेषांययौस्वैरगतिर्मुनिः ॥४१॥ एवंदिनेषुगच्छत्सुसाबालाचप्रतिक्षणम् ॥ भर्तुःसमागमंलेभेस्वप्नेसुखविवर्धनम् ॥ ४२ ॥ गौर्याव्रतप्रसादेनशारदाविशदव्रता ॥ दधारगर्भंस्वप्नेपिभर्तुःसंगानुभावतः ॥४३॥ तांश्रुत्वा भर्तृरहितांशारदांगर्भिणींसतीम् ॥ सर्वेधिगितिप्रोचुस्तांजारिणीतिजगुर्जनाः ॥ ४४ ॥ संपरेतस्यतद्भर्तुर्येजातिकुलबांधवाः ॥ तांवार्तांदुः सहांश्रुत्वाययुस्तत्पितृमंदिरम् ॥ ४५ ॥ अथसर्वेसमायाताग्रामवृद्धाश्चपंडिताः ॥ अन्तर्वत्नींसमाहूयशारदांविनताननाम् ॥ ४६ ॥

साथ समागम करने लगी ॥ ४२ ॥ गौरीके प्रसादसे वह शारदा स्वप्नमें पतिके साथ संगम होनेके कारण गर्भधारण करतीहुई ॥ ४३ ॥ जब उसके गर्भकी स्थिति होगई तब सबने कहा कि पतिहीन इसके गर्भकी स्थिति किसप्रकार हुई, यह जारिणी है, इसप्रकार धिक्कार देनेलगे ॥ ४४ ॥ उसके पतिके जो जाति कुल बान्धव थे वे सब इस दुःसह वार्ताको सुन उसके पिताके घरगये ॥ ४५ ॥ तथा और सब ग्रामके वृद्ध और पंडितभी आये

और नीचेकोहै मुख जिसका ऐसी उस गर्भवती शारदाको बुलाकर ॥ ४६ ॥ बडा क्रोध किया और ताडना करनेलगे कि हे जारिणि ! हे दुर्बुद्धि वाली ! यह तैने क्या किया और कोई आसनसे उठकर चलदिये ॥ ४७ ॥ तुम बालाने हमारे कुलमें कलंक लगाया, इस प्रकार तर्जना कर वे सब ग्रामके वृद्ध और विद्वज्जन ॥ ४८ ॥ सलाह करनेलगे कि अब हमको क्या करना चाहिये, उनमेंसे कुछ वृद्ध उसपर दयारहित हो बोले ॥ ४९ ॥ कि यह पापिनी दोनों कुलोंका नाश करनेवाली है, इसलिये इसका शिर मुडा नाक कान काट ॥ ५० ॥ और गोत्रसे त्याग ग्रामके बाहर निकाल

अतर्जयन्सुसंक्रुद्धाःकेचिदासन्पराङ्मुखाः ॥ अयिजारिणिदुर्बुद्धेकिमेतत्तेविचेष्टितम् ॥ ४७ ॥ अस्मत्कुलेसुदुष्कीर्त्तिकृतवत्यसिबालिके ॥ इतिसंतर्जयंतस्तेग्रामवृद्धामनीषिणः ॥ ४८ ॥ सर्वेसंमंत्रयामासुःकिंकुर्मइतिभाषिणः ॥ तत्रोचुःकेचवृद्धास्तांबालांप्रतिविनिर्दयाः ॥ ४९ ॥ एषापापमतिर्बालाकुलद्वयविनाशिनी ॥ कृत्वास्याःकेशवपनंछित्त्वाकर्णौचनासिकाम् ॥ ५० ॥ निवार्यतांबहिर्ग्रामात्परित्यज्यस्वगोत्रतः ॥इतिसर्वेसमालोच्यतांतथाकर्तुमुद्यताः ॥ ५१ ॥ अथांतरिक्षेसंभूतासुश्रुवेवागगोचरा ॥ अनयानकृतंपापंनचैवकुलदूषणम् ॥५२॥ व्रतभंगोनचैतस्यास्सुचरित्रेयमंगना ॥ इतःपरमियंनारीजारिणीतिवदंतिये ॥५३॥ तेषांदोषविमूढानांसद्योजिह्वाविदीर्यते ॥ इत्यंतरिक्षेजनितांवाणींश्रुत्वाऽशरीरिणीम् ॥५४॥ सर्वेप्रजहृषुस्तस्याजननीजनकादयः ॥ ततःससंभ्रमाःसर्वेग्रामवृद्धाःसभाजनाः॥५५॥

देना चाहिये, इस प्रकार सबने विचार वैसा करनेपर उद्यत हुए ॥ ५१ ॥ उसी समय आकाशवाणी हुई कि इसने कुछ पाप नहीं किया और न कुलको दूषितकिया ॥५२॥ तथा इसका पतिव्रत धर्म भी नष्ट नहीं हुआ है, यह बाला परम शुद्ध है, अबसे इसको जो पुरुष जारिणी कहैंगे ॥ ५३ ॥ उन दोषी और मूढात्माओंकी जिह्वा टूटकर नीचे गिरपडेगी, इसप्रकार अशरीरिणी आकाशवाणीको सुन॥५४॥ उनके सब माता पिता आदि प्रसन्नहुए

और ग्रामके सब वृद्ध और सभासद आश्चर्य करनेलगे ॥ ५५ ॥ तथा एक मुहूर्त्ततक डरतेहुए मौन धारणकर नीचेको मुखकिये स्थितरहे, उनमेंसे कितनोंने उस आकाशवाणीका विश्वास न करके कहा कि यह वाणी मिथ्या है ॥ ५६ ॥ इतना वचन उनके मुखसे निकलतेही उनकी जिह्वाके दो टुकडे होगये और क्षणमात्रमें उनके मुखसे कृमि (कीडे) निकलने लगे तब तो उसकी जातिके बन्धु उसकी पूजा करनेलगे ॥ ५७ ॥ सब बान्धव और वृद्ध स्त्रियोंने उसकी प्रशंसा की कि यह बडी साध्वी है, तथा किन्हीं कुलोत्तमोंके नेत्रोंसे आनन्दके आँसू निकलने लगे ॥ ५८ ॥ और किन्हीं

मुहूर्त्तंमौनमालंब्यभीतास्तस्थुरधोमुखाः ॥ तत्रकेचिदविस्वस्तामिथ्यावाणीत्यवादिषुः ॥ ५६ ॥ तेषांजिह्वाद्विधाभिन्नावमसुस्ते कृमीन्क्षणात् ॥ ततःसंपूजयामासुस्तांबालांज्ञातिबांधवाः ॥ ५७ ॥ बांधवाश्चस्त्रियोवृद्धाःशशंसुःसाधुसाध्विति ॥ मुमुचुःकेचिदानंदबाष्पबिंदून्कुलोत्तमाः ॥ ५८ ॥ कुलस्त्रियःप्रमुदितास्तामुद्दिश्यसमाश्वसन् ॥ अथतत्रापरेप्रोचुर्देवोवदतिनानृतम् ॥ ५९ ॥ कथमेषादधौगर्भंशीलान्नचलिताध्रुवम् ॥ इतिसर्वान्सभ्यजनान्संशयाविष्टचेतसः ॥ ६० ॥ विलोक्यवृद्धस्तत्रैकोसर्वज्ञोलोकतत्त्ववित् ॥ मायामयमिदंविश्वंदृश्यतेश्रूयतेचयत् ॥ ६१ ॥ किंभाव्यंकिमभाव्यंवासंसारेस्मिन्क्षणात्मके ॥ अनिरूप्यमभूतार्थंमाययाजायतेस्फुटम् ॥ ६२ ॥

कुटुम्बियोंने प्रसन्न होकर उसको आलिंगन किया, कोई कोई यह विचारने लगे कि देववाणी झूँठी नहीं हो सकती ॥ ५९ ॥ इसने किस प्रकार गर्भ धारण किया और शीलसे च्युत न हुई इसप्रकार सबको सन्देहयुक्त देखा ॥ ६० ॥ सर्व संसारके तत्त्वका जाननेवाला एक वृद्ध बोला कि यह संसार मायामय देखा और सुना जाता है ॥ ६१ ॥ इस क्षणात्मक संसारमें क्या संभव और असंभव है, जो कभी देखा न सुना न हुआ हो वह मायाके बलसे प्रत्यक्ष

दीखताहै ॥ ६२ ॥ माया ईश्वरके वशमें है ईश्वरकी गतिको कौन जानसकताहै यूपकेतु एक राजर्षिका वीर्य जलमें गिरा ॥६३॥ उस वीर्ययुक्त जलको पीकर वेश्याने गर्भधारणकिया, विभांडकमुनिका वीर्य जलकेसाथ पीनेसे हारिणी ॥६४॥ गार्भिणी हुई और ऋष्यशृंगपुत्रको उत्पन्नकिया, सुराष्ट्र राजाका हाथ स्पर्श करतेही हारिणी ॥ ६५ ॥ क्षणमात्रमें गार्भिणीहुई और बडे तपस्वी पुत्रको उत्पन्न किया, वेदव्यासजीकी माता सत्यवती मच्छीके गर्भसे उत्पन्न हुई ॥ ६६ ॥ इसीप्रकार महिषीके गर्भसे महिषासुर उत्पन्न हुआ तथा पहिले अनेक स्त्रियें करुणासे गर्भिणी हुईं ॥ ६७ ॥ इसीप्रकार वसुदेवके

ईश्वरस्यवशेमायातस्यकोवेदचेष्टितम् ॥ यूपकेतोश्चराजर्षेःशुक्रंनिपातितंजले ॥ ६३ ॥ सशुक्रंतज्जलंपीत्वावेश्यागर्भंदधौकिल ॥ मुनेर्विभांडकस्यापिशुक्रंपीत्वासहांभसा ॥ ६४ ॥ हरिणीगार्भिणीभूत्वाऋष्यशृंगमसूयत ॥ सुराष्ट्रस्यतथाराज्ञःकरंस्पृष्ट्वामृगांगना ॥ ६५ ॥ तत्क्षणाद्गर्भिणीभूत्वासुनिंप्रासूततापसम् ॥ तथासत्यवतीनारीसफरीगर्भसंभवा ॥ ६६ ॥ तथैवमहिषीगर्भोजातश्चमहिषासुरः ॥ तथासंतिपुरानार्यःकारुण्याद्गर्भसंभवाः ॥६७॥ तथाहिवसुदेवेनरोहिण्यास्तनयोभवत् ॥ देवतानांमहर्षीणांशापेनचवरेणच ॥६८॥ अयुक्तमपियत्कर्मयुज्यतेनात्रसंशयः॥ सांबस्यजठराज्जातंमुसलंमनिशापतः॥६९॥ युवनाश्वस्यगर्भोभून्मुनीनांमंत्रगौरवात्॥ नूनमेषापिकल्याणीमहर्षेःपादसेवनात् ॥७०॥ महाव्रतानुभावाच्चधत्तेगर्भमनिंदिता ॥ अस्मिन्नर्थेरहस्येनांसत्यंपृच्छंतुयोषितः ॥ ७१ ॥

द्वारा रोहिणीके पुत्र उत्पन्न हुआ, देवता और महर्षियोंके शाप तथा वरसे ॥ ६८ ॥ अयोग्य कर्मभी होजातेहैं, इसमें सन्देह नहीं, देखो साम्बके गर्भसे मुनि शापके कारण मुसल उत्पन्न हुआ ॥ ६९ ॥ मुनियोंके मन्त्रप्रभावसे राजा युवनाश्वके गर्भकी स्थिति हुई, इसीप्रकार यह कल्याणी शारदानेभी महर्षिकी चरण सेवा और ॥ ७० ॥ महाव्रतके प्रभावसे गर्भ धारण किया, इसकारण यह निन्दाके योग्य नहींहै इस विषयमे वृद्धस्त्रियें एकान्तमें इसके

निकट जाकर पूँछे तो ॥ ७१ ॥ सबका सन्देह निवृत्त होजाय, उस वृद्ध पुरुषका वचन मान उससे एकान्तमें जाकर पूँछा ॥ ७२ ॥ तो उसने उन स्त्रियोंसे अपना सब अद्भुत वृत्तान्त कहा, तब सबको विश्वास होगया और उसको परम सती माना। उसकी प्रशंसा कर और प्रसन्न हो सब अपने अपने घरको चले गये ॥७३॥ कुछ दिन बीतनेपर सुन्दर मुहूर्त्तमें उस विमलाशया शारदाके बालसूर्यके समान कान्तिवाला पुत्र उत्पन्न हुआ ॥ ७४ ॥ कमलके समान नेत्रवाला वह उदार लक्षणयुक्त कुमार बाल्यावस्थामेंही बहुत विद्या पढ़गया ॥ ७५ ॥ आठवर्षकी अवस्था प्राप्त होनेपर विधिपूर्वक

ततोनिवृत्तसंदेहोभविश्यतिमहाजनः ॥ ततस्तद्वचनादेवतामपृच्छन्स्त्रियोमिथः ॥ ७२ ॥ ताभ्यःशशंसतत्सर्वंसास्ववृत्तंमहाद्भुतम् ॥ विजानंतस्ततःसर्वेमानयित्वाचतांसतीम् ॥ मोदमानाःप्रशंसंतःप्रययः स्वंस्वमालयम् ॥ ७३ ॥ अथकालेशुभेप्रातेशारदाविमला शया ॥ असूततनयंबालाबालार्कसमतेजसम् ॥ ७४ ॥ सकुमारोमहोदारलक्षणःकमलेक्षणः ॥ अवाप्यमहतींविद्यांबाल्यएवमहामतिः ॥ ॥ ७५ ॥ अथोपनीतोगुरुणाकालेलोकमनोरमः ॥ सशारदेयएवेतिलोकेख्यातिमवापह ॥ ७६ ॥ ऋग्वेदमष्टमेवर्षेनवमेयजुषांगणम् ॥ दशमेसामवेदंचलीलयैवाकरोत्सुधीः ॥ ७७ ॥ अथत्रिलोकमहितेसंप्राप्तेशिवपर्वणि ॥ गोकर्णंप्रययुःसर्वेजनाःसर्वनिवासिनः ॥ ७८ ॥ शारदापिस्वपुत्रेणगोकर्णंप्रययौसती ॥ ७९ ॥ तत्रापश्यत्समायातंसदास्वप्नेषुलक्षितम् ॥ पूर्वजन्मनिभर्त्तारंद्विजबंधुजनावृतम् ॥ ८० ॥

उसके गुरुने यज्ञोपवीत किया और शारदेय इस नामसे वह विख्यात हुआ ॥ ७६ ॥ आठवें वर्षमें ऋग्वेद, नववेंमें यजु, दशवेंमें सामवेद लीलासेही उसने अंगोंसहित पढ़लिये ॥ ७७ ॥ इसी अवसरमें त्रिलोकीमें विख्यात शिवरात्रिका उत्सव प्राप्त हुआ सब स्त्री पुरुष शंकरके दर्शन पूजनके निमित्त गोकर्णको जानेलगे ॥ ७८ ॥ तब शारदाभी अपने पुत्रको ले मातापिताकी आज्ञासे गोकर्णकी यात्राको चली ॥७९॥ गोकर्णमें पहुँचतेही उसने अपने

स्वप्न और पूर्वजन्मके पतिको कुटुम्बी ब्राह्मणोंसमेत आते देखा ॥ ८० ॥ उसको देखतेही प्रेमके मारे सब शरीर पुलकायमान होगया और आँसुओंको रोक उसमें नेत्र लगा देखती रही ॥ ८१ ॥ वह ब्राह्मणभी रूपलक्षणसम्पन्न और स्वप्नमें सदा जिसके साथ संग करता था उस अपनी आत्माको रति देनेवाली शारदा ॥ ८२ ॥ और स्वप्नमें देखेहुए तथा अपनेसे उत्पन्नहुए पुत्रको देख आश्चर्ययुक्त हो, उसके निकट गया ॥ ८३ ॥ और बोला हे भद्रे ! जो कुछ मेरे मनमें है उसमें तुझसे पूँछना चाहता हूँ, इसप्रकार कहकर उसको एकान्तमें लेगया, ॥ ८४ ॥ और कहा कि हे वामारु !

तंदृष्ट्वाप्रेमनिर्विण्णापुलकांकितविग्रहा ॥ निरुद्धबाष्पप्रसरातस्थौतन्न्यस्तलोचना ॥८१॥ सचविप्रोपितांदृष्ट्वारूपलक्षणलक्षिताम् ॥ स्वप्ने सदाभुज्यमानामात्मनोरतिदायिनीम् ॥ ८२ ॥ तंकुमारमपिस्वप्नेदृष्टंचात्मशरीरजम् ॥ विलोक्यविस्मयाविष्टस्तदंतिकमुपाययौ ॥ ८३ ॥ भद्रेत्वांप्रष्टुमिच्छामियत्किंचिन्मनसिस्थितम् ॥ इतिप्रथममाभाष्यरहःस्थानंनिनायताम् ॥ ८४ ॥ कात्वंकथयवामोरुकस्यभार्यासिसुव्रते ॥ कोदेशःकस्यवापुत्रीकिन्नामेत्यब्रवीच्चताम् ॥ ८५ ॥ इतितेनसमापृष्टासानारीबाष्पलोचना ॥ व्याजहारात्मनोवृत्तंबाल्यैवैधव्यकारणम् ॥ ८६ ॥ पुनःपप्रच्छतांबालांपुत्रःकस्यायमुत्तमः ॥ कयाधृतोवाजठरेबालोऽयंचंद्रसन्निभः ॥ ८७ ॥

हे सुव्रते ! तुम कौन हो ? और किसकी स्त्री हो, कौन तुम्हारा देश है, तुम किसकी पुत्री हो, और तुम्हारा नाम क्या है ? ॥८५॥ इस प्रकार उसके पूँछनेपर आँखोंमें आँसूभर उसने बालकपनमें अपने विधवा होनेका कारण कहा ॥ ८६ ॥ फिर उस ब्राह्मणने पूँछा कि यह सुन्दर बालक किसकाहै, चन्द्रमाके समान कान्तिवाले इस बालकको तुम्हारे गर्भमें किसने रक्खा क्योंकि तुमतो बाल्यावस्थामें ही विधवा होगईथी ॥ ८७ ॥

यह सुन शारदा बोली, कि हे स्वामिन् ! सर्व विद्याविशारद यह पुत्र मेरा है और मेरेही नामसे शारदेय, इसका नाम रक्खागयाहै ॥ ८८ ॥ इसप्रकार उसका वचन सुन ब्राह्मण हँसकर बोला कि, हे भामिनि ! बडे कष्टकी बात है ॥ ८९ ॥ कि पाणिग्रहण होतेही तुम्हारा पति मृतक होगया फिर यह पुत्र किस प्रकार उत्पन्न हुआ, इसका कारणभी मुझसे कहो ॥ ९० ॥ इस प्रकार उसकी वाणी सुन शारदा बहुत लज्जित हुई और क्षणमात्र नेत्रोंमें आँसूभर फिर धैर्य धारण कर यह वचनबोली ॥ ९१ ॥ शारदा बोली, अब हास्य करना उचित नहीं, हे महामते ! तुम मुझको जानते हो

शारदोवाच ॥ ॥ एषमेतनयःस्वामिन्सर्वविद्याविशारदः ॥ शारदेयइतिप्रोक्तोममनाम्नैवकल्पितः ॥ ८८ ॥ इतितस्यावचःश्रुत्वाविहस्य ब्राह्मणोत्तमः ॥ प्रोवाचकष्टात्कष्टंहिरचितंतवभामिनि ॥८९॥ पाणिग्रहणमात्रंतेकृत्वाभर्त्तामृतः किल ॥ कथंचायंसुतोजातस्तस्यकारणमुच्यताम् ॥ ९० ॥ इतितेनोदितांवाणीमाकर्ण्यातिविलज्जिता ॥ क्षणंचाश्रुमुखीभूत्वाधैर्यादित्थमभाषत ॥ ९१ ॥ ॥ शारदोवाच ॥ ॥ तदलंपरिहासोक्त्यात्वंमांवेत्सिमहामते ॥ त्वामहंवेद्मिचार्थेऽस्मिन्प्रमाणंमनआवयोः ॥९२॥ इत्युक्त्वासर्वमावेद्यदेव्यादत्तंवरादिकम् ॥ व्रतस्यार्थकुमारंतंददौतस्मैधृतव्रतम् ॥ ९३ ॥ सोपिप्रमुदितोविप्रःकुमारंप्रतिगृह्यतम् ॥ पित्रोरनुमतेनैवतांनिनायनिजालयम् ॥ ९४ ॥ सापिस्थित्वाबहून्मासांस्तस्यविप्रस्यमंदिरे ॥ तस्मिन्कालवशंप्राप्तेप्रविश्याग्निंतमन्वगात् ॥ ९५ ॥

और मैंभी तुमको जानती हूँ, इस विषयमें हमारा तुम्हारा मनही प्रमाण है ॥ ९२ ॥ यह कह देवीके वरका सब वृत्तान्त कहा और व्रतका आधाफल तथा पुत्र उसको समर्पण किया ॥ ९३ ॥ उस ब्राह्मणनेभी प्रसन्नतापूर्वक उसको ग्रहण किया और उसके मातापिताकी अनुमतिसे शारदाकोभी अपने घर लेगया ॥ ९४ ॥ शारदाभी पतिकी सेवा करती कुछ महीनोंतक उसके घर रही, कुछ दिनोंके उपरान्त अपनी आयु भोग उसका पति

मृत्युवश हुआ, उसके साथ शारदाभी सती होकर चलीगई ॥ ९५ ॥ वे दोनों स्त्रीपुरुष दिव्यविमानमें स्थितहो, दिव्यभोगोंको भोग शिवलोकको चल गये ॥ ९६ ॥ इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! यह पवित्र आख्यान मैंने तुमसे वर्णन किया, विधिपूर्वक इसके पढने और सुननेवालों को भोग तथा मोक्षका फल प्राप्तहोता है ॥ ९७ ॥ यह आख्यान आयु, आरोग्य, संपत्ति, धन और धान्यका बढानेवाला है, स्त्रियोंको मंगल, सौभाग्य और सन्तानके सुखका साधन है ॥ ९८ ॥ यह गौरीमहेश्वरका व्रत और आख्यान पुण्यको बढानेवाला और पापसमूहको नष्टकरनेवाला है, जो

ततस्तौदंपतीभूत्वाविमानंदिव्यमास्थितौ ॥ दिव्यभोगसमायुक्तौजग्मतुःशिवमंदिरम् ॥ ९६ ॥ इत्येतत्पुण्यमाख्यानंमयासमनुवर्णितम् ॥ पठतांशृण्वतांसम्यग्भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ ९७ ॥ आयुरारोग्यसंपत्तिधनधान्यविवर्द्धनम् ॥ स्त्रीणांमंगलसौभाग्यसंतानसुखसाधनम् ॥ ९८ ॥ एतन्महाख्यानमघौघनाशनंगौरीमहेशव्रतपुण्यकीर्तनम् ॥ भक्त्यासकृद्यःशृणुयाच्चकीर्त्तयेद्भुक्त्वासभोगान्पदमेति शाश्वतम् ॥ ९९ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेशारदाख्यानंनामैकोनविंशोध्यायः ॥ १९ ॥ छ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ अथरुद्राक्षमाहात्म्यंवर्णयामिसमासतः ॥ सर्वपापक्षयकरंशृण्वतांपठतामपि ॥ १ ॥ अभक्तोवापिभक्तोवानीचोनीचतरोपिवा ॥ रुद्राक्षान्धारयेद्यस्तुमुच्यतेसर्वपातकैः ॥ २ ॥

भक्तिपूर्वक इसको एकबारभी पढता वा सुनताहै वह इस संसारमें अनेक भोगोंको भोग अन्तमें मुक्ति पाता है ॥ ९९ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तर खंडेपंडितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां शारदाख्यानं नामैकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो ! इस समय हम रुद्राक्ष धारणका माहात्म्य संक्षेपसे वर्णन करते हैं, इस माहात्म्यको सुनने वा पढनेवालोंके सर्व पाप क्षय होजाते हैं ॥ १ ॥ भक्त हो वा अभक्त, नीच हो वा नीचसे

भी नीच हो वहभी यदि रुद्राक्ष धारणकरे तो सर्व पातकोंसे छूटजाता है ॥ २ ॥ रुद्राक्षधारणका फल किसीके सदृश नहीं होसकता, तत्त्वके जाननेवाले मुनिजनभी इसको महाव्रत कहते हैं कि ॥ ३ ॥ जो व्रतधारी पुरुष एकहजार रुद्राक्ष धारण करे, उसको सब देवता नमस्कार करते हैं, और वह साक्षात् रुद्रके समान है ॥ ४ ॥ यदि हजार रुद्राक्ष धारण न करसके तो सोलह २ भुजाओंमें, एक शिखामें, बारह बारह हाथोंमें ॥ ५ ॥ बत्तीस कंठमें, चालीस मस्तकमें, एक एक नेत्रोंपर, छः छः कानोंपर और एकसौ आठ दानोंकी माला वक्षःस्थलमें ॥ ६ ॥ जो धारण करताहै वहभी रुद्रके

रुद्राक्षधारणंपुण्यंकेनवासदृशंभवेत् ॥ महाव्रतमिदंप्राहुर्मुनयस्तत्त्वदर्शिनः ॥ ३ ॥ सहस्रंधारयेद्यस्तुरुद्राक्षाणांधृतव्रतः ॥ तंनमंतिसुराः सर्वेयथारुद्रस्तथैवसः ॥ ४ ॥ अभावेतुसहस्रस्यबाह्वोःषोडशषोडश ॥ एकंशिखायांकरयोर्द्वादशद्वादशैवहि ॥ ५ ॥ द्वात्रिंशत्कंठदेशेतुचत्वारिंशत्तुमस्तके ॥ एकैककर्णयोःषट्षड्वक्षस्यष्टोत्तरंशतम् ॥ ६ ॥ योधारयतिरुद्राक्षान्रुद्रवत्सोपिपूज्यते ॥ मुक्ताप्रवालस्फटिकरौप्यवैदूर्यकांचनैः ॥ ७ ॥ समेतान्धारयेद्यस्तुरुद्राक्षान्सशिवोभवेत् ॥ केवलानपिरुद्राक्षान्यथालाभंबिभर्तियः ॥ ८ ॥ तंनस्पृशंतिपापानितमांसीवविभावसुम् ॥ रुद्राक्षमालयाजप्तोमंत्रोनंतफलप्रदः ॥ ९ ॥ अरुद्राक्षोजपःपुंसांतावन्मात्रफलप्रदः ॥ यस्यांगेनास्ति रुद्राक्षएकोपिबहुपुण्यदः ॥ १० ॥

तुल्य पूजनीय होताहै, मोती, मूँगा, स्फटिक, पन्ना, सोना और चाँदी आदिसे मिलेहुए ॥ ७ ॥ रुद्राक्षोंको जो पुरुष धारण करताहै वहभी शिव है और जो अपने लाभके अनुसार केवल रुद्राक्षही धारण करताहै ॥ ८ ॥ उसकोभी इसप्रकार पाप स्पर्श नहीं करसकते जिस प्रकार सूर्य्यको अंधकार, रुद्राक्षकी मालापर मन्त्रजपनेसे अनन्त फलकी प्राप्ति होती है ॥ ९ ॥ विना रुद्राक्षकी मालासे जपकरनेसे जितना करो उतनाही फल मिलताहै, जिसने

शरीरमें बहुत पुण्यका बढानेवाला एक रुद्राक्षभी नहीं है ॥ १० ॥ उसका जन्म निष्फलहै, जैसे त्रिपुंड्ररहित पुरुष मस्तकमें रुद्राक्ष बांध जो पुरुष शिरसे स्नान करता है ॥ ११ ॥ उसको निःसन्देह गंगास्नानका फल प्राप्त होता है, विना जलके जो पुरुष रुद्राक्षका पूजन (धूपआदि) करता है ॥ १२ ॥ उसको निश्चयही शिवलिंगपूजाका फल प्राप्तहोता है, कोई एकमुख, कोई पंचमुख और कोई ग्यारह मुखवाले होते हैं, ॥ १३ ॥ किन्हींके चौदह मुख होते हैं उनकी संसार पूजा करता है, रुद्राक्षकी भक्तिपूर्वक सदा पूजा करनी चाहिये क्योंकि रुद्राक्ष शंकरात्मक होते

तस्यजन्मनिरर्थस्यात्त्रिपुंड्ररहितंयदि ॥ रुद्राक्षंमस्तकेबद्ध्वाशिरःस्नानंकरोतियः ॥ ११ ॥ गंगास्नानफलंतस्यजायतेनात्रसंशयः ॥ रुद्राक्षंपूजयेद्यस्तुविनातोयाभिषेचनम् ॥ १२ ॥ यत्फलंलिंगपूजायास्तदेवाप्नोतिनिश्चितम् ॥ एकवक्त्राःपंचवक्त्राएकादशमुखाःपरे ॥ ॥ १३ ॥ चतुर्दशमुखाःकेचिद्रुद्राक्षालोकपूजिताः ॥ भक्त्यासंपूजितोनित्यंरुद्राक्षःशंकरात्मकः ॥ १४ ॥ दरिद्रंवापिकुरुतेराजराज श्रियान्वितम् ॥ अत्रेदंपुण्यमाख्यानंवर्णयंतिमनीषिणः ॥ १५ ॥ महापापक्षयकरंश्रवणात्कीर्त्तनादपि ॥ राजाकाश्मीरदेशस्यभद्रसे नइतिश्रुतः ॥ १६ ॥ तस्यपुत्रोऽभवद्धीमान्सुधर्मानामवीर्यवान् ॥ तस्यामात्यसुतःकश्चित्तारकोनामसद्गुणः ॥ १७ ॥ बभूवराज पुत्रस्यसखापरमशोभनः ॥ तावुभौपरमस्निग्धौकुमारौरूपसुंदरौ ॥ १८ ॥

हैं ॥ १४ ॥ जो दरिद्रभी इनकी नित्य पूजा सेवाकरे उसको राजराजेश्वर और लक्ष्मीवान् करदेते हैं, इस विषयमें विद्वज्जन यहाँ एक पवित्र इतिहास वर्णन करते हैं ॥ १५ ॥ जिसके सुनने वा कीर्त्तन करनेसे महापापभी नष्ट होजाते हैं, काश्मीरदेशमें भद्रसेननाम एक राजाथा ॥ १६ ॥ उसका सुधर्मा नाम एक बुद्धिमान् पुत्रथा और उसके मंत्रीकाभी सुन्दर गुणसम्पन्न तारक नाम एक पुत्रथा ॥ १७ ॥ वह मन्त्रीसुत राजपुत्रका परम सखाहुआ,

वे दोनों परमसुन्दर कुमार परम प्रीतिसे रहनेलगे ॥ १८ ॥ उन्होंने बाल्यावस्थामेंही क्रीडामात्रसे विद्याभ्यास कर लिया वे दोनों अपने सब अंगोंमें रुद्राक्षका भूषण धारण करतेथे ॥ १९ ॥ और भस्म धारणकर एकसाथ दोनों विचरनेलगे सुवर्ण और रत्नोंके हार, कुंडल, कंकण, केयूर आदि भूषणोंको ॥ २० ॥ त्याग उन्होंने रुद्राक्षकोही धारणकिया, रुद्राक्षकी माला और रुद्राक्षकेही कंकण धारणकिये ॥ २१ ॥ रुद्राक्षका कंठाभरण, रुद्राक्षके कुंडल धारणकिये सुवर्ण और रत्नालंकारको उन्होंने मट्टीके ढेले और पाषाणके समान समझा उनके पिताने बहुत समझाया तोभी रुद्राक्ष धारणकरना नहीं त्यागा ॥ २२ ॥ एक समय

विद्याभ्यासपरौबाल्येसहक्रीडांप्रचक्रतुः ॥ तौसदासर्वगात्रेषुरुद्राक्षकृतभूषणौ ॥ १९ ॥ विचेरतुरुदारांगौसततंभस्मधारिणौ ॥ हारके यूरकटककुंडलादिविभूषणम् ॥ २० ॥ हेमरत्नमयंत्यक्त्वारुद्राक्षान्दधतुश्चतौ ॥ रुद्राक्षमालिनौनित्यंरुद्राक्षकरकंकणौ ॥ २१ ॥ रुद्राक्षकंठाभरणौसदारुद्राक्षकुंडलौ ॥ हेमरत्नाद्यलंकारेलोष्टपाषाणदर्शनौ ॥ बोध्यमानावपिजनैरुद्राक्षान्नव्यमुंचताम् ॥ २२ ॥ तस्यकाश्मीरराजस्यगृहंप्राप्तोयदृच्छया ॥ पराशरोमुनिवरःसाक्षादिवपितामहः ॥ २३ ॥ तमर्चयित्वाविधिवद्राजाधर्मभृतांवरः ॥ पप्रच्छसुखमासीनंत्रिकालज्ञंमहामुनिम् ॥ २४ ॥ ॥ राजोवाच ॥ ॥ भगवन्नेषपुत्रोमेसोपिमंत्रिसुतश्चमे ॥ रुद्राक्षधारिणौनित्यं रत्नाभरणनिःस्पृहौ ॥ २५ ॥ शास्यमानावपिसदारत्नाकल्पपरिग्रहे ॥ विलंघितास्मद्वचनौरुद्राक्षेष्वेवतत्परौ ॥ २६ ॥

अपनी इच्छासे विचरते हुए साक्षात् पितामहके समान मुनिश्रेष्ठ पराशरमुनि उस काश्मीरराजके घर आये ॥ २३ ॥ उनको आता देख धर्मात्मा राजाने उनका विधिपूर्वक अर्चन किया और त्रिकालके जाननेवाले मुनिके सुखपूर्वक बैठजानेपर पूँछा ॥ २४ ॥ राजा बोला हे भगवन् ! यह मेरा और मन्त्रीका पुत्र दोनों सदा रुद्राक्ष धारण करते हैं और रत्नाभरणोंमें इच्छा नहीं रखते ॥ २५ ॥ इनको मैंने बहुत समझाया कि तुम रत्नजटित आभू

षण धारण करो किन्तु मेरे वचनका तिरस्कार कर इन्होंने रुद्राक्षही धारण किये, ॥ २६ ॥ इनको किसीने उपदेशभी नहीं किया फिर स्वाभाविक वृत्ति इन कुमारोंको किसप्रकार हुई ॥ २७ ॥ यह सुन पराशरमुनि: बोले हे राजन् ! सुनो तुम्हारे बुद्धिमान् पुत्र और तुम्हारे मन्त्रीके पुत्रके पूर्वजन्म का आश्चर्यजनक वृत्तान्त वर्णन करता हूँ ॥२८॥ पहिले नन्दिग्राममें कोई एक महानन्दानामसे विख्यात अपने शृंगारसे शोभायमान वेश्या थी ॥२९॥ उसके यहाँ इतनी सम्पत्ति थी कि छत्र, चामर, पूर्णचन्द्रके समान कान्तिमान यान (सवारी) पादुका, पालकी, चौकी आदि सब उत्तम उत्तम

नोपदिष्टाविमौबालौकदाचिदपिकेनचित् ॥ एषास्वाभाविकीवृत्तिःकथमासीत्कुमारयोः ॥ २७ ॥ ॥ पराशरउवाच ॥ ॥ शृणुराजन्प्रवक्ष्यामितवपुत्रस्यधीमतः ॥ यथात्वन्मंत्रिपुत्रस्यप्राग्वृत्तंविस्मयावहम् ॥ २८ ॥ नंदिग्रामेपुराकाचिन्महानंदेतिविश्रुता ॥ बभूववारवनिताशृंगारललिताकृतिः ॥ २९ ॥ छत्रंपूर्णेंदुसंकाशंयानंस्वर्णविराजितम् ॥ चामराणिसुदंडानिपादुकेचहिरण्मये ॥३०॥ अंबराणिविचित्राणिमहार्हाणिद्युमंतिच ॥ चंद्ररश्मिनिभाःशय्याःपर्यंकाश्चहिरण्मयाः ॥३१॥ गावोमहिष्यःशतशोदासाश्चशतशस्तथा ॥ ॥ ३२ ॥ सर्वाभरणदीप्तांग्योदास्यश्चनवयौवनाः ॥ भूषणानिपरार्ध्याणिनवरत्नोज्ज्वलानिच ॥ ३३ ॥ गंधकुंकुमकस्तूरीकर्पूरागुरुलेपनम् ॥ चित्रमाल्यावतंसश्चयथेष्टंमृष्टभोजनम् ॥ ३४ ॥

और विचित्र रत्नोंसे खचित सुवर्णके थे और चन्द्रमाकी किरणोंके समान शय्या और पलंगभी सुवर्णहीके थे ॥ ३० ॥ ३१ ॥ सैकड़ों गौ, महिषी और दास थे ॥ ३२ ॥ नवयौवनयुक्त और सर्वाभरणोंसे भषित सैकड़ों दासीभी थीं, उसके यहाँ बडे मोलके रत्नजटित अनेक भूषण थे ॥ ३३ ॥ गन्ध, कुंकुम, कस्तूरी, कर्पूर, और अगर आदि द्रव्योंके उसके यहाँ ढेर थे, अनेक प्रकारकी माला धारण करती थी, यथेष्ट मिष्टान्नका भोजन उसके

यहाँ होता था ॥ ३४ ॥ अनेक प्रकारके विचित्र वितान और नानाप्रकारके धान्योंसे उसका घर पूर्ण रहता था, हजारों रत्न और करोड़ोंका धन उसके यहाँ था ॥ ३५ ॥ कामविहारिणी वह वेश्या इसप्रकारके ऐश्वर्यसे सम्पन्न थी, किन्तु शंकरका पूजन नित्य करती और सदा सत्य बोलती थी ॥ ३६ ॥ शिवकथा और शिवनाममें उसकी सदा प्रीति रहती तथा उन्हींकी भक्ति पूजन आदि करती, रातदिन उसको यही काम रहता ॥ ३७ ॥ विनोदके लिये उसने अपनी नाट्यशालामें रुद्राक्षसे भूषित एक मर्कट और एक कुक्कुट पाल रक्खे थे ॥ ३८ ॥ करताल और गीतसे उनको सदा नचाती जब वे नाचते

नानाचित्रवितानाढ्यंनानाधान्यमयंगृहम् ॥ बहुरत्नसहस्राढ्यंकोटिसंख्याधिकंधनम् ॥ ३५ ॥ एवंविभवसंपन्नावेश्याकामविहारिणी ॥ शिवपूजारतानित्यंसत्यधर्मपरायणा ॥ ३६ ॥ सदाशिवकथासक्ताशिवनामकथोत्सुका ॥ शिवभक्तांघ्र्यवनताशिवभक्तिरतानिशम् ॥ ३७ ॥ विनोदहेतोःसावेश्यानाट्यमंडपमध्यतः ॥ रुद्राक्षैर्भूषयित्वैकंमर्कटंचैवकुक्कुटम् ॥ ३८ ॥ करतालैश्चगीतैश्चसदानर्तयतिस्वयम् ॥ पुनश्चविहसंत्युच्चैःसखीभिःपरिवारिता ॥ ३९ ॥ रुद्राक्षैःकृतकेयूरकर्णाभरणभूषणः ॥ मर्कटःशिक्षयातस्याःसदानृत्यतिबालवत् ॥ ४० ॥ शिखायांबद्धरुद्राक्षःकुक्कुटःकपिनासह ॥ चिरंनृत्यतिनृत्यज्ञःपश्यतांचित्रमावहन् ॥ ४१ ॥ एकदाभवनंतस्याःकश्चिद्वैश्यःशिवव्रती ॥ आजगाम सरुद्राक्षस्त्रिपुंड्रीनिर्ममःकृती ॥ ४२ ॥

तब आप सखियोंसमेत हास्य करती ॥ ३९ ॥ रुद्राक्षके केयूर और रुद्राक्षकेही कुण्डल पहिना रक्खे थे, उसकी शिक्षासे मर्कट सदा बालकके समान नृत्य करता ॥ ४० ॥ कुक्कुटकी शिखामें रुद्राक्ष बँधा था वहभी मर्कटके साथ सदा नृत्य करता था, उनका नृत्य देखनेवालोंको बड़ा आश्चर्य होता था ॥ ४१ ॥ एक समय उस वेश्याके घर कोई एक शिवभक्त वैश्य आया, वह रुद्राक्ष और त्रिपुण्ड्र धारण किये था और उसको संसारका मोहभी

न था ॥ ४२ ॥ उसके सब शरीरमें भस्म लगी थी और हाथमें कंकण था उसमें बहुत रत्न जड़े थे प्रकाशमान तरुण सूर्यके समान उसकी कान्ति थी ॥ ४३ ॥ उसको आता देख उस गणिकाने उसकी प्रसन्नतापूर्वक पूजा की और उसके हाथमें बहुमूल्य रत्नजटित कंकणको देख विस्मित हो बोली ॥ ४४ ॥ कि तुम्हारे हाथका रत्नजटित यह कंकण मुझको बहुत अच्छा लगता है, और यह दिव्य स्त्रियोंका भूषण भी है ॥ ४५ ॥ इसप्रकार उस रत्नजटित कंकणमें उसकी इच्छा देख उदारबुद्धिवाला वैश्य विस्मित हो बोला ॥ ४६ ॥ कि इस कंकण रत्नमें यदि तुम्हारी इच्छा है तो इसको

सबिभ्रद्भस्मविशदेप्रकोष्ठेवरकंकणम् ॥ महारत्नपरिस्तीर्णज्वलंतंतरुणार्कवत् ॥ ४३ ॥ तमागतंसागणिकासंपूज्यपरयामुदा ॥ तत्प्रको ष्ठगतंवीक्ष्यकंकणंप्राहविस्मिता ॥ ४४ ॥ महारत्नमयःसोयंकंकणस्त्वत्करेस्थितः ॥ मनोहरतिमेसाधुर्दिव्यस्त्रीभूषणोचितः ॥ ४५ ॥ इतितांवररत्नाढ्येसस्पृहांकरभूषणे ॥ वीक्ष्योदारमतिर्वैश्यःसस्मितंसमभाषत ॥ ४६ ॥ अस्मिन्नत्नवरेदिव्येयादितेसस्पृहंमनः ॥ तमे वादत्स्वसुप्रीतामौल्यमस्यददासिकिम् ॥ ४७ ॥ वेश्योवाच ॥ ॥ वयंतुस्वैरचारिण्योवेश्यास्तुनपतिव्रताः ॥ अस्मत्कुलोचितोधर्मोव्य भिचारोनसंशयः ॥ ४८ ॥ यद्येतद्रत्नखचितंददासिकरभूषणम् ॥ दिनत्रयमहोरात्रंतवपत्नीभवाम्यहम् ॥ ४९ ॥ ॥ वैश्यउवाच ॥ तथास्तुयदितेसत्यंवचनंवारवल्लभे ॥ ददामिरत्नवलयंत्रिरात्रंभवमद्वधूः ॥ ५० ॥

प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण करो और यह बताओ कि इसका मूल्य क्या दोगी ॥ ४७ ॥ यह सुन वेश्या बोली, कि हे वैश्य ! हम तो स्वच्छन्दचारिणी वेश्या हैं पतिव्रता नहीं हैं परपुरुषके साथ रति करनाही हमारे कुलका धर्म है इसमें सन्देह नहीं ॥ ४८ ॥ यदि रत्नजटित इस हाथके भूषणको तुम मुझे देना चाहो तो मैं तीनदिनतक तुम्हारी स्त्री होकर रहूँ॥४९॥ वैश्य बोला हे वारवल्लभे ! यदि तुम्हारा कथन सत्य है तो तुम्हारा वचन मुझे स्वीकार है,

मैं तुमको कंकण देता हूँ, तीन राततक मेरी स्त्री होकर रहो ॥ ५० ॥ इस व्यवहारमें चन्द्रमा और सूर्य साक्षी हैं, हे प्रिये ! तीनवार कहकर मेरे हृदयको स्पर्श करो ॥ ५१ ॥ फिर वेश्या बोली हे प्रभो ! तीनराततक मैं तुम्हारी पत्नी रहूँ गी, मैं झूंठ नहीं बोलती, धर्मपूर्वक कहती हूँ, इतना वचन कह उसका हृदय स्पर्श किया ॥ ५२ ॥ फिर वैश्य बोला कि रत्नजटित शिवलिंगभी मैं तुमको देता हूँ, यह मेरे प्राणोंके बराबर प्यारा है हे कान्ते ! तुम इसकी भलीप्रकार रक्षा करना, इसके नष्ट होनेपर मैं कदापि नहीं बच सकता ॥ ५३ ॥ वेश्याने कहा ऐसाही होगा और रत्नजटित

एतस्मिन्व्यवहारेतुप्रमाणंशशिभास्करौ ॥ त्रिवारंसत्यमित्युक्त्वाहृदयंमेस्पृशाप्रिये ॥ ५१ ॥ ॥ वेश्योवाच ॥ ॥ दिनत्रयमहोरात्रंपत्नी भूत्वातवप्रभो ॥ सहधर्मंचरामीतिसातद्धृदयमस्पृशत् ॥ ५२ ॥ इदंरत्नमयंशैवंलिंगंमत्प्राणसंनिभम् ॥ रक्षणीयंत्वयाकांतेतस्यहानि र्मृतिर्मम ॥ ५३ ॥ एवमस्त्वितिसाकांतालिंगमादायरत्नजम् ॥ नाट्यमंडपिकास्तंभेनिधायप्राविशद्गृहम् ॥ ५४ ॥ सातेनसंगतारात्रौ वैश्येनाविटधर्मिणा ॥ सुखंसुष्वापपर्यंकेमृदुतल्पोपशोभिते ॥ ५५ ॥ ततोनिशीथसमयेनाट्यमंडपिकांतरे ॥ अकस्मादुत्थितोवह्निस्त मेवसहसावृणोत् ॥ ५६ ॥ मंडपेदह्यमानेतुसहसोत्थायसंभ्रमात् ॥ सावेश्यामर्कटंतत्रमोचयामासबंधनात् ॥ ५७ ॥ समर्कटोमुक्तबंधः कुक्कुटश्चमहामते ॥ भीतोदूरंप्रदुद्रावविधूयाग्निकणान्बहून् ॥ ५८ ॥

उस शिवलिंगको ले नाट्यशालाके स्तम्भमें रख घरमें आई ॥ ५४ ॥ तथा उसके साथ रात्रिमें गमन कर सुखपूर्वक कोमल शय्यावाले सुन्दर पलंगपर सोगई ॥५५॥ कुछ रात्रि बीतनेपर नाट्यशालामें अकस्मात् आग लग गई और उसको चारों ओरसे घेर लिया ॥ ५६ ॥ मण्डपके जलनेपर वह वेश्या अचानक आश्चर्यपूर्वक उठी और अपने यहाँ पलेहुए मर्कटका बन्धन तोडदिया ॥ ५७ ॥ और कुक्कुटकोभी छोड दिया हे राजन्‌ ! वे दोनों बन्धनसे

मुक्त हो डरतेहुए अनेक अग्निकणोंको सह दूर भाग गये ॥ ५८ ॥ और खंभेमें जो शिवलिंग स्थापन कर दिया था वहभी खंभके साथ जलकर टूक टूक होगया, इस प्रकारके शिवलिंगको देख वेश्या और वैश्य परम दुःखी हुए ॥ ५९ ॥ प्राणोंके समान प्यारे शिवलिंगको दग्ध हुआ जान वह वैश्यपति अत्यन्त दुःखी हो मनमें निश्चय करने लगा कि अब मभा मर जाऊंगा ॥ ६० ॥ निर्वेद और अति खेदसे वह वैश्य दुःखी हुई उस वेश्यासे बोला, शिवलिंगके नष्ट होनेपर अब मैं किसीप्रकार जीना नहीं चाहता ॥ ६१ ॥ हे भद्रे ! अपने बली नौकरोंसे मेरी चिता बनवा दो जिससे मैं शंक

स्तंभेनसहनिर्दग्धंतल्लिंगंशकलीकृतम् ॥ दृष्ट्वावेश्याचवैश्यश्चदुरंतंदुःखमापतुः ॥ ५९ ॥ दृष्ट्वाप्राणसमंलिंगंदग्धंवैश्यपतिस्तथा ॥ स्वय मप्याप्तनिर्वेदोमरणायमतिंदधौ ॥ ६० ॥ निर्वेदान्नितरांखेदाद्वैश्यस्तामाहदुःखिताम् ॥ शिवलिंगेतनिर्भिन्नेनाहंजीवितुमुत्सहे ॥ ६१ ॥ चितांकारयमेभद्रेतवभृत्यैर्बलाधिकैः ॥ शिवेमनःसमावेश्यप्रविशामिहुताशनम् ॥ ६२ ॥ यदिब्रह्मेंद्रविष्ण्वाद्यावारयेयुःसमेत्यमाम् ॥ तथाप्यस्मिन्क्षणेधीरःप्रविश्याग्निंत्यजाम्यसून् ॥ ६३ ॥ तमेवंदृढबंधंसाविज्ञायबहुदुःखिता ॥ स्वभृत्यैःकारयामासचितांस्वनगराद्ब हिः ॥ ६४ ॥ ततःसवैश्यःशिवभक्तिपूतःप्रदक्षिणीकृत्यसमिद्धमग्निम् ॥ विवेशपश्यत्सुजनेषुधीरःसाचानुतापंयुवतीप्रपेदे ॥ ६५ ॥

रका ध्यान कर अग्निमें प्रविष्ट होजाऊं ॥ ६२ ॥ इस समय यदि ब्रह्मा, इन्द्र और विष्णुआदिभी मिलकर मुझको निवारण करें तोभी मैं क्षणमात्र नहीं जियूंगा और क्षणमात्रमें अग्निमें प्रवेश कर प्राणोंको त्यागूँ गा ॥ ६३ ॥ उसकी दृढ प्रतिज्ञा देख वेश्या बहुत दुःखी हुई और नगरके बाहर अपने नौकरोंसे उसकी चिता बनवा दी ॥ ६४ ॥ तब उस वैश्यने शिवभक्तिसे पवित्र हो, चितामें अग्नि लगा उसकी तीन प्रदक्षिणा कर सबके देखते

देखते अग्निमें प्रवेश किया किन्तु वह वेश्या बहुत दुःखी हुई॥ ६५॥ और दुःखी हो उसने अपने सुन्दर कर्मोंका स्मरण किया तथा अपने सब बन्धुओंको बुलाकर करुणापूर्वक यह वचन कहा ॥ ६६ ॥ रत्नजटित कंकण लेकर मैंने प्रतिज्ञा की थी, कि तीनदिनतक मैं इस वैश्यकी पत्नी होकर रहूँ, गी ॥ ६७ ॥ और मेरेही कर्मसे यह शिवभक्त वैश्य मृत्युवश हुआ, इसलिये मैंभी इसके साथही अग्निमें प्रवेश करूं गी ॥ ६८ ॥ मैंने यहभी कहा था कि मैं तुम्हारी सहधर्मिणी रहूँ गी, मुझे उस सत्यकी रक्षा करनी चाहिये, सत्यसे तीनों भुवनके स्वामी देवताभी प्रसन्न होजाते हैं ॥ ६९ ॥ सत्यसे धर्म

अथसादुःखितानारीस्मृत्वाकर्मसुनिर्मलम्॥ सर्वान्बन्धून्समीक्ष्यैवंबभाषेकरुणंवचः ॥ ६६ ॥ रत्नकंकणमादायमयासत्यमुदाहृतम् ॥ दिनत्रयमहंपत्नीवैश्यस्यास्युष्यसंमता ॥ ६७ ॥ कर्मणामत्कृतेनायंमृतोवैश्यः शिवव्रती ॥ तस्मादहंप्रवेक्ष्यामिसहानेनहुताशनम् ॥६८॥ साधर्मचारिणीत्युक्तंसत्यमेतद्धिपश्यथ ॥ सत्येनप्रीतिमायांतिदेवास्त्रिभुवनेश्वराः ॥ ६९ ॥ सत्यासक्तिःपरोधर्मःसत्येसर्वप्रतिष्ठितम् ॥ सत्येनस्वर्गमोक्षौचनासत्येनपरागतिः ॥ ७० ॥ तस्मात्सत्यंसमाश्रित्यप्रविशामिहुताशनम् ॥ इतिसादृढनिर्बंधावार्यमाणापिबंधुभिः ॥ ॥ ७१ ॥ सत्यलोपभयान्नारीप्राणांस्त्यक्तुंमनोदधे ॥ सर्वस्वंशिवभक्तेभ्योदत्वाध्यात्त्वासदाशिवम् ॥ ७२ ॥

होता है और सत्यमेंही धर्मकी स्थिति है, सत्यसेही स्वर्ग और मोक्षकी प्राप्ति होती है, असत्यसे अधोगति होती है ॥ ७० ॥ इसलिये सत्यका अवलम्बन कर मैंभी अग्निमें प्रवेश करती हूँ, उसके बन्धुओंने उसे बहुत समझाया किन्तु उसने दृढ निश्चय कर लिया कि मैं अग्निमें अवश्य प्रवेश करूं गी ॥ ७१ ॥ सत्यके लोभसे वह वेश्याभी प्राण त्यागनेको मनमें निश्चय करने लगी, जो कुछ उसके पास सम्पत्ति थी सब शिवभक्तोंको बाँट दी और

स्वयं शंकरका ध्यान कर ॥ ७२ ॥ चिता बनवा, अग्नि लगा और उसकी तीन परिक्रमा कर प्रवेश होनेहीको थी, कि इसी अवसरमें अपने चरणोंमें मन लगा जलती अग्निमें प्रवेश करती हुई उस वेश्याको विश्वात्मा सदाशिवने प्रकट हो स्वयं निवारण किया ॥ ७३ ॥ संपूर्ण संसारके देवताओंकेभी देवता, त्रिलोचन, चन्द्रकलाके समान कान्तिमान और करोड़ चन्द्रमा, सूर्य और अग्निके समान शोभावाले शंकरको देख वह वेश्या स्तब्ध और भीत हुएके समान वैसेही स्थित रह गई ॥ ७४ ॥ विह्वल, डरीहुई, काँपतीहुई, जडके समान निश्चल हुई और नेत्रोंसे अश्रुपात करतीहुई उस वेश्याको

तमग्निंत्रिःपरिक्रम्यप्रवेशाभिमुखीस्थिता ॥ तांपतंतींसमिद्धेऽग्नौस्वपदार्पितमानसाम् ॥ वारयामासविश्वात्माप्रादुर्भूतःशिवःस्वयम् ॥७३॥ सातंविलोक्याखिलदेवदेवंत्रिलोचनंचन्द्रकलावतंसम् ॥ शशांकसूर्यानलकोटिभासंस्तब्धेवभीतेवतथैवतस्थौ ॥ ७४ ॥ तांविह्वलांपरित्रस्तांवेपमानांजडीकृताम् ॥ समाश्वास्यगलद्बाष्पांकरेगृह्याद्ब्रवीन्मुहुः ॥ ७५ ॥ सत्यंधर्मंचतेधैर्यंभक्तिंचमयिनिश्चलाम् ॥ निरीक्षितुंत्वत्सकाशंवैश्योभूत्वाहमागतः ॥ ७६ ॥ माययाग्निंसमुत्थाप्यदग्धवान्नाट्यमंडपम् ॥ दग्धंकृत्वारत्नलिंगंप्रविष्टोस्मिहुताशनम् ॥७७॥ वेश्याःकैतवकारिण्यःस्वैरिण्योजनवंचकाः ॥ सात्वंसत्यमनुस्मृत्यप्रविष्टाग्निमयासह ॥ ७८ ॥

समझाया और हाथ पकडकर बारंबार यह वचन कहा ॥ ७५ ॥ कि तेरा सत्य, धैर्य और मुझमें निश्चल भक्ति देखनेको मैंही वैश्य होकर आया था ॥ ७६ ॥ मैंनेही अपनी मायासे नाट्यमण्डपको अग्निसे भस्म किया और रत्नके शिवलिंगको दग्ध कर मैंनेही अग्निमें प्रवेश किया ॥ ७७ ॥ वेश्या छलनेवाली, व्यभिचारिणी और मनुष्योंको ठगनेवाली होती हैं, उसी जातिकी तुझने अपने सत्यका स्मरण कर मेरे साथ अग्निमें प्रवेश किया॥७८॥

इसकारण मैं तुझको ऐसे भोग देता हूँ, जो देवताओंकोभी दुर्लभ हैं, आयु दीर्घ किये देता हूँ और आरोग्य तथा प्रजाकी उन्नतिभी होगी ॥ ७९ ॥ हे सुश्रोणि ! जिस जिस वस्तुकी तुझको आवश्यकता हो वह सब मैं तुझको देसकता हूँ, इसप्रकार पार्वतीपति महादेवजीके कहनेपर वेश्या बोली ॥ ८० ॥ कि हे महादेव ! मुझको पृथिवीके भोग, स्वर्ग और रसातलके ऐश्वर्यकी इच्छा नहीं है किन्तु यह चाहती हूँ कि तुम्हारे चरणक मलमें मेरी प्रीति सदा बनी रहै, तुम्हारेही चरणोंमें रहूँ, अन्यत्र नहीं ॥ ८१ ॥ यह मेरे नौकर स्त्रियें और मेरे सब बान्धव, यह सब तुम्हारेही पूज

अतस्तेसंप्रदास्यामि भोगांस्त्रिदशदुर्लभान् ॥ आयुश्चपरमंदीर्घमारोग्यंचप्रजोन्नतिम् ॥ ७९ ॥ यद्यदिच्छसिसुश्रोणितत्तदेवददामिते ॥ इतिब्रुवतिगौरीशेसावेश्याप्रत्यभाषत ॥ ८० ॥ ॥ वेश्योवाच ॥ नमेवांछास्तिभोगेषुभूमौस्वर्गेरसातले ॥ तवपादांबुजस्पर्शादन्यत्किंचिन्नवैवृणे ॥ ८१ ॥ एतेभृत्याश्चदाराश्चयेचान्येममबांधवाः ॥ सर्वेत्वदर्चनपरास्त्वयिसंन्यस्तवृत्तयः ॥ ८२ ॥ सर्वानेतान्मयासार्धंनीत्वातवपरंपदम् ॥ पुनर्जन्मभयंघोरंविमोचयनमोस्तुते ॥ ८३ ॥ तथेतितस्यावचनंप्रतिनंद्यमहेश्वरः ॥ तान्सर्वांश्चतयासार्धंनिनायपरमंपदम् ॥ ८४ ॥ नाट्यमंडपिकादाहेयौदूरंविद्रुतौपुरा ॥ तत्रावशिष्टौतावेवकुक्कुटोमर्कटस्तथा ॥ ८५ ॥

नमेंही तत्पर रहैं, तुम्हीमें इनके मनकी वृत्ति स्थित रहे ॥ ८२ ॥ मेरे साथ इन सबको अपने लोकमें ले चलो और जन्म मरणके घोर भयसे मुक्तकरे मैं तुमको बारंबार प्रणाम करती हूँ ॥ ८३ ॥ यह सुन शंकरने कहा ऐसाही होगा, और उसके वचनसे प्रसन्न हुए तथा उसको और उसके सब बन्धु आदिकोंको विमानमें बिठा अपने स्थानको ले गये ॥ ८४ ॥ नाट्यमण्डपके जलते समय जो कुक्कुट और मर्कट दूर भाग गये थे वेही दोनों शिव

लोक जानेसे रह गये ॥ ८५ ॥ कुछ समयके उपरान्त अपनी आयु भोग वे दोनों मृत्युवश हुए, पूर्वजन्ममें जो वेश्याका नाट्यमर्कट था वह तुम्हारा पुत्र हुआ और कुक्कुट मन्त्रीका पुत्र हुआ ॥ ८६ ॥ पूर्वजन्ममें उपार्जन किये रुद्राक्ष धारणके पुण्यके प्रभावसे यह दोनों बालक उत्तम कुलमें उत्पन्न हुए हैं ॥ ८७ ॥ पूर्वजन्मके अभ्याससे यह शुद्ध मनवाले बालक रुद्राक्ष धारण करते हैं, इस जन्ममें शंकरका पूजन कर यह अन्तमें शिवलोकको जायँगे ॥ ८८ ॥ यह इन दोनोंके पूर्वजन्मकी और शिवभक्ता वेश्याकी कथा तुमसे कही, और क्या पूँछना चाहते हो सो कहो ॥ ८९ ॥ इति

कालेननिधनंयातोयस्तस्यानाटचमर्कटः ॥ सोभूत्तवकुमारोसौकुक्कुटोमंत्रिणःसुतः ॥ ८६ ॥ रुद्राक्षधारणोद्भूतात्पुण्यात्पूर्वभवार्जितात् ॥ कुलेमहतिसंजातौवर्तेतौबालकाविह ॥ ८७ ॥ पूर्वाभ्यासेनरुद्राक्षान्दधतौशुद्धमानसौ ॥ अस्मिञ्जन्मनितंलोकंशिवंसंपूज्ययास्यतः ॥ ८८ ॥ एषाप्रवृत्तिस्त्वनयोर्बालयोःसमुदाहृता ॥ कथाचशिवभक्तायाःकिमन्यत्प्रष्टुमिच्छसि ॥ ८९ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेरुद्राक्षमहिमवर्णनंनामविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ छ ॥ छ ॥ सूतउवाच ॥ ॥ एवंब्रह्मर्षिणाप्रोक्तांवाणींपीयूषसन्निभाम् ॥ आकर्ण्यमुदितोराजाप्रांजलिःपुनरब्रवीत् ॥ १ ॥ राजोवाच ॥ ॥ अहोसत्संगमःपुंसामशेषाघप्रशोधनः ॥ कामक्रोधनिहंताचइष्टदोग्धाजनस्यहि ॥ २ ॥ ममभायातमोनष्टंज्ञानदृष्टिःप्रकाशिता ॥ तवदर्शनमात्रेणप्रायोहममरोत्तमः ॥ ३ ॥

श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखंडे पंडितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां रुद्राक्षमहिमावर्णनं नाम विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ अथैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

सूतजी कहने लगे कि हे मुनियों ! इसप्रकार अमृतके समान महर्षि पराशरकी बाणी सुन राजा बहुत प्रसन्न हुआ और हाथ जोडकर फिर बोला ॥ १ ॥ अहो सत्संग मनुष्योंके सम्पूर्ण पापों और कामक्रोधको नष्ट कर मनोरथ सिद्ध करता है ॥ २ ॥ मेरी मायाका अन्धकार नष्ट हुआ और ज्ञानदृष्टिका

प्रकाश होगया, तुम्हारे दर्शन मात्रसे मैं अमरोत्तम हुआ ॥ ३ ॥ और इन बालकोंका पूर्वचरित्रभी सुना, अब आगेको बूझता हूँ कि मेरे इस पुत्रका आचरण कैसा होगा ॥ ४ ॥ इसकी कितनी आयु होगी और भाग्य कैसा है, तथा विद्या, कीर्ति, शक्ति श्रद्धा और भक्ति कितनी होगी ॥ ५ ॥ हे महामुने ! यह सब भविष्य मुझसे विस्तारपूर्वक कहो, मैं तुम्हारा शिष्य, भृत्य और शरणागत हूँ ॥ ६ ॥ यह सुन पराशरमुनि बोले कि इस अवाच्य वचनको तुम किसप्रकार सुन सकोगे कि जिसको सुनकर धैर्यवान् पुरुषभी विषादको प्राप्त होजाते हैं ॥ ७ ॥ तोभी तुम शुद्ध भावसे पूँछते

श्रुतंचपूर्वचरितंबालयोःसम्यगेतयोः ॥ भविष्यदपिपृच्छामिमत्पुत्राचरणंमुने ॥ ४ ॥ अस्यायुःकतिवर्षाणिभाग्यंवदचकीदृशम् ॥ विद्याकीर्तिश्चशक्तिश्चश्रद्धाभक्तिश्चकीदृशी ॥ ५ ॥ एतत्सर्वमशेषेणमुनेत्वंवक्तुमर्हसि ॥ तवशिष्योस्मिभृत्योस्मिशरणंत्वागतोस्म्यहम् ॥ ॥ ६ ॥ ॥ पराशरउवाच ॥ ॥ अत्रावाच्यंहियत्किंचित्कथंशक्तोस्मिशंसितुम् ॥ यच्छ्रुत्वाधृतिमंतोपिविषादंप्राप्नुयुर्जनाः ॥ ७ ॥ तथापिनिर्व्यलीकेनभावेनपरिपृच्छतः ॥ अवाच्यमपिवक्ष्यामितवस्नेहान्महीपते ॥ ८ ॥ अमुष्यत्वत्कुमारस्यवर्षाणिद्वादशात्ययुः ॥ इतःपरंप्रपद्येतसप्तमेदिवसेमृतिम् ॥ ९ ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वाकालकूटमिवोदितम् ॥ मूर्च्छितःसहसाभूमौपतितोनृपतिःशुचा ॥ १० ॥ तमुत्थाप्यसमाश्वास्यसन्मुनिःकरुणार्द्रधीः ॥ उवाचमाभैर्नृपतेपुनर्वक्ष्यामितेहितम् ॥ ११ ॥

हो इसलिये कहनेके अयोग्य वार्ताकोभी हे महामते ! तुम्हारे स्नेहसे कहता हूँ ॥ ८ ॥ इस तुम्हारे पुत्रकी अवस्था बारह वर्षकी है, सो अब पूरी होनेपर आई, आजसे सातवें दिन यह तुम्हारा पुत्र मृतक होजायगा ॥ ९ ॥ इस प्रकार वज्रके समान उनका वचन सुन शीघ्रही राजा एक साथ मूर्छित हो पृथिवीपर गिरपड़ा ॥ १० ॥ तब मुनिने करुणापूर्वक उसको उठा और मूर्छा निवारण कर आश्वासन किया तथा बोले कि हे राजन् ! डरो

मत मैं फिर तुम्हारे हितका वचन कहता हूँ ॥ ११ ॥ कि सृष्टिके पहिले निष्कला चिदानन्दमय जो परमशिव हैं ॥ १२ ॥ उन्होंने रजोगुणसे ब्रह्माजीको उत्पन्न कर कर्मकांडका प्रचार होनेके निमित्त उनको चारों वेद दिये ॥ १३ ॥ फिर अपने तत्त्वका संग्रह रूप और सम्पूर्ण उपनिषदोंका सार भूत रुद्राध्याय दिया ॥ १४ ॥ कि जिस उपनिषदोंके साररुद्राध्यायमें सनातनज्योति परमशिव सदा निवास करते हैं ॥ १५ ॥ फिर आत्मभू

सर्गात्पुरानिरालोकंयदेकंनिष्कलंपरम् ॥ चिदानदमयज्योतिःसआद्यःकेवलःशिवः ॥ १२ ॥ सएवादौरजोरूपंसृष्ट्वाब्रह्माणमात्मना ॥ सृष्टिकर्मनियुक्तायतस्मैवेदांश्चदत्तवान् ॥ १३ ॥ पुनश्चदत्तवानीशआत्मतत्त्वैकसंग्रहम् ॥ सर्वोपनिषदांसाररुद्राध्यायंचदत्तवान् ॥ १४ ॥ यदेकमव्ययंसाक्षाद्ब्रह्मज्योतिःसनातनम् ॥ शिवात्मकंपरंतत्त्वंरुद्राध्यायेप्रतिष्ठितम् ॥ १५ ॥ सआत्मभूःसृजन्विश्वंचतुर्भिर्वदनैर्विराट् ॥ ससर्जवेदांश्चतुरोलोकानांस्थितिहेतवे ॥ १६ ॥ तत्रायंयजुषांमध्येब्रह्मणादक्षिणामुखात् ॥ अशेषोपनिषत्सारोरुद्राध्यायःसमुद्गतः ॥ ॥ १७ ॥ सएषमुनिभिःसर्वैर्मरीच्यत्रिपुरोगमैः ॥ सहदेवैर्धृतस्तेभ्यस्तच्छिष्याजगृहुश्चतम् ॥ १८ ॥ तच्छिष्याशिष्यैस्ततपुत्रैस्ततपुत्रै श्चक्रमागतैः ॥ धृतोरुद्रात्मकःसोयंवेदसारःप्रसादितः ॥१९॥ एषएवपरोमंत्रोएषएवपरंतपः ॥ रुद्राध्यायजपःपुंसांपरंकैवल्यसाधनम् २०

ब्रह्माजीने संसारको उत्पन्न किया और संसारकी स्थितिके निमित्त चारों वेद उत्पन्न किये ॥ १६ ॥ तब ब्रह्माजीके दक्षिण मुखसे जो यजुर्वेद निकला, उसीमें सब वेदका सार रुद्राध्याय स्थित है ॥ १७ ॥ उसी इस रुद्राध्यायको देवताओंसहित सब मरीचि अत्रि आदि महर्षियोंने धारण किया॥१८॥ फिर उनके शिष्य उनके पुत्र पौत्रोंने क्रमसे यह रुद्रात्मक वेदका सार संसारमें फैलाया ॥ १९ ॥ यही परम मन्त्र और परम तप है, रुद्राध्यायका

जप करनेसे मनुष्योंको मुक्ति मिलती है॥ २०॥ महापातकी और उपपातकी पुरुषभी रुद्राध्यायका जप करनेसे तत्काल मुक्तिके भागी होते हैं॥ २१॥ फिरभी ब्रह्माजीने सब प्रकारके भलेबुरे जीव उत्पन्न किये उनमें देवता, मनुष्य, पशु, पक्षी, कीट, पतंग आदि सब प्रकारके जीव बनाये कि जिनसे यह सम्पूर्ण जगत् पूर्ण होगया॥ २२॥ फिर उनके जन्मके अनुसार उनके कर्म सिरजे, उन्हींके अनुसार वे सब सुखदुःख रूप उनका फल भोगने लगे॥ २३॥ इसके उपरान्त लोकसृष्टिकी वृद्धिके निमित्त स्वयं प्रजापतिने अपनी छातीसे धर्म और पीठसे अधर्मको उत्पन्न किया ॥ २४ ॥ उन जीवोंमेंसे जो धर्माचरण करते हैं वे पुण्यके,

महापातकिनःप्रोक्ताउपपातकिनश्चये ॥ रुद्राध्यायजपात्सद्यस्तेपियांतिपरांगतिम् ॥ २१ ॥ भूयोपिब्रह्मणासृष्टाःसदसन्मिश्रयोनयः ॥ देवतिर्यङ्मनुष्याद्यास्ततःसंपूरितंजगत् ॥ २२ ॥ तेषांकर्माणिसृष्टानिस्वजन्मानुगुणानिच ॥ लोकास्तेषुप्रवर्ततेभुंजतेचैवतत्फलम् ॥ ॥ २३ ॥ लोकसृष्टिप्रवाहार्थस्वयमेवप्रजापतिः ॥ धर्माधर्मौससर्जाग्रेस्ववक्षःपृष्ठभागतः ॥ २४ ॥ धर्ममेवानुतिष्ठंतःपुण्यंविंदंतितत्फलम् ॥ अधर्ममनुतिष्ठंतस्तेपापफलभोगिनः ॥ २५ ॥ पुण्यकर्मफलंस्वर्गोनरकस्तद्विपर्ययः ॥ तयोर्द्वावधिपौधात्राकृतौशतमखांतकौ ॥ ॥ २६ ॥ कामःक्रोधश्चलोभश्चमदमानादयःपरे ॥ अधर्मस्यसुताआसन्सर्वेनरकनायकाः ॥ २७ ॥ गुरुतल्पःसुरापानंतथान्यःपुल्कसीगमः ॥ कामस्यतनयाह्येतेप्रधानाःपरिकीर्तिताः ॥ २८ ॥

भागी होते हैं और जो अधर्मका आचरण करते हैं वे उसका पापरूप फल भोगते हैं, इसीके अनुसार सुख दुख मिलता है ॥ २५ ॥ पुण्यकर्मका फल स्वर्ग और पापकर्मका फल नरक होता है, फिर ब्रह्माजीने स्वर्गके इन्द्र और नरकके यमराज स्वामी बनाये ॥ २६ ॥ काम, क्रोध, लोभ, मद और मान आदि अधर्मके पुत्र हो सब नरकके स्वामी हुए ॥ २७ ॥ इनमें गुरुदारा गमन, चंडाली गमन और सुरापान, यह कामके प्रधान

पुत्र उपजे ॥ २८ ॥ पितृवध, मातृवध, ब्राह्मणवध और कन्याः यह क्रोधके सिरजे ॥ २९ ॥ पातकोंकेस्वामी इन सबको बुला यमराजने नरककी वृद्धिके निमित्त नरकका अधिपति बनाया ॥ ३० ॥ यमराजकी आज्ञासे यह नौ बाकी सब पातक नायकोंको साथ ले ॥ ३१ ॥ अपने नौकर उपपातकों द्वारा नरककी रक्षा करने लगे, किन्तु जब मुक्तिका साधन रुद्राध्याय पृथिवीपर आया ॥ ३२ ॥ तब वे सब पातक

क्रोधात्पितृवधोजातस्तथामातृवधःपरः ॥ ब्रह्महत्याचकन्यासाक्रोधस्यतनयाअमी ॥ २९ ॥ एतानाहूयचांडालान्यमःपातकनायकान् ॥ नरकस्यविवृद्ध्यर्थमाधिपत्यंचकारसः ॥ ३० ॥ तेयमेनसमादिष्टानवपातकनायकाः ॥ तेसर्वैसंगताभूयोघोरापातकनायकाः ॥ ॥ ३१ ॥ नरकान्पालयामासुः स्वभृत्यैश्चोपपातकैः ॥ रुद्राध्यायेभुविप्राप्तेसाक्षात्कैवल्यसाधने ॥ ३२ ॥ भीताःप्रदुद्रुवुःसर्वेतेऽमी पातकनायकाः ॥ यमंविज्ञापयामासुःसहान्यैरुपपातकैः ॥ ३३ ॥ जयदेवमहाराजवयंहितवकिंकराः ॥ नरकस्यविवृद्ध्यर्थसाधिकाराः कृतास्त्वया ॥ ३४ ॥ अधुनावर्तितुंलोकेनशक्ताःस्मोवयंप्रभो ॥ रुद्राध्यायानुभावेननिर्दग्धाश्चैवविद्रुताः ॥ ३५ ॥ ग्रामेग्रामेनदीकूले पुण्येष्वायतनेषुच ॥ रुद्रजाप्येतुपर्यांतेकथंलोकेचरेमहि ॥ ३६ ॥

नायक उपपातकोंको साथले डरकर यमराजके पास भागे गये और प्रार्थना की ॥ ३३ ॥ कि हे महाराज ! तुम्हारी जय हो, हम तुम्हारे दास हैं तुमने नरककी वृद्धिके निमित्त हमको नरकका अधिकारी बनाया है ॥ ३४ ॥ हे प्रभो ! इससमय रुद्राध्यायके प्रभावसे हमारी दुर्दशा होरही है, उसके तेजसे दग्ध होकर भागते फिरते हैं हम क्षणमात्रभी स्थिर नहीं रह सकते ॥ ३५ ॥ ग्रामग्राम, घरघर, नदियों तथा पुण्यतीर्थों और आश्रमोंमें रुद्रा

ध्यायका जपही फैल रहाहै, फिर हम किसप्रकार संसारमें विचर सकते हैं ॥ ३६ ॥ किसी प्रायश्चित्त वा व्रत आदिको तो हम कुछभी नहीं गिनते किन्तु रुद्राध्यायका एक अक्षरभी हमसे नहीं सहाजाता ॥ ३७ ॥ संसारको नष्ट करनेवाले हम महापातक मुख्योंको रुद्राध्यायके जपसे बहुत भय लगता हे रुद्राध्यायका जप हमको विषरूप है ॥ ३८ ॥ इसलिये रुद्राध्यायके जपसे प्राप्तहुए इस व्यसनको आपही मेट सकते हैं ॥ ३९ ॥ इसप्रकार उनके कहनेपर यमराजभी अति व्याकुल हुए और पातकनायकोंको साथ ले ब्रह्माजीके निकट जा उनसे सब वृत्तान्त निवेदन किया ॥ ४० ॥ हे देवताओं

प्रायश्चित्तसहस्रैर्वैगणयामोनकिंचन ॥ रुद्रजाप्याक्षराण्येवसोढुंबतनशक्नुमः ॥ ३७ ॥ महापातकमुख्यानामस्माकंलोकघातिनाम् ॥ रुद्रजाप्यंभयंघोरंरुद्रजाप्यंमहद्विषम् ॥ ३८ ॥ अतोदुर्विषहंघोरमस्माकंव्यसनंमहत् ॥ रुद्रजाप्येनसंप्राप्तमपनेतुंत्वमर्हसि ॥ ३९ ॥ इतिविज्ञापितःसाक्षाद्यमःपातकनायकैः ॥ ब्रह्मणोंतिकमासाद्यतस्मैसर्वंन्यवेदयत् ॥ ४० ॥ देवदेवजगन्नाथत्वामेवशरणंगतः ॥ त्वयानि युक्तोमर्त्यानांनिग्रहेपापकारिणाम् ॥ ४१ ॥ अधुनापापिनोमर्त्यानसंतिपृथिवीतले ॥ रुद्राध्यायेनविलयंपातकानांमहत्कुलम् ॥ ४२ ॥ पातकानांकुलेनष्टेनरकाःशून्यतांगताः ॥ नरकेशून्यतांयातेममराज्यंहिनिष्फलम् ॥ ४३ ॥ तस्मात्त्वयैवभगवन्नुपायःपरिचिन्त्यताम् ॥ यथामेनविहन्येतस्वामित्वंमर्त्यदेहिनाम् ॥ ४४ ॥ इतिविज्ञापितोधातायमेनपरिखिद्यता ॥ रुद्रजाप्यविघातार्थमुपायंपर्यकल्पयत ॥ ४५ ॥

के देवता ! हे जगन्नाथ ! हे ब्रह्मन् ! मैं तुम्हारी शरणहूँ, आपनेही मुझको पापीपुरुषोंको दण्ड देनेके निमित्त अधिकार दियाहै ॥ ४१ ॥ इससमय रुद्राध्यायसे सम्पूर्णपातक नष्ट होगये, पृथिवीपर कोई पापी नहीं रहा ॥ ४२ ॥ पातकोंके नष्ट होजानेसे नरक शून्य पडे हैं, नरकके शून्य होनेसे मेरा राज्य भी निष्फलहै ॥ ४३ ॥ हे भगवन् ! तुमही इसका उपाय सोचो ऐसा करनेसे पापीपुरुषोंपर मेरा स्वामीपन नष्ट न होगा नहीं तो मेरा राज्यही वृथाहै ॥ ४४ ॥ इसप्रकार खेदितहुए यमराजके कहनेपर ब्रह्माजी रुद्राध्यायके विघातके निमित्त उपायकी कल्पना करनेलगे ॥ ४५ ॥

कि अविद्याके अश्रद्धा और दुर्मेधा जो दो कन्या उत्पन्न हुईथीं, उन दोनोंको श्रद्धा और मेधाके नष्ट करनेको आज्ञादी ॥ ४६ ॥उन्होंनेभी ब्रह्माजीकी आज्ञापाय मर्त्यलोकमें जा सबकी श्रद्धा और मेधाका हरणकिया अर्थात् सद्बुद्धि सबकी जातीरही, उनके संसारको मोहित करनेपर रुद्राध्यायसे सब पराङ्मुख होगये, तब यमराजभी अपने स्थानपर आ कृतार्थ हो बैठगये ॥ ४७ ॥ हे राजन् ! पूर्वजन्ममें किये पापोंसे मनुष्य अल्पायु होजाते हैं, रुद्राध्यायका जप करनेवाले प्राणियोंके वे सब पाप नष्ट होजातेहैं, ॥ ४८ ॥ पाप नष्ट होनेपर दीर्घायु, बल, धैर्य, आरोग्य और ऐश्वर्यकी वृद्धि होतीहै

अश्रद्धांचैवदुर्मेधामविद्यायाःसुतेऽभे ॥ श्रद्धामेधाविघातिन्यौमर्त्येषुपर्यचोदयत् ॥ ४६ ॥ ताभ्यांविमोहितेलोकेरुद्राध्यायेपराङ्मुखे ॥ यमःस्वस्थानमासाद्यकृतार्थइवसोऽभवत् ॥ ४७ ॥ पूर्वजन्मकृतैःपापैर्जायंतेल्पायुषोजनाः ॥ तानिपापानिनश्यंतिरुद्रंजपवतांनृणाम् ॥ ४८ ॥क्षीणेषुसर्वपापेषुदीर्घमायुर्बलंधृतिः ॥ आरोग्यंज्ञानमैश्वर्यंवर्धतेसर्वदेहिनाम् ॥ ४९ ॥ रुद्राध्यायेनयेदेवंस्नापयंतिमहेश्वरम् ॥ तज्जलैःकुर्वतःस्नानंतेमृत्युंसंतरंतिच ॥ ५० ॥ रुद्राध्यायाभिजतेनस्नानंकुर्वतियेंऽभसा ॥ तेषांमृत्युभयंनास्ति शिवलोकेमहीयते ॥ ५१ ॥ शतरुद्राभिषेकेणशतायुर्जायतेनरः ॥ अशेषपापनिर्मुक्तःशिवस्यदयितोभवेत् ॥ ५२ ॥

॥ ४९ ॥ जो प्राणी रुद्राध्यायसे शंकरको स्नान करा फिर आप उस जलसे स्नान करते हैं वे मृत्युको जीतलेते हैं ॥ ५० ॥ रुद्राध्यायसे महेश्वर शंकरका अभिषेककर जो प्राणी उस जलसे आप स्नान करते हैं, उनको मृत्युका भय नहीं रहता और अन्तमें शिवलोकमें आनन्द भोगते हैं ॥ ५१ ॥ सौ रुद्राभिषेक करनेसे मनुष्यकी सौवर्षकी आयु होजाती है, और सम्पूर्ण पापोंसे मुक्तहो उसका शिवलोकमें गमन होता है ॥ ५२ ॥

इतनी कथा सुनाय फिर पराशरमुनि कहनेलगे कि हे राजन्!यह तेरा पुत्र दशहजार रुद्राध्यायसे स्नान करे तो इसकी दशहजार वर्षकी अवस्था होजाय और पृथिवीमें इन्द्रके समान सुख भोगे ॥ ५३ ॥ बहुत बल और ऐश्वर्य पाय शत्रुओंको नष्टकर सम्पूर्ण पापोंसे मुक्तहो निष्कंटक राज्यकरे ॥ ५४ ॥ हे राजन् ! वेदकेज्ञाता, शान्तचित्त, समदर्शी, व्रतधारी, तपोनिष्ठ और शिवभक्तिपरायण इसप्रकारके ब्राह्मण ॥ ५५ ॥ रुद्राध्यायका जप करें उनके जपके प्रभावसे तत्काल कल्याण होगा ॥ ५६ ॥ पराशरमुनिका इतना वचन सुन राजाने पहिले तों उन्हींको क्रियागुरु मान वरणकिया, पीछे क्षण

एषरुद्रायुतस्नानंकरोतुतवपुत्रकः ॥ दशवर्षसहस्राणिमोदतेभुविशक्रवत् ॥५३॥अव्याहतबलैश्वर्योहतशत्रुर्निरामयः ॥ निर्धूताखिलपापौघःशास्ताराज्यमकंटकम् ॥५४॥ विप्रावेदविदःशांताःकृतिनःशंसितव्रताः ॥ आनयस्वतपोनिष्ठाःशिवभक्तिपरायणाः ॥५५॥ रुद्राध्यायजपंसम्यक्कुर्वंतुविमलाशयाः ॥ तेषांजपानुभावेनसद्यःश्रेयोभविष्यति ॥ ५६ ॥ इत्युक्तवंतंनृपतिर्महामुनिंतमेववव्रेप्रथमंक्रियागुरुम् ॥ अथापरांस्त्यक्तधनाशयान्मुनीनावाहयामाससहस्रशःक्षणात् ॥ ५७ ॥ तेविप्राःशांतमनसःसहस्रपरिसंमताः ॥ कलशानांशतंस्थाप्यपुण्यवृक्षरसैर्युतम् ॥ ५८ ॥ रुद्राध्यायेनसंस्नाप्यतमुर्वीपतिपुत्रकम् ॥ विधिवत्स्नापयामासुःसंप्राप्तेसप्तमेदिने ॥ ५९ ॥ स्नाप्यमानोमुनिजनैःसराजन्यकुमारकः ॥ अकस्मादेवसंत्रस्तःक्षणंमूर्च्छामवापह ॥ ६० ॥

मात्रमें छोडदी है धनकी आशा जिन्होंने ऐसे हजारों मुनियोंका आवाहन किया ॥ ५७ ॥ शान्तचित्तवाले उन हजारों मुनियोंने पवित्र वृक्षोंके रससे पूर्णकर सौ कलश स्थापनकिये ॥ ५८ ॥ और आप प्रतिदिन रुद्राध्यायका जप करते और उसको उस जलसे स्नान कराते, इसप्रकार विधिपूर्वक स्नान करते कराते उनको सातदिन बीते ॥ ५९ ॥ सातवें दिन मुनिजनोंके द्वारा स्नान करानेपर अचानक उस राजपुत्रको

घबड़ाकर क्षणमात्रके लिये मूर्च्छा होगई ॥ ६० ॥ मूर्च्छा होतेही मुनियोंने उसकी मूर्च्छा दूरकर रक्षाकी और उससे मुनियोंने पूँछा कि तुमने मूर्च्छामें क्या देखा, तब उसने कहा कि एक कृष्णवर्ण बड़ा भयानक पुरुष हाथमें दंडधारे मुझको मारने चलाआता था, किंतु यहाँसे अनेक महावीर पुरुषोंने उठकर उसको ताडन किया ॥ ६१ ॥ और बडे पाशसे बांध उसको दूर लेगये, तथा आपने मेरी रक्षा करली. यही मूर्च्छामें देखा ॥ ६२ ॥ इसप्रकार राजपुत्रके कहनेपर आशीर्वाद देकर मुनियोंने पूजन किया और यह सब भयका वृत्तान्त राजासे निवेदन किया और कहा कि

सहसैवप्रबुद्धोसौमुनिभिःकृतरक्षणः ॥ सतत्रान्यैर्महावीरैःपुरुषैरभिताडितः ॥ ६१ ॥ बद्धापाशेनमहतादूरंनीतइवाभवत् ॥ एतावद्दृष्टमद्राक्षंभवद्भिःकृतरक्षणः ॥ ६२ ॥ इत्युक्तवंतंनृपतेस्तनूजंद्विजसत्तमाः ॥ आशीर्भिःपूजयामासुर्भयंराज्ञेन्यवेदयन् ॥ ६३ ॥ अथसर्वान्नृपीन्श्रेष्ठान्दक्षिणाभिर्नृपोत्तमः ॥ पूजयित्वावरान्नेनभोजयित्वाचभक्तितः ॥ ६४ ॥ प्रतिगृह्याशिषस्तेषांमुनीनांब्रह्मवादिनाम् ॥ भुक्त्वाबंधुजनैःसार्धंसभायांसमुपाविशत् ॥ ६५ ॥ तस्मिन्सभागतेवीरेमुनिभिःसहपार्थिवे ॥ आजगाममहायोगीदेवर्षिर्नारदःस्वयम् ॥ ६६ ॥ तमागतंप्रेक्ष्यगुरुंमुनीनांसार्धंसदस्यैरखिलैर्मनींद्रैः ॥ प्रणम्यभक्त्याविनिवेश्यपीठेकृतोपचारंनृपतिर्बभाषे ॥ ६७ ॥

अपने पुत्रको मृत्युके भयसे छुटा जान अब किसी प्रकारभी दशहजार वर्षतक इसको मृत्युका भय न होगा ॥ ६३ ॥ यह सुन राजाने सब श्रेष्ठ ऋषियोंको दक्षिणा दे भक्तिपूर्वक सुन्दर पक्वान्नोंसे भोजन कराया ॥ ६४ ॥ और उन ब्रह्मवादी मुनियोंके आशीर्वाद ग्रहण और कुटुंबियोंसमेत भोजन कर अपनी सभामें आ बैठा ॥ ६५ ॥ उस समय मुनियोंसमेत योगीश्वर नारदजी स्वयंही राजाके पास आये ॥ ६६ ॥ मुनियोंके साथ नारदजीको आता देख राजाने सभामें बैठेहुए सम्पूर्ण मुनियोंसमेत नारदजीको प्रणाम किया और सुन्दर

सिंहासनपर बैठाय षोडशोपचारसे पूजनकर बोला, ॥ ६७ ॥ राजा बोला हे ब्रह्मन् ! तुम त्रिलोकीका सब चरित्र जानते हो, जो कुछ तुमने देखाहो उस अद्भुत चरित्रको मुझसे कहो तुम्हारे वाक्यरूपी अमृतमें मेरी बहुत लालसा है ॥ ६८ ॥ यह सुन नारदजी बोले हे राजन् ! आज आकाशसे उतरते समय जो चरित्र मैंने इन मुनि पुंगवोंके साथ देखा है, उसे सुनो ॥ ६९ ॥ दण्डहाथमें धारणकिये दुराधर्ष (जिसको कोई आक्रमण न करसके) सदा लोकको बाधादेनेवाली मृत्यु आज तेरे पुत्रका प्राण लेनेको इस स्थानमें आई ॥ ७० ॥ तब शंकरने जाना कि मेरे

॥ राजोवाच ॥ ॥ दृष्टंकिमस्तितेब्रह्मंस्त्रिलोक्यांकिंचिदद्भुतम् ॥ तन्नोब्रूहिवयंसर्वेत्वद्वाक्यामृतलालसाः ॥ ६८ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ अद्यचित्रंमहद्दृष्टंव्योम्नोवतरतामया ॥ तच्छृणुष्वमहाराजसहैभिर्मुनिपुंगवैः ॥ ६९ ॥ अद्यमृत्युरिहायातोविहंतुंतवपुत्रकम् ॥ दंडहस्तोदुराधर्षोलोकमुद्बाधयन्सदा ॥ ७० ॥ ईश्वरोपिविदित्वैनंत्वत्पुत्रंहंतुमागतम् ॥ सहैवपार्षदैःकंचिद्वीरभद्रमचोदयत् ॥ ७१ ॥ सआगत्यहठान्मृत्युंत्वत्पुत्रंहंतुमागतम् ॥ गृहीत्वासुदृढंबद्ध्वादंडेनाभ्यहनद्रुषा ॥ ७२ ॥ तंनीयमानंजगदीशसन्निधिंशीघ्रंविदित्वाभगवान्यमःस्वयम् ॥ कृतांजलिर्देवजयेत्युदीरयन्प्रणम्यमूर्ध्नानिजगादशूलिनम् ॥ ७३ ॥

भक्तका प्राण लेनेको यह आई है, उसीसमय शंकरने कितने एक वीरभद्रोंको आज्ञा दी ॥ ७१ ॥ तुम्हारे पुत्रको वध करनेके निमित्त आईहुई मृत्युको उन शंकरके पार्षदोंने आकर हठसे ग्रहणकर दृढ बन्धनसे बाँधा और क्रोधकर दंडसे उसको ताडन किया ॥ ७२ ॥ तथा शंकरके पासको लेचले इतनेहीमें यमराजको विदित हुआ तौ जयहो, जयहो इसप्रकार बारम्बार उच्चारणकर हाथजोड यमराजने आकर उनको मस्तक झुकाकर प्रणाम

किया ॥७३॥ और फिर बोले हे देवदेव ! हे महावीर ! हे भद्र ! तुमको प्रणाम करता हूँ,अपराधरहित इस मृत्युपर तुम्हारा क्रोध किसप्रकार उपस्थित हुआ ॥ ७४॥ अपने कर्मानुसार इसराजपुत्रकी आयु पूरी होगई, तब राजपुत्रके मारनेको यह आई हे प्रभो! इसका क्या अपराध है ॥७५॥ वीरभद्र बोले कि,रुद्राध्यायके प्रभावसे इसकी अवस्था दशहजार वर्षकी होगईहै, इसकारण बीचमें किसी प्रकार नहीं मरसकता ॥७७॥हमारे कथनपर यदि तुमको कुछ संदेह हो तो चित्रगुप्तको बुलाकर पूँछ लो॥७७॥नारदजी बोले कि, हे राजन् ! इसप्रकार वीरभद्रके कहनेपर यमराजने चित्रगुप्तको बुलाया और तुम्हारे पुत्रकी

॥ यमउवाच ॥ ॥ देवदेवमहारुद्रवीरभद्रनमोस्तुते ॥ निरागासिकथंमृत्यौकोपस्तवसमुत्थितः ॥ ७४ ॥ निजकर्मानुबंधेनराजपुत्रंगतायुषम् ॥ प्रहर्तुमुद्यतेमृत्यौकोपराधोवदप्रभो ॥ ७५ ॥ ॥ ॥ वीरभद्रउवाच ॥ ॥ दशवर्षसहस्रायुःसराजतनयःकथम् ॥ विपत्तिमंतरायातिरुद्रस्नानहताशुभः ॥ ७६ ॥ अस्तिचेत्तवसंदेहोमद्वाक्येप्यनिवारिते ॥ चित्रगुप्तंसमाहूयप्रष्टव्योद्यैवमाचिरम् ॥ ७७ ॥ ॥ नारदउवाच ॥ अथाहूतश्चित्रगुप्तोयमेनसहसागतः ॥ आयुःप्रमाणंत्वत्सूनोःपरिपृष्टःसचाब्रवीत् ॥ ७८ ॥ द्वादशाब्दंचतस्यायुरित्युक्त्वाथविमृश्यच ॥ पुनर्लेख्यगतंप्राहसवर्षायुतजीवितम् ॥ ७९ ॥ अथभीतोयमोराजावीरभद्रंप्रणम्यच ॥ कथंचिन्मोचयामास मृत्युंदुर्वारबंधनात् ॥ ८० ॥ वीरभद्रेणमुक्तोथयमोगान्निजमंदिरम् ॥ वीरभद्रश्चकैलासमहंप्राप्तस्तवांतिकम् ॥ ८१ ॥

आयुका प्रमाण पूँछा ॥७८॥ पहिले तो चित्रगुप्तने बिना बिचारेही कह दिया कि इसकी आयु बारहवर्षकी है,फिर सोचा और अपनी सहीमें देखकर कहा कि इस बालककी अवस्था दश हज़ार वर्षकी है, बारह वर्ष भूलसे कह दियेथे ॥ ७९ ॥ यह सुन यमराज बहुत डरे और लज्जित हो वीरभद्रको प्रणाम किया तथा बड़ी प्रार्थना कर मृत्युको वीरभद्रके बड़े बन्धनसे छुटाया ॥ ८० ॥ वीरभद्रसे मुक्त हो यमराजभी अपने स्थानको गये, वीरभद्रभी कैला

सको चलेगये और मैं तुम्हारे निकटको चला आया ॥ ८१ ॥ इस कारण हे राजन् ! यह तुम्हारा पुत्र रुद्राध्यायके जपके प्रभावसे मृत्युके भयसे मुक्त हुआ और दश हजार वर्षतक सुखपूर्वक अपनी आयु भोगेगा ॥ ८२ ॥ इसप्रकार कह और राजाको समझा नारदजी तो स्वर्गको चलेगये और सब ब्राह्मणभी प्रसन्न हो अपने अपने स्थानको गये ॥ ८३ ॥ इसप्रकार काश्मीरका राजा रुद्राध्यायके प्रभावसे सम्पूर्ण दुःखोंसे छूट पुत्रसमेत कृतार्थ हुआ ॥ ८४ ॥ इस शंकरके माहात्म्यको जो पुरुष कथन करते और सुनतेहैं, उनके करोड़ों जन्मके पाप मुक्त होजातेहैं और शान्त हो अन्तमें वे शंकरके

अतस्तवकुमारोयंरुद्रजाप्यानुभावतः ॥ मृत्योर्भयंसमुत्तीर्यसुखीजातोयुतंसमाः ॥ ८२ ॥ इत्युक्त्वानृपमामंत्र्यनारदेत्रिदिवंगते ॥ विप्राःसर्वेप्रमुदिताःस्वंस्वंजग्मुरथाश्रमम् ॥ ८३ ॥ इत्थंकाश्मीरनृपतीरुद्राध्यायप्रभावतः ॥ निस्तीर्याशेषदुःखानिकृतार्थोभूत्सपुत्रकः ॥ ८४ ॥ येकीर्तयंतिमनुजाःपरमेश्वरस्यमाहात्म्यमेतदथकर्णपुटैःपिबंति ॥ तेजन्मकोटिकृतपापगणैर्विमुक्ताःशांताःप्रयांतिपरमंपदमिंदुमौलेः ८५ ॥ इतिश्रीस्कंदपुराणेब्रह्मोत्तरखंडेरुद्राध्यायमहिमवर्णनंनामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ ॥ सूतउवाच ॥ एवंशिवतमःपंथाःशिवेनैवप्रदर्शितः ॥ नृणांसंसृतिबद्धानांसद्योमुक्तिकरःपरः ॥ १ ॥ अथदुर्मेधसांपुंसांवेदेष्वनाधिकारिणाम् ॥ स्त्रीणांद्विजातिबंधूनांसर्वेषांचशरीरिणाम् ॥ २ ॥

परम पदको प्राप्त होतेहैं ॥ ८५ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखण्डे पंडितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां रुद्राध्यायमहिमवर्णनं नामैकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ अथ द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ सूतजी बोले ! कि हे मुनियो ! संसारमें बँधेहुए मनुष्योंको शीघ्रही मुक्ति देनेवाला यह कल्याणका दाता मार्ग शंकरने स्वयंही दिखा दिया है ॥ १ ॥ दुष्टबुद्धिवाले, वेदके अनधिकारीस्त्री, द्विजातिबन्धू तथा समस्त शरीरधारियोंके निमित्त ॥ २ ॥

यह साक्षात् मुक्तिका साधनरूप साधारण मार्ग है, महामुनि और देवताओंकोभी इसका सेवन करना चाहिये ॥ ३ ॥ यह शंकरकी कथाका श्रवण संसारके भयका नाशक, तत्काल मुक्तिका दाता और श्लाघनीय है ॥ ४ ॥ अज्ञानरूपी अन्धकारसे अन्धे हुओंको यह ज्ञानरूप सिद्धि और दीपक है, संसारसागररूप रोगमें फँसेहुओंको यह परम औषधरूप है, इसका अवश्य सेवन करना चाहिये ॥ ५ ॥ पर्वतोंके तुल्य महापातकोंको छेदन करनेके लिये यह आख्यान दारुण वज्रके समान है, कर्मबन्धनको छेदनकर यह सम्पूर्ण सम्पत्तियोंका साधन है ॥ ६ ॥ संसारको पवित्र करनेवाली इस

एषसाधारणःपंथाःसाक्षात्कैवल्यसाधनः ॥ महामुनिजनैःसेव्योदेवैरपिसुपूजितः ॥ ३ ॥ यत्कथाश्रवणंशंभोःसंसारभयनाशनम् ॥ सद्योमुक्तिकरंश्लाघ्यंसंसारभयनाशनम् ॥ ४ ॥ अज्ञानतिमिरांधानांदीपोयंज्ञानसिद्धिदः ॥ भवरोगनिबद्धानांसुसेव्यंपरमौषधम् ॥ ॥ ५ ॥ महापातकशैलानांवज्रघातसुदारुणम् ॥ भर्जनंकर्मबीजानांसाधनंसर्वसंपदाम् ॥ ६ ॥ येशृण्वंतिसदाशंभोःकथांभुवनपावनीम् ॥ तेवैमनुष्यालोकेस्मिन्रुद्राएवनसंशयः ॥ ७ ॥ शृण्वतांशूलिनोगाथांतथाकीर्तियतांसताम् ॥ तेषांपादरजांस्येवतीर्थानिमुनयोजगुः ॥ ८ ॥ तस्मान्निःश्रेयसंगंतुंयेभिवांछंतिदेहिनः ॥ तेशृण्वंतिसदाभक्त्याशैवींपौराणिकींकथाम् ॥ ९ ॥ यद्यशक्तःसदाश्रोतुंकथांपौराणिकींनरः ॥ मुहूर्तंवापिशृणुयान्नियतात्मादिनेदिने ॥ १० ॥

शंकरकी कथाका जो प्राणी श्रवण करतेहैं वे साक्षात् शंकरके तुल्य हैं, इसमें सन्देह नहीं ॥ ७ ॥ शंकरकी कथाका श्रवण और कीर्तन करनेवालोंके चरणोंका रज तीर्थके समान है, ऐसा मुनिजन कहतेहैं ॥ ८ ॥ इसलिये जो प्राणी अपने कल्याणकी इच्छा करें वे सदा भक्तिपूर्वक पुराणोक्त शंकरकी कथाका श्रवण करें ॥ ९ ॥ जो नित्य कथाका श्रवण न करसकें तो मुहूर्तमात्रभी नियतात्मा हो प्रतिदिन श्रवण करें ॥ १० ॥

और प्रतिदिन मुहूर्तमात्रभी न सुनसकें तो पवित्रमास, पवित्र दिन और पवित्र तिथियोंमें ॥ ११ ॥ जो पुराणकी मनोहर कथाका श्रवण करताहै वह कर्मके महावनको दग्ध कर संसारसागरके पार होजाताहै ॥ १२ ॥ एक मुहूर्त आधे मुहूर्त्त अथवा क्षणमात्रभी जो पुरुष परमपावनी कथाका भक्तिपूर्वक सदा श्रवण करतेहैं उनकी कभी दुर्गति नहीं होती ॥ १३ ॥ सब यज्ञ और सब दानके करनेसे जो फल प्राप्त होताहै वह फल पुराण कथाके एकबार

अथप्रतिदिनंश्रोतुमशक्तोयदिमानवः ॥ पुण्यमासेषुवापुण्येदिनेपुण्यतिथिष्वपि ॥ ११ ॥ यःशृणोतिकथांरम्यांपुराणैःसमुदीरिताम् ॥ सनिस्तरतिसंसारंदग्ध्वाकर्ममहाटवीम् ॥ १२ ॥ मुहूर्त्तंवातदर्द्धंवाक्षणंवापावनींकथाम् ॥ येशृण्वंतिसदाभक्त्यानतेषामस्तिदुर्गतिः॥ १३॥ यत्फलंसर्वयज्ञेषुसर्वदानेषुयत्फलम् ॥ सकृत्पुराणश्रवणात्तत्फलंविंदतेनरः ॥ १४ ॥ कलौयुगेविशेषेणपुराणश्रवणादृते ॥ नास्तिधर्मःपरः पुंसांनास्तिमुक्तिपथःपरः ॥ १५ ॥ पुराणश्रवणाच्छंभोर्नामसंकीर्तनंपरम् ॥ अतएवमनुष्याणांकल्पद्रुममहाफलम् ॥ १६ ॥ कलौहि नायुषोमर्त्यादुर्बलाःश्रमपीडिताः ॥ दुर्मेधसोदुःखभाजोधर्माचारविवर्जिताः ॥ १७ ॥ इतिसंचिंत्यकृपयाभगवान्बादरायणः ॥ हिताय तेषांविदधेपुराणाख्यंसुधारसम् ॥ १८ ॥

श्रवण करनेसे मिल जाता है ॥ १४ ॥ विशेष कर कलियुगमें पुराण श्रवणसे अधिक मनुष्योंके लिये कोई धर्म और मुक्तिका साधन नहीं है ॥ १५ ॥ पुराणकथाका श्रवण और शंकरके नामका उच्चारण यह दोनों मनुष्योंके लिये कल्पवृक्ष हैं, इसके सेवनसे महाफलकी प्राप्ति होतीहै॥ १६ ॥ कलियुगमें सब मनुष्य अल्पायु, दुर्वल, श्रमसे पीडित, दुर्बुद्धि, दुःख भोगनेवाले और धर्म तथा आचारहीन होंगे ॥ १७ ॥ इसप्रकार विचार और कृपाकर भगवान्

वेदव्यास मुनिने उनके हितके निमित्त अठारह पुराणरूप अमृत निर्माण किये ॥ १८ ॥ कि जनकी कथाके पान करनेसे मनुष्य अजर और अमर होजाय, तिसमेंभी शंकरकी कथारूप अमृतके पान करनेसे तो मनुष्य अवश्य ही अजर और अमर होजाता है ॥ १९ ॥ पुराणका ज्ञाता पुरुष बालक, वृद्ध युवा, दरिद्र, दुर्बल अथवा कैसाही हो वह सदा वन्दनाके योग्य है और अपना भला चाहनेवालोंको उसकी सदा पूजा करनी चाहिये ॥ २० ॥ पुराण जाननेवाले पुरुषोंमें नीचबुद्धि कभी न करनी चाहिये क्योंकि उनके मुखरूप कमलसे निकलीहुई पुराणरूप बाणी मनुष्योंके लिये कामधेनु है

पिबेन्नवामृतंयत्नादेतत्स्यादजरामरः ॥ शंभोःकथामृतंकुर्यात्सुलभंवाजरामरम् ॥ १९ ॥ बालोयुवादरिद्रोवावृद्धोवादुर्बलोपिवा ॥ पुराणज्ञः सदावंद्यःपूज्यश्चसुकृतार्थिभिः ॥२०॥ नीचबुद्धिंनकुर्वीतपुराणज्ञेकदाचन ॥ यस्यवक्त्रांबुजाद्वाणीकामधेनुःशरीरिणाम् ॥२१॥ गुरवःसंतिलोके षुजन्मतोगुणतस्तथा ॥ तेषामपिचसर्वेषांपुराणज्ञःपरोगुरुः ॥२२॥ भवकोटिसहस्रेषुभूत्वाभूत्वावसीदति ॥ योददात्यपुनर्वृत्तिंकोन्यस्तस्मात्परो गुरुः ॥२३॥ पुराणज्ञःशुचिर्दांतःशांतोविजितमत्सरः ॥ साधुःकारुण्यवान्वाग्मीवदेत्पुण्यकथांसुधीः ॥२४॥ व्यासासनंसमारूढोयदापौराणिको द्विजः ॥ असमाप्तप्रसंगश्चनमस्कुर्यान्नकस्यचित् ॥२५॥ येधूर्तायेचदुर्वृत्तायेचान्येविजिगीषवः ॥ तेषांकुटिलवृत्तीनामग्रेनैववदेत्कथाम् ॥२६॥

॥ २१ ॥ संसारमें मनुष्य अवस्था और विद्याके कारण गुरु होतेहैं, किन्तु पुराणका जाननेवाला पुरुष उनकाभी गुरु और पूज्य है ॥ २२ ॥ जो प्राणी अनेक जन्मोंमें उत्पन्न होहोकर अनेक दुःख भोगतेहैं उनको पुराणकथा श्रवण कराय उद्धार करनेवाला क्या गुरुसे कम हो सकता है ॥ २३ ॥ पुराण जाननेवाला पुरुषभी पवित्र, चतुर, शान्तचित्त, जितेन्द्रिय, सज्जन, दयालु और ईर्षारहित होना चाहिये ॥ २४ ॥ व्यासगद्दीपर बैठ कथा बांचे और जबतक कथाका प्रसंग समाप्त न होजाय तबतक किसीको नमस्कार न करे ॥ २५ ॥ जो पुरुष धूर्त, कुटिल तथा जयकी इच्छावाले हों

उनके आगे कदापि कथा न बाँचे ॥ २६ ॥ और जहाँ दुर्जन, शूद्र, दुराचारी द्यूत (जुआ) खेलनेवाले आदि खोटे पुरुष निवास करते हों अथवा जहाँ सिंह आदि हिंसक जीवोंका भयहो वहाँभी पवित्र कथा नहीं बाँचनी चाहिये ॥ २७ ॥ भले पुरुषोंसे व्याप्त सुन्दर ग्राम सुन्दर स्थान देवताओंके मंदिर, पवित्र नदी नद और तीर्थोंके किनारेमें पुराणकी कथाबाँचे ॥ २८ ॥ शिवभक्तिपरायण, अन्यकार्योंसे अभिलाषाको रोकनेवाले, और मौन धारणकर कथा श्रवण करनेवाले, ऐसे श्रोता पुण्यके भागी होते हैं ॥ २९ ॥ वहाँ परस्पर वार्तालाप न करे, जो पुरुष भक्तिके

नदुर्जनसमाकीर्णेनशूद्रश्वापदावृते॥ देशेनद्यूतसदनेवदेत्पुण्यकथांसुधीः ॥२७॥ संग्रामेसुजनाकीर्णेसुक्षेत्रेदेवतालये ॥ पुण्येनदनदीतीरेव देत्पुण्यकथांसुधीः ॥२८॥ शिवभक्तिसमायुक्तानान्यकार्येषुलालसाः ॥ वाग्यताःसुश्रवोव्यग्राःश्रोतारःपुण्यभागिनः ॥२९॥ अभक्तायेक थांपुण्यांशृण्वंतिमनुजाधमाः ॥ तेषांपुण्यफलंनास्तिदुःखंस्याज्जन्मजन्मनि ॥ ३० ॥ पुराणंयेत्वसंपूज्यतांबूलाद्यैरुपायनैः ॥ शृण्वं तिचकथांभक्त्यादरिद्राःस्युर्नपापिनः ॥३१॥ कथायांकीर्त्यमानायांयेगच्छंत्यन्यतोनराः ॥ भोगांतरेप्रणश्यंतितेषांदाराश्चसंपदः ॥३२॥ सोष्णीषमस्तकायेचकथांशृण्वंतिपावनीम् ॥ तेबलाकाःप्रजायंतेपापिनोमनुजाधमाः ॥ ३३ ॥

विना पवित्र कथाको सुनतेहैं, वे नीच हैं, उनको पुण्य वा फल नहीं मिलता और जन्म जन्मान्तरमेंभी उनको दुःखही भोगना पडता है ॥ ३० ॥ ताम्बूलआदिकी विना भेंट चढाये जो पुरुष कथा सुनते हैं, वे भी दूसरे जन्ममें दरिद्र होते हैं किंतु पापी नहीं ॥ ३१ ॥ कथाके विना समाप्त हुएही जो पुरुष उठकर इधरउधर चलदेतेहैं, उनके सम्पूर्ण भोग नष्ट होजातेहैं और जन्मान्तरमें वे स्त्रीहीन होते हैं ॥ ३२ ॥ जो पगडी बाँधकर कथा श्रवण

करते हैं वे पापी और अधम हैं और दूसरे जन्ममें वे बलाक होते हैं ॥ ३३ ॥ ताम्बूल भक्षणकर जो कथा सुनते हैं उनको यमराजके दूत अपना विष्ठा खिलाते हैं ॥ ३४ ॥ जो ऊंचे आसनपर बैठ कथा सुनतेहैं वे दांभिकहैं उनको अक्षय नरकोंकी प्राप्ति होती है और उनको भोगकर वायसयोनि मिलती है ॥ ३५ ॥ वीरासन और मञ्चपर बैठकर जो कथा सुनतेहैं वे दूसरे जन्ममें अनृजु (टेढ़े) वृक्ष होतेहैं ॥ ३६ ॥ विना प्रणामकिये कथा सुनतेहैं वे विषवृक्ष होते हैं, और जो कथामें सोतेहैं वे दूसरे जन्ममें अजगर (सर्प) होते हैं ॥ ३७ ॥ जो पुरुष कथा बाँचनेवालेके बराबर ऊँचे आसनपर बैठ

तांबूलंभक्षयंतोयेकथांशृण्वंतिपावनीम् ॥ स्वविष्टांखादयंत्येतान्नरकेयमकिंकराः ॥ ३४॥ येचतुंगासनारूढाःकथांशृण्वंतिदांभिकाः ॥ अक्षयान्नरकान्भुक्त्वातेभवंत्येववायसाः ॥ ३५ ॥ येचवीरासनारूढायेचमंचकसंस्थिताः ॥ शृण्वंतिसत्कथांतेवैभवंत्यनृजुपादपाः ॥ ॥ ३६ ॥ असंप्रणम्यशृण्वंतोविषवृक्षाभवंतिवै ॥ तथाशयानाःशृण्वंतोभवंत्यजगरानराः ॥ ३७ ॥ यःशृणोतिकथांवक्तुःसमानासनमाश्रितः ॥ गुरुतल्पसमंपापंसंप्राप्यनरकंव्रजेत् ॥ ३८ ॥ येनिंदंतिपुराणज्ञंकथांपापापहारिणीम् ॥ तेवैजन्मशतंमर्त्याःशुनकाःसंभवंतिच ॥ ३९ ॥ कथायांवर्तमानायांयेवदंतिनराधमाः ॥ तेगर्दभाःप्रजायंतेकृकलासास्ततःपरम् ॥ ४० ॥ कदाचिदपियेपुण्यांनशृण्वंतिकथांनराः ॥ तेभुक्त्वानरकान्घोरान्भवंतिवनसूकराः ॥ ४१ ॥

कथा सुनता है उसको गुरुपत्नीमें गमन करनेका पाप लगता है तथा अन्तमें उसकी नरकमें गति होतीहै ॥ ३८ ॥ जो पुराण और पुराण जाननेवालेकी निन्दा करतेहैं वे सौ जन्मतक कुत्तेकी योनि भोगतेहैं ॥३९॥ कथा होतेसमय जो पुरुष कुतर्क करते हैं; वे मनुष्योंमें अधम हैं और दूसरे जन्ममें गधे होते हैं इसके उपरान्त कृकलास ॥ ४० ॥ और जो पवित्र कथाको कभी सुनतेही नहीं, वे घोर नरकोंको भोग अन्तमें वनसूकर होतेहैं ॥ ४१ ॥

जो पुरुष कथा सुनकर प्रसन्न होते हैं, वे मनुष्योंमें श्रेष्ठ हैं, चाहे वे कथा नभी सुनें तोभी वे परमपदको प्राप्त होतेहैं ॥ ४२ ॥ कथा होते समय जो शठ कथामें विघ्न करते हैं वे करोड वर्षतक नरक भोग अन्तमें ग्रामसूकर होते हैं ॥ ४३ ॥ और जो पुरुष पुराणकी पवित्र कथा दूसरोंको सुनाते हैं वे करोडों कल्पोंसेभी अधिक ब्रह्मलोकमें वास करते हैं ॥ ४४ ॥ पुराण बाँचनेवालेके आसनके निमित्त जो पुरुष भक्तिसें कम्बल, मृगचर्म, वस्त्र, मञ्च

येकथामनुमोदंतेकीर्त्यमानांनरोत्तमाः ॥ अशृण्वंतोपितेयांतिशाश्वतंपरमंपदम् ॥ ४२ ॥ कथायांकीर्त्यमानायांविघ्नंकुर्वंतियेशठाः ॥ कोटचब्दान्नरकान्भुक्त्वाभवंतिग्रामसूकराः ॥४३॥ येश्रावयंतिमनुजान्पुण्यांपौराणिकींकथाम् ॥ कल्पकोटिशतंसाग्रंतिष्ठंतिब्रह्मणः पदम् ॥ ४४ ॥ आसनार्थंप्रयच्छंतिपुराणज्ञस्ययेनराः ॥ कंबलाजिनवासांसिमंचंफलकमेवच ॥ ४५ ॥ स्वर्गलोकंसमासाद्यभुक्त्वाभोगान्यथेप्सितान् ॥ स्थित्वाब्रह्मादिलोकेषुपदंयांतिनिरामयम् ॥ ४६ ॥ पुराणज्ञस्ययच्छंतियेसूत्रवसनंनवम् ॥ भोगिनोज्ञानसंपन्नास्ते भवंतिभवेभवे ॥ ४७ ॥ येमहापातकैर्युक्ताउपपातकिनश्चये ॥ पुराणश्रवणादेवतेयांतिपरमंपदम् ॥ ४८ ॥ अत्रवक्ष्येमहापुण्यमितिहासंद्विजोत्तमाः ॥ शृण्वतांसर्वपापघ्नंविचित्रंसुमनोहरम् ॥ ४९ ॥

और फल प्रदान करते हैं ॥ ४५ ॥ वे स्वर्गलोकमें प्राप्त हो, मनइच्छित भोगोंको भोग ब्रह्मादिलोकोंमें स्थित हो निरामय पदको प्राप्त होतेहैं ॥ ४६ ॥ जो पुरुष पुराणवक्ताको नवीन सूतके वस्त्र प्रदान करते हैं वे प्रत्येक जन्ममें भोगी और ज्ञानी होते हैं ॥ ४७ ॥ जो प्राणी महापातकी और उपपातकी हैं वेभी पुराणकथाके सुननेसे परमपदको प्राप्त होते हैं ॥ ४८ ॥ इसप्रकार कह सूतजी कहनेंलगे कि हे द्विजोत्तमो ! इस विषयमें महापवित्र और सुनने

वालोंके पाप नष्ट करनेवाला मनोहर एक विचित्र इतिहास वर्णन करताहूँ, सुनो ॥ ४९ ॥ दक्षिण देशमें बाष्कलनाम एक ग्राम था, उसमें जितने मनुष्य रहतेथे सब मूर्ख और कर्महीन थे ॥ ५० ॥ वहाँके ब्राह्मणभी दुराचारी, मूर्ख और श्रुति स्मृतिके धर्मसे पराङ्मुख थे, पूजा पाठसे हीन, पराई स्त्रीसे रति करतेथे ॥ ५१ ॥ कोई खेती और कोई शस्त्र धारणकर पराई सेवा करते; ज्ञान और वैराग्यके लक्षणवाले परमधर्मको कोई न जानते ॥५२॥और वहाँकी स्त्रियेंभी पापिनी, व्यभिचारिणी, कामकी लालसावाली,दुष्टबुद्धिवाली, कुटिलगामिनी और सुन्दर व्रतआदि आचारहीन थीं॥५३॥

दक्षिणापथमध्येवैग्रामोबाष्कलसंज्ञिकः ॥ तत्रसंतिजनाःसर्वेमूढाःकर्मविवर्जिताः ॥ ५० ॥ नतत्रब्राह्मणाचाराःश्रुतिस्मृतिपराङ्मुखाः ॥ जपस्वाध्यायरहिताःपरस्त्रीविषयातुराः ॥५१ ॥ कृषीवलाःशस्त्रधरानिर्देवाजिह्मवृत्तयः ॥ नजानंतिपरंधर्मंज्ञानवैराग्यलक्षणम्॥ ५२ ॥ स्त्रियश्चपापनिरताःस्वैरिण्यःकामलालसाः ॥ दुर्बुद्धयःकुटिलगाःसद्वृताचारवर्जिताः॥५३॥तत्रैकोविदुरोनामदुरात्माब्राह्मणाधमः ॥ आसीद्वेश्यापतिर्योसौसदारोपिकुमार्गगः ॥ ५४ ॥ सत्पत्नींबंदुलांनामहित्वाप्रतिनिशंतथा ॥ वेश्याभवनमासाद्यरमतेस्मरपीडितः ॥ ५५ ॥ सापितस्यांगनारात्रौवियुक्तानवयौवना ॥ असहंतीस्मरावेशंरेमेजारेणसंगता ॥ ५६ ॥

उस ग्राममें विदुरनाम एक दुरात्मा ब्राह्मण रहताथा, उसकी स्त्रीभी थी किंतु उसको छोड कुमार्गमें प्रवृत्त हुआ और एक वेश्याके यहाँ जानेलगा ॥ ५४ ॥ अपनी पतिव्रता बंदुलानाम स्त्रीको प्रतिदिन रात्रिके समय अकेली घरमें छोड वेश्याके घर चलाजाता और उसके साथ कामसे पीडित हो रमण करता ॥ ५५ ॥ वह उसकी स्त्रीभी रात्रिमें पतिका वियोग होनेसे नवयौवना होनेके कारण कामदेवके आवेशको न सहसकी और किसी अन्य पुरुषके

साथ प्रीति करली ॥ ५६ ॥ एकसमय दुराचारिणी उस अपनी स्त्रीको उसके पतिने जारके साथ गमन करते देखलिया और क्रोधकर जल्दीसे उसके मारनेको दौडा ॥ ५७ ॥ जार तो भागगया किंतु उसे पकडलिया भलीप्रकार उसकी ताडनाकर मुष्टिबन्धनसे बारम्बार मारनेलगा ॥ ५८ ॥ जब उसके पतिने उसको बहुत मारा तब निर्भय हो क्रोधकर पतिसे बोली कि आप प्रतिरात्रिको वेश्याके घर जाकर रमण करतेहो, मेरी क्या गतिहो ॥ ५९ ॥ मैं रूपवती यौवनशालिनी स्त्रीहूँ तिसपर तुम्हारे साथ गमन नहीं होता फिर कामके वेगको मैं किसप्रकार सहसकतीहूँ ॥ ६० ॥ इस

तांकदाचिद्दुराचारांजारेणसहसंगताम् ॥ दृष्ट्वातस्याःपतिःक्रोधादभिदुद्रावसत्वरः ॥५७॥जारेपलायितेपत्नींगृहीत्वासदुराशयः ॥ संताड्य मुष्टिबंधेनमुहुर्मुहुरताडयत् ॥ ५८ ॥ सानारीपीडितांभर्त्राकुपिताप्राहनिर्भया ॥ भवान्प्रतिनिशंवेश्यांरमतेकागतिर्मम ॥ ५९ ॥ अहं रूपवतीयोषानवयौवनशालिनी ॥ कथंसहिष्येकामार्तातवसंगतिवर्जिता ॥ ६० ॥ इत्युक्तःसतयातन्व्याप्रोवाचब्राह्मणाधमः ॥ युक्त मेवत्वयोक्तंहितस्माद्वक्ष्यामितेहितम् ॥ ६१ ॥ जारेभ्योधनमाकृष्यतेभ्योदेहिपरांरतिम् ॥ तद्धनंदेहिमेसर्वंपण्यस्त्रीणांददामितत् ॥ ६२ ॥ एवंसंपूर्यतेकामोममापिचवरानने ॥ तथेतिभर्तृवचनंप्रतिजग्राहसावधूः ॥ ६३ ॥

प्रकार उस व्यभिचारिणीके कहनेपर वह ब्राह्मणाधम बोला कि, तैंने बहुत ठीक कहा, इसलिये मैं तेरे हितके लिये जो वचन कहताहूँ उसको सुन ॥ ६१ ॥ कि तू अपने जारोंसे धन लेकर उनको रतिदान कर और वह धन मुझे देदियाकर मैं उस धनको वेश्याओंको देदियाकरूँगा कारण कि विना धनके वहाँ गमन नहीं होसकता ॥ ६२ ॥ हे वरानने ! इसप्रकार करनेसे मेरी कामनाभी सिद्ध होजायगी, यह सुन वधू अपने पतिसे बोली कि, तुम्हारा वचन मुझे स्वीकार है ॥ ६३ ॥

इस प्रकार वे दोनों दुराचारमें प्रवृत्त होगये, दुराचार करते करते अपनी आयु भोग वह वेश्यागामी ब्राह्मण मृत्युको प्राप्त हुआ ॥ ६४ ॥ पतिके मरनेपर वह व्यभिचारिणी स्त्री पुत्रोंको साथ ले अपने घर रहनेलगी, इतने समयमें कुछ यौवनभी बीतगया ॥ ६५ ॥ एकसमय दैवयोगसे कोई पवित्र पर्व प्राप्त हुआ तब वह स्त्री भी अपने बन्धुओंके साथ गोकर्णक्षेत्रमें आई ॥ ६६ ॥ वहाँ तीर्थजलमें स्नान कर देवालयमें महाबलेश्वर महादेवका पूजन किया और देवमुख्य पवित्र पुराणकी कथा सुनी ॥ ६७ ॥ वहाँ उससमय कथाका यह प्रसंग था कि व्यभिचारिणी स्त्रियोंके लिये अन्तमें नरकमें जानेपर यमके

एवंतयोस्तुदंपत्योर्दुराचारप्रवृत्तयोः ॥ कालेननिधनंप्राप्तःसविप्रोवृषलीपतिः ॥ ६४ ॥ मृतेभर्तरिसानारीपुत्रैःसहनिजालये ॥ उवास सुचिरंकालंकिंचिदुत्क्रांतयौवना ॥ ६५ ॥ एकदादैवयोगेनसंप्राप्तेपुण्यपर्वणि ॥ सानारीबंधुभिःसार्धंगोकर्णक्षेत्रमाययौ ॥ ६६ ॥ तत्रतीर्थजलेस्नात्वाकस्मिंश्चिद्देवतालये ॥ शुश्रावदेवमुख्यानांपुण्यांपौराणिकींकथाम् ॥ ६७ ॥ योषितांजारसक्तानांनरकेयमकिंकराः ॥ संतप्तलोहपरिघंक्षिपंतिस्मरमंदिरे ॥ ६८ ॥ इतिपौराणिकेनोक्तांसाश्रुत्वाधर्मसंहिताम् ॥ तमुवाचरहस्येवंभीताब्राह्मणपुंगवम् ॥ ६९ ॥ ब्रह्मन्पापमजानंत्यामयाचरितमुल्बणम् ॥ यौवनेकामचारेणकौटिल्येनप्रवर्तितम् ॥ ७० ॥ इदंत्वद्वचनंश्रुत्वापुराणार्थविजृंभितम् ॥ भीतिर्मेमहतीजाताशरीरंवेपतेमुहुः ॥ ७१ ॥

दूत तप्तहुए लोहेके दंड उनकी योनिमें डालेंगे ॥ ६८ ॥ इसप्रकार पुराणवक्ताकी वाणी सुन कथा समाप्त होनेके उपरान्त भयसे एकान्तमें जा पुराणके वक्ता ब्राह्मणसे बोली ॥ ६९ ॥ कि हे ब्रह्मन् ! विना जाने मैंने बहुत पाप किये, यौवनावस्थाके समय मैंने मनवांछित व्यभिचार किया ॥ ७० ॥ पुराणमें लिखे और तुम्हारे मुखसे निकलेहुए वचनको सुन मुझको बहुत डर लगने लगा तथा मेरा शरीरभी बारंबार काँप रहा है ॥ ७१ ॥

मुझको धिक्कार है जो कामके वश हो मैंने ऐसा पाप किया उस थोडेसे सुखके कारण अब मैं घोर नरकमें जाऊँगी॥ ७२॥ मरणके समय भयंकर यमके दूतोंको मैं किसप्रकार देख सकूँगी, पाशोंसे बलपूर्वक जब वे मेरे कण्ठमें फाँसी डालेंगे तब मुझको किसप्रकार धैर्य होगा ॥ ७३ ॥ नरकमें जब मेरे शरीरके खण्ड किये जायँगे तब किसप्रकार सहन होगा, फिर सन्तप्त जारकर्दममें किसप्रकार गिरूँगी ॥ ७४ ॥ योनिमें कृमि, कीट और खगादिके होने

धिङ्मांदुरिंद्रियासक्तांपापांस्मरविमोहिताम् ॥ अल्पस्ययत्सुखस्यार्थेघोरांयास्यामिदुर्गतिम् ॥ ७२ ॥ कथंपश्यामिमरणेयमदूतान्भयंकरान् ॥ कथंपाशैर्बलात्कंठेबध्यमानाधृतिंलभे ॥ ७३ ॥ कथंसहिष्येनरकेखंडशोदेहकृंतनम् ॥ पुनःकथंपतिष्यामिसंतप्ताजारकर्दमे ॥ ॥ ७४ ॥ कथंचयोनिलक्षेषुकृमिकीटखगादिषु ॥ परिभ्रमामिदुःखौघात्पीडचमानानिरंतरम् ॥ ७५ ॥ कथंचरोचतेमह्यमद्यप्रभृतिभोजनम् ॥ रात्रौकथंचसेविष्येनिद्रांदुःखपरिप्लुता ॥ ७६ ॥ हाहाहतास्मिदग्धास्मिविदीर्णहृदयास्मिच ॥ हाविधेमांमहापापेदत्त्वाबुद्धिमपातयः ॥ ७७ ॥ पततस्तुंगशैलाग्राच्छूलाक्रांतस्यदेहिनः ॥ यद्दुःखंजायतेघोरंतस्मात्कोटिगुणंमम ॥ ७८ ॥ अश्वमेधायुतंकृत्वागंगांस्नात्वाशतंसमाः ॥ नशुद्धिर्जायतेप्रायोमत्पापस्यगरीयसः ॥ ७९ ॥

पर दुःखसमूहसे नित्य पीडित हो किसप्रकार भ्रमण करूँगी ॥ ७५ ॥ फिर आज किसप्रकार मुझको भोजन अच्छा लगे और दुःखके कारण रात्रिको निद्रा किसप्रकार आवे ॥ ७६ ॥ हाहा ! मैं मरी और दग्ध हुई तथा मेरा हृदय विदीर्ण हुआ, हा विधे ! मुझ पापिनीको मृतक कर ॥ ७७ ॥ बड़े ऊँचे पर्वतपरसे गिरने और शूल लगे शरीरसे जो घोर दुःख होता है उससे करोड़गुना दुःख इस समय मुझको है ॥ ७८ ॥ सैकड़ों अश्वमेध और

सैकड़ों बार गंगामें स्नान करूँ तोभी मेरे पापोंकी शुद्धि नहीं हो सकती क्योंकि मेरे पाप बहुत हैं ॥ ७९ ॥ हे भगवन् ! क्या करूँ; कहाँ जाऊँ, किस की शरण लूं घोर नरकमें गिरतीहुई मुझको इससमय लोकमें कौन मन्त्र दे ॥८० ॥ हे ब्रह्मन् ! तुम्हीं मेरे गुरु और मातापिता हो, अपनी शरण आई हुई मुझ दुखियाका उद्धार करो उद्धार करो ॥ ८१ ॥ इसप्रकार दुःखमें मग्न और दोनों चरणोंपर पड़ीहुई उसको कृपापूर्वक उठाकर बुद्धिमान्, ब्राह्मण बोला ॥ ८२ ॥ कि दैवसे अच्छे समय इस पवित्र कथाको सुनकर तुझे चेत हुआ, तू भय मतकर जिसप्रकार तेरी सुखपूर्वक गति हो सो मैं कहताहूँ

किंकरोमिक्वगच्छामिकंवाशरणमाश्रये ॥ कोवामांत्रायतेलोकेपतंतींनरकार्णवे ॥ ८० ॥ त्वमेवमेगुरुर्ब्रह्मंस्त्वंमातात्वंपितासिच ॥ उद्धरोद्धरमांदीनांत्वामेवशरणंगताम् ॥ ८१ ॥ इतितांजातनिर्वेदांपतितांचरणद्वये ॥ उत्थाप्यकृपयाधीमान्बभाषेद्विजपुंगवः ॥ ८२ ॥ ब्राह्मणउवाच ॥ ॥ दिष्ट्याकालेप्रबुद्धासिश्रुत्वेमांमहतींकथाम् ॥ माभैषीस्तववक्ष्यामिगतिंचैवसुखावहाम् ॥ ८३ ॥ सत्कथाश्रवणा देवजातोतेमतिरीदृशी ॥ इन्द्रियार्थेषुवैराग्यंपश्चात्तापोमहानभूत् ॥ ८४ ॥ पश्चात्तापोहिसर्वेषामघानांनिष्कृतिःपरा ॥ तेनैवकुरुतेसद्यः प्रायश्चित्तंसुधीर्नरः ॥ ८५ ॥ प्रायश्चित्तानिसर्वाणिकृत्वाचाविधिवत्पुनः ॥ अपश्चात्तापिनोमर्त्यानयांतिगतिमुत्तमाम् ॥ ८६ ॥ यथामुहुःशोध्यमानोदर्पणोनिर्मलोभवेत् ॥ तथासत्कथयाचेतोविशुद्धिंपरमांव्रजेत् ॥ ८७ ॥

॥ ८३ ॥ इस श्रेष्ठ कथाके सुननेसेही तेरी यह शुद्ध बुद्धि होगई, कि इन्द्रियार्थोंमें वैराग्य और खोटे कर्मका बडा पश्चात्ताप किया ॥ ८४ ॥ पापकर पश्चात्ताप करनेसेभी पापोंकी निष्कृति होजाती है इसकारण बुद्धिमान् पुरुष अवश्य पश्चात्ताप करता है ॥ ८५ ॥ यदि कोई पुरुष पापोंकी निष्कृतिके लिये विधिपूर्वक अनेक प्रायश्चित्त करें और पश्चात्ताप न करें तो उनकी उत्तम गति कदापि नहीं होसकती ॥ ८६ ॥ जिसप्रकार भस्मसे मज्जन किया

हुआ दर्पण निर्मल होजाता है इसीप्रकार सुन्दर कथा सुननेसे मनुष्यकी सम्पूर्ण पापोंसे शुद्धि होजातीहै ॥ ८७ ॥ अन्तःकरण शुद्ध होनेसे मनु
ष्योंका ध्यान शंकरमें लगताहै ध्यान करनेसे मन, वाणी और शरीरकी सब मलिनता ॥ ८८ ॥ तत्काल नष्ट होजातीहै और कृतकृत्य हो वे सीधे
शिवलोकको चलेजातेहैं, इसकारण सुन्दर कथाका सुनना पुण्योंका साधनहै ॥ ८९ ॥ कथासे ध्यान और ध्यानसे मुक्ति मिलतीहै, छिद्ररहित और
निर्मल ज्ञान धारण कर जो पुरुष कथा श्रवण करताहै ॥ ९० ॥ वह दूसरे जन्ममें शंकरका ध्यान कर परमगतिको प्राप्त होताहै सब मनुष्योंके लिये

विशुद्धेचेतसिनृणांध्यानंसिध्यत्युमापतेः ॥ ध्यानेनसर्वंमलिनंमनोवाक्कायसंभृतम् ॥ ८८ ॥ सद्योविधूयकृतिनोयांतिशम्भोःपरंपदम् ॥
अतःसंन्यस्तपुण्यानांसत्कथासाधनंपरम् ॥ ८९ ॥ कथयासिध्यतिध्यानंध्यानात्कैवल्यमुत्तमम् ॥ अच्छिद्रविमलज्ञानःकथामेतांशृणो
तियः ॥ ९० ॥ सोन्यजन्मनिसंप्राप्यध्यानंयातिपरांगतिम् ॥ सर्वेषांश्रेयसांबीजंसत्कथाश्रवणंनृणाम् ॥ ९१ ॥ यस्तद्विहीनःसपशुःकथं
मुच्येतबन्धनात् ॥ अतस्त्वमपिसर्वेभ्योविषयेभ्योनिवृत्तधीः ॥ ९२ ॥ भक्तिपरांसमाधायसत्कथांशृणुसर्वदा ॥ शृण्वंत्याःसत्कथां
नित्यंचेतस्तेशुद्धिमेष्यति ॥ ९३ ॥ तेनध्यायसिविश्वेशन्ततोमुक्तिमवाप्स्यसि ॥ ध्यायतःशिवपादाब्जंमुक्तिरेकेनजन्मना ॥ ९४ ॥

कथाका सुनना सब कल्याणोंका बीजरूपहै ॥ ९१ ॥ जो कथा नहीं सुनता वह पशु है; फिर वह बन्धनसे किसप्रकार मुक्त होवे इसलिये हे ब्राह्मणी
तू भी सब विषयोंसे अपनी वृत्तियोंको रोक ॥ ९२ ॥ भक्तिपूर्वक सदा सुन्दर कथाका श्रवण कर, नित्य कथा श्रवण करनेसे तेरा चित्त शुद्ध होजायगा
॥ ९३ ॥ तब शंकरका ध्यान कर तू मुक्तिपदको प्राप्त होगी कारण कि शंकरके चरणकमलका ध्यान करनेसे एक जन्ममेंही मुक्ति होजातीहै ॥ ९४ ॥

इसमें सन्देह नहीं यह वार्ता मैं सत्य सत्य कहताहूँ, इसप्रकार ब्राह्मणका वचन सुन वह स्त्री आनन्दसे अश्रुपात करनेलगी ॥ ९५ ॥ और उनके चरणोंपर गिर यह वचन बोली कि हे ब्रह्मन्! मैं कृतार्थ हुई और उसी गोकर्ण क्षेत्रमें उसी द्विजोत्तमसे ॥ ९६ ॥ वहीं स्थिति कर मुक्तिपद देनेवाली पुराणकी सुन्दर कथाका श्रवण करनेलगी, उस ब्राह्मणनेभी उसको वह वैराग्यकी कथा सुनाई ॥ ९७ ॥ कि जिसके सुनतेही मनुष्य तत्काल विषयवासनाको त्यागद, जैसे जैसे वह कथा सुनती रही तैसे तैसेही उसके मनमें वैराग्य होतागया ॥ ९८ ॥ फिर उस द्विजोत्तमने भक्तिसे भरीहुई शंकरकी

भविष्यतिनसन्देहःसत्यंसत्यंवदाम्यहम् ॥ इत्युक्तातेनविप्रेणसानारीबाष्पसंकुला ॥ ९५ ॥ पतित्वापादयोस्तस्यकृतार्थास्मीत्यभाषत ॥ तस्मिन्नेवमहाक्षेत्रेतस्मादेवद्विजोत्तमात ॥ ९६ ॥ शुश्रावसत्कथांसाध्वींकैवल्यफलदायिनीम् ॥ सउवाचद्विजस्तस्यैकथांवैराग्यबृंहिताम् ॥ ९७ ॥ यांश्रुत्वामनुजःसद्यस्त्यजेद्विषयवासनाम् ॥ तस्याश्चित्तंयथाशुद्धंवैराग्यरसगंयथा ॥ ९८ ॥ अथोवाचद्विजःशैवींकथांभक्तिसमन्विताम् ॥ यथायथामनस्तस्याःप्रसादमभिगच्छति ॥ तथातथाशनैःशंभोर्ध्यानयोगमुपादिशत् ॥ ९९ ॥ शनैःशनैर्ध्वस्तरजस्तमोमलंविविक्तसर्वेंद्रियभोगविग्रहम् ॥ विशुद्धतत्त्वंहृदयंद्विजास्त्रियाविवेशविश्वेश्वररूपचिंतनम् ॥ १०० ॥ इत्थंसद्गुरुमाश्रित्यसानारीप्राप्तसन्मतिः ॥ दध्यौमुहुर्मुहुःशंभोश्चिदानंदमयंवपुः ॥ १ ॥

कथा सुनाई, जैसे जैसे उसको प्रसन्नता होतीगई, वैसेही शनैः शनैः शंकरका ध्यान करनेलगी ॥ ९९ ॥ और शनै शनैः उसका रजोगुणका अन्धकार और मलिनता जाती रही, सब इन्द्रियोंके भोग त्याग दिये, उसका अन्तःकरण शुद्ध होगया, कुछ दिनोंमें उस ब्राह्मणकी स्त्रीके हृदयमें त्रिगुणातीत परमेश्वरका रूप स्थिर होनेलगा ॥ १०० ॥ इसप्रकार श्रेष्ठ गुरुके आश्रित हो उस स्त्रीकी श्रेष्ठ बुद्धि होगई, और बारंबार शंकरके चिदानन्दमय

शरीरका ध्यान करनेलगी ॥ १ ॥ सदा तीर्थके जलमें स्नान करती और जटावल्कल धारण किये, भस्म रमाये और रुद्राक्षके भूषण धारण किये ॥ २ ॥ स्वस्थ चित्त हो, पद्मासन मारे, कथा सुननेमें उत्सुक, मौन धारणकर नयन मूँदे शिवनामका जप करतीरहती ॥ ३ ॥ नित्य गुरुसेवा करती पुत्र, कुटुंबी और सुहृज्जनोंमें उसने मोह छोडदिया, गुरुके उपदेशसे सदा शंकरकोही प्रसन्न करती ॥ ४ ॥ कि हे संसारके स्वामी ! हे संसारकी स्थिति प्रलय और जन्मके कारण ! हे संसारके वन्द्य ! हे शिव निरन्तरविश्वरूप ! हे विध्वस्तकाल विपरीतगुणावभास ! हे श्रीमन्महेश !

नित्यंतीर्थजलेस्नात्वाजटावल्कलधारिणी ॥ भस्मोद्धूलितसर्वांगीरुद्राक्षकृतभूषणा ॥ २ ॥ शिवनामजपासक्तावाग्यतामितलोचना ॥ बद्धपद्मासनाऽव्यग्रासत्कथाश्रवणोत्सुका ॥ ३ ॥ गुरुशुश्रूषणरतात्यक्तापत्यसुहृज्जना ॥ गुरूपदिष्टयोगेनशिवमेवमतोषयत् ॥ ४ ॥ विश्वेशाविश्वनिलयास्थितिजन्महेतोविश्वैकवंद्यशिवशाश्वतविश्वरूप ॥ विध्वस्तकालविपरीतगुणावभासश्रीमन्महेशमयिधेहिकृपाकटाक्षम् ॥ ॥ ५ ॥ शंभोशशांककृतशेखरशांतमूर्तेगंगाधरामरवरार्चितपादपद्म ॥ नागेंद्रभूषणनगेंद्रनिकेतनेशभक्तार्तिहन्मयिनिधेहिकृपाकटाक्षम् ॥ ॥ ६ ॥ इत्थंप्रतिदिनंभक्त्याप्रार्थयंतीमहेश्वरम् ॥ शृण्वंतीसत्कथांसम्यक्कर्मबंधंसमाच्छिनत् ॥ ७ ॥ अथकालेनसानारीसमुत्सृज्यकलेवरम् ॥ महेशानुचरैर्नीतासंप्राप्ताशिवमंदिरम् ॥ ८ ॥

मेरे ऊपर कृपाकटाक्ष करो ॥ ५ ॥ चन्द्रमा है मस्तकपर जिनके ऐसे हे शान्त मूर्ति शम्भो ! हे गंगाधर ! हे देवताओंसे पूजित हैं चरण जिनके ऐसे ! सर्पराजका भूषण धारणकिये हे नगेन्द्रनिकेतनेश ! हे भक्तोंका दुःख दूर करनेवाले महादेव ? मेरे ऊपर कृपाकटाक्ष करो ॥ ६ ॥ इसप्रकार प्रतिदिन भक्तिपूर्वक वह शंकरकी प्रार्थना करती और नियमसे सदा सुन्दर कथा सुनती, इसप्रकार करते करते उसके कर्मबन्धन टूटगये॥ ७॥ और कुछ सम

यके उपरान्त अपनी आयु भोग वह स्त्री मृत्युवश हुई और इस शरीरको छोड़ शंकरके अनुचरों द्वारा लेगई हुई शिवलोकमें पहुँची ॥ ८ ॥ वहाँ पार्वतीसमेत शंकरको देवताओंसे सेवित, और गणेश, नन्दि, भृंगीआदि तथा नीलकंठेश्वर आदि ॥ ९ ॥ करके उपासित, करोड़ सूर्यके समान कान्तिमान्, त्रिलोचन, पञ्चवक्र, नीलग्रीव सदाशिवको देखा ॥ ११० ॥ जिनके वामांगमें बिजली और चन्द्रमाके समान कान्तिवाली पार्वतीजी विराजमानहैं, इस प्रकारकी शोभायुक्त विश्वेश्वर महादेवको देख वह स्त्री चकितसी रहगई और उनको बारंबार प्रणाम किया ॥ ११ ॥ आनन्दके मारे

तत्रदेवैर्महादेवंसेव्यमानंसहोमया ॥ गणेशनंदिभृंगाद्यैर्नीलकंठेश्वरादिभिः ॥ ९ ॥ उपास्यमानंगौरीशंकोटिसूर्यसमप्रभम् ॥ त्रिलोचनंपंचमुखंनीलग्रीवंसदाशिवम् ॥ ११० ॥ वामांकेबिभ्रतंगौरींविद्युच्चंद्रसमप्रभाम् ॥ दृष्ट्वाससंभ्रमंनारीसाप्रणम्यपुनःपुनः ॥ ११ ॥ आनंदाश्रुजलोत्सिक्तारोमहर्षसमाकुला ॥ संमानिताकरुणयापार्वत्याशंकरेणच ॥ १२ ॥ तस्मिँल्लोकेपरानदघनंज्योतिषिशाश्वते ॥ लब्ध्वानिवासमचलंलेभेसुखमनाहतम् ॥ १३ ॥ साकदाचिदुमांदेवीमुपसृत्यप्रणम्यच ॥ पर्यपृच्छतमेभर्त्ताकांगतिंगतवानिति ॥१४॥ तामुवाचमहादेवीसतेभर्त्तादुराशयः ॥ भुक्त्वानरकदुःखानिविंध्येजातःपिशाचकः ॥ १५ ॥

उसके नेत्रोंसे अश्रुपात होनेलगा, रोमांच होगये, ऐसा देख शंकर पार्वतीने करुणापूर्वक उसका मान किया ॥ १२ ॥ परमानन्द घन ज्योतिसे निरन्तरव्याप्त लोकमें उसको निवास स्थानमिला, वहाँ अचल निवास पाकर सुखपूर्वक दिन व्यतीत करनेलगी कि जिस सुखका कभी नाश न हो ॥ १३ ॥ एक समय वही स्त्री पार्वतीजीके पास जा, प्रणामकर पूँछनेलगी कि हे पार्वतीजी ! मेरे पतिकी कौन गति हुई है ॥ १४ ॥ यह सुन पार्वतीजी बोलीं कि वह तेरा दुरात्मा पति नरकके अनेक दुःखोंको भोगकर इससमय विंध्याचल पर्वतपर पिशाच हो निवास करताहै ॥ १५ ॥

यह सुन फिर वह स्त्री त्रिभुवनेश्वरी पार्वतीजीसे पूँछने लगी कि अब मेरा पति किस उपायसे सद्गतिको प्राप्त होवे ॥ १६ ॥ पार्वतीजी बोलीं कि वह तेरा पति यदि मेरी सुन्दर कथाको सुने तो उसकी सब दुर्गति नष्ट होजायँ और फिर इसीलोकमें आवे ॥१७॥ इसप्रकार पार्वतीका वचन सुन उसने हाथ जोडे और पतिकी पापशुद्धिके निमित्त पार्वतीजीकी प्रार्थना करनेलगी ॥ १८ ॥ बारंबार उसके प्रार्थना करनेपर पार्वतीजीको दया आई और तुम्बुरु नाम गन्धर्वको बुलाकर यह बोलीं ॥ १९ ॥ कि हे तुम्बुरो ! तुम्हारा कल्याण हो, इस स्त्रीके साथ विंध्याचलपर्वतपर जाओ, वहाँ दुष्टबुद्धि इसका

पुनःपप्रच्छसानारीदेवींत्रिभुवनेश्वरीम् ॥ केनोपायेनमेभर्त्तासद्गतिंप्राप्नुयादिति ॥ १६ ॥ ॥ देव्युवाच ॥ ॥ सोऽस्मत्कथांमहापुण्यांकदाचिच्छ्रणुयाद्यदि ॥ निस्तीर्यदुर्गतिंसर्वामिमंलोकंप्रयास्यति ॥१७॥ इतिगौर्यावचःश्रुत्वासानारीविहितांजलिः ॥ प्रार्थयामासतांदेवींभर्तुःपापविशोधने ॥ १८ ॥ तयामुहुःप्रार्थ्यमानापार्वतीकरुणायुता ॥ तुंबुरुंनामगंधर्वमाहूयेदमथाब्रवीत् ॥ १९ ॥ तुंबुरोगच्छभद्रंतेविंध्यशैलंसहानया ॥ आस्तेपिशाचकस्तत्रयोऽस्याःपतिरसन्मतिः ॥ १२० ॥ तस्याग्रेपरमांपुण्यांकथामस्मद्गुणैर्युताम् ॥ आख्यायदुर्गतेर्मुक्तंतमानयशिवांतिकम् ॥ २१ ॥ इतिदेव्यासमादिष्टस्तुंबुरुस्तांप्रणम्यच ॥ तयासहविमानेनविंध्याद्रिंसहसाययौ ॥२२॥ तत्रापश्यन्महाकायंरक्तनेत्रंमहाहनुम् ॥ प्रहसंतंरुदंतंचन्यबध्नीतांपिशाचकम् ॥ २३ ॥

पति एक पिशाच रहताहै ॥ २० ॥ उसके आगे परमपवित्र और मेरे गुणवाली कथा कहो, कथाके उपरान्त उसको दुर्गतिसे छुड़ाकर शंकरके निकट लेआओ ॥ २१ ॥ इसप्रकार उनकी आज्ञा पा तुम्बुरु पार्वतीजीको प्रणाम कर उस स्त्रीको साथ ले शीघ्रही विमानमें बैठ विंध्याचल पर्वतपर गया ॥ २२ ॥ वहाँ बड़े शरीरधारी, लाल नेत्रवाले और बड़ी ठोड़ीवाले उस पिशाचको देखा तो कभी हँसता कभी रोता और कभी नाचताहै ॥ २३ ॥

तब बलपूर्वक उसको पाशोंसे बाँध तुम्बुरुने अपने निकट बैठाया और वल्लकी हाथमें ले शंकरकी पवित्र कथा सुनाने लगा॥ २४ ॥ उस पवित्र कथाके सुननेसे उस पिशाचके सम्पूर्ण पाप दूर होगये और पूर्वजन्मकी स्मृति होनेलगी ॥ २५॥ पिशाचदेहको त्याग उसने दिव्यस्वरूप धारण किया और स्वयंभी शंकरका चरित उच्चारण करने लगा ॥ २६॥ तथा विमानसें आरूढ हो, दिव्य देह धारण कर तुम्बुरुके साथ अपनी स्त्रीसमेत उमापति महादेवके मनोहर गुणोंका गान करताहुआ सनातन मुक्तिपदको प्राप्त हुआ ॥ २७ ॥ इतनी कथा सुनाय सूतजी बोले कि हे मुनीश्वरो शंकरमें प्रीति करानेवाला, निर्मल

बलाद्गृहीत्वातंपाशैर्बद्ध्वासंनिवेश्यच ॥ तुंबुरुर्वल्लकीहस्तोजगौगौरीपतेःकथाम् ॥ २४ ॥ सपिशाचोमहापुण्यांकथांश्रुत्वाऽसुरद्विपः ॥ विधूयकलुषंसर्वंसुमहत्प्रापसंस्मृतिम् ॥ २५ ॥ सपैशाचंवपुस्त्यक्त्वास्वरूपंदिव्यमाप्यच ॥ जगौस्वयमपिश्रीमच्चरितंपार्वतीपतेः ॥ २६ ॥ विमानमारुह्यसदिव्यरूपधृक्सतुंबुरुःपार्श्वगतःस्वकांतया ॥ गायन्महेशस्यगुणान्मनोरमाञ्जगामकैवल्यपदंसनातनम् ॥ २७ ॥ सूत उवाच ॥ ॥ इत्येतत्कथितंपुण्यमाख्यानंदुरितापहम् ॥ महेश्वरप्रीतिकरंनिर्मलज्ञानसाधनम् ॥ २८ ॥ यइदंशृणुयान्मर्त्यःकीर्तयेद्वासमाहितः ॥ शंभोर्गुणानुकथनंविचित्रंपापनाशनम् ॥ २९ ॥ परमानन्दजनकंभवरोगमहौषधम् ॥ भुक्त्वेहविविधान्भोगान्मुक्तोयातिपरांगतिम् ॥ १३० ॥

ज्ञानका साधन और पाप नष्ट करनेवाला यह पवित्र आख्यान तुमसे कहा ॥ २८ ॥ जो पुरुष इस पवित्र आख्यानको एकाग्र चित्तसे सुनता वा सुनाताहै उसकोभी सुंदर फलकी प्राप्ति होतीहै कारण कि इस शंकरके विचित्र आख्यान सुननेसे पाप नष्ट होजातेहैं ॥ २९ ॥ परमानन्दका दाता, संसाररूप रोगके निमित्त औषधरूप है, इसको सुननेवाला पुरुष इस लोकमें अनेक भोगोंको भोग अन्तमें मुक्त हो परमगतिको प्राप्त होताहै ॥ १३० ॥

हे महाभाग मुनीश्वरो ! तुम भी कृतार्थ हुए ! जो शंकरका सेवन कर कथारूपी अमृतका पान करतेहो ॥ ३१ ॥ संसारमें उन्हींका जन्म सफल है, जिनका मन शंकरका ध्यान करे, वाणी स्तुति करे, कान कथा सुने वेही संसारके पार होतेहैं अनेक प्रकारके गुणोंके भेदसे जिनका रूप जाननेमें नहीं आता और अपनी महिमासे जगत्के बाहरभीतर व्याप्त होरहेहैं अपनी प्रभुतासे विहार करनेवाले वाणी और मनोवृत्तिसे दूर अनन्त परमशिव सांद्र

यूयंबतमहाभागाःकृतार्थामुनिसत्तमाः॥येसेवंतेसदाशंभोःकथामृतरसंनवम्॥३१॥तेजन्मभाजःखलुजीवलोकेयेषांमनोध्यायतिविश्वनाथम्॥ वाणीगुणान्स्तौतिकथांश्रृणोतिश्रोत्रद्वयंतेभवमुत्तरंति॥३२॥विविधगुणविभेदैर्नित्यमस्पृष्टरूपंजगतिचबहिरंतर्वासमानंमहिम्ना॥स्वमहसिविहरंतंवाङ्मनोवृत्तिदूरंपरमशिवमनंतानंतसांद्रंप्रपद्ये॥१३३॥ इतिश्रीस्कं०पु०ब्र० द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ समाप्तोऽयं ब्रह्मोत्तरखण्डः ॥

मूर्तिके शरणको प्राप्त होताहूँ ॥ ३२ ॥ इति श्रीस्कन्दपुराणे ब्रह्मोत्तरखण्डे पण्डितदातारामसुनुपंडितबाबूरामशर्मकृतभाषाटीकायां पुराणश्रवणमहिमवर्णनं नाम द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

दोहा—शंकरकी महिमा सकल, कही पुराणन गाय । सो ब्रह्मोत्तरखण्डमें, टीका कियो सुहाय ॥ १ ॥
संवत् उन्निससे अधिक, बासठ सरल विचार । आश्विन शुक्ला पंचमी, बुधवासर सुखसार ॥ २ ॥
पूर्ण कियो टीका सुभग, दायक सब मनकाम । पण्डित दातारामको, आत्मज बाबूराम ॥ ३ ॥
शिवासहित शिवध्यानसे, सिद्ध होत सबकाज । आराधन हरको करहु सकल सुमंगल साज॥४॥
बसत रामगंगानिकट, नगर मुरादाबाद । भजनकरत शिवको जहाँ, बुध ज्वालाप्रसाद ॥५॥

इदं पुस्तकं मुम्बय्यां श्रीकृष्णदासात्मजक्षेमराजश्रेष्ठिना स्वकीये "श्रीवेङ्कटेश्वर"
मुद्रणालये मुद्रितम । संवत् १९६४, शके १८२९.

विज्ञप्तिः ।

अत्र च महाभारतादीतिहासाः श्रीमद्भागवतादिपुराणानि सहस्रनामादिस्तोत्राणि तथा च व्याकरणन्यायादिशास्त्रनाटकाख्यायिकादिग्रन्थाश्च सीसकोत्तममहल्लघ्वक्षरैश्च मनोहरं मुद्रिताः योग्यमूल्येन क्रय्यास्सन्ति तत्तांश्च ग्राहका यथासूचीपत्रं मूल्यप्रेषणेन प्राप्नुयुः ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

खेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस-बम्बई.

अत्रेयमभ्यर्थना.

अस्माकं मुद्रणालये वेद-वेदान्त-धर्मशास्त्र-प्रयोग-योग-सांख्य-ज्योतिष-पुराणेतिहास-वैद्यक-मंत्र-स्तोत्र-कोश-काव्य-चम्पू-नाटकालंकार-संगीत-नीति-कथाग्रंथाः, बहवः स्त्रीणां चोपयुक्ता ग्रंथाः, बृहज्ज्योतिषार्णवनामा बहुविचित्रचित्रितोऽयमपूर्वग्रन्थः संस्कृतभाषया, हिन्दीमारवाडयन्यतरभाषाग्रन्थास्तत्तच्छास्त्राद्यर्थानुवादकाः, चित्राणि, पुस्तकमुद्रणोपयोगिन्यो यावत्यस्सामग्र्यः, स्वस्वलौकिकव्यवहारोपयोगिचित्रचित्रितालिखितपत्रवत्पुस्तकानिच; मुद्रयित्वा प्रकाशन्ते सुलभेन मूल्येन विक्रयाय । येषां यत्राभिरुचिस्तत्तत्पुस्तकाद्युपलब्धये एवं नव्यतया स्वस्वपुस्तकानि मुमुद्रयिषुभिः सुलभयोग्यमौल्येन सीसकाक्षरैः स्वच्छोत्तमोत्तमपत्रेषु मुद्रिततत्पुस्तकानां स्वस्वसमयानुसारेणोपलब्धये च पत्रिकाद्वारातैः प्रेषणीयोऽस्मि ।

अधिकमस्मदीयसूचीपुस्तकानां भिन्नभिन्नविषयाणां प्रापणेन "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार" पत्रिकाप्रापणद्वारा च ज्ञेयमिति शम् ।

क्षेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" (स्टीम्) यन्त्रालयाध्यक्षः खेतवाड़ी–मुंबई.

अध्याय	विषय
१५	वामदेवनामक शिवयोगीके देहमें लगेहुए भस्मको छूनेसे राक्षसको अपने पूर्व २५ जन्मोंका स्मरण होना।
१६	सनत्कुमारसे शिवजीका भस्मधारणविधि और माहात्म्य कहना।
१७	शवरका भस्मसे शिवपूजा करनेसे दिव्यगतिका लाभ।
१८	वेदरथकी कन्या शारदाका पद्मनाभसे विवाह होनेके अनन्तर ही वैधव्य होना; अन्ध नैध्रुवमुनिने उसकी सेवासे प्रसन्न हो, तेरा पुत्र होवे ऐसा आशीर्वाद देना और उसको विधवा जानकर शिवपूजाका उपाय बताना और उसका व्रतकरना।
१९	एक वर्षतक व्रत कर उद्यापनके दिन अन्धे मुनिके साथ रात्रिमें जागरण करना; श्रीपार्वतीने आकर उसको उसका पूर्वजन्म-वृत्त कहकर पुत्रहोनेका उपाय बताना उस विधिसे उसका पुत्र होना और उसके पतिका गोकर्णकी यात्रामेंउससे मिलना और उन दोनोंका एक चितामें भस्म हो दिव्यदेह लाभ करना।
२०	काश्मीरके राजा भद्रसेनके कुमार सुधर्मा और मन्त्रिपुत्रके पूर्वजन्मकी कथा; जो कि महानन्दा वेश्याके पास बन्दर और कुकुट (मुर्गा) थे; जिनको वह सदा रुद्राक्षकी माला पहिराकर नचातीथी महानन्दाका मोक्षलाभ।
२१	पराशरके मुखसे राजकुमारका ७ दिन अवशिष्ट आयु सुनकर राजाका मूर्च्छित होना; मुनिके उपदेशसे दश हजार रुद्रीसे मुनियोंने राजकुमारको स्नान कराकर दश हजार वर्षका आयुष्य कराना संसारमें रुद्रीके प्रचारसे नर्कमें किसीका भी न जाना; यमका विषाद, उसको सुन ब्रह्माने अविद्या अश्रद्धा दुर्मेधा इत्यादिको उत्पन्न करना।
२२	पुराणश्रवणविधि और फल बंडे दुर्वृत्त विदुर और बन्दुलाकी कथा; कथासुननेसे उनको शिवलोककी प्राप्ति। इति।

॥ इति ब्रह्मोत्तरखण्डभाषाटीका विषयानुक्रमणिका समाप्ता ॥